अनुभवगिराउद्योत.

श्रीरामस्नेहधर्मप्रकाश ।



संशोधक—

पं. मालचन्द्रजी शर्मा



प्रकाशक—

चौकसरामजी (सिंहथल)

बडारामद्वारा

बीकानेर.

रामस्नेह दिव्यवत्सर १०८१४

वि. संवत् १९८७, सन १९३१.

प्रथमावृत्ति. १०००

Publisher:—Chaukasramji (Simhathal) Badaramdwara, Bikaner.

Printed by Ramchandra Yesu Shedge, Niranaya Sagar Press,



Ram Narainji Vaidyaraj
(Pikaner).

॥ श्रीः ॥

ॐनमः श्रीमद्धरिरामरामदासेभ्यः ।



हरिया रत्ता तत्तका मतका रत्ता नाहिं ।
मतका रत्ता जो फिरै, तहँ तत पायो नाहिं ॥
भेद न जानै वेदको, वाच सुनावै वेद ।
हरिया भेदै भेदको, वेद करै सब छेद ॥
दारुकमें पावक बसै, यों आतम घट माहिं ।
हरिया पयमें घृतहै, विन मथियाँ कछु नाहिं ॥
ज्ञान ब्रह्मकी दृष्टि है, क्रिया ध्यान सरूप ।
जनहरिया मिल एकठा, आतमतत्त्व अनूप ॥
हरिया निर्गुण मूल है, सगुण जु शाखा पान ।
भक्ति बीज फल मुक्ति है, और धर्म सब आन ॥

(श्रीहरि० वाक्यम्)

रामनाम ततसारहै, सबहीको आधार ।
रामा सुमरो रामकों, मेटो विषय जँजार ॥
दुनियाँ चाहै सुखपकों, सुख सबही है झूठ ।
रामदास जो सुखहै, तासों रहिया रूठ ॥
हंसः सोहं अहं नहीं, जहँ नहिं श्वासोच्छ्वास ।
विष्णु ब्रह्मा शिव शेष नहिं, जहँ है ब्रह्म विलास ॥
जीव शीव मेला भया, मिले ओत अरु प्रोत ।
रामा साँई एक है, जहाँ ब्रह्म निज जोत ॥
सलिल समाणा सिन्धुमें, सिंधु सलिल मिल एक ।
रामदास केवल मिल्या, जहँ कोइ रूप न रेख ॥

(श्रीराम० वाक्यम्)

हरि बरषा सर भावमें, निजमन सीपि सदाय ।
गुरुसमाज स्वातीनक्षत्र, मुक्ता क्यों नहिं थाय ॥
अन्योअन्याभावमें, कारज अपनी ठौर ।
प्रागभाव भात्यन्त मिल, गुद सिद्धान्त पद ठौर ॥

रामस्नेहीलक्षण ।

छप्पय.

मिलतां पारस प्रसिद्ध विमल चित रामसनेही ।
उर कोमल मुख निर्मल प्रेम मर्याद विदेही ॥
दरसण परसण भाव नेमनित श्रद्धा दासा ।
साच पाच गुरुज्ञान भक्ति प्रणमत इक आसा ॥
देह गेह सम्पति सकल हरि अर्पण परमानिये ।
जनरामा मन वच कर्म रामस्नेही जानिये ॥ १ ॥
खान पान पहिरान निर्मली दशा सदाई ।
सात्विक लेन आहार हिंसा करिहि न कदाई ॥
नीर छाण तन परत दया जीयां पर राखै ।
बोलै ज्ञान विचार असत कबहू नहि भाखै ॥
साधु संगति पच्छपत सुदृढ़ नेम प्रेम वासा लियां ।
रामस्नेही रामदास तन मन धन लेखे कियां ॥ २ ॥
श्रद्धा सुमरण राम मौन मन रामसनेही ।
गुणग्राही गुणवन्त आप लेगे हरि देही ॥
ममत संचारू मांग तजै आमिष मद पानं ।
सुधा दूनका कर्म नारि पर माता जानं ॥
साच शील क्षमा गहि राम राम सुमरण रता ।
मामा मर्दा भाव दृढ़ रामस्नेही ये मता ॥ ३ ॥

(श्रीहरजुनदासजी)

निवेदन ।

कोटिशः धन्यवाद है उन जगदाधार जगन्नियन्ता सर्वेश्वर परब्रह्म रा
को जिनकी प्रेरणा से रामस्नेह-धर्मावलम्बी महानुभावों के लाभार्थ औ
सद्धर्म के प्रचारार्थ श्रीसद्गुरुवाणी के प्रथम पाँचवार छपजानेके अनन्त
अब फिर कई विशेष अंग छपवाकर प्रकाशित करने का सुअवसर प्रा
हुआ। परञ्च शुद्ध करने का जैसा मनोरथ था वह सफल नहीं हुआ।

आशा है समस्त महात्मा व सुज्ञ विज्ञ सज्जनगण इस अज्ञ की
अल्पज्ञता को न देख अपनी कृतज्ञताका परिचय देकर मुझको विशे
आभारी करेंगे।

हृष्टं किमपि लोकेऽस्मिन्न निर्दोषं न निर्गुणम् ।
आवृणुध्वमतो दोषान्विवृणुध्वं गुणान् बुधाः ॥ १ ॥

विनीत
चौकसरामसाधुः

नियमपंचदशी

अर्थात्

रामस्नेहीधर्मके पन्द्रह नियम।

(१) निर्गुण निराकार एक रामजी का ही इष्ट रखना और उन्हीं निर्लेप निरंज परमेश्वर की पराभक्ति से उपासना करनी।

(२) वेद, श्रुति, स्मृति, गुरुवाणी, शास्त्र, आर्षग्रंथ, पुराण, आप्तवाक्यों क मानना और सद्विद्या का प्रचार करना।

(३) पाठ पूजन संध्यावंदनादि नित्य कर्मों का पालन करना और शरीर सारे सुखों को छोड़कर निरंतर रामस्मरणपूर्वक योगाभ्यासी होना।

(४) सद्गुरु और सन्तों की आज्ञा मानना उनको ईश्वररूप जानना और सत्सं को परम लाभ समझना।

(५) अपने सर्व व्यवहारों को ईश्वराधीन जानना और हिंसारहित सत्य ध युक्त सात्विक उद्यमी होना।

(६) भोजनाच्छादन की चिन्ता न करना और न किसी से याचना करना केव सर्व शक्तिमान एक ईश्वर का ही आश विश्वास रखना।

(७) ईश्वर के अर्पण किया हुआ प्रसाद ग्रहण करना आन देवताओंके प्रसाद क स्पर्श तक न करना और न आन देवताओं को देवत्वबुद्धिकर मानना।

(८) शील, सन्तोष, त्याग, वैराग्य, क्षमा, सरलता, धृति आदि धारण कर और हित मित सत्यभाषी होना।

(९) काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, अभिमान, ईर्षा, निंदा आदिका त्या कर अन्तःकरण शुद्ध रखना संयम नियम से रहना और स्त्रीमात्र माता बहिन समझना।

(१०) जल छान कर पीना, रात्रि में भोजन न करना जीव रक्षार्थ पाँव देख क धरना और चातुर्मास में विहार न करना अर्थात् एक जगह रहना।

(११) दूसरों के सुख दुःख हानि लाभ को अपनी ही तरह समझना और सब

वाणी–विषय–सूची।

[1] करुणासागरमें ५२ कथाएँ और २ दृष्टान्त है।

१ अज्ञात वश कोई टहनी टूट गई हो तो अपराध क्षमा करें।

राग रागनियें गाने का समय।

(चार बजे से सूर्योदय तक)
विभास, जोगिया, ललित, कालिंगडा, भैरव।
(सूर्योदय से १० बजे तक)
आसावरी, टोडी, भैरवी, विलावल।
(दिनके ११ से २ बजे तक)
सुहासुघराई, सारंग, भीमपलासी, झिंझोटी।
(दिनके ३ बजे से सूर्यास्त तक)
जयश्री (जैतश्री) धनाश्री, पीलु, पूरबी, पूरिया, पहाडी, गौरी।
(सूर्यास्त से लेके रात्रि के १० बजे तक)
कल्याण, ईमनकल्याण, केदारा, हमीर, खम्बायच, पहाड, नट, छायानट, भोपाली।
(रात्रि के १० बजे से १२ बजे तक)
जैजैवन्ती, कान्हडा, माड, गिरनारी, देश, सोरठ, विहाग, मारू।
(रात्रि के १२ बजे से ४ बजे तक)
मालकोंस, सोहनी, परज।

नोटः—परिचय ११ पृष्ठके लाइन २२ में (यामवी और सुदव) के स्थानमें ...मव और सुदवद पाठ जानना। इस पुस्तकमें समस्त पद ३०० हैं।

॥ ॐ नमः श्रीमदाचार्येभ्यः ॥

परिचय

नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरंजनम् ॥
नित्यबोधचिदानंदं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ॥ १ ॥
यावदायुस्त्रयो वन्द्या वेदान्तो गुरुरीश्वरः ॥
आदौ ज्ञानप्रसिद्ध्यर्थं कृतघ्नत्वापनुत्तये ॥ २ ॥

श्रीसंप्रदायाचार्य[1] श्रीरामानुजस्वामी की २३ वीं पद्धति[2] में श्रीरामानंदस्वामी हुए। और इनकी ११ वीं पद्धति में कोडमदेसर (बीकानेर) के रामानंदी वैष्णव महंत श्रीचरणदासजी महाराज के शिष्य श्रीजैमलदासजी महाराज हुए। आप सांवतसर ग्राम में विराजमान होकर परंपरानुसार वैष्णवधर्म की मूर्तिपूजनादि सगुणोपासना बाल्यावस्था में ही करने लगे। सं० १७६० के चौमासे में दोपहरी के समय श्रीगोपालजी के मंदिर में आप श्रीमद्भगवद्गीता की कथा कर रहे थे। उसीसमय परब्रह्मराम पथिक का रूप धारण कर वहां पधारे। और श्रीजैमलदासजी महाराज को सम्बोधन करके कहा "अरे जैतराम! जल ला"। आपने पथिक की ओर देखा तो अलौकिक दिव्यमूर्ति योगिराज दिखाई दिए। आपने झट अलांबु (तूम्बी) पात्र में जल ला हाजर किया। योगिराजने प्रेमदत्त जल पानकर कहा कि भाई! अगले ग्राम जाने का मनोरथ है रास्ता बतावें।

१—संप्रदाय चार हैं:—

१ श्रीसंप्रदाय, २ शिवसंप्रदाय, ३ सनकादिकसंप्रदाय, और ४ ब्रह्मसंप्रदाय। जिनके चार ही आचार्य हैं।

१ श्रीरामानुजस्वामी, २ श्रीविष्णुस्वामी, ३ श्रीनिम्बार्कस्वामी, ४ श्रीमध्वाचार्य।

रमा पद्धति रामानुज, विष्णुस्वामी त्रिपुरारि।
निम्बादित्य सनकादिका, माधव गुरुमुख चारि ॥ १ ॥

२—दीक्षाके प्रथम का नाम है।

यों कहकर आप रवाने होगये और जैमलदासजी महाराज को साथ लेलिये। फिर उनको एकांत में शमी (खेजडी) वृक्षके नीचे ले जाकर कहा "अवधू तुम क्या साधन करते हो?" जैमलदासजी महाराजने अपना आद्योपांत सारा वृत्तांत कह सुनाया। भगवान् ने कहा, इनके करनेसे तुमको कुछ निश्चय हुआ या नहीं? । आपने कहा कि, भगवन्! आपही बतलावें। तब महापुरुष परब्रह्मराम ने शुद्धान्तःकरण देख ब्रह्म की प्राप्तिके लिये योग-क्रियासहित मूलतारकमंत्रका उपदेश दिया। पूजनादि सब क्रियाकांड छुडवाकर आप वहीं अंतर्धान होगये। इस बात का जैमलदासजी महाराज को बडा आश्चर्य हुआ और उनकी चारों ओर बहुत खोज की परंतु कुछ पता नहीं मिला। फिर आप मंदिरमें पधारे तो भी आपको यही चिन्ता थी कि मुझे कहीं स्वप्न तो नहीं आगया है। अथवा किसी ने मुझको धोखे से छला है। इसी विचारमें उन्हों ने कुछ न खाया न पिया निराहार ही रहे। निद्रा भी नहीं आई। अर्धरात्रि होगई तब विचार आया कि स्वयम् ईश्वर ही ने ऐसा किया है परंतु मेरा ऐसा भाग्य कहाँ! मैंने ऐसा कौनसा जप तप किया है जिससे ऐसा होता। उसी समय आकाशवाणी हुई "हे बालक! तू मेरी खोज में इतना आतुर क्यों होरहा है? साक्षात् सच्चिदानन्द अविनाशी पूर्णब्रह्म प्रकाशमान महापुरुष मैंने ही दिव्यरूप धरकर उपदेश और दर्शन दिए है और सत्य २ कहता हूं, आदि अन्त में तू मेरा ही जन है। संकल्प विकल्प छोड दे। तेरा अन्तःकरण शुद्ध होगया है। इसलिये ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिये सगुणउपासना को छोड कर ध्यानावस्थित हो और राम राम रटता हुआ निर्गुण-भक्ति कर"। इस आकाशवाणी को सुनते ही चित्त में शान्ति आगई और भेषपंथका[1] सारा झमेला छोडकर योगाभ्यासपूर्वक राम राम रटण करते हुए योगारूढ होगए। और अलौकिक वैराग्योत्पादक निर्गुण पद वाणी का वर्णन किया। दर्शनार्थ यात्रियों की भीड़ अधिक रहने से आप खिन्न

१—भेषपंथ का संग तज दीया।
होय निरंतर हरिपद लीया।
(श्रीराम. परची विश्राम ९)

होकर दुलचासर पधार गए। कुए पर एक हजार मेत रहतेथे उनकी गति कर आप धोरे (टीवे) पर निवास करने लगे। यहाँ पर भी भीड़ अधिक होने लगी तब तो आप रोड़े ग्राम में पधार गए। और यहीं संवत् १८१० में पांचभौतिक शरीर को त्यागकर परमधाम पधारे।

भगवद्दर्शनोपदेश से पहले आपके एक रामदासजी नामक शिष्य हुए थे। जो दीक्षा लेते ही अयोध्याजी की तरफ चले गए और आपने जीवन का सारा समय भगवद्भक्ति आदि सगुणोपासना में उधर ही विताया। वृद्धावस्था होने पर आप दुलचासर पधारे उस समय गुरुदेव तो परमधाम पधार ही चुके थे। फिर आपने यहाँ पर एक ठाकुरमंदिर बनवाया और उनकी सेवा पूजा में लवलीन रहने लगे। अकस्मात् एकदिन मंदिर के बारे में एक राजपूत से बोल चाल होगई तब केवल मंदिर की सेवा के लिए आपने एक शिष्य को वहां छोड़ कर आप रोड़े को मुख्य गुरुस्थान समझकर वहीं पधारे। और वहां भगवन्मंदिर बनवाय भगवत् सेवा में समय व्यतीत किया और दो चार नये शिष्य भी होगए। आपके परलोक पधारनेपर रोड़ा दुलचासर में आपकी दो गद्दी हुई जो अभीतक चली आती हैं और उनके गद्दीधर रामानंदी बैरागियों में (रामावत साधुओं में) महंत कहलाते हैं। गुरुपरंपरा से ये दोनों सिंहथल के गुरुस्थान हैं और सिंहथल में जब दोनों स्वामीजी महाराजको पधराते हैं तब बधावणा भेट पूजादि क्रम प्राचीन रीतिअनुसार किया जाता है।



(श्रीहरिरामदासजीमहाराज)

बीकानेर राज्यान्तर्गत सिंहथल नामक ग्रामके सज्जन भाग्यचंदजी जोशी के घर आपने शुभनक्षत्र में शरीर धारण किया। पिता ने शास्त्रविहित संपूर्ण संस्कार कराकर शुभनाम श्रीहरिरामदासजी महाराज रक्खा। अद्भुत बुद्धि होने से बाल्यावस्था में ही वेदान्तादि शास्त्रों में पारंगत होगये और गणित (ज्योतिष) विद्या में प्रथमश्रेणी के पंडित गिने जाते थे। पूर्वजन्मोपार्जित पुण्यप्रभाव से छोटी अवस्थामें ही योगाङ्गों में योग्यता संपादन करलेने के बाद किसी ब्रह्मनिष्ठगुरुदेवके शरण होने की अभिलाषा प्रगट की सो रामसर ग्राम के उदयरामजी नामक सद्गृहस्थ ने आपको साथ दुलचासर ग्राम लेजाकर श्रीजैमलदासजी महाराज के दर्शन करवाये। आपने साष्टांग दंडवत प्रणाम पूर्वक विनय की और

१—रामानन्द अनन्तानन्द कर्मचन्द देवाकर।
पूरणमालपि शिष्य दामोदरदास उजागर॥
नारायण मोहनदास दास माधव मेदानी।
ता शिष सुन्दरदास चरणदास निज ज्ञानी॥
जिन जैमल प्रगटे नमो हरिरामदास के सब गुनन।
रामदास वन्दन करत पदपङ्कज अनुचर यतन॥ १॥

२ साष्टांग दंडवत प्रणामः—

दे पुनि पांच प्रदक्षिणा, अष्ट अंग परणाम।
स्वामी जैमलदास के, परसे पद हरिराम॥ १॥

३ विनयः—

धन्य २ मम भाग आज अनुराग दरसे।
धन्य २ मम भाग मिले वैराग्यपुरुसे॥
धन्य २ मम भाग प्रेम अरु क्षेम प्रकासे।
धन्य २ मम भाग जाग भव भर्म विनासे॥
धन्य आज मम जन्म धन्य तातैं तुम दर्शन भयो।
जा काज सकल पूछत फिरत सो मनवांछित फल लयो॥ १॥

---

1 उर सिरं दृष्टी वर्चेन मॅन पॅद कॅर जॅानु प्रमान।
अष्ट अंग से होत है नमस्कार सविधान॥ १॥







नम्रता के साथ श्रीजैमलदासजी महाराज के उपदेश से अपनी शंकाओं का निवारण कर संवत् सत्रहसो के सईके में आपाढ कृष्णा त्रयोदशी को दीक्षा धारण की। श्रीगुरुदेव ने प्रसन्न हो आशीर्वाद प्रदान किया। बाद आप आज्ञा मांग सिंहथल पधारे। और नियम किया कि सिंहथल से दुलचासर जो ७ कोश है वहांपर संध्या होते ही श्रीगुरुदेवजी के पास चला जाना और रातभर गुरु सत्संगति कर प्रातः सूर्योदय से पहले ही वापिस आजाना इस प्रकार छः मास बीत गये। श्रीगुरुदेव ने आपको कहा कि तुम अब वहीं पर भजन किया करो पर आप माने नहीं तो दश दश दिन का नियम किया। इस के कुछ दिन बाद फिर गुरुदेव ने एक एक मास से आने की आज्ञा दी तो आपने हट करना अनुचित समझ शिरोधार्य की और उसीपर चलते रहे। शिलोंछवृत्ति से निर्वाह कर भजन करते करते थोड़े ही काल में दशमद्वारसमाधिस्थ पूर्ण योगिराज होगये। और जीवों के परमकल्याणार्थ वेद वेदान्त उप-

---

छप्पय।

१—परा परम को धरम गुरु उर परम सुनायो।
दे करसें परसाद राम निज मंत्र सुनायो॥
नाश्या निरतहु सुरति ध्यान पर एक हुयाते।
जोग जुगति की बात कही सब परम कृपातें॥
उर भये अबहु मंगल परम, परम भरम सब कप्पिया।
हरिरामदासकूं परमगुरु, यह उपदेश जु अप्पिया॥ १॥
मंत्र सजीवन जासु, जो गिरिजापति शिव कह्यो।
श्रीगुरु जैमलदासु, (सो) यह उपदेशजु अप्पियो॥ १॥

कुंडलिया।

२—धन्य २ शिरधर्म यह, कहै निगम लड जेन।
परस्यो मम दुख हरन मग, परा परम जन प्रेम॥
परा परम जन प्रेम, नेम नित क्षेम निवासा।
बहुत बडे परतार मान, सत बचन
निज हरिजन दिनकर परसि, तुम
धन्य २ शिरधर्म यह,

निषद योगसारगर्भित अनुभववाणी का प्रकाश किया । आपके शिष्य हुए, अनेक परचे हुए, परंतु विस्तारभयसे थोड़ेसे लिखने में ।

एकवार आप भजन कर रहे थे कि देवताओं की भेजी हु अप्सरा परीक्षा के लिये आई और आपके पास बैठ गई । ध्यान की आंख खुली तो मालूम हुआ कि छलने के लिये माया आई, आपने उसके उलटे हाथकी थाप मारी और पूर्ववत् ध्यानावस्थित ह

एकवार आपके शिष्य विहारीदासजी महाराज से एक निष्कारण द्वेष करने लगा तो आप अनुचित समझ वहां से एक दूरी पर नापासर ग्राम में पधार गये । वहां पर ठाकुर देवी ने ग्रामसहित आपका बहुत स्वागत किया । पीछे से उस पुरुष के पुत्र एकही दिनमें पंचत्व को प्राप्त होगये और अग्नि के प्रकोपसे धन सब स्वाहा होगया तब घबराकर विलाप कलाप करने लगा । लो उसे समझाया कि यह फल महात्माओं से विद्वेष करनेका है । गांव के लोग डरने लगे । तब तो करणीदानजी ने ढोल बजवाकर वास इकट्ठे किये और उस को साथ लेकर नापासर आये श्रीहरियानन्दजी महाराज के चरणों में पड़कर अपराध क्षमा कर वापस पधराये ।

बीकानेर शहर के दो वैश्य जिनका नाम नेतराम और मुरली था उन्हों ने विचार किया कि रातही रातमें चलकर सिंहथल श्री महाराज के दर्शन कर आवें । ऐसी सलाह कर घरवालों से कहदिया हम लक्ष्मीनाथ भगवान् के दरबारमें ही आज जागरण करेंगे और सिंथल का रास्ता लिया। बीकानेर से ९ कोश दूरी होने के कारण अंधेर को वहां पहुंचे । श्रीमहाराज ध्यानावस्थित हो चुकेथे और दीपक रोशनी कुछ भी प्रकाश नहीं था तो उनके लिये यह बहुत दुःख की बात हुई

१—पुत्र मुवा अति दुख भयो, हीन भयो धन साज ।
घर दिरलाओ हुयगयो, कहा हम कियो अकाज ॥ १ ॥
(श्रीहरि. परची)

हम विना दर्शन किये पीछे कैसे जाँय । श्रीजी महाराज ने उनकी ऐसी उत्कट इच्छा जान एक ऐसा दिव्य प्रकाश प्रकट किया कि वे आश्चर्य में भरगये और आपके दर्शन किये और स्तुति की। तव श्री महाराज नें उनसे फरमाया कि यह सब ईश्वर की माया है इसके विषय में किसीसे कुछ मत कहना। इस आज्ञा को शिरोधार्यकर रातकी रात में वे दोनो पीछे बीकानेर आगये ।

सरूपसिंहजी नामक बारट जो दैवयोगसे निर्धन हो गये थे अत उनके घर वारादि सब गिरवी होगये। जब बहुतही दुःखित होकर आप श्रीजी महाराज के पास आये और अपना सारा वृत्तांत कह सुनाय तब श्रीमहाराज दयार्द्रचित्त हो उनको शिष्य बनाकर लक्ष्मीपा बनादिया ।

एकवार सव शिष्यों ने आपके जीवितमहोत्सव (मेला) के लि संवत् १८३४ चैत्रकृष्णा ७ का निश्चयकर सव को आमंत्रण देदिया मेले की सारी तय्यारियां होने लगी। अकस्मात् ऐसा हुआ कि आ १५ दिन पहले ही शरीर को छोड परलोक पधार गये। शिष्यों क बहुत दुःख और चिंता हुई। उनकी ऐसी स्थिति देख आप भगवान् स एकमास की आज्ञा लेकर पीछे पधारे तव तो सारे काम बडी धूमधा से होने लगे। नियत तिथि पर सारा आमंत्रित समाज एकत्रित होगया और जिनको पानीका ठेका दिया गयाथा वे पर्याप्त पानी नहीं देसके इसलिये लोगों को पानी विना बड़ा कष्ट होने लगा । शिष्यो ने सारी बातें श्रीगुरुदेव से अर्ज की। आपने फरमाया कि ईश्वर स इच्छाओं को पूर्ण करेगा। और आप अपनी कुटी में ध्यान लगाक

१—पायो गुण गोविंद को, पायो इष्ट अपार ।
आयो हाथ सरूप के, सतगुरु दयाल प्रताप ॥ १ ॥
([illegible] पारखी)

१—[illegible] कारणे, [illegible] ।
[illegible] करतार सूं, आये [illegible] ॥ १ ॥
(

विराजगये। इसके दो घड़ी बादही उत्तर की तरफ से एक छोटी सी बादली उठी और उसका इतना विस्तार हुआ कि उसने वहां बरस कर पानी ही पानी कर दिया। फिर महोत्सव पांच दिन तक बड़े समारोह के साथ मनाकर सब लोग अपने अपने स्थान को चले गये। तब कई दिन के बाद आप अपनी प्रतिज्ञा को यादकर संवत् १८३५ मिती चैत्रशुक्ला ७ शुक्रवार को तीन पहर पहिले से ही अन्त्येष्टि क्रिया की सारी सामग्री मंगवाली। दर्शनार्थ हजारों पुरुष इकट्ठे हुए। उस समय भीठू चारणों ने आपकी बडी सेवा बजाई। तब आपने जीवनदान चारण को बुलवाया और उसे कुछ सैनसे कहा। वह जहां अब देवल बने हैं उस स्थानको गया और वहां पर बेरी वृक्ष के पास एक रेत का ढूंहा जो महोत्सव के पहिले ही से बनाथा वह ज्यों का त्यों मिला। और जैसे ही उसके हाथ लगाया इधर श्रीजी महाराज ने इस पंच-भौतिक शरीर को त्याग दिया। आपका विमान जो बनाया गया वह बडा बनगया। लोगों को चिंता हुई इसको बारणे (दरवाजे) में से किस तरह से निकालेंगे। तब पूर्ण विश्वस्त चीदा नामक सुथार ने कहा आपकी गती अपरंपार है "कैतो होय बारणो चोड़ो के बैकुंठ होय जावै सोड़ो" यों कह विमान बाहर पधराया तो झट बाहर आगया। देवलोंके स्थान में पधराकर अगर कपूर घृत खोपरा (गिरी) चंदनादि से आपकी अन्त्येष्टि क्रिया की। चिता ठंडी होनेपर नारायणदासजी महाराज की प्रार्थनानुसार अबोट एक नारियल एक गादी और पांच सात पटल-दर्शनार्थ मिले। और भी ऐसे आपके अनेक परचे हुए।

भूत ग्रह दुज पीड़ा पंगुल, अंध मूक जड़ दीन।
दृष्टि देखतां किये सुखारी, पर उपकार प्रवीन॥ १॥







Sri Rampratapji Maharaj



Chowkas Ramji [illegible]

श्रीविहारीदासजी महाराज

श्रीनारायणदासजी महाराज । श्रीलक्ष्मणदासजी महाराज ।
श्रीरामदासजी महाराज । श्रीअमीरामजी महाराज ।
श्रीआदूरामजी महाराज । श्रीदईदासजी महाराज ।

आदि कई शिष्य श्रीहरिरामदासजी महाराजके हुए जिनमें श्रीविहारीदासजी महाराज अधिकारी थे । जिनके श्रीहरदेवदासजी महाराज पाटवी हुए । आपके बाद यथाक्रम निम्न लिखित पाटगादी विराजे ।

श्रीमोतीरामजी महाराज ।
श्रीरघुनाथदासजी महाराज ।
श्रीचेतनदासजी महाराज ।

आप सब भजनानन्दी तपोमूर्ति प्रभावशाली महात्मा हुए । और आपके सैंकड़ों शिष्य हुए ।

वर्तमान समय में प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद श्री १०८ श्रीरामप्रतापजी महाराज पाटगादी पर विराजमान हैं । आप शम, दम, त्याग, वैराग्य, तितिक्षामें शुकदेवजी के समान अद्वितीय दयालु मूर्ति हैं ।

सवैया ।

१ अनुभवः—

रैण दिहा नित नाम चितारत भूल मती मन मूढ गँवारा ।
भवसागर मति डूब मुसाफिर होय सचेत विकार सुँ न्यारा ॥
माया मद मोह सुँ राच मती नर या जुगमाँहि नही कोइ थारा ।
आदुराम कहै ऐसी सूँज मिली अब राम हि राम जपो मेरे प्यारा ॥ १ ॥

इंदव छन्द ।

२ अनुभवः—हरिराम के पाट तपैं हरदेव जु हंस दसा सब संतन प्यारो ।
दीरघ दृष्टि रु बैन विसाल जु राग रु द्वेष दोऊँ पख न्यारो ॥
शील सन्तोष सदा मन शीतल ज्ञान रु ध्यान भगतिको भारो ।
मोतिय राम कहै कर जोर जु भेष की टेक निभावनवारो ॥ १ ॥

दोहा ।

...मल दासजी भ्यो प्रणम्य हरिराम ।
... मोती दास रघू विश्राम ॥ १ ॥

(श्रीरामदासजी महाराज)

जोधपुर राज्य के बीकोंकोर नामक ग्राम में राष्ट्रीय शार्दूलजी के घर में संवत् १७८३ फाल्गुण कृष्णा १३ के दिन शुभ मुहूर्त में आप प्रगट हुए। आपके जन्मसमयमें बहुत आनंदोत्सव हुआ। बडे होनेपर थोडे काल में विद्या प्राप्त करली और शाक्तिक मतावलंबी होकर वैराग्य धारण कर जहां तहां विचरने लगे। द्वादश गुरु किये परन्तु चित्त की शांति कहीं भी नहीं हुई। ऐसे विचरते विचरते बीकानेर पधार गये। वहां एक सद्गृहस्थ के मुखसे श्रीहरिरामदासजी महाराजका रेखता सुना। सुनते ही उस गृहस्थसे सारा पता पूछ आप सीधे सिंहथल पधारे। और श्रीहरिरामदासजी महाराज के चरणों में पड़ विनयै की कि महाराज! मैं

१—क्षेत्र भक्त ऋषभसुत नामा, सुरधरदेश प्रकट तनु धामा।
अवनीपति इस रूपि जानो, अजगुण मास प्रगट दरसानो॥
उदय अंकूर अनवरत धरया, भयो सुकाल भक्तजन हरषा।
शार्दूलराम लकार शिपंता, धन धन पिता पुत्र जन्मंता॥
(श्रीराम. परची)

१ रेखताः—
अगम अगाध में ज्ञान पोथी पढ्या भरम अज्ञान कूं दूर डाल्या।
नाम निरधार आधार मेरे भया गद्दर गुम्मान मन मोह मार्या॥
तीन चढ चूर करि चित्त चौथे गया नाभि अस्थान धुनि धम्मकारा।
आय उरध्याय में वास निरभै किया रम रह्या एक आतम्म यारा॥
पदम में धाम सुखराम ऐसे मंडे रोम में रोम ररंकार लागे।
दास हरिराम गुरुदेव प्रताप तें हरहूं जीत बेहद लागे॥ १॥

१ छप्पयः—बडे होन के काज लाज छांडी जगकेरी।
हठ पथ किया अनेक तृषा उर मिटी न मेरी॥
द्वादश गुरु फिर किया जिया मन मिल्या न कोई।
मन उमंग अपार काज सरिया नहिं कोई॥
अनुक्रम सिथंल कायत अनंत आप अम भाये सबै।
अनाथ नाथ असरण शरण महरबान हूजे अबै॥ १॥
दोहाः—अरज हमारी एह नित, दुष्कर कठिन तराग।
आयो सरणे दास हूं, राखो रावरे पाय॥ १॥
(श्रीराम. परची)

बहुत जगह भटक लिया और द्वादश गुरु भी कर चुका परंतु मुझे सच्चा और पूरण ज्ञान किसी से नहीं मिला। अब मुझको सिवाय आपके कहीं पर भी आश्रय नहीं है अतः कृपाकर इस दास को दीक्षा दीजिये श्रीजी महाराज ने आपके ओघड रूप को देखकर फरमाया-भाई! रामस्नेही ऐसा रूप नहीं रखते हैं। यह सुनते ही आपने सेली, सिंगी, टामण दूणादि सारे आडंबरों को दूर फेंक दिये। तब श्रीगुरुदेव ने आज्ञा दी कि एक वर्ष के अनंतर तुम शिष्य बनाए जावोगे। तब आपने अधी होकर प्रतिज्ञा के साथ कहा कि, या तो आप अपना शिष्य बनालें नहीं तो अन्न और जल परित्याग कर शरीर छोडदूंगा। यह सुन एक दूस शिष्य को परीक्षा लेने के वास्ते आज्ञा दी कि वास्तव में इनकी दीक्ष लेने की सच्ची इच्छा है या नहीं। परंतु सोने को जितना तपाया जा उतना ही वह उत्तम होता है इसी तरह आपभी कसोटी पर पूर्ण उतरे तब तो आपको सच्चे जिज्ञासु समझ संवत् १८०९ वैशाख शुक्ला ११ के प्रातःकाल सिद्धियोग में सन्मुख आसन लगवाकर राममंत्रोपदेश दे शिष्य बना लिये। और राममंत्र का प्रभाव भक्ति ज्ञान योग क्रिया सहि भजन की सारी विधि बताकर सदुपदेश दे रामस्नेहधर्म के संपूर्ण नियम बतलाये। और फरमाया कि इस रामस्नेह संगत में आजसे तुम्हार

१—गुरु धर्म मर्यादारीति अनुसार खेडापाके महन्त आज दिनपर्यंत सिंहथल सन्मुख ही विराजते हैं।

२—रामदास तोहि नाम सदाई। राम सनेह संगति के माँई॥ १॥
श्वान सनेह जाल जग झूँटा। जामण मरण काल क्रम कूटा॥ २॥
मोह सनेह जन्म घर घरणा। जाति सनेह चौराशी फिरणा॥ ३॥
काम क्रोध के लोभ सनेही। खान पान अन मनूं मिलेही॥ ४॥
देह अवस्था प्रकृति सनेहा। कर्म प्रधान संजोग मिलेहा॥ ५॥
पांच पचीस सनेह सनेहा। पांच कोस मध चितवन देहा॥ ६॥
एता नेह तजैरे भाई। एक प्रीति गुरुचरण संभाई॥ ७॥
रामसनेही जाको नामा। हरि गुरु साधु संगति विश्रामा॥ ८॥
श्रीगुरुदेव कृपा भइ भारी। मान लई शिख परा परारी॥ ९॥
(श्रीराम. परची विश्राम ८)

नाम रामदासजी है। ऐसा सुनते ही आप तो कृतकृत्य होगये। श्रीजी महाराज के फरमाए हुए सारे उपदेशों को शिरपर चढ़ा प्रणाम कर आज्ञा ले विनयकर मारवाड में महलाणे ग्राम पधारे। लोगों ने एक पर्णकुटी बनवा दी तो आप वहीं पर श्वासोच्छ्वास भजन करणे लगे। दो मास के अनंतर कुछ घट चिन्ह दिखाई दिए और गुरुदर्शन की इच्छा हुई तब तो आप रवाने होकर रामसर गाँव जो गुरुधाम से चार कोश है वहीं से पनही परित्याग कर दंडवत प्रणाम करते हुए सिंहथल पधारे और श्रीगुरुदेवजी के चरणारविंदों में पड़कर साष्टांग दंडवत प्रणाम किया और सब गुरु भाइयों से मिले। गुरुदेव ने संबोधन किया तो आपने और कुछ नहीं कहा। केवल यही कहा कि "परचै नाद हमारे स्वामी"। तब श्रीगुरुदेव ने आज्ञा दी कि अभी तुम भ्रम में हो। दूसरे शिष्यों के साथ तुम्हारी भी परीक्षा ली जायगी। और ली गई। उसमें आप सब से पीछे रहगये। तो आपको इस बात का अत्यंत खेद हुआ। श्रीगुरुदेव ने आप की ऐसी स्थिति देख फरमाया कि तुम इस बात का क्या दुःख करते हो? तुम्हारी भक्ति मेरे प्रति सबसे अधिक है। और आगे चलकर तुमही सबसे बढकर होवोगे। ऐसे आशीर्वादात्मक गुरुवाक्य सुनकर आप बडे प्रसन्न हो एक पखवाड़ा और कुछदिन गुरुचरणों में निवास कर पीछे महलाणे ही पधार गये। छ मास के अनंतर आप फिर गुरुदर्शनार्थ सिंहथल पधारे तब श्रीगुरुदेवने आपको अपने उत्तम शिष्य

१—वार वार कर जोर के, बहु विधि कर्यो प्रणाम।
श्रीगुरु शरणे राखियो, खाना जाद गुलाम ॥ १ ॥
(श्रीराम. परची विश्राम ११)

२—अधिकारीजन विहारीदासा, तासूं मिले रामजनदासा।
गुरु भाई बृघ होवे जेता, सबसूं मिले परस्पर हेता ॥
(श्रीराम. परची विश्राम १३)

३—नीर भरका दूर कराए। श्रीगुरु सनमुख दास बैठाए।
अब सनमुख होय भजन कराओ। आतम परचै सुरत लगावो।
(श्रीराम. परची विश्राम १३)

बताये। और शिष्य बनाने तथा उपदेश[१] देने की आज्ञा दी। आप कई दिन गुरुधाम में निवास कर पीछे ही पधारगए। और भजन करने लगे। नामीचिन्ह प्रगट होने पर फिर सिंहथल पधारे। अपना बनाया हुवा "ज्ञानविवेक" ग्रंथ श्रीजी महाराज को सुनाया, सुनकर महाराज ने फरमाया कि पुत्र! तुम्हारे घट में ज्ञान प्रगट होगया है।

दोहा।

नाभि लयो विश्राम मन, पंक नाल रस लेत।
रामदास पश्चिम दिशा, शब्द चलण का नेत॥ १॥

चौपाई।

श्रीगुरु आगम यों वरणै। तिरसी जीव तुम्हारे शरणै॥ १॥
रामदास कहै मैं जु अनाथा। आप प्रताप थाप मम नाथा॥२॥
(श्रीराम. परची विश्राम १४)

आज्ञा ले फिर पीछे पधार गए। इस भांति श्रीगुरुदेवजी के दर्शनार्थ आप कई वार पधारे। बहुत से पुरुष आपके शिष्य होने को पहले आए थे पर आपने उनको दीक्षा नहीं दी। फिर श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा[२] से दीक्षा देनी आरंभ करदी। आपके ५२ शिष्य हुए। शिष्यों के आग्रह से मालवा, मेवाड़ आदि देशों में रामत कराते हुए पहिले गुरुदर्शनार्थ सिंहथल पधारे, फिर मारवाड़ बड़ूग्राम पधारे, वहां कुछ समय विराजे और वहां से आसोप पधार गए। वहीं पर आपके दशवें द्वार की समाधि सिद्ध हुई। और गुरुमहिमा, भक्तमाल, चेतावनी, जमफारगती आदि अनेक ग्रंथ तथा अंगबद्ध अनुभव वाणी की रचना हुई। जिन वाणी के दास, उदास, शांभवी, और सुदब करके चार भेद हैं। इस प्रकार वाणी-रचना के बाद फिर आप सिंहथल पधारे। वहां एक दिन बाहिर की तरफ आप संध्या करा रहे थे इतने में ही तो आपको श्रीकबीर साहब का

१—दो उपदेश जिग्यासी आवै। गुरपद दरसां गुरपद पावै।
(श्रीराम. परची विश्राम १३)

२—रामभजन को दो उपदेसा, परा परायण गावत शेसा।
(श्रीराम: परची विश्राम १५)

दर्शन हुआ और कबीर साहब ने फरमाया कि रामदासजी जाशों में रहना। आपने आकर श्रीगुरुदेव से कहा सो श्रीगुरुदेवजी ने जाशों का अर्थ सत्संगति और सवाई भक्ति का बताया। आज्ञा माँग यहां से आप शीलवा नामक ग्राम में पधारे। प्रातःकाल में आप स्नान पधरा रहे थे कि इतनें ही में आकाशवाणी हुई कि "हे रामदासजी! यह हमारा सत्य वचन है कि, तुम्हारे धर्म की खूब वृद्धि होगी।" फिर यहांसे आसोप और अरटिया ग्राम होते हुए पुरोहितजी पद्मसिंहजी के अत्याग्रह से आप सं० १८२२ में खेड़ापे पधारे और यहाँपर आपका स्थान बना और हजारों शिष्य हुए। कुछ समय के उपरांत आपने अपने शिष्यों से प्रकट किया कि, यहां पर श्रीगुरुदेवजी महाराज को पधरावें तो बड़ा आनंद हो ऐसा फरमाकर तत्क्षण बहल जुड़वा आपने कान्हड़दासजी और हेमदासजी कूं सिंहथल श्रीजी महाराज को पधराने के लिये रवाने कर दिये। यह समाचार चपला की चमक की भांति सारे गामों में फैलगया। तमाम बाल वृद्ध नर और नारियों के आनंद की सीमा न रही। और सारे मांगलिक साज सजाने लगे। इतना ही नहीं, रास्ते के ग्राम जिधर से श्रीगुरुदेवजी महाराज पधारने को थे उनमें भी उसी तरह आनंद मंगल वधाइयां होने लगीं। श्रीगुरुदेव जिस ग्राम से होकर पधारते थे वहां के निवासी बड़े आवभाव से एक दो दिन विराजमान कर फिर आगे पधारने देते थे। इस भांति ४४ कोसकी रामत कराते हुए कई दिन से खेड़ापे पधारे। आप पधार गए हैं इस आनंदवर्धक बधाई को सुनते ही श्रीरामदासजी महाराज अपने साधु गृहस्थ आदि तमाम शिष्यों के सहित गाजेबाजे से वधावणे की सब सामग्री सजाय दंडवत प्रणाम करते हुए श्रीगुरुदेवजी को वधाने के लिये सन्मुख पधार वधावणे की रीति से वधाय बाजोट पर श्रीजी महाराज को विराजमान कर पूजन आरती की, और पगमंडा निवछावर करते हुए स्थान में पधराए। उस समय के सुख आनंदका बताना इस निर्जीव लेखनी की शक्ति से बाहर है। हां अल-

१—रामदास पंथ चले तुम्हारो। यह सहायक सदा हमारो।
(श्रीराम. परची विश्राम १८)

बचे श्रीदयालुदासजी महाराज के फरमाये हुए उस वक्त के वधावणे के दो पैदों से कुछ आनंद का अनुभव कर सकते हैं। श्रीजी महाराज के पधारणे की खुशी में प्रत्येक दिन नित्य नए उत्सव होने लगे। एक महीना और पांच दिन क्षण के समान चले गए। अत्यंत हट के साथ सीख मांग ने पर अपने शिष्यों से फूल डोल के मेले पर प्राप्त हुई जो आदि अंत की भेट वह सारी की सारी श्रीरामदासजी महाराज ने श्रीगुरुदेवजी महाराज को अर्पण कर दी। श्रीगुरुदेवने कुछ अपने लिए भी रखने को फरमाया तो भी आपने नहीं रखी और विनय की कि, इसमें मेरा क्या किरावर है? मैंने तो मालधणी को माल अर्पण किया है, यहां तक कि मेरे प्राणभी आप के न्योंछावर हैं। यों विनय कर फिर शाल दुशाले धातु वर्तन आदि बहुत वस्तुएँ भेंट की। और आपको दो[३] कोस तक पहुंचाने के लिये पधारे। वापस लौटाने पर भी पीछे नहीं

१—म्हांरे मन आज उमावो हो, राम सनेही आविया निज भाव वधावो हो ॥ १ ॥
या दिन कों मैं बलि जाऊं हो, मिले पियारे रामजन सन्मुख थिर नांऊं हो ॥ २ ॥

यह दोनों बधावणे इसी पुस्तक के बधावणा प्रकरणमें हैं।

२—आई भेट समर्पण सारी, आदि अंत पूजा पूजारी।
जीव जिंद धिन प्राण निछरावर, माल धणी देतां नहि किरावर ॥
(श्रीराम. परची विश्राम २०)

स्वामी कह्यो क्यों न तुम राखी, अरपण करी आन कर आखी।
रामदास कहै तन मन धन तेरा, मैं तो सदा चरनका चेरा ॥
(श्रीहरि. परची)

पूजन भेट धरे निज भावं, पाट पीतांबर सोम श्रीपावं।
श्रीगुरुपूज नमो हरिरामं, सा अधिकारि विहारि प्रणामं।
ओर सबै शिष संबर सुभायं, संत विदा हुय पंथ सिधायं।
(परची श्रीबालकदासजीकृत)

३—जोजन अर्ध पहुँचावण गया, रामस्नेही व्याकुल भया।
श्रीगुरुआज्ञा दीनी जबही, अब जावो तुम घरकूं सबही ॥
रामदास ऐसे गुरु गायक, श्रीगुरुचरणसरोज पर लायक।
या दिन ठौर नहीं मन कबहू, जीव विश्राम जिवारी सबहू ॥
(श्रीराम. परची विश्राम २०)

भीटते है। बड़े मुश्किल से पीछे लोटपाये। ऐसी भांति श्रीगुरुदेवजी महाराज की पधरावणी कई बार हुई। एकवार आपने श्रीगुरुदेव से अर्ज की कि महाराज! गांव के अंदर का स्थान आपके परिवार के लिये छोटा है अतः अब कोई बड़ा स्थान बनवाने की आज्ञा फरमावें। तब आपने भागरो पूर्व की ओर पहाड़ी की तलहटी में जगह बतलाई कि यहां बनवा लो। तब तो श्रीजी महाराज की आज्ञा से वहीं पर संवत् १८३४ फाल्गुण कृष्णा ४ के दिन स्थान की नीव डालदी गई। और कई वर्षों में जाकर यह आलिशान स्थान संपूर्ण हुआ। आप के जीवन-काल में जितने परचे हुए हैं वे सब परची में श्रीदयालुदासजी महाराजने सविस्तृत वर्णन किए हैं। जिनका संक्षिप्त सार जो श्रीअर्जुनदास जी महाराज करके बनाया गया है वह यहां पर उद्धृत किया जाता है।

अथ परची सार।

श्रीहरि गुरु हरिराम धिन, रामदास सुख सांम।
बालपुरुषपूरण भती, अर्जुन की परणाम॥ १॥

दोहा।

नित अवतारी संत धिन, जीवां करण उधार।
भरतखंड मुरधर धरा, आन लियो अवतार॥ १॥

छप्पय।

संवत सतरहसो जान वर्ष तैंयास्यो कहिये।
फागण वद त्रयोदशी रामदासं जनमइये॥
खोजत वर्ष पचीस मिले गुरु हरियानंदा।
नव को वर्ष प्रसिद्ध शुक्ल वैशाख लहंदा॥
लेइ ग्यारस अग्या रमता आप देशमज।
गांव मेलाणै विराजकर सुमरण विध एकंत सज॥ १॥
वर्ष तीन इम भये जुगलमत अडिग सधीरा।
वर्ष दुकाल जु मांहि नाजकी अतिशय भीरा॥
नारखान जदुवंश सुभी है गाँवज ठाकर।
[illegible] मायना ताह मेट रुपियो ले आकर॥
[illegible]यु हम राखाँ नहीं करो पुण्य दूजा घणा।
रामराय पूरे सयन हम शरणागत स्यां तणा॥ २॥

इंदव छंद ।

मान लई सत बात तिही दिन नित्य रसोई सु आन जिमावै ।
काल बारोतइ लोक दुखी तब संत को चित्त अत्यन्त दुखावै ॥
लेत उदे कण पंच पिये जल पूछ तिनां प्रति सांच बतावै ।
एम भये दिन सात अखंडसु तो पण ध्यान अडिग्ग लगावै ॥ १ ॥
सेवगरूप धरे तब माधव चून गेहूं घृत दाल ले आए ।
साधु हि राम रसोइ करो तुम राम गुरू पति भोग लगाए ॥
आजहुं ते दुख दूरि भयो तुम कहकर आपन धाम सिधाए ।
नार जु खान आए ढलते दिन संतहुते सब दुःख जु गाये ॥ २ ॥

मनहर छंद ।

कहै नारखान अहो बड़ो दुःख समय मांहि
घुसी गूघरी जु पाय आज हमें भाये हैं ।
साधूराम कहै तुम आये परभात इहां
ल्यायके रसोई हमें कहो गांव जाये हैं ॥
तबै नारखान भाखै गांव जो विराई हुंत
आप तुमे पास जेज घड़ी नाँहि लाये हैं ।
साधूराम हुंत कहो रामदास बोल एम
इने केरा बधे पटफटे देख थाये हैं ॥ १ ॥

दोहा ।

नारखान मन विसम हुय, अद्भुत बात निहार ।
भाग बड़ो मेरो अहो, इसे संत हम द्वार ॥ १ ॥

कवित्त ।

ताहि समें देरामाँह दिखणी फौज लेय आप
राज विरोध राज काज देश पेसवार है ।
गाम जो मेलाणा हुत लोक सबै भाग चले
भाटी आय संत पास ख्याल एम डार है ॥
मात आज्ञा देहु सो तो चलत कबीला साथ
आप हमें चढ़ां पाइ यहाँ सँभ्या सार है ।
रामदास कहै तुम मेरी चिंत करो नाहिं
तुम्हें घट सोई राम उनमें निहार है ॥ १ ॥

लौटते हैं। वडे मुश्किल से पीछे लोटवाये । ऐसी भांति श्रीगुरुदेवजी महाराज की पधरावणी कई वार हुई । एकवार आपने श्रीगुरुदेव से अर्ज की कि महाराज! गांव के अंदर का स्थान आपके परिवार के लिये छोटा है अतः अब कोई वडा स्थान बनवाने की आज्ञा फरमावें। तब आपने ग्रामसे पूर्व की ओर पहाड़ी की तलहटी में जगह वतलाई कि यहां बनवा लो । तब तो श्रीजी महाराज की आज्ञा से वहीं पर संवत् १८३४ फाल्गुण कृष्णा ४ के दिन स्थान की नीव डालदी गई। और कई वर्षों में जाकर वह आलिशान स्थान संपूर्ण हुआ। आप के जीवन-काल में जितने परचे हुए हैं वे सब परची में श्रीदयालुदासजी महाराजने सविस्तृत वर्णन किए हैं । जिनका संक्षिप्त सार जो श्रीअर्जुनदास जी महाराज करके बनाया गया है वह यहां पर उद्धृत किया जाता है।

अथ परची सार।

श्रीहरि गुरु हरिराम धिन, रामदास मुझ सांम।
धालपुरुषपूरण प्रती, अर्जुन की परणाम ॥ १ ॥

दोहा।

नित अवतारी संत धिन, जीवां करण उधार।
भरतखंड मुरधर धरा, आन लियो अवतार ॥ १ ॥

छप्पय।

संवत सतरहसो जान वर्ष तँयास्यो कहिये।
फागण वद त्रयोदशी रामदास जनमइये ॥
खोजत वर्ष पचीस मिले गुरु हरियानंदा।
नव को वर्ष प्रसिद्ध गुरु वैशाख लहंदा ॥
लेर ग्यारस्य मग्या रमता आप देशमज।
गांव मेवाणै विराजकर सुमरण विध एकंत सज ॥ १ ॥
वर्ष तीन हम भये जुगलमत अडिग सधीरा।
वर्ष दुकाल सु मांहि नाजकी अतिशय भीरा ॥
नारधान अदुवंत सुमी है गाँवज ठाकर।
उपज भावना ताह मेट रुपियो ले आकर॥
कहे साधु हम राखाँ नहीं करो पुण्य दूजा घणा।
रामदास पूरे रतन हम शरणागत स्यां तणा ॥ २ ॥

इंदव छंद ।

मान लई सत बात तिही दिन नित्य रसोई सु आन जिमावे ।
काल बारोतइ लोक दुखी तव संत को चित अत्यन्त दुखावे ॥
लेत उदे कण पंच पिये जल पूछ तिनां प्रति सांच बतावे ।
एम भये दिन सात अखंडसु तो पण ध्यान अडिग्ग लगावे ॥ १ ॥
सेवगरूप धरे तव माधव चून गेहूं घृत दाल ले आए ।
साधु हि राम रसोइ करो तुम राम गुरू पति भोग लगाए ॥
आजहुं ते दुख दूरि भयो तुम कहकर आपन धाम सिधाए ।
नार जु खान आए ढलते दिन संतहुते सब दुःख जु गाये ॥ २ ॥

मनहर छंद ।

कहै नारखान अहो बड़ो दुःख समय मांहि
पुसी गूघरी जु पाय आज हमें आये हैं ।
साधूराम कहै तुम आये परभात इहां
लायके रसोई हमें कहो गांव जाये हैं ॥
तवै नारखान भाखै गांव जो विराई हूंत
आए तुमे पास जेज घड़ी नाँहि लाये हैं ।
साधूराम हूंत कहो रामदास बोल एम
इले केरा वचे पटकटे देख धाये हैं ॥ १ ॥

दोहा ।

नारखान मन विसम हुए, अद्भुत बात निहार ।
भाग बड़ो मेरो अहो, इसे संत हम द्वार ॥ १ ॥

कवित्त ।

ताहि समें देशमाँह दिखणी फौज लेइ आए
राज विरोध राज काज देश पेसवार है ।
गाम जो मेलाणा हूंत लोक सबै भाग चले
भारी आप संत पास साल एम डार है ॥
मात आज्ञा देहु सो तो चलत कबीला साथ
आप हमें यहां पाइ यहाँ सँभ्या सार है ।
रामदास कहै तुम मेरी चिंत करो नाहिं
तुम्हें घट सोई राम उनमें निहार है ॥ १ ॥

तबै नारखान कहै आज्ञा आप सोई करूं
बोल संत कह्यो साम्हां जाय जाय कीजिये।
चले आज्ञा पाय तबी जायके यकार मांही
हमें तुम्हें जुद्ध है यकार पहल दीजिये॥
पीछे मेरा हाथ देख मरूं मैं निशंक भय
तोहि मोहि जोड़ कहा गड्डपति छीजिये।
तबै सैनपति पाग पदल जु भ्रात भयो
ऐसो रजपूत कहां मिले मोहि रीझिये॥ २॥
आय गाँव कहै तोहि कौन ऐसी मत्त भई
तबै नारखान कहै गुरु परतापही।
आय सेनापति संग संत को नवाय शीश
धरी भेट कहै ये तो रामरूप आपही॥
लई नाँहि संत सोई कियो हठ वेर यह
ऐसेही अचाही ताके दर्श जाय पापही।
नारखान दृढ धार लेऊं दीक्षा आज अहो
लायके प्रसाद कह्यो देवो मंत्र जापही॥ ३॥
तबै रामदास मान गुरू कह्यो सत्य सोई
आदू रीत जान नारखान दीक्षा दए हैं।
धऱ्यो दाम ताके वस्त्र साधुराम किया जबै
जान राम हेत संत दास आस लए हैं॥
भए शिषशाखा बहु रामत करत गए
रहे बहु गाँवमाँझ ग्वाल जन्म भए हैं।
फेर कई मास गाँव आसोप विश्राम लयो
करे भाव भक्ति जहां संत आय रए हैं॥ ४॥

इंदव छंद।

एक दिनाँ संत आये खेड़ापे हि, मोहित नाम पदम्म सिलानो।
बोल कहै एह गाँव तुमारो है, यांहि कृपाकर वासहि ठानो॥
जानि आँकूर उदै जहां विराजत, वर्ष बाईस के धाम बंधानो।
शिष्यशाखा बहुते मिलतां प्रति, श्रीगुरु आखत मो गुरु आनो॥१॥

दोहा।

हरियानन्द आए यहाँ, उच्छव करे अपार।
एक समय जा प्रातही, गुरु शिष गुष्ट विचार॥ १॥

रामदास कीनी अरज, आज्ञा दीजै मोय ।
आप फाथ मांय नहीं, करांज अस्थल सोय ॥ २ ॥
गाँव द्वुत पूर्व दिशा, पँचरात पैंडसु जाय ।
शुभ पुल इच्छा जोय के, सतगुरु दई बताय ॥ ३ ॥

छंद पद्धरी ।

शुभ संवत अठारहसो प्रवान । भल बरष तिये चोके निधान ॥
फागन पद चौथज नींव दीध । बढ राम चौक कोठार कीध ॥ १ ॥
उतराद दखिन मंडार सोय । चहुं कोट इन्द्र पोलसजु होय ॥
फिर उरधखंड महलाँ झरोख । छवि अद्भुत बरनूं केम गोख ॥ २ ॥
तहां भ्राजमान गुरुदेव आप । शिरहंत मेट तन त्रिविध ताप ॥
अब राम भजनको बन्यो ठाट । चत चरण न्हाय गुरु चरण घाट ॥३॥
कर रामत मुरधर देश माँहि । लद उष्टर घोड़ा बहल ताँहि ॥
तंबू कनात सब रीत जोय । द्वेषी तब देखे दुखी होय ॥ ४ ॥
इम भाव अभावी पक्ष होय । कोउ साध असाधहु कहे सोय ॥
कोउ भुरकी मोहनिमंत्र भाख । कोउ आदि अबीको पंथ आख ॥५॥
इन तीर्थ मंदिर सेव नाँहि । सब शूद्र विप्र मिल एक ठाँहि ॥
इम दुष्ट जाय गुरुराज पास । सब अधिकी ओछी कही तास ॥ ६ ॥
इक आज पैड़ापे पंथ जोय । सो बडे आप महाराज होय ॥
इनको नहिं पूछै कोन जाय । नय विजयसिंह राजा रिसाय ॥ ७ ॥
लिख हुकुम दिवाणीपत्र जोय । चत अश्व चढे भृत चले सोय ॥
उन राम महोले आय देख । अद्भुत सतसंगति भजन पेख ॥ ८ ॥
मुखसे अति सेवक भाय बात । कित स्वामीजी को दरश पात ॥
सब बाल दीन आगम जनाय । जन सेवादासहि को सुनाय ॥ ९ ॥
सर राम कुंड मरमत्त जान । श्रीरामदास तहां विराजमान ॥
कर दरश बोल नाँहिन कहाय । जो लिख्यो पत्रिका माँय ताय ॥१०॥

दोहा ।

कौन जाति पुन्यक पधति, यो कैसो उपदेश ।
कोप नृपति ऐसो कह्यो, छोडो म्हारो देश ॥ १ ॥
पद्धति जानो रामजी, रामनामाँ उपदेश ।
रामजनाँ ऐसो कह्यो, आँ है थारो देश ॥ २ ॥

चौपाई ।

इतना कहकर चले ते सारा । राम जनागति अगम अपारा ॥
जैसे संग सराय वसेरा । पनग कांचली दृष्टि न हेरा ॥ १ ॥
आवनहारा देखत याता । कहा जानूं का करिहै दातर ॥
पैदल हुय कर संग चलाये । रामदास जुत शिष सरसाये ॥ २ ॥
कोस तीन पैदल सब आए । वहांसे बैल दास जोताए ॥
आगेहूंता थाट सवाया । दिनदिन विभो वधत दरशाया ॥ ३ ॥
देवगढ़में भक्त सवाए । राज रैत सब वंदत पाए ॥
प्रेत इग्यारै भयो उद्धारह । विराजे एक मास दिन तेरह ॥ ४ ॥
वहांसे आगे गाँव करेड़े । राव गोपालदास तहाँ तेड़े ॥
दिन तेयीस विराजे स्वामी । दिन दिन प्रेम भाव विध पामी ॥ ५ ॥
आज्ञा मांग चले गुरुदरसन । सिहथल महंत मिले मन परसन ॥
माँडेल्यांमें आन विराजे । सेवक भाव धरप दोय राजे ॥ ६ ॥

दोहा ।

मंडलायत ठाकुर शुभी, इंद्रसिंह तेहि नाम ।
सारूंडे हितभाव कर, परचो पायो ताम ॥ १ ॥
संत छोड़ चाले जबी, मारवाड़ दुख थाय ।
पितापुत्र भृत पदल सब, खोसा रिलमिल खाय ॥ २ ॥
दखिणी जात न पांति कछु, आँण फिरी तिण बेर ।
यही आस सो रुल गया, हरि की गति नहिं हेर ॥ ३ ॥
बीकाणे का राजमें, सुख संपति वरताय ।
सारूंडे में आयकर, सुरधर रहे लुकाय ॥ ४ ॥

चौपाई ।

गुलक घोसले करिहिं निंदा । जैसो भाव फले कर बंदा ॥
हिंदू रामसनेही माँही । मारे जीव मरजाद हटांही ॥ १ ॥
ठाकुर मूरति निकमी तातें । परचो भयो देख भय पामे ॥
अद्भुत संतचरित सुन आने । हरिमरजाद तादि को माने ॥ २ ॥

१—श्रीगुरुको परणाम करि, हरिदर्शनदरसान ।
रामदेवमें रामरथ, राम हमारे दास ॥ १ ॥
हम करी गुरदेवकी, बंदगी गुरु अरसान ।
वैसे ज्यूं रामचंदे, हरि धर्मनिरनन ॥ २ ॥
(श्रीराम. वार्ता वि. १५)

अस्थल मांहि चीज थी सारी । रामदास हरिजन सब डारी ॥
संगी जानर लीन्ही सोई । अजरी भोजन जिमि गति होई ॥ ३ ॥
लीजै हरिजन माल तुमारो । नहिं लाँ हरिअरपन है सारो ॥
रामदास ऐसे अनचाही । सुरतसिंह ऐसी सुन पाई ॥ ४ ॥
हे महाराज हाल का मेरो । धिन धिन धनी रामजी तेरो ॥
रामदास के नहीं सिधाई । जिसी भावना फलै सदाई ॥ ५ ॥
रामदास ऐसे अनचाई । सुरतसिंह मनभाव जु थाई ॥
चातुर्मास की अर्ज करावो । लिखो पत्रिका तुरत बुलावो ॥ ६ ॥
संत भाव बस जानो सारा । करी बीनती आवनहारा ॥
रामदास संग शिष ले सबही । बीकानेर पधारे तबही ॥ ७ ॥
राजा के विश्वास विशेषा । विन बरषा निंदक कर धेषा ॥
ततः शिष्य सोधी जन आई । सो सुरतेश सुनी मनभाई ॥ ८ ॥
दिवस तीसरे मेह जु कीयो । सूरसागर सूताँ भरदीयो ॥
दिन दिन भाव उछाह जु सारा । सतसंगति बहु भीर अपारा ॥ ९ ॥
दिन प्रति राज रसोई आवै । पंच पकवान मिठाई लावै ॥
राजस भोजन कामन काई । रामदास यों कहे समुझाई ॥ १० ॥
सीदी एक बुलायो राजा । रचै रसोई सो विधि साजा ॥
चातुरमास दिन दिन अधिकाई । राजा परजा भाव बधाई ॥ ११ ॥

दोहा ।

विजयसिंह भूत सयनसौं, कही हमें दुख काय ॥
गढ़ छूटो सुत पदलियो, पासवान मरवाय ॥ १ ॥
घंडायल ठाकुर शुभी, कहि हरिसिंह बखान ।
रामदास कूं सीख दी, ता दिनते दुख जान ॥ २ ॥
कह राजा साची कही, क्यों ऐसी बुधि आय ।
होनहार सो नाँ टरै, कहो अब कौन उपाय ॥ ३ ॥
संत पधारै सो विधी, कीजै राज विजेश ।
ता दिन अपने आधमहिं, आयाँ सब सुख देश ॥ ४ ॥

छंद पद्धरी ।

ख पत्र भाव भक्ती समेत, दे भेट पठाये संत हेत ।
। बांच पत्रिका संत राज, लखि भाव चलनको कियो साज ॥ १ ॥

१—मेह बरपःसे मारजी, दुनिया पावे दुःख ।
रामदास की बीनती, बनो करावे सुक्ख ॥ १ ॥
मेह वृष्ठ हरिया हुआ, भावना भवकाल ।
रामदास सुख ऊपन्या, बहै बहै भया सुकाल ॥ २ ॥

दोहा।

भाय माँहि सब जान ज्यो, ज्हें निश्चे मन थाय।
गढ़ चढ़ नौबत बाजती, बार प्रताप सवाय ॥ १ ॥
परगट परचो दीसियो, भाव अभाव कराय।
आगे अबै नजीक है, भक्तीबस हरि राय ॥ २ ॥
फिर सिख पीथो दास की, पूरन कीनी आस।
रामत कर रतलाम दिशि, अनत जीव सुख रास ॥ ३ ॥

छन्द पद्धरी।

जन चले पंथ निर्भय सदाय, मँझ गाम गाम बिश्राम थाय।
मिल राम सनेही भाव चाव, रतलाम धाम उच्छव बनाव ॥ १ ॥
सिष कनीराम गुरु धर्म काज, तन मन धन अरपे सर्व साज।
नित प्रति रसोई नवी विद्धि, गुरु भोग धरै अक्खूट ऋद्धि ॥ २ ॥
तहाँ अबै राजप्रोहित प्रवीन, उच्छव में उच्छव करसु लीन।
फिर गाँव सारंगी दासभाव, पधराय संतकर चित्त चाव ॥ ३ ॥
इक गांव दोतरिये दुष्ट पत्ति, बहु विकट घाट झाड़ीसु अत्ति।
उन तेड़े संताँ पत्र मेल, हरिजन के हरिका करै खेल ॥ ४ ॥
मनमांहि हुतो खोसण विचार, कर दरश पलट सब कुबुधि टार।
पड़ चरन मांहि कर गुना माफ, मैं दास तुम्हारो गुरू आप ॥ ५ ॥
जिन भाव रसोई भेट कीन, संग सचिव मेल पहुंचाय दीन।
इम महिमा सबही मुलक माँय, फिर संत शहर रतलाम आय ॥ ६ ॥

दोहा।

दिन तेवीश विराजिया, रामदास महाराज।
सिष पीथल परिवार के, पहुंचावन संग काज ॥ १ ॥
सोंखेड़े आये जना, दुखी चित ललचाय।
सारंगी भादी प्रसिध, ठीकरियाके माँय ॥ २ ॥
रिल मिल खोसा सामटा, दोये दबिया आय।
याँसे बाया जावसी, लेसां माल छिनाय ॥ ३ ॥
लछमण कहै दयालसौं, दुई दिन विराजो और।
इतने बीखर जावसी, गांव मरजादन तोर ॥ ४ ॥

छन्द भुजंगी।

बै बाल बोले सुणो दास सांची, कहूं बात तोकूं कदे नाहि काची।
मैं राम रिच्छा नितूभक्ति करही, उन्हें दुष्ट इच्छा दिनां तीन भरही ॥१॥

३६८

अधू पात्र भरियो अबे नारा पासी, सबै लोक मोकूं बड़े सिद्ध गासी।
तुमे मत्त चिन्ता करो दास मेरी, जिन्हे शरण लीन्हीं तिन्हे लाज केरी ॥२॥
हरी मत्त फेरी खोसा और सूजी, लगे जेज साधां करो धाड़ दूजी।
चले रात आधी खोसे गाम जाई, पको ठोड़ माँझी धसे गेह मांई ॥३॥
तहां हाथ नारी फट्यो शीश जोये, लखै संगवाला मनां माँहिरोये।
रुक्यो कंठ दुखियो नहीं नीर पायो, मरे दिवस तीजे वचन संत गायो ॥४॥

दोहा।

रामदास महाराज इम, सबकूं कह्यो सुनाय।
चलो अभी जेजन करो, हुइ आज्ञा हरि राय ॥ १ ॥

छन्द त्रोटक।

हरि पाय आज्ञा विचरे जबही, सब दास उदास भये तबही।
पहुँचावण हाकम आदि सहू, कह ठाकुर के दिन साथ रहू ॥ १ ॥
महाराज कहे तुम भाव इसो, रछ पाल गुरू तब शंक किसो।
चिरताय सबै सँत पंथ लयो, हम आनंद मग्ग न दुःख भयो ॥ २ ॥
कहि लोक तुमें सिधराज खरे, उन महाजन राजमें दंड भरे।
फिर चोकिय नाम न लेत कहूँ, जहँ आयत जोरत हाथ सहूँ ॥ ३ ॥

दोहा।

मांगरोल चीतोड़ हुय, घाटे उतरे आय।
खेड़ापे मस्थल महीं, उच्छव करे सवाय ॥ १ ॥
रामदास महाराज का, परचा अगम अपार।
मो बुधिसम वरणन कऱ्या, षष्ठ छंद अनुसार ॥ २ ॥

कवित्त मूल।

रामदास महाराज का फिर परचा वरणन कऱ्या।
प्रेमदास शिर व्याधि अंत जमदूत जु आये।
करि करुणा गुरु हुत ततच्छिन आन बचाये ॥
यो बालक है राम तुम्हारो काम न कोई।
गुरु पेमुख अपधाम सोध तुम लेयो सोई ॥
सुख कर हाथ फिर ताप तिन आधि व्याधि दूरे हऱ्या।
रामदास महाराज का परचा फिर वरणन कऱ्या ॥ १ ॥
प्रेमदास सतसंगने देवपुरी को दुख टऱ्यो।
भैरव परचमें जन्म गुसांई मेर बनायो।
भैरव दुख दम करे जगतमें परचो पायो ॥

१—सं. १८५१ में खेड़ापे पधारे।

के दिन बीतां कह्यो मोर मोपो हुय भाई।
नहिंतो सान्यो करों गुसांई मना न लाई॥
तब विकल चित्त सुधि नाँहि तन पीपाड़ भ्रमतो आपच्यो।
प्रेमदास सतसंगते देवपुरीको दुख टन्यो॥ २॥
नित नेम हजूरी महन्त गुरु, देह लग तिनके संग रह्यो।
प्रेमदास ता प्रती पूछ सब कह्यो राम भज।
देवपुरी दृढ़ धार राम मुख रट्यो रात मँझ॥
भैरव दूरे हूत क्रोध कर बहुत डराये।
राम टेक विश्वास धार गुरु दरशन आये॥
गुरु रामदास महाराजकी ले दीक्षा आनन्द भयो।
नित नेम हजूरी महन्त गुरु देह लग तिनके संग रह्यो॥ ३॥

छन्द मनहर।

राजगुरु पुरोहित नाम सगरामदास।
ईडरके मध्यवास साधुसंग भयो है॥
देवी देव भात त्याग साचो राम इष्ट जान।
सतगुरु रामदास शरण आन लयो है॥
राजा शिवसिंह कहै पूज तमें बेचरा की।
छोड़दई ताको फल अबी पाय गयो है॥
भ्रात रामसिंह हू की वधू स्यानगत्त हुई।
साधु शोभाराम पास दुःख सबै कयो है॥ १॥
तबै साधु कह्यो एम मास एक मध्य खेम।
धरो प्रण प्रीति नेम गुरू साच मानियो॥
ताहीदिन रामसिंह लियो खण मिष्टहू को।
जाऊं रामधाम तबै पाऊं एम जानियो॥
एक दिन भूलचूक बटत प्रसाद साथ।
लेतही शयन माँझ गैब छड़ी हानियो॥
बोल कह्यो मूढ तुम किसी चूक गयो अहो।
ऊठ के किवाड़ देखे जड्यो हाथ जानियो॥ २॥

दोहा।

मास दिवस आयो जबै, शुद्ध भई ता नार।
फिर गुरुदर्शन आयके, लहा दर्श सुखसार॥ १॥
दास सगराम जु भक्तिभल, गुर्जर वर्णी सर्वांय।
अनता जीव चेतायके, मिले मोक्षके माँय॥ २॥

कवित्त ।

विप्र एक याही शहर राज कामदार सुनो ।
  फेर चूक माफकीसें बेड़ी पाल डार है ॥
कहत सगराम ताहि सुनो बात मेरी अहो ।
  गुरु रामदास तोहि दुःखसे निवार है ॥
ताही निशा जाम दोय गयाँ भयो दर्श दिव्य ।
  कह्यो ताहि आय भय डर्‍यो ताहि यार है ॥
तीसरी निशाहू फेर भयो दर्श याही बेर ।
  काट भालसीसें बेड़ी काट कीयो पार है ॥ १ ॥

दोहा ।

यह परचो ईडर मही, जानत अजहूं लोय ।
राम गुरू अंतर नहीं, शिष विश्वास जु होय ॥ १ ॥

कवित्त ।

रामाराम शिष्य नदी डूबत पुकार सुन ।
  धाररूप गहे बाँह कढ्यो गुरु क्षेम ही ॥
एक समय माधी गाँव डेरो सर पाल शोभे ।
  व्याल दौरि आय गोदमांहि कीयो प्रेम ही ॥
जीभ छूत चरण चाट गयो वृक्ष तणी वाट ।
  कहै संत इने जीभ ठंडी गहे जेमही ॥
कहाँ लग गाऊं परचा रामदास गुरू तणां ।
  काल आदि वंदे पाँव और कहो केमही ॥ १ ॥
सर्प एक गाँव जो खेड़ापा माँझ कहूं सोय ।
  झाल्यो झले नाँहि कोऊ सबी हार थाकेहैं ॥
गुरू रामदास आय कहै साप राम सुनो ।
  थानक तुहारे अभी जाय हम नाखे हैं ॥
सुन्यो व्याल संत मुख नसजु पसार दई ।
  झाल डार ताही बेर फेर नहीं झाके हैं ॥
शीत काल ऊंट एक संत पंथ आन अन्यो ।
  रहे खड़ो दूर एम रामदास भाखे हैं ॥ २ ॥

कुंडलिया ।

उष्ट्र चल्यो न पैंड इक, धणि आयो पचिहार ।
विनय करी संता प्रती, कहु इनको उपचार ॥

कहो इनको उपचार तवै सो छड़ी झलाई।
या तुम देहु लगाय होय आगे जिम जाई॥
(उन) जाय सोई विधि करि तवै, उद्दर चल टोले गयो।
रामदास महाराजको अद्भुत परचो सव लयो॥ १॥

छंद मनहर।

शिष्य फेर सेवादास पुत्र सोधनेकी आस।
गुरू रामदासपास मांग आज्ञा चाले हैं॥
विकट पहाड़ झाड़ी अकेलो चलत तहां।
देख सिंह रूँख आय आगे रींछ माले हैं॥
टेर रामदास हूंत मौचसे वचाय थवो।
करत हुँकार यहां तहां दुःख टाले हैं॥
पायके अंदेश जु शिष्य अर्ज करत भये।
फरमायो राम कहो तवै चुप्प झाले हैं॥ १॥
यहां रूप धार छड़ी हाथ साम ताम मारे।
गये भालु सिंह दोऊं दास सुक्ख भयो है॥
गाँव वटपाड़ी माँझ संत विराजमान भए।
आयके दरदा सहो कहो दुःख पयो है॥
अहो अँतर्यामी आप जानत सवै ही वात।
पूछे शिप दूसरा हू तवै भर्म गयो है॥
संत राम एकरूप भिन्न भेद नांहि कवै।
आगे अवै देखि लेहु कछु नाहिं नयो है॥ २॥

॥ इति॥

इसप्रकार आपके अनेक परचे हुए। आप एक अद्वितीय महात्मा थे। सम्वत् १८५५ आषाढ कृष्ण ७ मंगलवारको आप परम धाम पधारे। आपका इस संसारमें प्राकट्य लोगोंके कल्याणार्थ ही हुआ था। आप गुरुधर्मी भी एकही थे। आपके वचन जो श्रीगुरुदेवजीके प्रति कहे गये हैं वे कितने गुरु भक्तिसे सराबोर होरहे हैं। यथा—

"अमर लोक सूं आय सिंहथल माँहि विराजे।
तेज पुंज परकास वजे अनहद के वाजे॥"
"सता समाधि अगम जहाँ आसण सुखमण सहज समादी।
आय रामियो चरणाँ लागो सिर है आद अनादी॥"

"चरणां चाकर रामियो, सतगुरु है महाराज।
चार चक्र चवदै भवन, ताहि परे संतराज॥"

(श्रीगुरुमहिमा)

"मैं अबला हूं रामदास, आंधो अंत अचेत।
तुम सतगुरु हो शीशपर, हमको करो सचेत॥"

(श्रीभक्तमाल)

"सतगुरु मेरे शिर तपै, मैं चरणांकी रज्ज।
शरणे आयो रामियो, लखचौरासी तज्ज॥"

(जमफारगती)

"सतगुरु दीनदयालु कहीजे, सन्मुख करसूं सेवा।
पार अपंपर पावे नाहीं, किस विधि लहिये मेवा॥"

(मनराड)

"सतगुरु है हरिरामजी, मेरा प्राण अधार।
चौरासीका जीव था, शरणे लिया संभार॥"

(श्रीब्रह्मजिज्ञास)

कहांतक लिखा जाय! जबतक आपका पांचभौतिक शरीर इस पृथिवीतलपर विराजमान रहा तबतक तो गुरुधर्मको निभाना ही था, परंतु परमधाम पधारने के उपरांत भी आपने विचारा कि मेरा सनातन गुरुशिष्यधर्म मेरेतक ही न रह जाय। जहाँतक मेरा नाम रहे तहाँतक मेरे शिष्य गुरुस्थान सिंहथलको न भूलें। इस लिये परमधाम पधारने के तीन दिन बाद असह्य विरहवेदना से पीड़ित श्रीदयालुदासजी महाराज की कातरता देख साक्षात् अपना स्वरूप धारण कर दर्शन दिया और मस्तकपर हस्तकमल धर तत्त्वज्ञानोपदेश दे धीरज बंधाई। और फरमाया कि मैंने जो सद्गुरु गादी की टेक निभाई है वैसी ही सर्वदा तुम भी निभाते रहना। और अंतसमय में जैसी मेरी साँच भावना

१—दई काई अरपात, मन तन चित अति विकलना।
लख्यो न सतगुरु हाथ, यो कारज कैसे भयो॥ १॥
पूरणब्रह्म दयाल, बाबाजी कीजै कृपा।
यो शिष हेतु संभाल, नहितर यो तन त्यागसूं॥ २॥
(श्रीराम. परची वि॰ ४१)

फली है उसका मेर्दे आजसे चौथे दिन सिंहथलसे श्रीहरदेवदासजी महाराज पधारकर तुमको जतावेंगे । ऐसा फरमाकर आप अंतर्धान होगये ।

ऐसे गुरुधर्मी सत्पुरुषों को धन्य है और उनको कोटिशः दंडवत् प्रणाम है ।

धन्य है उस धाम को जिसमें आपने वास किया । साक्षात् उस धामके दर्शन करने से मुक्त हो जाय इसमें तो आश्चर्य ही क्या है । अगर स्वप्नमें भी दर्शन हो जाय तो वह प्राणी कृतकृत्य हो जाता है । उस धामका आजतक भी इतना प्रभाव है कि कोई भी प्राणी भूत प्रेत डाकिनी शाकिनी आदिसे पीड़ित हो और वह धाम की शरण में आता है तो उपरोक्त सब दुःखों से मुक्त हो परम पदवी को प्राप्त होता है ।



१—श्रीरामदासजी महाराज इस पांचभौतिक शरीर को त्याग कर दिव्य शरीरसे स्वयं सिंहथल श्रीगुरु धामके दर्शनकर फिर वैकुंठ पधारे थे । इस [illegible] श्रीहरदेवदासजी महाराज कहते थे और आप आपके चतुर्वेदित [illegible] थे इस लिये श्रीरामदासजी महाराज ने फरमाया कि—

[illegible]

([illegible])

(श्रीदयालुदासजी महाराज)

श्रीदयालुदासजी महाराज की अगाध महिमा का वर्णन करना अति कठिन है। आप ब्रह्मवेत्ता अनुभवी बड़े ही सच्चरित्र महात्मा हुए। श्रीपूर्णदासजी महाराज की बनाई हुई जन्मलीला नामक ग्रंथ से अनुभव कर सकते हैं कि आप कैसे प्रभावशाली गुरुभक्त अद्वितीय तेजोमयी दिव्य मूर्ति थे।

इसी जन्मलीला का यहां उल्लेख किया जाता है।

॥ अथ जन्मलीला ॥

हरिरामा रामा नमो, [illegible] गुरुसाम।
मन बच क्रम करिये सदा, पूर्ण ताहि प्रणाम ॥ १ ॥

दोहा।

वंदन श्री परब्रह्म को, पुनि गुरु को परणाम।
सब संतों सिर नाय हूं, खानाजाद गुलाम ॥ १ ॥
रामदास महाराज के, दास शिरोमणि शिष्य।
जन्म सुलीला वर्णि हूं, निज गुन कर प्रकाश ॥ २ ॥
दयाकर धरि प्रगटे, पूरन के शिरताज।
जीव अनेक उधारले, प्रगट किये पद राज ॥ ३ ॥

छप्पय।

निर्गुन निज निरकार रहि कहूं सुधि न आवे।
[illegible] अधेश नेति नेति निगमगुणावे ॥
[illegible] धार ध्यान कर ध्यावत कोई।
सुमरत सुन्दर कठिन नाहिं दरसाय नहिं होई ॥
[illegible] ब्रह्म अवतार धर [illegible] प्रगटे [illegible]।
[illegible] दीनदयाल [illegible] ॥ १ ॥
[illegible] अन्तरयामी प्रगट मम [illegible]।
[illegible] निरखा [illegible] ॥
[illegible] कुटिल कुमार्ग [illegible]।
[illegible] सब निज पंथ [illegible] ॥
[illegible]।
[illegible] ॥ २ ॥

यह गाँव शुभ वास जहाँ इक सदन कहीजे ।
नमो वाल तहां जन्म प्रथम परचो सु लहीजे ॥
सुरपति घन बरसाय गड़ा जहां पड़्या अपारा ।
सदन निकट ही नांहि दूर धरनी दल गारा ॥
चरणामृत गुटकी दई महाप्रसाद गुरुदेव भल ।
वाल जन्म उच्छव भयो नर सुर कीरति करत फल ॥ ३ ॥
समत अठारह जान वरष षोडश परवानो ।
तामध मिगसर मास शुक्ल एकादशि जानो ॥
भृगू वार परसिद्ध रेवती नषत भणीजै ।
अमृत पुल सिधिजोग गुरू लगनेश गिणीजै ॥
सब सोम ग्रह शुभ ठौरपर वाल लिए अवतार तब ।
कहुं सुक्षम स्थूल जिव चर अचर हर्ष मान हुय मुदित सब ॥४॥
आनँद अगम अपार अनत जहां बाजा बाजे ।
अनत उदित अंकूर सकल शुभ मंगल साजे ॥
सर तरु नदी निवान बनी परवत घन धारा ।
वापी कूप तड़ाग अमी अमृतरस सारा ॥
उद्योतकार जीवां सकल संत प्रगट अवतार हरि ।
नरदेह धन्यां विन हरिजुमे संत भये नरदेह धरि ॥ ५ ॥
भरतखंड परसिद्ध द्वीप जांबू सुखकंदन ।
देश मुरधरा नमो गाँव खैड़ापो वंदन ॥
गांमधणी पति नाम पद्मसिंह शोभित राजे ।
विजयसिंह नरनाथ वार परताप सदा जे ॥
नर नारि सकल घरधाम धिन तहां संत अवतार घर ।
आनँद अपार उच्छव अनत मंगल परम विनोद कर ॥ ६ ॥
ज्यों दशरथ के राम सूर कश्यपके राजे ।
परशुराम जमदग्नि कपिल करदमके छाजे ॥
कृष्णजन्म वसुदेव व्यासके शुक मुनि त्यागी ॥
उद्दालकके प्रगट नागकेत सु वड़भागी ॥
हंसरूप हंसा धरे भिन्नभेद नहि सार है ।
परब्रह्मपूरणकला तासे अंश अवतार है ॥ ७ ॥
उदित वंश सब सूर मिटे अज्ञान अँधारा ।
कमलरूप निजदास उतम तिण चकवा सारा ॥
निगुण कमोदनि आन इन्द्रि उडगन सब गुरहं ।
चार चन्द्र भ्रम भूत चंद्रमन तासें उरहं ॥

(श्रीदयालुदासजी महाराज)

श्रीदयालुदासजी महाराज की अगाध महिमा का वर्णन करना अ[ति] कठिन है। आप ब्रह्मवेत्ता अनुभवी बड़े ही सच्चरित्र महात्मा हुए श्रीपूर्णदासजी महाराज की बनाई हुई जन्मलीला नामक ग्रंथ से अनुम[ान] कर सकते है कि आप कैसे प्रभावशाली गुरुभक्त अद्वितीय तेजोमय दिव्य मूर्ति थे।

उसी जन्मलीला का यहां उल्लेख किया जाता है।

॥ अथ जन्मलीला ॥

हरिरामा रामा नमो, दयालदास सुखसाम।
मन बच क्रम करिये सदा, पूर्ण ताहि प्रणाम ॥ १ ॥

दोहा।

बंदन श्री परब्रह्म को, पुनि गुरु को परणाम।
सब संतों सिर नाय हूं, खानाजाद गुलाम ॥ १ ॥
रामदास महाराज के, दयाल शिरोमणि शिष्य।
जन्म सुलीला वर्णि हूं, निज गुन रूप प्रत्यक्ष ॥ २ ॥
कृपारूप धरि प्रगटे, पूरण के शिरताज।
जीव अनेक उधारणे, प्रगट किये यह साज ॥ ३ ॥

छप्पय।

निर्गुण निज निराकार दृष्टि कहुँ मुष्टि न आवे।
अपरमपार अलेख नेति तिहि निगमसुगावे ॥
जोगधारणा धार ध्यान कर ध्यावत कोई।
दुर्लभ दुष्कर कठिन ताहि दरशन नहिं होई ॥
स्वयं ब्रह्म अवतार धर दयाल अवनि प्रगटे प्रत्यक्ष।
पेख्यो न कोइ देख्यो अबर देख्यो दीनदयाल दक्ष ॥ १ ॥
अविगत आज्ञाकरी प्रगट मम भक्ती कीजे।
कठिकालविकराल ताहिको शिक्षा दीजे ॥
कामी कुटिल कुज्ञान अधम अघगामी भारा।
दो भक्ती उपदेश राम निज मंत्र हमारा ॥
तब आदेशु शिर पर धारिके दयाल लिए अवतार इल।
रामदास पितु पाद धिन सुंदर माता कूख मल ॥ २ ॥

यह गाँव शुभ वास जहाँ इक सदन कहीजै ।
नमो थाल तहां जन्म प्रथम परचो सु लहीजै ॥
सुरपति घन वरसाय गड्डा जहां पड़या अपारा ।
सदन निकट ही नांहि दूर धरनी दल गारा ॥
चरणामृत गुटकी दई महाप्रसाद गुरुदेव मल ।
थाल जन्म उच्छव भयो नर सुर कीरति करत कल ॥ ३ ॥
समत अठारह जान वरष षोडश परवानो ।
तामध मिगसर मास शुक्ल एकादशि जानो ॥
भृगु वार परसिद्ध रेवती नषत भणीजै ।
अमृत पुल सिधिजोग गुरू लगनेश गिणीजै ॥
सब सोम ग्रह शुभ टौरपर थाल लिए अवतार तब ।
कहुं सुक्षम स्थूल जिव चर अचर हर्ष मान हुय मुदित सब ॥४॥
आनँद अगम अपार अनत जहां बाजा बाजे ।
अनत उदित अंकूर सफल शुभ मंगल साजे ॥
सर तव नदी नियान धनी परवत घन धारा ।
बापी कूप तड़ाग अमी अमृतरस सारा ॥
उद्योतकार जीवां सफल संत प्रगट अवतार हरि ।
नरेंद्र धन्यां विन हरिहुते संत भये नरदेह धरि ॥ ५ ॥
भरतखंड परसिद्ध द्वीप जांबू सुखकंदन ।
देश मुरधरा नमो गाँव रीड़ापो वंदन ॥
गांमधणी पति नाम पद्मसिंह मोहित राजे ।
विजयसिंह नरनाथ वार परताप सदा जे ॥
नर नारि सकल धरधाम विन तहां संत अवतार धर ।
आनँद अपार उच्छव अनत मंगल परम विनोद कर ॥ ६ ॥
ज्यों दशरथ के राम सूर कश्यपके राजे ।
परशुराम जमदग्नि कपिल कर्दमके छाजे ॥
कृष्णजन्म वसुदेव व्यासके शुक मुनि त्यागी ॥
उद्दालकके प्रगट नाचकेत सु बड़भागी ॥
हंसरूप हंसा धरे भिन्नभेद नहि न्यार है ।
परम्परपूरणकला रामो अंश अवतार है ॥ ७ ॥
उदित पंत मध सूर मिटे अज्ञान अंधारा ।
कमलरूप निजदास उलस गिरा प्रकाश सारा ॥
विमुख कमोदनि जान इन्द्र उडगन सब मुरझे ।
वाद उलूक भ्रम भूत चंद्रमन तामें उरझे ॥

शिशुमारचक्र प्राणसु प्रगट काम क्रोध मोह चोर है।
वेद पहरवा सोय रहे संत सूर वड जोर है॥ ८॥
सतजुग सतव्रत सार तप्प त्रेताजुगमांही।
द्वापर दान विशेष किया कर्म सब वरताही॥
तीन जुगनको धर्म प्रगट सारे वरतायो।
कलीकाल विकराल नीति गति माग दुरायो॥
अवसान कोइ एको नहीं कलीराज थाना थपे।
तव याल संत करुनाअयन नीशान भक्तिनिश्चलरुपे॥ ९॥

दोहा।

ठौर ठौर सव ठांम पर, भक्ति प्रगट परभाव।
चकवे राज नरेश पद, गुरुधम सुमरण चाव॥ १॥

छंद पद्धरी।

नृप भए चक्रवर्ती सुजान। जिन प्रगट कर्‌यो गुरुधर्म ज्ञान।
उपदेश जीव दे मुक्तिदान। थिर भक्ति राज अविचल निशान॥ १॥
कलि रह्यो नाहि कहुं ठाँ प्रवेश। शुभ जाग माग ज्ञानोपदेश।
तव भगे चोर जारान मार। तपतेज नीति थिर थपे वार॥ २॥
सुख अम्र आन कोउ जुन्यो नाहिं। परमानँद उपज्यो आप माँहिं।
महाज्ञान ध्यान धीरज अपार। गम अगम वचन आगम उचार॥ ३॥
गुरुधर्म टेक धारण सधीर। गिरिगोम व्योमगंगा गँभीर।
सोभायमान गुरुगुराँमांय। सव ग्रंथ अर्थ निरणै वताय॥ ४॥
अरि मित्र सबै धिन धिन उचार। कर नाम संज्ञा साचे प्रकार।
कहुं नैना नहि देखे दयाल। सव नर चय देखो दास याल॥ ५॥
जिन वचन याल तन मन दयाल। चपअयन हृदय याहू विशाल।
सोभायमान शिर उतुंग भाल। कप्पोल पूर विम्वौष्ठ लाल॥ ६॥
भ्रूवंक अंक नक सीप जान। चियुक अंग कंबूसमान।
उर वह विशाल नाभी गंभीर। कटि जंघ जानु गुल्फाँ अमीर॥ ७॥
पदकंज रज्ज अलि शिष सुधाय। रज चरन परस मिल मोक्ष माँय।
अनुभव प्रकाश उद्योतकार। अविरल अनूप नहिं पार पार॥ ८॥
घन धार पहुमी रह न पार। यौं अनुभव वाणी तरव सार।
उथप्यो पताल गरज्यो समंद। फाट्यो अकाश वरष्यो सु छंद॥ ९॥
घन छिनये क्रोड़ाँ मेघमाल। गिरि मेद शृङ्गी अमृत रसाल।
कूदो अकाश हनुमंत वीर। उडुग्यो खगेश वन चक्रधीर॥ १०॥
तूटो पलाक कटो महेश। कीनो भ्रम खंडन काम देश।
छूटो रघुपतिकर वान पानि। खोल्यो सर मोहा आदि मानि॥ ११॥

उचक्यो डढाल मुचक्यो मराल । सुचक्यो सुरेश रसना बयाल ।
उछल्यो क्षिरोद हाल्यो समीर । घन घटा घोर भादौं गँभीर ॥ १२ ॥
कर वेद चार निरणै विचार । दश अठ पुराण षट भाष सार ।
व्याकरण अष्ट निरताय सोय । षट शास्त्र भिन भिन लिये जोय ॥१३॥
रस रामायण शिर मोर सार । भागवत वचन भगवत उचार ।
भारत भगवद्गीता विशेष । सो सार सार सब लिया देख ॥ १४ ॥
करि प्रश्न दियो निर्णय बताय । अनधन नहिं ऊणत रखी काय ।
दत दान मान करुणादि आधि । दुखिया दे औषध मेट व्याधि ॥ १५ ॥
जाके शिर कर धर कह्यो सोय । अजरामर आनँद तुरत होय ।
दैत्यादि भूत डाकिनी नारि । मरजाद सींव नहिं पाँव धारि ॥ १६ ॥
छिड़क्यो तन मिरगी श्रवुध होय । फीयो लिप बहुविधि रोग कोय ।
नर नारि पशु जो शरण आय । जल पियाँ तृषा ज्यूं रोग जाय ॥ १७ ॥
जाच्याँ नहिं ऊणत रखी कोय । लघु दीरघ भिन्न न भेद होय ।
अनवी तुय लागे आन पाय । कर दरशन चरचा पोष थाय ॥ १८ ॥
उपदेश राम निज मंत्रसार । दशहूं दिशि सिपसाखा अपार ।
कर रामत मालासर मँझार । नृप गूंड देश दखिन सुढार ॥ १९ ॥
गुर्जर धर पावन करी सोय । थलवट मुरधर धिन धन्य होय ।
दिग्विजय अगंजी भक्ति साज । कहुं जगत मेख तप तेज राज ॥ २० ॥
निःशंक सदा आनंद सोय । औघट विन घाटी विकट होय ।
सुख दुख हरष न शोक मान । शत्रुज मित्र सब एक जान ॥ २१ ॥
निज धर्म सनातन सारसार । गहिलयो हंस ज्यूं खीर धार ।
भज चींटी कुंजर एक जान । कहुँ हानि वृद्धि नहिं भेद मान ॥ २२ ॥
सब विश्व ब्रह्ममय दृष्टि देख । उर उपज महा उद्योत एक ।
रत ब्रह्मवाद विद्या प्रकाश । मद मोह द्रोह कर काम नाश ॥ २३ ॥
रह मस्त सदा सम भाव दास । विज्ञान ज्ञान पूरण प्रकास ।
मत अडिग सदा कूटस्थ जान । मिथ्या भ्रम ग्रंथी हृदय मान ॥ २४ ॥
मन वाच काय पंगुर प्रवीन । अघ भवन सबै उपकार कीन ।
सब गृह साधुपद गमन कीन । पापान मान मद सजा दीन ॥ २५ ॥
मान्या न मान संत सेव कीन । अति दुखी दरिद्री सार दीन ।
लूले कहुं पंगू मूक सोय । चषहीन बधिर पुनि वृद्ध होय ॥ २६ ॥
कहुं ठीक ठौर ताके न काय । बल बिना निबल चाल्यो न जाय ।
निरधारां आधार जान । सबहीके रक्षक ढाल मान ॥ २७ ॥
बुधि मल क्षम मति चित उक्तसार । धारी विवेक अविरल उदार ।
अनुभव रस छोलौं सुगति जोर । नित चपे पँचारीपीर कोर ॥ २८ ॥

दीरघ वपु दरसात दीपमान । उद्योत कार ज्यों प्रगट भान ।
सोभंत समाको रूप सार । मोहंत करत भरम्या उधार ॥ २९ ॥
काव्य सु बँध कविता छंदसार । ततकाल कहत नहिं लहत पार ।
सरसति गनपति शुक वेदव्यास । शिव बालमीकि कवि शुक्र जास ॥३०॥
यह भए कवी आगे प्रत्यक्ष । देवयो दयाल संशय न चित्त ।
महिं हुते प्रगट पहुमी दयाल । कलि दाय देत मर्ता पयाल ॥ ३१ ॥
निज राममंत्र प्रगट प्रताप । घटघट प्रति व्यापक ब्रह्म आप ।
कुन जानत निर्गुन सगुन जोत । कलि काल थाल संत नाहिं होत ॥३२॥
दधि मथ कर काढ्यो घृतसार । लीनो तत छोई दई डार ।
फल कतक करत करदम विछोर । निरमल जल करिहैं शक्ति जोर ॥३३॥
गुनमयी ग्यान भक्ती विरोल । यों भिन भिन कीन्हा तोल तोल ।
सब युक्ति चेताए जठर जीव । मिट गये दोष सुखिया सदीव ॥ ३४ ॥
कटि गये करम सब भरम भाज । डूबत ले तारे नाम ज्याज ।
तिर आप और तारे कितान । तरणी दृष्टान्त गुरु साच मान ॥ ३५ ॥
कर मजन प्रथम निर्मल शरीर । रसना रस अमृत लहै सीर ।
परकार चार सुमरण विधान । अध मध उतम अति उतम जान ॥३६॥
मुखकमल पंखड़ी चार भास । कँठ कमल पंखड़ी षट प्रकास ।
खुल अष्ट पंखड़ी उरमँझार । नाभी खुल षोडश पंख सार ॥ ३७ ॥
मन पवन मिले दोनों प्रकार । हुव शुव हुव मेला कर गुँजार ।
फिर शब्द गमन आगे चलाय । भिद मूलचक्र पाताल जाय ॥ ३८ ॥
उलटा सु पलट यह अगम खेल । जीता गढ बंकी मेर पेल ।
मिणिया इकवीसूं छेद जाय । निकसे गज नाके सुई माँय ॥ ३९ ॥
यहां कमल पंख बत्तीस होय । शब्द सब सिधी भया सोय ।
आगे चल त्रिकुटी तखत माँय । तहां जीव शिव मिल एक थाय ॥४०॥
सहस्रादि पंखड़ी कमल भास । जहां जन्ममरणकी मिटी त्रास ।
जहां सुरत शब्द मिल करत केल । मिल हंस परमहँस अगम खेल ॥४१॥
नवधाम परे अपरम अपार । सो सता समाधी संत सार ।
महामाया ज्योती प्रकृति सार । शुन आतम इच्छा भावपार ॥ ४२ ॥
पर भावे केवल ब्रह्म होय । जहां जीव शीव मिल नहीं दोय ।
आया जहां मिलिया संत जाय । कर केवल भक्ती मुक्ति माँय ॥ ४३ ॥
कर विष्णुउछव वैकुंठमाँहिं । मम प्राण वलभ लीजे यथाँहि ।
लक्ष्मी ले परकर सर्व साथ । धन धन्य करत वैकुंठनाथ ॥ ४४ ॥

कर भक्ति प्रगट मम नाम सोय। धंशोधर सुत सम नहीं कोय।
यों उर्ध लोक उच्छव अपार। यहां थाल आप निज सुरत धार॥ ४५॥
दे सैन प्रथम सबको जनाय। इक पद फरमायो राग माँय।
हम हैं परदेशी लोक साध। कब आन मिलैंगे मेटि व्याध॥ ४६॥
ततकाल दई पत्री लिखाय। निजगुरुद्वारेसूं महंत आय।
सब भाई धाई मिले जाय। करदरशन परसन पोप पाय॥ ४७॥

दोहा।

इह प्रकार निरधार करि, आदि अंत मध सोय।
दीन दयाल दयालु बिच, भिन्न भेद नहिं कोय॥ १॥

छंद गीतक।

थिन थाल सतगुरु प्रगट इल पर मनुज तन धर आविया।
अंकूर जीवाँ उदय कारन भूरि मोसर पाविया॥
मध समत एकै आठ ऊपर वर्ष षोडश साखही।
पुनि मास मिगसर तिथि उजाली अग्यारस भृगुवारही॥
ता दिवस धर अवतार नर तनु जगत सारो जीतिया।
महा भगतजी दिग्विजय करिके परम गुनतर पीतिया॥
इक मास ऊपर प्रगट पुनि ता दिवस पनरे पर भए।
तब करी इच्छा मोक्ष की निज लोक की चिंतवन ठए॥
तहाँ माघ वद तिथि भई दसमी मध्यदिनमणि आवियो।
तब रंगतीन उधां खेंचिके निज सुरत शब्द मिलावियो॥
सब भये बिलखे रामजन किमु दशां बिछुरन सहि सकै।
बिन नीर मच्छी कमल बिन दिन बचन पानी सब थकै॥
है नैन सहलल दियो भरभर रुदन कर कर उच्चरे।
इक बेर थाल कृपालु दरशन देहु सब संकट टरे॥
पुनि समामंडन भर्म खंडन तार मेघाँ गुन करे।
एधार नर तर नारि नर भव सकल दुख दूभर भरे॥
निज जान अनुचर कृपा कर कर हाथ शिर धर तारियो।
वरदान पूरणदास मांगे सदा चरणाँ धारियो॥ १॥

सोरठा।

रटके मनके मांहि, चित मटके ठहाँ दिशा।
छिनकै घटके मांहि, दास तणा दुख दरद की॥ १॥

१—स्वांतःचक्षु। अथवा: स्वर्गमो वसुविलक्षणः।

तटके तूटो नाँहि, फटके नहि फूटो हिया।
अटके किम उरमाँहि, लटके लोह लंगर जड़्यो ॥ २ ॥
शरणागतकी लाज, आन परी है आपकूं।
ले वहियो महाराज, पतती पूरणदास कूं ॥ ३ ॥

दोहा।

लीला जन्म दयालुकी, को करि सके विचार।
बुधि प्रमाण वर्णन करी, सतगुरु अगम अपार ॥ १ ॥

॥ इति ॥

इस उक्त जन्मलीलाग्रंथसे निश्चय होता है कि, आप साक्षात् भगवत अवतार ही थे। आपके अनेक परचे हुए और आपने जगद्धितार्थ बहुतसी अनुभवबाणी प्रगट की।

आप की सिंहथलधाममें जो गुरुभक्ति थी वह तो गुरुप्रकर्ण और बाणीसे स्पष्टही प्रगट हो रही है। सम्वत् १८५५ आषाढ शुक्ला ८ गुरुवार को श्रीहरदेव दासजी महाराज के आग्रहसे आप गादी विराजे।

और सबसे पहिले दर्शनार्थ गुरुधाम सिंहथल पधारकर फिर रामत वगेरह में पधारे। चौरोंहीवार सैड़ापे तथा अन्य मेलों में महन्त महाराज श्रीरघुनाथदासजी महाराज को पधराए। सम्वत् १८८० में मालवा व गूंडवाणे की बड़ी रामत तथा सम्वत् १८८३ में गुजरात की बडी रामत साथ ही में करवाई।

कहाँतक आपका गुरुधाम में प्रेम वर्णन किया जाय? धामपधारने के समय श्रीगुरुधाम सिंहथल पत्रिका भेज महन्त महाराज श्रीरघुनाथ दासजी महाराज को पधराय दर्शन कर फिर परलोक पधारे।

(श्रीपूर्णदासजी महाराज)

आपने मालवा प्रान्त ग्राम मेलकी में सम्वत् १८२८ चैत्र कृष्ण २ को वैश्यकुल में जन्म धारण किया। सम्वत् १८३८ के

१—देशाटन। जिस रामतमें सं० १८८३ फागण शु० १३ को दोनों महन्त महाराज पीछे खेडापे पधारेथे।

२—संवत् १९०६ में एक सिंहथल महन्त महाराज कीही मालवा और गूंडवाने की रामत हुई।

खैड़ापा फूल डोलके मेलेपर दीक्षा धारण की और सम्वत् १८८५ में गादी विराजे।

आप बड़े अद्वितीय योगिराज महात्मा हुए। आपका बनाया हुआ गुरुमहिमा नामक ग्रंथ अत्यंत सुंदर और दर्शनीय है।

श्रीदयालुदासजी महाराज की तरह आपने भी गुरुधर्म पूर्णरीतिसे निभाया, परंतु खेद की बात है कि आप सात ही वर्ष गादी विराजे।

(श्रीअर्जुनदासजी महाराज)

आप बडे तेजस्वी राजा पृथुके समान मर्यादी प्रख्यातकीर्ति राजमान्य सत्पुरुष हुए। और योगियों में एक अग्रगण्य योगिराज थे। आपने खैड़ापे ठिकाना और मेख की बहुत ही उन्नति की।

आपकी सिंहथलधाम में गुरुभक्ति थी वह अलौकिक ही थी। आपका नियम था कि हर साल नही पधार सकें तोभी तीजे वर्ष तो सब संतों को साथ लेकर दर्शनार्थ गुरुधामको अवश्य पधारना ही, साथ में आये हुए सब साधुवोंसे पहिले गुरुधामकी भेट करवाकर फिर स्वयं करना, देखिये महीनेमें पांच दफेही क्यों न हो जितनी वार श्रीसिंहथल महन्तोंमहाराज का दर्शन करना तो भेटं[1] करकेही करना।

श्रीमहंत महाराज संध्यावंदन दंडवत आरती करवाते उतने आप चरणों भाल रहते।

कहांतक आपके गुरुधर्म की मर्यादा वर्णन करें? श्रीसिंहथल महन्तों महाराज के सामने कोईभी साधु आपको महन्त महाराज कह देता तो उसको झिडक कर फरमाते अरे मूर्ख! बोलने का खयाल नहीं है, सिंहथल महन्त महाराज के सामने मेरेको किन लफ्जों में बतला रहा है।

देखिये खुद आप खैडापाके महन्त महाराज थे परंतु सिंहथल महन्त महाराज के सामने आप इतनी भी बेअदबी का बरताव करना नहीं

---

१ नीतिः—'रिक्तपाणिर्न पश्येत राजानं भिषजं गुरुम्।'

चाहते थे। और कितनी भावना व नम्रता के साथ आप गुरुधाम को विनयपत्र लिखाया करते थे।

---

१ विनयपत्रः—

॥ श्रीरामजी ॥

स्वस्ति श्रीसिंहथल राम मोहल्ला शुभस्थाने ऋद्धि वृद्धि जयो मंगल रामधाम साकेतधाम परम पुनीत सप्त धोत गंगा अडसठ तीर्थ आनन्दधाम सार २ स्थान रमणीक मजनानन्द विराजतम् त्रिविधताप जन्माजन्म कल्मष पाप हरता ऐसी २ अनेक ओपमा गुरु दयालु विराजे जिणदिश हमारो प्रणाम बारम्बार श्रीगुरुदयालजी बाणी निहाल कारण कृपालु बन्दी छोडणा महरबान महाराज परउपकारी शिषधारी सचिदानन्द आनन्दघन श्रीगुरुसाहिब भक्तिपुंज अज्ञानहरणकारण करण ज्ञानमूर्ति ध्यानमूर्ति जत सत साच शील संतोष दिव्य भक्तिप्रकाशक भण्डार ज्योतिरूप महन्त भगवन्त पूर्ण कलाजीवम मुक्तिगामी निर्धोरों आधार अशुचों शुचि अनाथों सनाथ कर्ता विघ्नहर्ता गुरु इष्ट भगवन्त गुरुप्रेम दाता दशदोषहर्ता ज्ञान वैराग्य भक्ति के दाता सर्व सिद्धिकारी आत्मशान्ति मनभावन सिद्धस्वरूपी शरणप्रतिपालक श्रीगुरुमहाराज श्रीगुरुभ्यो प्रणम्य नमस्तु ते शिष्यके साधारणसुरतके ज्योति मन उमेदताके सुथानक मीनके नीर आधार खगके पर आधार प्राणके श्वास आधार प्रजाके राज प्रतिपालक आधार राजाके तपस्या सदपुनीत आधार सर्पके मणि आधार पंडितके विद्या आधार कृपाणके कृषि-आधार कमलके सूरज आधार चकोरके शशि आधार जोगी के जोगबल आधार तरवरके जल आधार शिष्यके श्रीगुरुदेवजी महाराजको आधार दृढभावना आधार श्रीमहन्तमहाराज चरणकमलायनुँ पद सरोज प्रकाशन चरणारविन्द आनन्दकन्द श्रीगुरुदयालजी जीवाँरी जहाज तरणतार मुक्तिके दाता महाराज राजनके राजा हो।

चन्द्रायणा।

ओपम और अनेक मंडमें कहत है तमकुँ सबही शोभ बडागुण महन्त है।
धीरज मेरुसमान तरणिज्युं भास हो हरिहाँ शीतलचन्द समान शीलकी रास हो॥१॥
नीर क्षीर निरताय हंसमतिज्ञान है साँच झूठ करभिन्न सर्व विधि जान है।
धीरज ध्यान समाधि इन्द्रिमन जीतही हरिहाँनिराकार निर्लेप ब्रह्म अद्वैत हो॥२॥

अहो महाराज श्रीदयालु पूर्णब्रह्म कृपानिधान स्वयं ब्रह्म सचिदानन्द श्री श्री श्री श्री श्री श्री १०८ एति श्रीशोभितम् देहरूप नाम महाराज श्रीमहन्तमहाराज श्रीचेतनदासजी महाराज के हजूर लिखितम् सेंथापा राममोहल्लासूँ खानाजाद गुलाम पदरज पन्हे उठावणहार चरणाँरो अनुचर दासानुदास अर्जुनदास दामोदरदासका दंडवत परिक्रमा विनतीसहित रामराम माळूम होसी।

श्रीमहन्त महाराजके सामिल आपने तीन चौमासे जोधपुर करवाए। राजामहाराजाओं में कई पधरावणियें साथ में हुई। और कई रामतें सामिल करवाई। और मेलोंपर साथमें पधारनेकी तो गिनती ही क्या है।

आपने सम्वत् १९४६ में जीवित महोत्सव (मेला) करवाया जिसमें श्रीगुरुधाम सिंहथल महन्तमहाराज श्रीचेतनदासजी महाराजका हाथी होदे वधावणा, मुहर मोतीयोंसे तिलक, आरती, जरी पग मंडा भेट पूजा, शाल दुशाला ओढ़ावणी आदिसे कितने सत्कार के साथ स्वागत किया उस समय के उत्सव आनन्दको वही जान सकेते हैं जिन्होंने दर्शन कीए हैं। सम्वत् १९५० में आप धाम पधारे।

सोरठा।

यहाँ सदा सुख ऐन, प्रसिद्ध आपरे तेजही।
वहाँ सदा सुखचैन, सदाघणाभल चाहिए ॥ १ ॥
तमतो करुणानिधान, ज्योतिरूप जगदीश हो।
कागदमाँहि विधान, हमको लिखियो चाहिए ॥ २ ॥
कागद लिखत समाज, आप कृपानित राखजो।
बाँह गह्याँकी लाज, बिरद रावरो जानिके ॥ ३ ॥

अहो महाराज! आपरे शरीर रो जल प्रसाद मुखवास सुख पोढन सुख असवारी आनन्द रा परम जतन रखावसी। जतन तो श्रीरामगुरुदयालजी करण समर्थ छे। परन्तु दासरो योही परापरी धर्म छे सु हाथ जोड़ अर्ज मालूम करी चाहिजे। अहो महाराज! उठे साध थानारामजी रतनदासजी जेसारामजी भुगारामजी लछीरामजी मगनीरामजी दयारामदासजी पीतमदास निर्भैराम नेतराम हीरदास मोहनदास निश्चलदास आशाराम जैतराम जसुराम रविराम जुगतिराम छोटियो आशाराम आदि राम परिवार में सर्वेने राम राम फरमावसी। और अठे साध भद्धरासजी स्वरूपदासजी तुलसीदासजी प्रन्हादरदास जसारामजी जगजीवनदासजी जैतराम रामरतन आतमाराम हरलाल नगाराम दूजो आत्माराम दूजो तुलसीदास भगवानदास कोमलदास स्वरूपराम विरक्त श्यामदास चतुर्दास ज्ञानदास मुकुन्ददास आसाराम मोहनदास केशवदास सेवादास रामजीदास मगनीराम रामकृष्णादास गजाराम रामप्रताप दुर्गदास शिवरामदास नानगदास हिम्मतराम और हाली विधनो देवो चतुरो रूपाराम आदि सर्वेका दंडवत् परिक्रमासहित रामराम मालूम होसी। कृपा अनुग्रह घणी रखावसी ओर मेह पाणी मोकला छे। शाखां वाढी छोटकी छे और समाचार आतमाराम मालूम करसी सो जणावसी सम्वत् १९१३ भाद्रवासुदि १ वार अदितवार.

(श्रीहरलालदासजी महाराज)

आपभी गुरुमहाराजके समान प्रभावशाली शुद्धान्तःकरण सुशील महात्मा हुए। आप दयालुता वात्सल्यता औदार्यता की तो मानो मूर्ति ही थे। आपके अहंकाराभिमान का तो नाम निशान ही नहिं था। सम्वत् १९५० में आप गादी विराजे। साधुओंपर आपका अगाध प्रेम था। देशी परदेशी दर्शनार्थ आए हुए कोई भी साधु पीछा जानेके लिए आज्ञा मांगता तो आप फरमाते भाई! जाने का नाम मतलो, जानेके नामसे ही मेरा चित दुखित होताहै। मेरी आज्ञा तो यही है कि इसी धाम में मेरे पास निवास करो यों फरमाते २ ही प्रेमसे गद्गद वाणी हो जाते। जब कि आपका ऐसा माईतपणा स्मर्ण हो आता है तो हृदय थाँमने के लिए सिवाय आँखों में से पानी निकालने के दूसरा उपाय ही क्या है।

गुरुधर्मी भी आप पूर्ण थे। गुरुधाम सिंहथलमें आपकी पूरी गुरुभावना थी। श्रीमहन्ताँ महाराज के चरणार्विंदोंमें जिसकदर आपका प्रेम था वह लेखनीसे लिखना अशक्य है।

आपका प्रेम था वैसाही श्रीमहन्ताँ महाराज का आपपर प्रेम था। प्रायः आप दोनों साथ ही विराजे। साथही मेलोंपर पधारते। साथही रामत[1] करवाते। जोधपुर चातुर्मासा करवाया तो साथ ही करवाया। यहां-तक प्रेम था परलोक पधारते समय भी सिंहथल से श्रीमहन्ताँ महाराज को पधराय दर्शनकर परलोक पधारे।

(श्रीलालदासजी महाराज)

देश ढूंढाड़ घाड़नामक ग्राममें सोलंखी सरदारके घर आपका। जन्म हुआ। सम्वत् १९६८ में गादी विराजे। आपभी बडे वैराग्यवान् भज-नानन्दी महात्मा हुए। गुरुधर्म और नित्यनियमके धारण करने में तो आप जैसे आप ही थे। हर समय ईश्वरचिन्तवनमें लवलीन रहा करते थे।

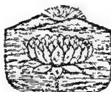
करुणासागरका पाठ तो आपके मनहीमनमें होताही रहताथा।

१—देशाटन।

श्रीगुरुधाम महन्ताँ महाराज श्रीराममतापजी महाराजके चरणारविंदोंमें जो आपका प्रेम था वह प्रशंसनीय था। साथहीमें मेले महोत्सव जोधपुर राममहोले चातुर्मास आदि करवाए बूंदी रतलाम आदि रजवाड़ों की पधरावणीमें साथ ही पधारे।

श्रीअर्जुनदासजी महाराजके समानही आपने सम्वत् १९८१ में जीवित महोत्सव (मेला) किया जिसमें गुरुधाम सिंहथल महन्तां महाराज श्रीराममतापजी महाराजकूं पधराय हाथी होदेवधावणा, मुहर मोतियोंसे तिलक, जरीपगमंडा, भेट पूजा आदि उत्सव कर गुरुद्वारा सिंहथलके साधुसन्तों को अपने हाथसे चादर, ओढावणी ओढाकर मेलेमें देशी परदेशी सब साधु रामस्नेही भावस्नेही आयेथे तिन सबको दर्शन दे पाँच महीनेबाद जोधपुर विष्णुदासजीके चातुर्मासकी पधरावणीमें सं० १९८२ भाद्रपद कृष्णा ४ को मध्यान्हके २ बजे श्रीसिंहथल महन्तां महाराजके चरणारविन्दोंमें मस्तक रख जिस तरह परगाम जाते हों इसतरह परलोक जानेकी आज्ञा मांग तत्क्षण परलोक पधारगये।

ज्योंही महन्त महाराज अपने हस्तकमलसे आपका मस्तक उठातेहैं तो आप सचमुचही इस लोकसे विदा होगए। धन्य है गुरुभक्त हो तो ऐसेही हो।



(श्री १०८ श्रीकेवलरामजी महाराज)

वर्तमान समयमें आप गादीपर विराजमान हैं। आपकी जितेन्द्रियता और दयालुता तो बड़ीही सराहनीय है। आप पट्शास्त्रनिष्णात हैं। आपके धर्मोपदेशकी कथाकी छटाकी घटाका आनंदामृत बरसाना तो अपूर्वही है। आपका श्रीगुरुधाम सिंहथलमें जो प्रेम है वह अनहद है। सिंहथल पधारना, श्रीमहन्तों महाराजको पधराना परंपरासे जो सनातन गुरुधर्म चला आरहा है उसको आप अच्छी तरहसे निभा रहे हैं और निभाते रहेंगे।

सिंहथल खेड़ापाके गुरुशिष्यभावका जहां इतना घनिष्ठ संबंध है जहां परस्पर इतना प्रेमभाव है तो भला दो कैसे कहेजांय "गिरा अर्थ जलवीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न" "अर्थात् जैसे वाणी और अर्थ ये दोनों जल और उसकी तरंगके समान कहने में जुदे हैं किंतु यथार्थमें जुदे नहीं हैं" इसीलिए थाँभायत रामस्नेही ठिकानोंके संत महात्मा मेलेमहोत्सव चातुर्मास आदिमें सिंहथल खेड़ापा गुरुधामके दोनों आचार्योंको जैसे पहिले पधराते थे वैसेही आजदिनपर्यंत पधराते हैं।

सिंहथलधाममें तो आप सबका यहांतक प्रेम है मेलेपर सिंहथल महन्तों महाराजको पधरानेके वास्ते खुद आप तो विनयपत्र देतेही हैं परंतु अवश्य पधारनेके वास्ते खेड़ापा महन्त महाराजके हस्तकमलसे भी दिरवाते हैं।

फिर देखिये कैसी गुरुधाममें भावना है अधिकारीसहित हाजरीमें सात सात मूर्तियोंसे छड़ीसवारी श्रीमहन्तों महाराजाओंको पधरानेमें हमेशह धामकी टहल बंदगी करनेवाले साथ नहीं आसकते तो वे ऐसा न समझलें कि हमको भूल गए इसलिये उन बड़भागी बन्दगीदारोंको प्रसन्न रखनेके लिये धर्ममर्यादानुसार प्रत्येक मेलेकी चार चार चदरें वहीं भेज देते हैं। धन्य है साधुओंमें परस्पर प्रेम हो तो ऐसाही हो।

श्रीरामगुरुदेवजी महाराज! आप सब महात्माओंकी गुरुधाममें निरंतर ऐसी ही अटल भक्ति बनाए रखें।



Sri Kewal Ramji Maharaj
(Khedapa).

श्रीपरमात्मासे यही प्रार्थना है कि कठिन कुटिल कलिकालकी कुचा-लसे अनाक्रान्त हमारे इस रामस्नेहधर्मको सिंहथल खेडापेके आचार्य अपनी छत्रछायामें प्रथमतः जिसप्रकार सुरक्षित रखते आएहैं उसीप्रकार पुनरपि रखतेहुए सुखी समृद्धिशाली और चिरंजीवी होवें।

इन गुरुधामठिकानोंमें साधुसेवा, शिष्टाचार, सद्धर्मोपदेश, विद्याध्य-यन, अतिथिसत्कार, अनाथोंका पालन, रोगियोंको औषधिप्रदान, गरी-बोंको सदावर्त, गौरक्षा, पक्षियोंको चूण आदिके प्रबंधकी परंपरासे जैसी मर्यादा चली आरही है और उदारबुद्धिसे जिसका पालन हो रहा है इसी प्रकार प्रभु सदाकाल इसको निभाते रहें।

शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु।

विनीत
राम नारायण वैद्य.

ॐ श्री रामाय नमः ।

रामानन्दमहं वन्दे श्रीरामांशावतारकम् ।
आचार्य्याणां शिरोरत्नं मंत्रराजप्रचारकम् ॥ १ ॥

अथ श्री १०८ श्रीरामानन्दजी महाराजकृत मानसी सेवा ।

शालग्राम शब्द करि सेऊं तन तुलसी कर लीजे ।
आतम चंदन घसि घसि चरचूँ इस विधि सेवा कीजे ॥ १ ॥
ज्ञानजनेऊ ध्यानधोवती शुचि का अँचला कीजे ।
काया कुंभ प्रेम का पानी हरिदरिया भर लीजे ॥ २ ॥
दया आचार विवेक सुचौका उर अज्ञान करीजे ।
इच्छा पुहुप चढाऊं पूजा मनसा सेवा कीजे ॥ ३ ॥
त्रिगुणी त्रिकुटी मन करि अर्घा संपुट ध्यान धरीजे ।
पांचों वाती जोय करेने इच्छा सेवा कीजे ॥ ४ ॥
कलह कल्पना धूप अंगारी ब्रह्म अग्निकर खेऊं ।
उलटी वास गगन कूं लागी इस विधि सेवा सेऊं ॥ ५ ॥
गुरु गम मंतर जाप अजप्पा हिरदा पुस्तक कीजे ।
अनुभव कथा कहूं भाइ साधो इस विधि पाठ पढीजे ॥ ६ ॥
अनहद घंटा झालर बाजै अलख पुरुष की सेवा ।
पुरुष निरंतर बैठा साधो रोम रोम में देवा ॥ ७ ॥
गंगा जमुना वहै सरस्वती जहँ जाय ध्यान धरीजे ।
त्रिकुटि मँदिर में बैठा साधो वहाँ जाय दर्शन कीजे ॥ ८ ॥
सहज सिंहासन निर्भय सेऊं चित की चंवरी कीजे ।
चष्मा मांहि चंग ढलकाऊं धीरज बैठारीजे ॥ ९ ॥
कोई एक साधो मिलिया आई सब संतनका मेला ।
सतगुरु मेरे शिरपर ठाढा मुँहडा आगै चेला ॥ १० ॥
या मेरि सेवा या मेरि पूजा ऐसी आरति कीजे ।
आत्मा तत्व विचारी लीजै ध्यान निरंतर कीजे ॥ ११ ॥
जल पाषाण भरम की सेवा भूल भटक नहिं मरना ।
सतगुरु मेरे जुक्ति बताई तब भवसागर तिरना ॥ १२ ॥
बाहिर भरम कबहु नहिं जाऊं अंतरऽसेवा जागी ।
रामानंद गंगा निर्भय आणी पारब्रह्मलिव लागी ॥ १३ ॥

दोहा ।

लिवलागी परब्रह्मसूँ, रतीनखंडे तार ।
रामानंद आनंदमें, गुरुगोविंद आधार ॥ १ ॥

इति ।

अथ ज्ञानलीला ।

चौपाई ।

मूरख तन धरि कहा कमायो । रामभजन विन जन्म गमायो ॥
रामभक्ति गति जानी नाहीं । भोंदू भूल्यो धंधा माहीं ॥ १ ॥
मेरी मेरी करितो फिरियो । हरि सुमरण तो कबहु न करियो ॥
नारी सेती नेह लगायो । कबहू हृदय राम नहिं आयो ॥ २ ॥
सुखमाया सूं खरो पियारो । कबहु न सुमर्‍यो सिरजन हारो ॥
जोवन मद मातो अभिमानी । पर घर भटकत शंक न आनी ॥ ३ ॥
स्वारथ माँहिं चहुँ दिशि ध्यायो । गोविंद को गुण कबहु न गायो ॥
ऐसे ऐसे करत व्यवहारा । आया साहिब का हलकारा ॥ ४ ॥
बांध्यो काल कियो चौरंगा । सुत बेटी नारि न कोइ संगा ॥
जे तैं कर्म किया है भारी । सो अब संग सु चले तुम्हारी ॥ ५ ॥
जम आगै ले ठाढो कीनो । धर्म राय बूझणकूं लीनो ॥
कीधा कौल किया तुम कर्मा । सिरजनहार न भज्यो निशर्मा ॥ ६ ॥
जिन पाणी सूं पैदा कीयो । नर सो रूप तोहिकूं दीयो ॥
तो तूं विसर्‍यो मूरख अंधा । तो तूं आयो जम के धंधा ॥ ७ ॥
हरि की कथा सुणी नहिं काना । तो तूं नाहीं जम सूं छाना ॥
साधुसंगति में कबहु न रह्यो । मुख सूं राम कबहु नहिं कह्यो ॥ ८ ॥
हरिकी भक्ति करो नर नारी । धर्मराज यों कहै विचारी ॥
मोकूं दोष न दीजो कोई । जैसा कर्म भुगताऊं सोई ॥ ९ ॥
पाप पुण्यकूं न्यारा ठाणूं । जो तुम कर्म करो सो जाणूं ॥
तुमरा कर्म तुम्हैं भुगताऊं । आदिपुरुष की आज्ञा पाऊं ॥ १० ॥
साहिब की आज्ञा है मोकूं । महा कसोटी देहूं तोकूं ॥
घड़ी घड़ी का लेखा लेऊं । कर्मादिक तेरा भरि देऊं ॥ ११ ॥
हरि विना कौन रखवारो । चित दे सुमिरो सर्जनहारो ।
संकटतें हरि लेहि उबारी । निशिदिन सुमिरो नाम मुरारी ॥ १२ ॥
नाम निकेवल सब तें न्यारा । रटत अघट घट होय उजारा ॥
रामानंद यों कहै समझाई । हरि सुमिरे जमलोक न जाई ॥ १३ ॥

इति ।

॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

अथ स्वामीजी श्री १००८ श्रीजैमलदासजी महाराज की अनुभववाणी ।

राग काफी ।

पद १

दीस रह्या दिलमाँहि दर्शन साँईंदा
साँईंदा साँईंदा झिगमिग झाँईंदा ॥ टेर.
शून्यमंडलमें सुण रह्यावे, वाजे अनहद वेणं ।
भया उजाला गैबका वे, सहजां मिलिया सेण ॥ १ ॥
निगम खोज पावे नहीवे, जपतप लहे न कोय ।
सो साँई तनमें बसैवे, निमष न न्यारा होय ॥ २ ॥
साचा साँई यूँ खडा वे, संताँही सुखदेण ।
सांसो न्यारा करदियावे, देख्या नैंणा नैंण ॥ ३ ॥
जैमलदास अवसर मिल्यावे, सन्मुख सिरजणहार ।
भरमज भागा जीवका वे, दरश्या है दीदार ॥ ४ ॥

पद २

लागिरह्या निजनेह दसवें द्वारींदा
द्वारींदा द्वारींदा औघट घारींदा ॥ टेर.
घटमें औघट यूं बसे वे, जैसे तिलमें तेल ।
भेदा जबही जाणियावे, शब्दां लागा सेल ॥ १ ॥
शशिमें सूर समाइया वे, भागा है अंधकार ।
दीपक हुया निर्मलावे, विनबाती अंगार ॥ २ ॥
रस मशाल प्रकाशिया वे, मिटिया संशय मोह ।
किंचित् हीं जिन जानियावे, तिन सहज पिछान्या सोह ॥ ३ ॥
अरसें परस है मांहिसमाणा, मनमिलिया उलटा उरसे ।
जैमलदास जुगे जुग तेरा, आतम राम सदा दरसे ॥ ४ ॥

पद ३

दसवें द्वार मंझार मुरली बाजे मोहणी ।
सोहणीरे सुनमांहि मुनिवर मोहणी ॥ टेर.
कंचन पर कर धारिके वे, हम आसण थितलाय ।
विरंतधरे निज नासिकावे, सुनमें सुरत समाय ॥ १ ॥

---

१ दसमद्वार । २ वंशी । ३ पलंग । ४ ईश्वर । ५ भोलापन । ६ हरि ।

संत गुणै सरधापणै वे, छिनही विसरै नांहि।
सुरनर मुनिजन रीझिया वे, लागिमगन धुन मांहि ॥ २ ॥
बांसविहूणी बांसली वे, बोलै अमृत बैण।
नितही नेडी बाजही वे, अंतर लागा नैण ॥ ३ ॥
जैमलदास धुन ध्यानमें वे, ऊगा निर्मल सूर।
मुरली माँहि अगोचरी वे, ऊपर अनहद तूर ॥ ४ ॥

पद ४

मेरी जिन्द कुरवाण सांईंदी सूरत पर वारी हो ॥ टेर.
सांईंदी सूरत मेरे दिलविच वसदी लागे मोहि पियारी हो ॥ १ ॥
दर्शन तेरो जीवन मेरो मेटो भरम अंधारी हो ॥ २ ॥
आसन तेरो सहज सिंहासन पाँचूं प्रेम पुजारी हो ॥ ३ ॥
जैमलदास करै अरदासा राखो शरण तुम्हारी हो ॥ ४ ॥

पद ५

कदे न उतरै खुमांर हरि रंग यूं लागो।
यूं लागो यूं लागो यो तो भ्रम यूं भागो ॥ टेर.
चित्तमें चेतन ठाहऱ्या वे, परम तेज प्रकास।
वेद पुराणां गम नहीं वे, दरशन पावै दास ॥ १ ॥
दूर ध्यजा धुन में खड़ीवे, घुरै दमामा घोर।
मुरली बाजै सोहणी वे, लागि रह्या है टोर ॥ २ ॥
मन ही में मनजानिया वे, कहवे कूं कछु नाहिं।
मूरख भूल्या भरम में वे, बाहिर ढूंढण जाँहिं ॥ ३ ॥
गगन मंडल बादल झरेवे, बूठा नाम निरास।
पॉवस तूटा पेमका वे, भीना जैमलदास ॥ ४ ॥

पद ६

राम भजन में मन लावै संतो अनहद तार वजावै ॥ टेर.
आतम मांही आप विचारै शब्द सुणै सुख रासी।
निरख निरख हिरदै में हरखै आय मिले अविनासी ॥ १ ॥
साँचा ज्ञान ध्यान धरि हिरदै गगनमंडल मठ छावै।
निर्मल नूर नैन रह्य लागा बिन रसना गुण गावै ॥ २ ॥

---

१ तुरीका बाजा। २ छाक। ३ बाजा विशेष जिसको बजानेसे दमामी कहलाते हैं दमामा=बाजा वा नगारा। ४ वर्षा। ५ वेज।

अगम निगम गति जाय न जानी परखणहार न कोई ।
जैमलदास अंतर जिन खोज्या देखै अचरज सोई ॥ ३ ॥

राग गूजरी ।

पद ७

राम रट्यो गलैंताने भयो ॥ टेर.
सारको सार सकल ते ऊँचो सो या तनमें साधि लयो ॥ १ ॥
आदि अनादि किता जन चीन्हो ताको सांसो दूरि भयो ॥ २ ॥
वेद पुराण सकल में बोलै भक्ति मुक्ति विश्राम लयो ॥ ३ ॥
जैमलदास लग्यो चित निश्चै दीपक ज्यूं परकास भयो ॥ ४ ॥

पद ८

मन रहै लागो मनसूं ॥ टेर.
अंतर मांहि अगम घर देखै भेद लहै परचर सूं ॥ १ ॥
चेतन में चित जाय समावै विरच रहै विषया धन सूं ॥ २ ॥
त्रिकुटी ध्यान लगावे ताली तोडि चलै तांतो तन सूं ॥ ३ ॥
जैमलदास सांईके शरणै ऐसो भेद लहै जन सूं ॥ ४ ॥

पद ९

देखो निरंजन की छबिताई ॥ टेर.
ज्यों ज्यों प्रीति लगी निशिवासर त्यों ही भई है ज्योति सवाई ॥१॥
जोग विरोध विमोहको नातो याकों छेद रही निज पाई ॥ २ ॥
अवगति परस भया जे ऐसा लागै नहीं शुभाशुभ काई ॥ ३ ॥
जैमलदास चरण चित लागा या विधिमें सतगुरु हीतैं पाई ॥ ४ ॥

पद १०

मेरो नेह लग्यो निर्मल धुन सूं ॥ टेर.
तेज प्रकाश भयो या तनमें रीझरह्यो मनही मन सूं ॥ १ ॥
अंतर ज्योति जगी झिगमिग चित्त लग्यो उनही उन सूं ॥ २ ॥
दिल मांही दीया निज दर्शन क्या कहूं किनही किन सूं ॥ ३ ॥
जैमलदास परस पिउ प्यारा आतम मिल सदा तनही तनसूं ॥ ४ ॥

पद ११

तुझै आय मिलैंगे रसना राम पुकारती ॥ टेर.
तन मन लाय लाय चित चरणै तोहि करैगा पार ॥ १ ॥

---

१ जिसकी गम नहो । २ वेद । ३ मम । ४ पुण्य पाप ।

सुमरण साखि उदास उलटि धुनि है सारां निज सार ॥ २ ॥
सत करि मान असत करि कानै करगहि देगा तार ॥ ३ ॥
जैमलदास हरि भक्ति चिहूणी बाजी वणी असार ॥ ४ ॥

पद १२

अवधि सिराणी रे तेरी हरि सुमरै क्यों नाँहिं ॥ टेर.
आव गई चेतै तूं नाँहीं अवसर बीतो जाँहि ॥ १ ॥
नरपति भूपति ऐसे जानै संपति स्वपनै माँहि ॥ २ ॥
हँय दल हस्ती दास वणा संग ऊठि अकेलो जाँहि ॥ ३ ॥
झूंठे सुखमें राचि रह्यो है हरि सुख बिसरै काँहि ॥ ४ ॥
जैमलदास भव नीर तिरन कों राम नाम घट माँहि ॥ ५ ॥

पद १३

अजहूं चेतै नांही आव घटंती जाय ॥ टेर.
ज्यों तव छाया तेरी काया देखत ही घटि जाय ॥ १ ॥
ऐसो दाव बहुरि नहिं लाभै पीछे ही पछिताय ॥ २ ॥
जैमलदास कार्चे करि कानै तंतही लेणा ताय ॥ ३ ॥

पद १४

सोझि रे घट मांहि तोसे सांँई नेड़ारे ॥ टेर.
राम संभाल शब्द करि सोधो भवसागर में वेड़ा रे ॥ १ ॥
सूक्ष्म स्थूल सकल में व्यापक त्योंही है घट तेड़ा रे ॥ २ ॥
जैमलदास शरण सुख पाया नित चरणों का चेड़ा रे ॥ ३ ॥

पद १५

ठग बाजी संसार दुनिया सब भूली मोह्या है इद ऊली ॥ टेर.
लागि भरम चित मोहिया चेतन विसऱ्या जाय ।
निर्मल मूरति मांहिली ताकों देखै नांहि ॥ १ ॥
इन विधि सांई मांहि है ताहि न देखै कोय ।
सार विचाऱ्या शब्द का नैड़ा ही निज होय ॥ २ ॥
साहिब शब्द समाइया जे कोइ लेयै खोज ।
पेम पियाला भरि पियै जब लागै मनमें मोज ॥ ३ ॥
जैमलदास भव नीर तिरणकूं आतमराम आधार ।
परिग्रह हुवा पार्वती अनुभव हुवा पार ॥ ४ ॥

---

१ अब । २ आयु । ३ साँग । ४ तरन । ५ वेरा । ६ चेरा । ७ स्त्रीपुत्रधनादि । ८ अलग ।

पद १६

क्या परदेशीड़ारी प्रीति जावतो वार न लावै ॥ टेर.
आत न देख्या जात न जाण्या क्या कहियाँ बन आवे ॥ १ ॥
काया विनसै जीव परदेशी झूठा नेह लगावे ॥ २ ॥
ऐसे वास फूलनते विछुरे माँहीं माँहि समावै ॥ ३ ॥
जैसे संग सराय को दिन ऊगाँ उठि जावै ॥ ४ ॥
जैमलदास अगम रस घटमें जो खोजै सो पावै ॥ ५ ॥

पद १७

बटाऊ रे लोक तूँतो मारग भूलो रे ॥ टेर.
निर्मल नूर शरीर समाणा मनही मांहि महोलो रे ॥ १ ॥
साचा राम सोई संग तेरे और झूठ सुख ऊलो रे ॥ २ ॥
पाँच पचीस मोह मच्छर मद या सँग सूं तू डूलो रे ॥ ३ ॥
रहता रूप सही करि राखो बहता देख न भूलो रे ॥ ४ ॥
जैमलदास भव भ्रम बंधन तजि कोइक हरिजन खूलो रे ॥ ५ ॥

पद १८

विदेसी जीव यो जग झूठड़ो जोय ॥ टेर.
दिना च्यारका लिया बसेरा निश्चै चलणा तोय ॥ १ ॥
हुमर सनेही ज्यूं सुख होई फिर फिर मरण न होय ॥ २ ॥
तन धन तेरा पीछे रहेगा जाँहि अकेलो रोय ॥ ३ ॥
पाणी माँहि पतासा जैसे यूं तन छीनो जाय ॥ ४ ॥
जैमलदास भजो हरि निश्चै बेगा बार न लाय ॥ ५ ॥

इति ।

ॐनमः श्रीमद्हरियानंदेभ्यः ।

अथ श्री १००८ श्रीहरिरामदासजी महाराज की अनुभव-गिरा उद्योतकार ।

ग्रन्थस्तुतिः ।

छंद गीतक ।

परंम वंदन परम सेवा परम दीन दयाल तू ।
परम आतम परम यारी परम सगं पयाल तू ॥

हफ्त्र पद ४० ओर मेश १०० । १ [illegible], [illegible], [illegible] ।

नमो निर्गुण नमो साधू नमो देव निरंजनम् ।
नमो समर्थ नमो स्वामी नमो सकल सिरंजनम् ॥
नमो अविगत नमो आपू नमो पार अपंपरम्[१] ।
नमो महरम[२] नमो न्यारा नमो पद परमेश्वरम् ॥
नमो चेतन नमो तारी नमो निज निराशनम् ।
नमो आदि न नमो अंता नमो ब्रह्म प्रकाशनम् ॥
नमो प्रीतम नमो प्यारा नमो नाम निकेवलम् ।
नमो कायम नमो कर्ता नमो राम निरमलम् ॥
नमो निकलंक नमो नकुला नमो नित्य नरायनम् ।
नमो अमर नमो अधरा नमो पीव परायनम् ॥
नमो हरदम निराकारं नमो निगम निरूपनम् ।
नमो अविचल[३] नमो अणभै नमो एक अनूपनम् ॥
नमो साहिब नमो सद्वजा नमो काल निकंदनम् ।
दास हरिया नमो दाता नमो तम निर्द्वंदनम् ॥

अथ श्रीगुरुदेवजी को अंग ।

साखी ।

परब्रह्म सतगुरु प्रणम्य पुनि सब सन्त नमोय ॥
हरिरामा गुर भवन में या पद समान कोय ॥ १ ॥
प्रथम सेव गुरुदेव की पीछै हरि की सेव ।
जन हरिया गुरुदेव बिन भक्ति न उपजै मेव ॥ २ ॥
गुरु सेवा कै राम की या तुल नांही और ।
गुरु तो भांजै भरम कूं राम मुक्ति की ठौर ॥ ३ ॥
पहिली दाता हरि भया तिनतें पाई जिंद ।
पीछे दाता गुरु भया जिन दाखे गोविंद ॥ ४ ॥
पहिली गुरु आदर दिवै तो हरि आया लेह ।
हरिया गुरु आदर बिना हरि ही मान न देह ॥ ५ ॥
हितू न सतगुरु सारिखा मुझ दीया गुँझि ज्ञान ।
हरिया मैं तैं मेटिकै अधर धराया ध्यान ॥ ६ ॥
हितू न सद्गुरु सारिखा अर्थ बताया एक ।
हरिया तन मन वचन का अनरथ मिट्या अनेक ॥ ७ ॥

---

१ अनिर्वचनीय अथवा जो जाना न जाय । २ अपरंपार । ३ भेदका जाननेवाला ।
४ टालनेवाले । ५ अचल । ६ नित्य । ७ जो विचल न हो ।

हरि है दाता देह का तातें भया सकाम।
गुरु है दाता ज्ञान का मनका मेटि विराम ॥ ८ ॥
जब तें उर अज्ञानता हरि सुख उपजै नाँहिं।
जन हरिया गुरु ज्ञान दे किया निदुरा मन माँहिं ॥ ९ ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं हरिया होते रीछ।
आपो आप न ओलखी औरां ईछे पतीछ ॥ १० ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं आती नाहि सुमत्ति।
हरिया हरि सूं आंतरो करते काय कुमत्ति ॥ ११ ॥
सतगुरु जो मिलते नहीं होती तनकी हानि।
ज्यूं पासो चोपड़ तणो हरिया हाथ न जानि ॥ १२ ॥
हरिया पासो हाथ को होय न अपने हाथ।
सतगुरु फेरे शब्द बिन मन आवे नहिं हाथ ॥ १३ ॥
जन हरिया चोपड़ तणा आवे दाय अनेक।
सतगुरु केरे शब्द सों औसर मिलैन एक ॥ १४ ॥
सुरति सारी निरंत चौपड़ सतगुरु दाव दिखाय।
हरिया पासा पेम का खेलज हरि सूं लाय ॥ १५ ॥
ऐसे दिनकर भेटियाँ निशिकर गए नसाय।
जन हरिया गुरुभेटियाँ अघ अंधारा जाय ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु भेटिया मेट्या अघ अंधार।
ज्ञान गुरू प्रकासिया देख्या दिल दीदार ॥ १७ ॥
घर घर में दीपक जगै दुनियाँ देखै नाँहि।
सतगुरु बिन भाजै नहीं पड़दा अंतर माँहि ॥ १८ ॥
लखचौरासी नगर में कोड़ी धज कोइ साह।
लखां हजारां एक सौ जग मांही बहुलाह ॥ १९ ॥
सतगुरु साहूकार है शिष सौदागर जान।
जन हरिया राखै नहीं रती न अंतर कान ॥ २० ॥
हरिया सौदो साह को लेसी सिरदे मोल।
बिन तोलां बिन ताकड़ी तत्त तराजू तोल ॥ २१ ॥
सौदा सतगुरु सूं किया राम नाम धन काज।
लाभ न कोई छेहड़ो तोटा सबही भाज ॥ २२ ॥
सतगुरु बिन सौदा किया जन हरिया बेकाम।
साकट ऐसे सूकरा हांड़ै घर घर जाम ॥ २३ ॥

---

१ राजीकरना, लल्लोपोरी करना। २ दृष्टि। ३ सूर्यप्रकाश। ४ चंद्र, अंधेरा। ५ पार। ६ फिरे।

सतगुरु संग सौदा किया गाहिक ज्ञान विचार।
जन हरिया जब जाणिये पूंजी पार उतार ॥ २४ ॥
राम नाम सौदागरी करि करि लीजे लाह।
जन हरिया हक साहके ना कोइ अनहक राह ॥ २५ ॥
हरिया सौदा शब्द का दूजा सौदा नांहि।
दूजा सौदा सो करै खांड़ परे मुखमांहि ॥ २६ ॥
राम नाम सौदा किया दूजा दोण चुकाय।
जन हरिया गुरु ज्ञान का ताँडा देह लदाय ॥ २७ ॥
ताँडे नायक नाम निज गुण की गूंण भराय।
लैदे पलाणे सुरति मन ज्ञान बलधिया थाय ॥ २८ ॥
आडा पड़दा दूर करि अगम दिखाई वाट।
जन हरिया गुरु महर तें लंघिया अवघट घाट ॥ २९ ॥
अवघट घाटी नीसऱ्या देख्या देव अपार।
जन हरिया शिर ऊपरै सतगुरु सिरजन हार ॥ ३० ॥
सतगुरु मिलियाँ बाहिरो होती हाँसा खेल।
कूवे गोसीं कोस ज्यूं हरिया पाछो ठेलं ॥ ३१ ॥
जवरो गोसी कूप जग वारो आवे जाय।
हरिया गुरु बांही गहै आत जात अटकाय ॥ ३२ ॥
सतगुरु मोकूं धीरदे एकजदाखी सीख।
जन हरिया गुरु सीख विन भरूँ न दूजी बीखं ॥ ३३ ॥
सीख सुनाई सुध भई तन आँपो विसराय।
जन हरिया मन गैंकं हुय तर्क फेंर्के नहिं थाय ॥ ३४ ॥
सतगुरु वाह्या शब्द सर मूक्यों हृदय मँझार।
भौंदू था सो भाजिग्या भेदी रह्या विचार ॥ ३५ ॥
सतगुरु वाह्या शब्द सर सनमुख लागा आय।
सुगुरा सोई चेतसी निगुँरां गम्म न काय ॥ ३६ ॥

---

१ खांच ब्यंग है अर्थात् धूड़। २ कर। ३ मालद, सोबत। ४ मुखिया। ५ छटिया। ६ विनौं। ७ बहस झेलनेवाला। ८ धक्कादेना। ९ डग। १० अपनापन। ११ भ्रम। १२ वादविवाद। १३ छोडा। १४ अज्ञानी।

१५ गुरु उपदेश कहाकरै दुराराध्य संसार।
बधे सदा जाके उदर जीव पंचपरकार ॥ १ ॥
हँघा प्रभु चूँघा चतुर सूँघा रोचक शुद्ध।
कँघा दुर्बुद्धी विकल घूँघा घोर अबुद्ध ॥ २ ॥

हरिया सतगुरु शब्द की मुखभर घाहै मूढ।
आगै शिष सामा खड़ा दियाँ जगत कूँ पूठ ॥ ३७ ॥
जन हरिया गुरु सूरवा करै शब्द की चोट।
सिख सूरा तन जो लहै आनि धरै नहि ओट ॥ ३८ ॥
सतगुरु का सिख सूरवां त्यागै तन मन प्रान।
हरिया सालै रैन दिन शब्द लगाया बान ॥ ३९ ॥
भागां सूर न बज्जई भागां गुरु नै गाल।
अणियां एकल मल लड़ै दोऊ दलां विचाल ॥ ४० ॥
सतगुरु वाह्या मूठ भर शब्द सतांणा एक।
जन हरिया उर बीच में करिग्या छेक अनेक ॥ ४१ ॥
पर उपकारी गुरु मिल्या भक्ति बताया भेव।
योही सुमरण हरि कथा याही सहजाँ सेव ॥ ४२ ॥
जन्म जन्म के वीसरे अब क्यूं आवै ठाँय।
जन हरिया गुरु आपना पलमांही समझाँय ॥ ४३ ॥
जन हरिया गुरु आपना लेपहुँचे पर गाँव।
जिन गुरु शब्द न जानिया धका बीचमें खाँव ॥ ४४ ॥
कीड़े खाई लकड़ी ज्यूं काया कूं काल।
गुरु बिन कोइ न ऊबरै मध्य स्वर्ग पाताल ॥ ४५ ॥
ब्रह्म अग्नि तन बीच में मथकरि काढै कोय।
उलटि काल कूं खात है हरिया गुरु गम होय ॥ ४६ ॥
सतगुरुसी संसा मिट्या भया निसंसै जीव।
जन हरिया सुखि प्रामिया आदि अंतका पीव ॥ ४७ ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं तो लेते कुल खोज।
जन हरिया सतगुरु मिल्या हसोन आवै रोज ॥ ४८ ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जिसा कैमागर होय।
शब्द मैसकला फेर करि दाग न राखै कोय ॥ ४९ ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जैसा होय लोहार।
तन लोहा ज्यूं ताय दे काट न राखण हार ॥ ५० ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जिसा सरॅकरा होय।
मन सरॅकस का तीर ज्यों पांक न राखै कोय ॥ ५१ ॥

हूंसा सिद्ध कहै सब कोऊ सूंसा कँपा मूरख होऊ।
पूंसा चोर सिद्ध संसारी पूंसा जीव मोक्ष अधिकारी ॥ १ ॥

१ मुखभरकर। २ कोरडे। ३ सिकलीगर। ४ [illegible]। ५ [illegible]। ६ [illegible]।

जन हरिया सतगुरु इसा जैसा होवे भृंग।
कीट पयंसे पोखदे करै आप से रंग ॥ ५२ ॥
जिन गुरु ती हरि भ्रामियाँ भरम न राख्या कोय।
जन हरिया क्या अरपिये दीजै तन मन दोय ॥ ५३ ॥
जन हरिया भव जुगन में सतगुरु करी सहाय।
आदू अपना जानिके हाथ लिया विलमाय ॥ ५४ ॥
लोह पलट कंचन भया पारस का परताप।
जन हरिया सतगुरु करै आप सरीपा आप ॥ ५५ ॥
जन हरिया सतगुरु करै देखा है इकतार।
जैसे कूं तैसा करै ज्यों दरपन दीदार ॥ ५६ ॥

इति।

अथ गुरु शिष्य को प्रसंग।

शिष सतगुरु पै जायके चरण नवाए शीश।
जन हरिया सतगुरु किया चेला राम वरीश ॥ १ ॥
शिष सेती सतगुरु कहै परा परीकी रीत।
और भरम कूं छांडि दे राम नाम सूं प्रीत ॥ २ ॥
शिष मन को नारेल करि ले गुरुचरणां चाढि।
हरिया सतगुरु देत है अपना अंतर काढि ॥ ३ ॥
अंतर जिसकूं दीजिये हरिया अंतर देह।
आपा अंतर बाहिरो जासूं किसा सनेह ॥ ४ ॥
हरिया भेद न दीजिये वाके अंतर खोट।
तन तैं नान्हा हुय मिलै मन तैं वड्डिममोट ॥ ५ ॥
हरिया तन का क्या दिया जो मन दुविधा आनि।
तन मन भीतर एक है ताहि दिया सब जानि ॥ ६ ॥
ताहि दिया सब जानिया याकै अंतर साच।
हरिया कबहूं मुख ते असंत न आवै वाच ॥ ७ ॥
मुख तैं मीठा बोलणा अंदर भरिया खार।
वाकै कूड़ रु कपट का हरिया बहुत व्योहार ॥ ८ ॥
हरिया तन हरि का दिया मन हरि कै नहिं हाथ।
मन कूं गुरु पँरयोधिके दई नाम सी आथ ॥ ९ ॥

---

१ भेद। २ वारीश=समुद। ३ छोटा। ४ बड़प्पन। ५ भेदभाव। ६ झूठ। ७ प्रबोधिके=सचेतकर। ८ संपत्ति।

या गुरु कूं क्या दीजिये दीजे अपनो मन्न ।
मन के पूठे राम दिया हरिया तनक मनन्न ॥ १० ॥
मन को देयो दुलभ है जो कोइ मन कूं देत ।
जन हरिया मन देत है तन करि जाने रेत ॥ ११ ॥
मन मेरा सेवग भया लग्या शब्द गुरु कान ।
रोम रोम में भिद गया हरिया किधूं न जान ॥ १२ ॥
श्वास भाव सब ही किया दीया मन अरु तन्न ।
हरिया पीछे क्या रहा गुरु दरशन परसन्न ॥ १३ ॥
हरिया गुरु दरशन कियाँ कटै कोटि अपराध ।
सोई निशि दिन धिन घड़ी होय समागम साध ॥ १४ ॥
साधु समागम सफल है हरिया तन मन जानि ।
जैसा धाहै बीज कूं तैसा लुणसी आनि ॥ १५ ॥
हरिया गुरु का सत शब्द सांचे मनसूं धारि ।
भवसागर में डूबताँ लेसी पार उतारि ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु आपनै शब्द कह्या समझाय ।
दूजा भ्रम अरु कर्म कूं पल में देइ बहाय ॥ १७ ॥
हरिया जैमलदास गुरु राम निरंजन देव ।
काया देवल देहरो सहज हमारे सेव ॥ १८ ॥

चंद्रायणा ।

सतगुरु का शिष जानि विचारै ज्ञान कूं ।
तन मन सौंपै सीस धरै उर ध्यान कूं ॥
निशि दिन सुमरै राम कबू नहिं भूलरे ।
हरिदां दास कहै हरिराम ताहि नहिं तूलरे ॥ १९ ॥

इति ।

अथ उपदेश को अंग ।

तन मन का अर्पण करै, थाचा सूर नरेश ।
जन हरिया हरिनाम का, ऐसा है उपदेश ॥ १ ॥
कारन कारनवंत कै, उर आपस में आन ।
जन हरिया यों ब्रह्म है, सही हृदय करि जान ॥ २ ॥
तेरू जल तिर नीसंरै, का बेरै सिर बेठि ।
जन हरिया जग क्यूं तिरै, विना ज्ञान गुरु पैठि ॥ ३ ॥

१ बेहा=डूंडा ।

राम नाम निशि दिन भजो, तजो विड़ाणी तात।
जन हरिया नर देह सो, औसर वीतो जात ॥ २० ॥
राम भजो रे प्राणियाँ, मन परतीति लगाय।
जन हरिया परतीति विन, जन्मअकारथ जाय ॥ २१ ॥
इन औसर भजि राम कूं, करि करि मन में ख्यांति।
हरिया पेम पियास विन, चढ़ै न चोली भांति ॥ २२ ॥
बंदा करिये बंदगी, आतम सूं आधीन।
जन हरिया दम दम घटे, यो तन होसी छीन ॥ २३ ॥
सहजां सांई सुमिरिये, आलस ऊंघ न आन।
जन हरिया तन पेखणो ज्यों जलपंडर जान ॥ २४ ॥
हरिया राम संभारिये, दूजी चिंत निवार।
दूजी चिंता जो करै, तो तन जासी हार ॥ २५ ॥

इति।

अथ ज्ञान संजोग विरह को अंग।

दीपक पावक तेल भरि, बिच वाती संजोय।
जन हरिया जब एकठा, पड़ै पतंगा जोय ॥ १ ॥
तन दीपक मन तेल भरि, जीव पतंगा जेम।
पावक रूपी राम है, हरिये लाया पेम ॥ २ ॥
विरहा आया ज्ञान का, आपो अंतर मेट।
जन हरिया जब विरहिनी, पिउ परमानंद भेट ॥ ३ ॥
विरह सजोड़ा ज्ञानका, सुधि बुधि गुणां गँभीर।
जन हरिया अज्ञान कूं, काढ़ि निकासै तीर ॥ ४ ॥
और विरह किस काम का, विना विचार्यां ज्ञान।
जन हरिया विरह जाणिये, अंतर उपजै ध्यान ॥ ५ ॥
विरहा मेरे सिरधणी, छहेत छाँडूं नाँहि।
जन हरिया विरह लेचले, सुखसागर के माँहि ॥ ६ ॥
इनको प्याणो दुलभ है, ज्यों खांडा की धार।
हरिया सरवर नीर कूं, विरही पीवन हार ॥ ७ ॥
जन हरिया बन बन फिरी, साँई कारण सुज्झि।
विरहा ज्ञान प्रकासिया, अंदर पाया गुज्झि ॥ ८ ॥
हरिया मेरे को नहीं, तमसा आतम राम।
तूं घट घट में रमि रहा, सारत है सब काम ॥ ९ ॥

१ दुखा। २ सरनाउ।

विरह स तीरा तन वहै, सो जाणै तन पीर।
जन हरिया तन पीर बिन, क्या जाणै बेपीर ॥ १० ॥
पीर पराई सो लहै, ता तन पीरा होय।
जन हरिया बेपीर तन, पीर न बूझै कोय ॥ ११ ॥
विरह सतीरा वहिगया, हरिया अंतर माँहि।
लागत ही सूं गिर पऱ्या, ऊठण की सुधि नाँहि ॥ १२ ॥
विरह भाल जाके लगी, अंग अंग में एक।
जन हरिया तन बीचमें, करिगी छेक अनेक ॥ १३ ॥
विरह भालका वहि गया, करिग्या देह दुसारँ।
का लागी सो जाणसी, का ऊ वाहण हार ॥ १४ ॥
विरह भाल सूं मरिगया, सूरा संत सुजाण।
जन हरिया सेजीवता, पड्या तलप्फै प्राण ॥ १५ ॥
भली करी तैं आवतें, विरहा मेरे अंग।
एक रामैयो रमि रह्यो, लगै न दूजा रंग ॥ १६ ॥
विरहा तू आयो भलाँ, हरिया अंतर माँहि।
राम दिवानी करि गयो, और किसी की नाँहि ॥ १७ ॥
विरहनि मारी विरह की, सुधि बुधि विसरी सार।
हरिया सिर सूं डारिया, हीर चीर सिणगार ॥ १८ ॥
जन हरिया जोवन गयो, तनतैं जरजर होय।
मारी मरूं न विरह की, राम निजर भरि जोय ॥ १९ ॥
पाँवां सेती पंगली, कर सूं काम न होय।
वाहण वहिग्यो विरह को, हरिया अंग थकोय ॥ २० ॥
जन हरिया विरह परजल्या, धूआं निकसै नाँहि।
का झल लाई सो लहै, का जिसकै घट माँहि ॥ २१ ॥
विरहा मोकूं ले चल्या, गंग जमुन की तीर।
जन हरिया जल बिच अगनि, अब कहँ जाऊं बीर ॥ २२ ॥
महा अगनि जलमें जगै, जहाँ विरह का खेल।
जन हरिया जहां विलंबिया, जाल न मच्छी झेल ॥ २३ ॥
जहाँ झींवर का जाल है, विरहा कदे न जाय।
हरिया घट विरहा बसै, जाकूं काल न खाय ॥ २४ ॥
मुंदरेड़ी आया भला, विरहा ज्ञान विचार।
जन हरिया अब आयसी, सुखसागर भरतार ॥ २५ ॥

इति।

भाला। २ आर पार छेद। ३ बावली। ४ प्रधान। ५ अच्छा।

अथ परचै को अंग।

प्रथम ध्यान पूरब दिसा, गगन गरजिया जाय।
ठाम ठाम पाताल कूं, पछै पछिम कूं धाय ॥ १ ॥
सुरति चली आकास कूं, दे जालंधर बंध।
जन हरिया जहँ जाणिये, हद बेहद की संध ॥ २ ॥
बीच मेरु तें गिर पड्या, धरणी धरै न पाय।
जन हरिया जब सूर कूं, खरै रोते का दाय ॥ ३ ॥
लगी चोट मन मरम की, खूला ब्रह्मकपाट।
मेवासा सब जीत कै, बस्या नगर बैराट ॥ ४ ॥
घाट विकट बैराट की, पोहँचेगा कोई सूर।
हरिया कायर थकि रह्या, दरगै रहिया दूर ॥ ५ ॥
दृष्टि देख सबको कहै, सुपनेऊ कह सोय।
जन हरिया गम अगम कूं, ताहि बतावै कोय ॥ ६ ॥
सुरति बतावै ब्रह्म कूं, कहै अगम की बात।
जन हरिया जहँ की कहै, तहां नहीं दिन रात ॥ ७ ॥
सुरत बसी अमरा पुरी, बरत ब्रह्म की आण।
विन बाणी हरियो पढै, जहँ नहि वेद पुराण ॥ ८ ॥
तीन पोलँ तर्किया सिरै, बीच मँडे मैदान।
जन हरिया घर शून्य में, सहज घुरै नीसान ॥ ९ ॥
जीव सीव की संध में, लगे पात उत्तान।
जन हरिया जहँ होत है, केती विधि का तांन ॥ १० ॥
झालर ताल मृदंग डफ, घन अनहद की घोर।
हरिया एक अखंड है, ररंकार की टोर ॥ ११ ॥
शब्द एक ररंकार की, महिमा कही न जाय।
जन हरिया विन देखियां, और न को पति आय ॥ १२ ॥
शब्द एक ररंकार की, महिमा कोटि अनंत।
कहि कहि थाके मुनि जना, हरिया आदि न अंत ॥ १३ ॥
अखंड एक ररंकार की, रोम रोम धुनि होय।
जन हरिया जा बिच लगी, ता तन जाने सोय ॥ १४ ॥

---

१ पश्चिमतान। २ त्रिकुटी। ३ युद्ध। ४ सुषुम्णाद्वार। ५ गढ। ६ लंबा चौडा, विस्तृत। ७ मुख हृदय बंकनाल। ८ आश्रयलेनेका स्थान। ९ योगसाधन की एक मुद्रा। १० उनचास तानोंसे ८३०० कूटतान निकलेहैं।

देखत ही दिल परचिया, मिट्या अपरचा मन्न।
जन हरिया विन देखियाँ, ताहि न परचै तन्न ॥ १५ ॥
विन पाँवाँ जहाँ नाचियो, विन कर ताल वजाय।
विना राग रीझायवो, विना कंठ सुर गाय ॥ १६ ॥
विना ज्ञान गुण वूझियो, विना सीख समझाय।
विना दृष्टि जहां देखियो, हरिया ध्यान लगाय ॥ १७ ॥
विना नींव जहाँ देहरो, विना पूज जहँ देव।
विन वाती दीपक जगै, विन मूरति जहँ सेव ॥ १८ ॥
विना पेड जहां वृक्ष है, विना फूल फल लाय।
विना पंख जहां भँवर है, अधर विलंवे आय ॥ १९ ॥
विना नीर जहां कमल है, विन वरषा वरसाल।
विना मास विन रुत्त है, मात पिता विन वाल ॥ २० ॥
विना जात विन वरण है, विना भ्रात विन वैन।
हरिया ऐसा ब्रह्म है, सुन्या न देख्या नैन ॥ २१ ॥
हरिया वाल न वृद्ध ऊ, ना तरणा ऊ तन्न।
निरालंव सुन में रमै, निराकार निरँजन्न ॥ २२ ॥
विन तीरथ जहँ न्हाइवो, विना वाट विन घाट।
जहँ कोइ शहर न सोवती, हरिया विणज न हाट ॥ २३ ॥
यहँ कोइ भर्म न कर्म है, यहँ कोइ लिपै न लेस।
जन हरिया जहँ की कहै, तहँ नहि देस न वेस ॥ २४ ॥
जहँ कोइ जोग न जुगति है, जहँ नहि देग न तेग।
हरिया दवा न वेदवा, जहँ नहि पौन न वेग ॥ २५ ॥
यहँ नहिं राग न दोष है, यहँ नहिं राज न तेज।
यहँ नहिं नारि न पुरुष है, हरिया लेज न देज ॥ २६ ॥
यहँ कोइ रिद्धि न सिद्धि है, यहँ नहिं पुण्य न पाप।
हरिया विषय न वासना, यहँ उत्थप नहि थाप ॥ २७ ॥
यहाँ न हद वेहद है, यहाँ नाद नहि विंद।
जन हरिया यहां ब्रह्म है, जरा न व्यापै जिंद ॥ २८ ॥
यहँ कोइ चंद न सूर है, यहँ नहि धर आकास।
हरिया एको अधर है, ब्रह्मानंद विलास ॥ २९ ॥
तीन लोक चवदे भवन, उत्पति परलै होय।
हरिया एको अमर है, मरै न जीवै कोय ॥ ३० ॥

१ देवालय। २ कतु।

यहँ कोइ ऊंच न नीच है, यहँ नहि गाम न ठाम।
हरिया आपो आप है, संतन का विश्राम ॥ ३१ ॥
बंधन तें निर्बंध भया, मिल्या शून्य घर जाय।
हरिया सुरति र शब्द का, निर्भय ध्यान लगाय ॥ ३२ ॥
लगी सुरति सत शब्द मूं, कबहूं छूटै नांहि।
जन हरिया मन मिल रह्या, आर पार पद मांहि ॥ ३३ ॥
अध ऊरध के बीच में, हरिया झिलमिल जोत।
सुरति शब्द परचा भया, मिले ओत अरु पोत ॥ ३४ ॥
सुरति समाणी ब्रह्म में, ब्रह्म निरंतर पास।
जन हरिया जहँ काल का, ओर जमर नहिं जास ॥ ३५ ॥
जन हरिया दिल भीतरे, दोसत अपना राम।
करूं न दूजा दोसती, या जग आया जाम ॥ ३६ ॥
आतम का सुख जाणिया, भया परम संतोष।
जन हरिया जब जाणिये, याही जीवतमोष ॥ ३७ ॥
पारब्रह्म के देस का, दो राहां बिच राह।
जन हरिया मन संचरे, मेटण दिल दरगाह ॥ ३८ ॥
पारब्रह्म के देसड़े, अदेल नको फदेलाह।
हरिया जामण मरणका, मेट्या दुइ बदलाह ॥ ३९ ॥
जन हरिया उन देसड़े, बारह मास बसंत।
सदा फलैगी बनस्पति, विलँग्या जीव न चिंत ॥ ४० ॥
जन हरिया उन देसडे, बारे मास सुकाल।
भूख तृपा नहिं व्यापई, दुर्भख पड़े न काल ॥ ४१ ॥
जन हरिया उन देसड़े, मास दिवस नहिं रित्त।
है जहँ गाज न बीजरी, सरवर भरिया नित्त ॥ ४२ ॥
जन हरिया उन देसड़े, अविनासी की आन।
और किसी का डर नहीं, हिंदु न मुस्सलमान ॥ ४३ ॥
जन हरिया उन देसड़े, आतम एको यार।
दानव कोइ न देवता, निरदावे संसार ॥ ४४ ॥
लख चौरासी नगर का, हरिया ब्रह्म नरेश।
है जहँ चूक न चाकरी, पटा न पलटै देश ॥ ४५ ॥
हरिया पाटन पुर नगर, राव रंक नहिं भूप।
अलख अभंगी आप है, नारि न पुरुषारूप ॥ ४६ ॥

इंसाफ। २ गैर इंसाफ। ३ प्राचीन बड़ा शहर। पुर, पुरी, नगर, नम
पट्टन, पटभेदन, निगम, कटक, स्थानीय, पट, इनमें कुछकुछ भेद है।

हरिया हरिजन एक है जीव सीव नहिं होय।
नीर मिलाना नीर में, फिर न्यारा नहिं होय ॥ ४७ ॥
जन हरिया मन मेरु करि, चढ़्या त्रिवेणी गंग।
गंगा जमुना गोमती, नाहत है अण भंग ॥ ४८ ॥
उलटा चढ़ असमान कूं, मिले त्रिवेणीतट्ट।
जन हरिया जहँ मंड़िया, सुरति शब्द का मट्ट ॥ ४९ ॥
सुरति शब्द के मट्ट की, है अजरायल वाट।
जन हरिये जहँ घर किया, लोक वेद सूं फाट ॥ ५० ॥
सुरति शब्द मिल एकठा, ता विच रही न काण।
जन हरिया सुन सेझ का, सहजांई सुख माण ॥ ५१ ॥
तट तिरवेणी नीर की, चलै सीर चहुँ ओर।
जन हरिये सो चख्खिया, चिलख न रख्खी कोर ॥ ५२ ॥
पड़ै पुंडंग तहँ पेम की, एक अखंडी धार।
हरिया हरिजन पीवसी, दुनिया सुधी न सार ॥ ५३ ॥
बादल वूठा पेम का, नख सिख भीना रोम।
हरिया सो सुख जाणसी, जिन पाई पर भोम ॥ ५४ ॥
अरध कमल में वैस करि, भँवरो रह्यो लिपट्ट।
जन हरिया जब जीवको, सांसो गयो सिमट्ट ॥ ५५ ॥
भँवरो वास विलंवियो, फूल न आयो गट्ट।
हरिया आशा छांड़िके, रह्यो निराशा मट्ट ॥ ५६ ॥

इति।

अथ चेतावनी को अंग।

मेर नगारा आरखी, केते गये बजाय।
जन हरिया किन वहुरि के, वात न वूझी आय ॥ १ ॥
वात वटाऊ देसकी, कहै सुनै सब कोय।
जन हरिया उन देसकी, कहै सुनै नहिं कोय ॥ २ ॥
नैणा नेह निहारती, न्यारी निमिष न होय।
जन हरिया तन भीतरै, पड़्या दिनंतर जोय ॥ ३ ॥
पान तंबोली चावते, मसी कथाँड़ै दंत।
जन हरिया दिन एक में, मुख धूडी बूंकंत ॥ ४ ॥
जन हरिया कर कंपिया, डोलण लागा शीश।
तोइ न अंधा चेतही, आपनपी जगदीश ॥ ५ ॥

१ अमिट। २ थोरी। ३ बोछाइ। ४ लगाना। ५ हालना, लफ।

निसि दिन दौड़े धन कैर, सहै घाम सिर सीत ।
जन हरिया नर छाँडिग्यो, खांट खटांऊ मीत ॥ ६ ॥
खांटी दैंटी रहगई, कुछी न चाली साथ ।
जन हरिया जग दीन बिन, हाल्यो रीते हाथ ॥ ७ ॥
ओछे पाणी मच्छली, किसी जिंद्की आस ।
हरिया सास सरीर में, वसै किता दिन वास ॥ ८ ॥
ऊंचा नीची सकल में, एक किसी में नाहिं ।
जन हरिया जामण मरण, लख चौरासी माहिं ॥ ९ ॥
लख चौरासी जीवड़ा, सबै काल की चारि ।
जन हरिया जय ऊबरै, सत का शब्द सँभारि ॥ १० ॥
सब जग बंध्या जेवड़ी, निर्बंधन नहिं कोय ।
हरिया सो निर्बंध है, राम सनेही होय ॥ ११ ॥
जग मांही केता धका, टान्या केम टरंत ।
जन हरिया गहु राम कूं, पड़ि पड़ि मी ऊठंत ॥ १२ ॥
पांच सात पच्चीस में, घरप एकसो बीस ।
घरंटी ऊन्या अन्न ज्यों, के पीस्या फर पीस ॥ १३ ॥
पछितावैगो प्राणिया, हरिसूं पड़ि से दूर ।
जन हरिया मन चेतले, है तन सास हजूर ॥ १४ ॥
कुल के मारग जग चले, ज्यों कीड़ी कुल नाल ।
हरिया टले त ऊबरे, नहि तो लूटे काल ॥ १५ ॥
पान पड़ंते यूं कहो, सुण तरवर की डाल ।
मेरे तो दिन पूंजिग्यो तेरो आयो काल ॥ १६ ॥
डाल पुकारे डाल कूं, सुणो हमारी बात ।
मेरी ऊमर पूरिगी, तेरी आई घात ॥ १७ ॥
डाल पुकारे मूल कूं, थारी आई सुज्झि ।
जन हरिया अब चेतले, जगमें मरणो मुज्झि ॥ १८ ॥
थारो थारी ऊठिगे, कटी काल के लोग ।
हरिया पूंछे पुंगहीं, उनका आया जोग ॥ १९ ॥
हरिया राग न रीझियो वेद न सिया पाठ ।
काया जागी पकटी, साधे कल्याण काढ ॥ २० ॥

---

१ [illegible] । २ [illegible] कमाई । ३ [illegible] । ४ [illegible] । ५ [illegible] । ६ [illegible] । ७ [illegible] । ८ [illegible] । ९ [illegible] । [illegible]

पलंग पथरणे पौढ़ते, लेले सीरख सौड़।
सोवे सीढ़ी साथरे, दौड़ि सके तो दौड़ ॥ २१ ॥
मीठा मेवा जीमते, बहु भोजन बहु भांत।
तासूं तन छेती पड़े, जन हरिया कर ख्यांत ॥ २२ ॥
अमल कटोरा गालते, मावा भरि भरि लेह।
जन हरिया दिन दस्सके, का कोइ वरस करेह ॥ २३ ॥
प्याला भरि भरि पद्मणी, पिवै पिलावै पीव।
जन हरिया जब क्या करै, जम लेजासी जीव ॥ २४ ॥
पैड़ी पैड़ी पाँव दे, सूते मन्दिर माहिं।
जन हरिया तोइ जीवकी, घात टरैगी नाहिं ॥ २५ ॥
कनक महल ता बीच में, ढोले अंगन काच।
हरिया एकै नाम विन, नाच गये बहु नाच ॥ २६ ॥
खासा कपड़ा पहरते, सोंधा अंग लगाय।
जन हरिया वे मानवी, मिले खाक दर्रै जाय ॥ २७ ॥
आडे तेढे चालते, खांगी पाघ झुकाय।
हरिया छाया निरखते, सेभी गये विलाय ॥ २८ ॥
ऊंचा मंदिर बीच घर, जहँ करते घरवास।
होसी घोरां बीच घर, लेण नदै इक सास ॥ २९ ॥
सुंदरि विना न सारते, निशि दिन करते नेह।
से जंगल में पोढ़िया, हरिया एकल देह ॥ ३० ॥
कुल मरजाद न लोपते, मरते लोका लाज।
नागा करि करि काढ़सी, हरिया कालक आज ॥ ३१ ॥
माटीका देवल किया, काची कली लगाय।
नहीं भरोसा रहनका, हरिया यार न लाय ॥ ३२ ॥
मांड़्या सो ढ़ह जायगा, माटी तणा मँड़ाण।
जन हरिया जमरायका, आवैगा फरमाँण ॥ ३३ ॥
पाटण मंडँप पुर नगर, ढहि ढहि होसी ढेर।
जन हरिया जग जावसी, जे कोइ लावै घेर ॥ ३४ ॥
देवल ढहता देखिया, देख न भया उदास।
जन हरिया उन मूढ़को, हदौ न खूलै जास ॥ ३५ ॥
नहीं गरीबी दीनता, साहिब को डर नाहिं।
जन हरिया तन लूटसी, गाम गली के माहिं ॥ ३६ ॥

---

१ बारीक। २ सुगंधित मसाला। ३ राख। ४ गड्ढा। ५ फरमान=परवाना=राज-
आज्ञापत्र। ६ छत, दूसरी मंजिल। ७ बारह दरी।

हरिया साँई सुमरिये, परहरिये पर निंद ।
साचै साँई बाहिरो, झूठी तेरी जिंद ॥ ३७ ॥
जब लग साँई याद कर, तब लग पिंजर सास ।
हरिया पाणी ओस का, ऐसी तन की आस ॥ ३८ ॥
बाल पणै नहीं चेतियो, तन तरुणापो थाय ।
जन हरिया वृद्धहि भयो, तोइ न चेत्यो जाय ॥ ३९ ॥
हाथ पाँव सिर कंपिया, आंख्या भयो अंधार ।
कालाँ ती पंडर भया, हरिया चेत गिवार ॥ ४० ॥
मात न तात न भ्रात सुत, सगा न सुंदरि साथ ।
हरिया जासी एकलो, करि घोलोऊ हाथ ॥ ४१ ॥
घाट बटाऊ सब चले, बिड़ेमें वासो होय ।
जन हरिया साँई बिना, यार न तेरा कोय ॥ ४२ ॥
जन हरिया संसारमें, देख पेख मत भूल ।
तेरा सज्जन को नहीं, नारायणसे तूल ॥ ४३ ॥
घाट बिड़ाणी लोक बिड़, बिड़ही बिड़में वास ।
हरिया हरि बिन दूसरा, ताहि किसो बिश्वास ॥ ४४ ॥
हरिया संगी राम बिन, या कलि माँहि न कोय ।
काल पकड़ि ले जावसी, ऊभा देखै लोय ॥ ४५ ॥
हरिया संगी राम है, का सतगुरु की सीख ।
जिन पैंडै दुनियाँ चले, भरूं न काई बीख ॥ ४६ ॥
चंगाँ थका न चेतिया, मंदी क्या पछिताय ।
हरिया लागी लाय ज्यूँ, भार न काढ्या जाय ॥ ४७ ॥
राय रंक बड़ भूपती, वासो बसे सराय ।
आये ज्यूँ सब ऊठिगे, हरिया थिर नहिं थाय ॥ ४८ ॥
खंड खंड हुय जाहिंगे, नाना नवे परकार ।
जन हरिया निरकार थिर, और अथिर आकार ॥ ४९ ॥
रामनाम चेत्यो नहीं, गाफिलपणै गँवार ।
हरिया रहिसी पारकै, हाँली घर घर बार ॥ ५० ॥
रामनाम नहिं चेतियो, करि करि मनकी ढील ।
जन हरिया सर जल भर्यो, प्यासा मरै पिपीलैं ॥ ५१ ॥

१ साथी । २ पराया । ३ पश्च । ४ तुल्य । ५ बिराना । ६ कद
७ निरोग, तंदुरस्त । ८ सुस्त, मूर्ख । ९ नव प्रकारके खंड । १० नौक
११ चिउँटी ।

रामनाम नहिं चेतियो, फरी विड़ाणी आस।
हरिया से घर गोरवैं, सरकयां सेती यास ॥ ५२ ॥
रामनाम चेत्यो नहीं, आलस करि करि अंग।
हरिया से रीता रह्या, शूरां कूकर संग ॥ ५३ ॥
रामनाम नहिं जाणियो, कीया और कलाप।
हरिया जा घर संपदा, होसी साँडा साप ॥ ५४ ॥
रामनाम नहिं जाणियो, हाल्यो अवसर हारि।
बंध्यो वार नरेश के, गज सिर धूरी डारि ॥ ५५ ॥
गज पाँवाँ सिर चंपियो, करि अंकुसकी मार।
हरि अंकुस मान्यो नहीं, हरिया सहसी भार ॥ ५६ ॥
रामनाम विन जाणिया, वासो वसै वंबूल।
जे पागोथे पग धरूं, हरिया भाजै सूल ॥ ५७ ॥
रामनाम विन जाणिया, वात विंणंठी मूल।
हरिया जब होसी कहा, अंत भयो अस्थूल ॥ ५८ ॥
या जगमाँही जीवणो, ज्यूँ तरवर का फूल।
जन हरिया इन जीव का, तन कर पहिली सूँल ॥ ५९ ॥
रूप रंग ज्यों फूलड़ा, तन तरवर ज्यों पान।
हरिया झोलो काल को, झड़ि झड़ि हुवै हँफान ॥ ६० ॥
हरिया झोलौ कालको, सबही निकसे मांहि।
कोइक हरि जन ऊवरै, जाके दिशा न जांहि ॥ ६१ ॥
हरिया कलिमें आयके, कहा करत है कूर।
आसी विरियाँ अंतकी, मुखाँ परैगी धूर ॥ ६२ ॥
धकाधकीमें दिन गया, सूतां रैन विहाय।
हरिया हरि की भक्ति विन, कहा कियो नर आय ॥ ६३ ॥
सूती सपनै रैन के, पाय विलंबी सैनं।
हरिया जाणूं उठि मिलूं, ऊघरि आये नैन ॥ ६४ ॥
सूती सपनै ओझेंकी, योली अटपट वैन।
जन हरिया घर आंगनै, सही पधारे सैन ॥ ६५ ॥
जेवूं सपना साँच है, साँचा सैन मिलाय।
जब नहिं देखूं नैन भरि, तब कैसे पति आय ॥ ६६ ॥

---

१ गाँवका किनारा। २ सरकनेकी छपरी। ३ कियाकलाप, समूह। ४ नाग। ...भला। ६ झोली। ७ वनस्पतिको नाश करनेवाली हवा। ८ समय। ९ मिल... ...ना। १० सज्जन। ११ चौंकना।

सपने ही साँई मिले, सो साँई का मित ।
जन हरिया सो चितवे, सोई आय मिलंत ॥ ६७ ॥
जा दिन राम न जाणियो, ता दिन भयो अकाज ।
जन हरिया संसारमें, आय मुवा नहिं लाज ॥ ६८ ॥
जन हरिया कायम किया, मानव तेरा मुख्य ।
मुखतें करता ना भजे, कैसे होय निदुःख ॥ ६९ ॥
साँचा मुख मानव तणा, जा मुख निकसे राम ।
जन हरिया मुख राम विन, सोई मुख बेकाम ॥ ७० ॥
सोई मुख पसुवे दिया, सोई मुख नरदेह ।
गुरुमुख सुमरे रामकूं, पसवा खाय मरेह ॥ ७१ ॥
चरन पिवनकूं मुख दिया, उदर भरनके काज ।
हरिया राम न संचरे, सो मुख जाणि अकाज ॥ ७२ ॥
अधम उधारण याद करि, नर तेरा निस्तार ।
हरिया अधम उधार विन, और किसो आधार ॥ ७३ ॥
अधम उधारण याद करि, तन मन राखि निर्चित ।
जन हरिया कुण मेटसी, साँई विना सर्चित ॥ ७४ ॥
अधम उधारण एक है, दूजा ऊथप थाप ।
हरिया थापी थापना, जाका जपिये जाप ॥ ७५ ॥
एक रामकूं सुमरिये, दूजा धरो न चित्त ।
जन हरिया नहिं राम विन, तो रखवाला नित्त ॥ ७६ ॥
राम विना कुण राखसी, ज्यूं खेती किरसान ।
नहि तो चिड़े विगाड़सी, हरिया चेत अजान ॥ ७७ ॥
हरिया निज मन चेतले, जो परवंछे ठौर ।
एकै साँई बाहिरो, धणी न दूजा और ॥ ७८ ॥
धणी विहूँणा धवलेहर, ढहि ढहि ढेर थियाह ।
हरिया पाछा आयके, वास न को वसियाह ॥ ७९ ॥
हरिया तन को गीरवो, कहा करै नर देख ।
विहंमाता दाणो दले, औरां लिखती लेख ॥ ८० ॥
इन कायाको गीरवो, मूढ करो मति कोय ।
हरिया रावणके घरां, हुई जिका नर जोय ॥ ८१ ॥

१ मुकर्रर । २ उखड़ी हुई । ३ स्थिति । ४ मीनार यादगार । ५ ग
६ विधातृ=सृष्टि रचनेवाला ।

हकाँ बेली हक है, बे हकां वे हक।
हरिया एकै हक बिन, सब दिन जाहि अनहेक ॥ ८२ ॥
एता सुख संसार का, जेता सुक्ख न जानि।
जन हरिया सोइ सुक्ख है, जो कोइ विरला जानि ॥ ८३ ॥
सब कोइ चाहै सुक्ख कूं, दुःख न कोई चाहि।
हरिया दुख सुख सिरजिया, सोई ले निरवाहि ॥ ८४ ॥
दुनिया रोवै रोवणा, देखि विड़ाणी खोल।
हरिया नाम सनेह बिन, यो तन होय विहाल ॥ ८५ ॥
हरिया रोयज रोवणा, किसके आगे जाय।
मात पिता सुत बंधवा, सबही जाँहि विलाय ॥ ८६ ॥
दुनिया रोवै रोवणा, रोय रोय करै पुकार।
हरिया ऊ भांजे घड़े, ज्यूं भांडा कुंभार ॥ ८७ ॥
आवण जावण आदि का, आज काल का नाहिं।
हरिया क्या पछिताइये, मौत सकल के माहिं ॥ ८८ ॥
घर घर लागो लायणो, घर घर धाह पुकार।
जन हरिया घर आपणो, राखै सो हुशियार ॥ ८९ ॥
यो मिनखा तन पाइकै, भज्यो नहीं भगवान।
जन हरिया तन मानखो, मिलै नहीं औसान ॥ ९० ॥
यो तन जोवन देख नर, क्या परफूलत होय।
जन हरिया जलवाहला, बहतां वार न कोय ॥ ९१ ॥
तू क्यों सूतो नींद भरि, कहा निचिंतो होय।
हरिया जगमें जीवका, साथी सेण न कोय ॥ ९२ ॥
कुण बेली संसारमें, जीव एकलो जाय।
हरिया हरि बिन दूसरा, स्वारथ केरा थाय ॥ ९३ ॥
रामनाम बिन दूसरा, संग न कोई पंगे।
हरिया तन जोवन थकै, फरो जीवका ढंग ॥ ९४ ॥
सबही स्याणा हुय रह्या, नहीं अयाणो कोय।
स्याणो सोई जाणिये, अलख ओलखै सोय ॥ ९५ ॥
राज पाट सुत वित सबै, सुंदरि महल विलास।
जन हरिया हरि सुख बिना, ज्यों जंगल का घास ॥ ९६ ॥

---

१ हर्षां। २ साथी। ३ घर। ४ व्यर्थ। ५ शरीर। ६ जोरसे चिल्लाकर
ना। ७ सुगम। ८ किसका। ९ मूर्ख, उद्दंड। १० आनंद।

हरिया जंगल घासकूँ, हय्या देख मति भूल ।
दिष्टिं गहै दिन च्यार का, जाय जड़ां सूं खूल ॥ ९७ ॥
जन हरिया जग जात है, रहता कोऊ नाहिं ।
रहता एको राम है, न्यारा सब घटमाहिं ॥ ९८ ॥
हरि थोड़ो करि जाणियो, इन औसर नर आय ।
हरिया घणी चितारसी, पर हथ पड़सी जाय ॥ ९९ ॥
हाथ पड़े जब और के, वींचेगी तन माँहि ।
हरिया दोली पालि जल, पहलां बंधी नाँहि ॥ १०० ॥
हरिया पाल तलाव की, फाटी जब क्या होय ।
पहल किया सो खूब है, पीछै दाँव न कोय ॥ १०१ ॥
हरिया तन जोबन थके, किया दिया जो जाय ।
कीजे सुमरण रामको, दीजै हाथ उठाय ॥ १०२ ॥
हरिया दीया हाथ का, आडा आसी तोय ।
राम नाम कूं सुमरतां, पार उतारै सोय ॥ १०३ ॥
हरिया राम संभारिये, ढील करो मति कोय ।
सांझां बीच सवेरमें, क्या जानू क्या होय ॥ १०४ ॥
हरिया राम संभारिये, जब लग पिंजर सास ।
सास सदा नहिं पाहुणा, ज्यूं सावण का घास ॥ १०५ ॥
जन हरिया रहै सांवणूं, सदा न हरियो होय ।
ऐसे सास सरीरमें, थिर नहिं दीसै कोय ॥ १०६ ॥
हरिया हरिसो को नहीं, सज्जन तेरे और ।
मेटे आमण मरण कूं, दै अमरापुर ठौर ॥ १०७ ॥
हरिया जहँ अमरापुरी, तहँ हरि भक्ति सुहाय ।
से नर हरि की भक्ति विन, दौड़्या जमपुर जाय ॥ १०८ ॥
हरिया हरि सुमरण रहो, हालो अपने हक ।
पहिली तन का बल थकै, पीछै रसना थक ॥ १०९ ॥
हरिया थाकै आंमड़ी, जासी सुमरण छूटि ।
किया जाय सो कीजिये, लेगी तन धन लूटि ॥ ११० ॥
तन कूं जमरो लूटसी, लूटै धनकूं लोक ।
मास्हो करि करि चालसी, हरिया हाड ढंढोक ॥ १११ ॥
मायच पीयल छोड़िया, छोड़्या घर घर थान ।
हरिया धरती छांडिदै, जासी जंगल थान ॥ ११२ ॥

---

१ दृष्टि । २ मैं हेली । ३ यम । ४ ढंढोर ।

हरिया सास सरीरमें, वास किता दिन होय।
सासो सासा घटत है, कहा निचिंतो सोय ॥ ११३ ॥
हरिया दोली कीजिये, राम नाम की वाड़।
नहि तो जैमरो आइके, वाड़ी जाय विगाड़ ॥ ११४ ॥
हरिया वाड़ी वीगड़े, सिरपर धणी न होय।
चिड़ियां खाया खेतड़ा, हॉकल करै न कोय ॥ ११५ ॥
जन हरिया सिर पर धणी, खड़ा खेतके माहिं।
करि टोहोंठी नामकी, विगड़न कूं कुछ नाहिं ॥ ११६ ॥

इति।

अथ ज्ञानविचारको अंग।

तिमिरं गया रवि तेज तें, तेज गया निशिं पास।
हरिया ज्ञान विचार तें, होय कर्म का नास ॥ १ ॥
नाम लिया गुण ना मिट्या, तिमिर न भागा तेज।
हरिया ज्ञान विचार विन, रही जेज की जेज ॥ २ ॥
गुरु पै ज्ञान न वूझिया, वूझ न किया विचार।
हरिया कर दीपक दिया, अंधे के अंधार ॥ ३ ॥
उर अंधारो जहँ नराँ, सतगुरु कूं नहि मेट।
आये थे हरि मिलन कूं, लगी और ही फेटं ॥ ४ ॥
कहियाँ माया संपजै, मनसूं जाण्या ब्रह्म।
हरिया होवे मुक्खतें, उदक्यां सेती धर्म ॥ ५ ॥
कहाँ न माया संपजै, जाण्याँ ब्रह्म न होय।
हरिया मुख तें उदकियां, धर्म न हुवा कोय ॥ ६ ॥
माया दत्तंवतें भई, राम भज्या सुं ब्रह्म।
जन हरिया कुछि होत है, कर सूं दीया धर्म ॥ ७ ॥
कहा सुण्या तो क्या भया, विना सुद्धबुंध सार।
हरिया आपो उलटि के, आतमज्ञान विचार ॥ ८ ॥

इति।

---

१ निश्चित। २ घेरा। ३ मृत्यु, काल। ४ हाँक मारना। ५ किलकारी। ६ अंधेरा। ७ रात्रि। ८ पूछा। ९ स्पष्ट। १० दान। ११ शुधबुध= बोध हवास।

अथ शून्य सरोवरको अंग।

साँसा सोग संताप तज, आपा होय अँबीह[1]।
शून्य सेजमें[2] पाइया, हरिया अविनाशीह॥ १॥
हरिया मन साँसे पड़्यो, कहि समझावे कौन।
हसतो रमतो बोलतो, ऊ कहँ करिग्यो गौनें[3]॥ २॥
हरिया सब साँसा मिट्या, गुन मिलग्या निर्गुंण।
आवन जावन रहित हुय, सुरति समाणी सुन्न॥ ३॥
सुन सरवर चहुं फेरमें, सुख सीतलता सीर[4]।
हरिया एक अखंडमें, ध्यान धरूं ता तीर॥ ४॥
दिल दरिया मन मच्छली, नीर सिरजन हार।
हरिया सबसूं ढूंकड़े, विरला जाणें सार॥ ५॥
जन हरिया मन जहँ किया, सुन सरवरमें वास।
भँले[5] न जामण मरण की, धरै न हंसो आस॥ ६॥
जन हरिया सरवर सबै, ठाम ठाम भरपूर।
जहँ पायो तहँ परम सुख, दुखी रह्या से दूर॥ ७॥
अपणे घरकी गम नहीं, परघर धाँगे[7] काँय।
हंस हंस की गर्म[8] चले, काग काग की पाय॥ ८॥
हंस गयो उडि आप घर, करि सायर की सुद्धि।
हरिया सरवर सुद्धि विन, बूडो काग कुबुद्धि॥ ९॥
जन हरिया जल पंछियै, पीयो चंचु भराय।
ऐसा कोइ न देखिया, सब सरवर पी जाय॥ १०॥

इति।

अथ माया ब्रह्म निर्णयको अंग।

ज्यों माया सूं ब्रह्म है, त्यों काया से जीव।
जन हरिया जब अंतरै, पाया जीव रु सीव[9]॥ १॥
माया ओले[10] ब्रह्म है, आकारे निरकार।
हरियै देख्या जुगति सूं, न्यारा[11] दिल दीदार॥ २॥
माया जब काया खड़ी, काया जब लग जीव।
हरिया जीव रु सीव का, मेला कैसे थींव[12]॥ ३॥

---

१ निर्भय। २ शय्या। ३ गमन। ४ पानीका सोता। ५ नज्ञ [illegible]
६ फिर। ७ खोजता है। ८ राह। ९ ब्रह्म। १० ओट। ११ [illegible]
१२ होवे।

काया माया कारवी, जैसे करवा जान।
जन हरिया भागाँ पछे, थाक न चढ़सी आन ॥ ४ ॥
जिन उलटी भांडा किया, करत न लाई वार।
हरिया वाकूं सुमरिये, सब का सिरजनहार ॥ ५ ॥
काया छाया एकठी, ज्यों माया से ब्रह्म।
हरिया न्यारा जाणसी, जिन पाई गुरु गम्म ॥ ६ ॥
जन हरिया चाल्यां चले, थिर सेती थिर होय।
काया बंधी कर्म सूं, छाया लिपै न कोय ॥ ७ ॥
माया जोड़ो ब्रह्म सूं, छाया जोड़ो देह।
काया माया जावसी, हरिया देखंतेह ॥ ८ ॥
शस्तर सूं नहिं छेदिये, पावक लगै न शीत।
हरिया कहिये ब्रह्म की, ऐसी अद्भुत रीत ॥ ९ ॥
रहता नारि न को पुरुष, रहे न तेऊँ लोये।
रहता एको ब्रह्म है, हरिया सब घट सोय ॥ १० ॥
रहता सोई जाणिये, रहता सूं मिल जाय।
हरिया रहता राम बिन, काल गिरासे आय ॥ ११ ॥

इति।

अथ बेहदको अंग।

हरिया हद आसँमुखी, ताहि न करिये हेत।
बेहद वास निरास घर, ताकूँ अंतर देत ॥ १ ॥
बेर चावाँ बेर दाहणा, हद पहु मारग होय।
जन हरिया इन बीचमें, भटक मुवा तिहुँ लोय ॥ २ ॥
हरिया हद का जीव कूं, बेहद की गम नाहिं।
कीड़ी फेरे माल ज्यूं, फड़ आवे फड़ जाहिं ॥ ३ ॥
हरिया हद कूँ छाँडि के, बेहद पहुँता जाय।
दिल दरगा दीवान में, धका न धूमी काय ॥ ४ ॥
हद छाँडी बेहद भया, हरिया राम हुँजूर।
अखंड उजाला गैबै का, निसा न ऊगे सूर ॥ ५ ॥
हद का रत्ता हद में, बेहद का बेहद।
हरिया बेहद पाइके, हद भई सब रद्द ॥ ६ ॥

---

१ बनावटी, झूठी कारस्वाई। २ मट्टीका बनाहुआ टूंटीदार लोटा, आफ़ताबा। ३ बुलबुलचश्म। ४ दालान। ५ तीन। ६ लोक। ७ आलमगीर। ८ तीन।

हद सूं हरि दूरै घणौ, बेहद ठांयो ठीक।
हद बेहद की पाइ सुधि, हरिया राम नजीक ॥ ७ ॥
हरिया बेहद के घरां, नहीं हद की आस।
संसा सोग न ताप तन, नाम निरासा वास ॥ ८ ॥
जन हरिया बेहद घरां, घन अनहद की घोर।
बाजा राग अखंड धुनि, एक अखंडी डोरै ॥ ९ ॥
जन हरिया हदमें घणा, सुख दुख भरम सनेह।
बेहद काम न कल्पना, अति आनंद अछेह ॥ १० ॥
बेहद कांठै घर किया, निज सुख पाया नाम।
हरिया भागी भरमना, भया सकल सिध काम ॥ ११ ॥
चित चंचल निश्चल भया, पूरी मनकी आस।
हरिया हद कूं छांडिके, बेहद कीन्हा वास ॥ १२ ॥
हद बैठा हद की कहै, वेद पुराना बाँचि।
हरिया बेहद बावरा, रह्या राम सूं राचि ॥ १३ ॥
जन हरिया बेहद कथा, किन सूं कहिये बोल।
महैरम आगै दाखिये, दिल का पुस्तक खोल ॥ १४ ॥
वचन सुन्या बेहद का, हद न आवै दाय।
हरिया सुनमें साँइयां, तासूं ध्यान लगाय ॥ १५ ॥
सुरत बसी बेहद में, हरिया एक अभंग।
पड़े पुड़ंगा पेम की, भीना नख सिख अंग ॥ १६ ॥
हरिया अनहद शब्द की, तार कबू नहिं तूटि।
घोर सुनत है गगनमें, सुर बाहिर नहिं फूटि ॥ १७ ॥
हरिया हद का जीवड़ा, ताकूं धका अनंत।
जहँ गुरु पाया बेहदी, ले निरवाणं चढ़ंत ॥ १८ ॥
जन हरिया हमकूं कह्या, सतगुरु ऐसा दाव।
हद का पासा छांडि दे, बेहद साम्हा आव ॥ १९ ॥
हरिया हद सागर तणो, थग थोड़ो थहरेह।
जग सारो तिसियो फिरै, जल बूठो धारेह ॥ २० ॥
बेहद सुख सागर भर्यो, पंथ न पग पारेह।
हरिया हरिजन पीवसी, हद सूं हुय न्यारेह ॥ २१ ॥

---

१ स्थान, ठिकाना। २ चाल। ३ किनारे। ४ भेदी, मरमी। ५ मोह। ६ थाह। ७ कम। ८ थाहरा=ओगहरा न हो। ९ परेवा=तेज चलनेवाला पक्षी।

बेहद कूँ पहुँचे नहीं, हरिया हद के लोग।
तन तो माटीमें मिल्यो, मन गयो सांसे सोग ॥ २२ ॥

इति।

अथ भ्रमनिश्चयको प्रसंग।

हरिया घट में घट्टत है, केताई नर घाट।
आडा पड़दा भर्म का, ब्रह्म न दरसै याट ॥ १ ॥
हरिया आतम एक है, दूजा कोऊ नाहिं।
मनकी मैं तैं मेटि करि, पद पाया घट माहिं ॥ २ ॥
घट में तारा चन्द रवि, घट माहीं ब्रह्मंड।
हरिया घट में राम है, जाकी ज्योति अखंड ॥ ३ ॥
हरिया आवै देखमें, ए तो माया रूप।
आतम दृष्टि न मुष्टि है, अनुभव अकल अरूप ॥ ४ ॥
हरिया घट में अघट है, याकी ठोड़ विकट्ट।
विन गुरुगम खूलै नहीं, भर्म कर्म का पट्ट ॥ ५ ॥
भर्म भूत भागा विनां, कर्म कटै नहिं काहि।
हरिया पडूल आँखि में, ताका तिमर न जाहि ॥ ६ ॥
दत्तय ते धन पाइये, धर्म दया ते होइ।
हरिया हरिजन औरका, भर्म गमावै सोइ ॥ ७ ॥
हरिया तन मन वचन से, आतम निश्चय जानि।
याकों निस आनन्द है, शोक न संशय आनि ॥ ८ ॥
जन हरिया निश्चय भया, भर्म दूसरा नाहिं।
आस पास की मिट गई, आतम आपा माहिं ॥ ९ ॥
जल खाने पढ़ि नीसरै, हरिया तेरू होइ।
बहिग्यो खाने भर्मके, हाथ पड़ै नहिं कोइ ॥ १० ॥
हरिया माँजै भर्मकूं, सतगुरु मिलै साधीर।
भवसागर में डूबतां, पार उतारै तीर ॥ ११ ॥

इति।

अथ निर्गुणगुणको प्रसंग।

निर्गुण तें गुण ऊपजै, गुण तें निर्गुण नाहिं।
जन हरिया फल बेल तें, फल विन बेली नाहिं ॥ १ ॥
हरिया निर्गुण मूल है, सगुणजु साखा पान।
भक्ति बीज फल मुक्ति है, और धर्म सब आन ॥ २ ॥

सोरठा ।

फूल डाल तजि पान, एक पकड़ रहु पेड कूँ ।
ऊंचा घड़ असमान, हरिया निज फल चाहिये ॥ ३ ॥

साखी ।

केइक पाना फूलड़ाँ, केई विलँब्या डाल ।
हरिया मूल विलंबिया, फल पाया असराल ॥ ४ ॥
चढ़ि ऊंचा फल चाखिया, हाथ पांय विन मूँह ।
हरिया निर्गुण रूंखड़ो, फल गुण माँहि किसूँह ॥ ५ ॥
सगुणां में सगुणो मिरे, रूखां मांहि न रुँग ।
जन हरिया फल चाखियां, फेर न आवे फूग ॥ ६ ॥
गुण में औगुण अनँत है, आपा भुगते आय ।
जन हरिया निर्गुण वसै, जग में आय न जाय ॥ ७ ॥

इति ।

अथ ब्रह्मसमाधिको प्रसंग ।

चित मन पवना थिर करै, उलटि पंचें[2] कूँ साधि ।
जन हरिया जब जाणिये, याही ब्रह्म समाधि ॥ १ ॥
मन पवना मिल एकठा, शब्दे सुरति मिलाय ।
हरिया ब्रह्म समाधि का, जब सहजां घर पाय ॥ २ ॥
हरिया ब्रह्म समाधि को, है सुख सहज अनंत ।
काम न ऊठै कल्पना, तन की सुधि विसरंत ॥ ३ ॥
जन हरिया सुख द्वार तें[3], चली शब्द की सीर ।
जाय मिली सुख सहज में, गंग जमुन की तीर ॥ ४ ॥
गंगा जमुना सरस्वती, नितको न्हावन होय ।
जन हरिया जहँ न्हाइया, घाट बाट नहिं कोय ॥ ५ ॥
सीरां छूटी चहुं दिसाँ, अंत न कोई पार ।
जन हरिया पी मगन हुय, तन की सुधी न सार ॥ ६ ॥
रसना नख सिख बीच में, रोम रोम ररँकार ।
जन हरिया सुख ब्रह्म का, होत नहीं ममँकार ॥ ७ ॥
इडा पिंगला बीचमें, सुखमण हंदा घाट ।
हरिया ब्रह्म समाधि की, सहजां पाई घाट ॥ ८ ॥

---

१ निरंतर । २ पंचप्राण । ३ से ।

चंद विना जहां चाँद्णा, सूर विना अहेवास ।
जन हरिया घर ब्रह्म का, तेजपुँज परकास ॥ ९ ॥
पवंन न पाणी चंद रवि, जहँ नहिँ धरा अकास ।
जन हरिया घर ब्रह्म का, आस न पास निरास ॥ १० ॥
सुरति चढ़ी असंमान कूँ, जाय मिली निरकार ।
जन हरिया घर ब्रह्म का, ओथि नहीं आकार ॥ ११ ॥
हरिया [4]धुं धुं धुनि उठै, तेंनक [6]थेइततकार ।
बाजे पिंड ब्रह्मंड में, एक अखंडी तार ॥ १२ ॥
इला दुहँरी पिंगला, पोईरा द्वांदरा गाय ।
जन हरिया मति मट्ट की, लिया तत्तकूँ ताय ॥ १३ ॥
संतन की गति संत कूं, दुनियन की दुनियाँह ।
जन हरिया अविगत्त की, गैत्त न को सुनियाँह ॥ १४ ॥
पाँव विना जहँ चालिवो, राह विना जहँ राह ।
जन हरिया घर ब्रह्म का, सुर नर सकै न जाह ॥ १५ ॥

इति ।



१ अवास=घर । २ आकाश । ३ यहाँ । ४ नगारेका शब्द । ५ मेघ-रागकी रागिनी । ६ ततकारसहित थेई अर्थात् ततथेई=नृत्यका शब्द, नाचका बोल । ७ दोहनेवाली ८ चंद्रकला । ९ सूर्यकला । १० अविगत=निराकार ब्रह्म । ११ गत=चाल ।

निसाणी का भूमा।

यह निसाणी नामक ग्रन्थ योग के विषय का है। योग शब्द संस्कृत के युज धातु से बना है (युजिर् योगे) जिसका अर्थ जोड़ना है। अपने मनको एक ध्येयसे जोड़ना अर्थात् मनको स्थिर करना ही योग है। भगवान् पतंजलि ने ऐसा कहाहै "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः"। एकाग्रता योग का शरीर है, जिसमें केवल एकाग्रता ही हो वह व्यावहारिक योग, और जिसमें अहंता ममता का नाम लेश भी न हो वह पारमार्थिक योग है। गीताके साम्यगर्भित कर्मयोग में यही कथन है[1]। ज्ञानयोग ही श्रेष्ठ है, विनाज्ञानका योग निष्फल है। योग के पहले का ज्ञान अस्पष्ट होता है इसलिये गीता में ज्ञानी से योगी को ही अधिक कहा[2], वास्तव में सच्चा ज्ञानी वहीहै जो योगी है[3] इसी का गीता में वर्णन है। ब्रह्मविद्योपनिषद्, क्षुरिकोपनिषद्, चूलिकोपनिषद्, नादबिन्दु, ब्रह्मबिन्दु, अमृतबिन्दु, ध्यानबिन्दु, तेजोबिन्दु, योगशिखा, योगतत्त्व, हंस आदि उपनिषद् भी इसी का वर्णन करती हैं। अतएव ज्ञानकी एक मात्र कुंजी योगही है। योगवाशिष्ठ में लिखाहै कि योग विनाका ज्ञानी ज्ञानबन्धु है[4] अर्थात् ज्ञानियों

---

१ योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥
(गीता अ० २-४८)

२ तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद् योगी भवार्जुन॥
(गीता अ० ६-४६)

३ यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥
(गीता अ० ५-५)

४ व्याचष्टे यः पठति च शास्त्रं भोगाय शिल्पिवत्।
यतते न त्वनुष्ठाने ज्ञानबन्धुः स उच्यते॥१॥
आत्मज्ञानमनासाद्य ज्ञानान्तरलवेन ये।
सन्तुष्टाः कष्टचेष्टं ते स्मृता ज्ञानबन्धवः॥२॥
(योगवाशिष्ठ निर्वाणप्रकरण उत्तरार्ध सर्ग २१-)

में अधम है। ज्ञान और योग का बहुत अधिक सम्बन्ध है इसीलिये "ज्ञान-क्रियाभ्यां मोक्षः" ज्ञान और क्रियासेही मोक्ष होना कहा गया है। इसी योग का वर्णन भिन्न भिन्न शास्त्रकारोंने भिन्न भिन्न प्रकार से किया है। भगवान् पतंजलिविरचित "पातंजलयोगदर्शन" तो खास योगकाही ग्रन्थ ठहरा अतएव इसमें तो सांगोपांग वर्णन होना ही चाहिये। और दूसरे शास्त्रकारोंने भी योग के विषय में विशेष जानने के लिये योगदर्शन

---

१ ज्ञान क्रिया करि ऊतरे हरिया हरिजन पार।
ऐसे अन्धे कन्ध करि, पंगो आन उतार ॥ १ ॥
पंगा सोई ज्ञान है, किरिया अंधी जान।
जन हरिया मिल एकठा, मुक्ति भई आसान ॥ २ ॥
ज्ञान बिना किरिया न कुछ, किरिया बिना न ज्ञान।
हरिया किरिया ज्ञान बिन, यो ही आतमध्यान ॥ ३ ॥
ज्ञान ब्रह्म की दृष्टि है, किरिया ध्यान स्वरूप।
जन हरिया मिल एकठा, आतम तत्त्व अनूप ॥ ४ ॥
ज्ञान सहित किरिया भई, मोक्ष माँहि पद जान।
हरिया किरिया ज्ञान बिन, भक्ति भई आसान ॥ ५ ॥

(श्री हरि० वाक्यम्)

जो बिन ज्ञान क्रिया अवगाहै, जो बिन क्रिया मोक्षपद चाहै।
जो बिन मोक्ष कहै मैं सुखिया, सो अज्ञान मूढन में मुखिया ॥ १ ॥

२ न्यायदर्शनः—

समाधिविशेषाभ्यासात् ४-२-३८। अरण्यगुहापुलिनादिषु योगाभ्यासोपदेशः ४-२-४२। तदर्थं यमनियमाभ्यामात्मसंस्कारो योगाच्चाध्यात्मविध्युपायैः ४-२-४६॥

वैशेषिकदर्शनः—

अभिषेचनोपवास-ब्रह्मचर्यगुरुकुलवास-वानप्रस्थ-यज्ञदान-प्रोक्षण-दिङ्नक्षत्र-मंत्र-काल-नियमाश्चादृष्टाय ६-२-२ अयतस्य शुचिभोजनादभ्युदयो न विद्यते नियमाभावात्, विद्यते वाऽर्थान्तरत्वाद्-यमस्य ६-२-८

सांख्यसूत्रः—

रागोपहतिर्ध्यानम् ३-३०। वृत्तिनिरोधात् तत्सिद्धिः ३-३१। धारणासनस्वकर्मणा तत्सिद्धिः ३-३२। निरोधश्छर्दिविधारणाभ्याम् ३-३३ स्थिरसुखमासनम् ३-३४।

ब्रह्मसूत्रः—

आसीनः सम्भवात् ४-१-७। ध्यानाच्च ४-१-८। अचलत्वं चापेक्ष्य। ४-१-९ स्मरन्ति च ४-१-१०। यत्रैकाग्रता तत्राविशेषात् ४-१-११

देखने की आज्ञा दी है । जिस योग का वर्णन उपनिषदों में व सूत्रोंमें भलीप्रकार किया गया है उसीका श्रीमद्भगवद्गीता के तीनों पर्वों में कर्म, भक्ति और ज्ञान के साथ श्रीभगवानने समावेश कर दिया है, समावेश क्या करदिया है, गीता के छठे और तेरहवें अध्याय में तो योग के सारे मौलिक सिद्धान्त और प्रक्रियायें ही वर्णन करदी हैं ।

योगवाशिष्ठ तो बस "यथा नाम तथा गुणः" सारा योग का ग्रन्थराज ही है । श्रीमद्भागवत के स्कन्ध ३ अध्याय २८ । स्कन्ध ११ अध्याय १५–१९–२० में योग का ही वर्णन है । इतना ही नहीं इसके उपरांत योगवृक्ष इतना फैला कि उसकी कई शाखायें बन गई और उनके अलग ही ग्रन्थ बनगये जैसे तंत्रशास्त्रमें "महानिर्माणतंत्र" और "षट्चक्रनिरूपणतंत्र" बहुत ही उत्तम योग के तांत्रिक ग्रन्थ हैं । इनके सिवाय और भी कितने ही योग के ग्रन्थ बनगये हैं, हठयोगप्रदीपिका, शिवसंहिता, घेरण्डसंहिता, गोरक्षपद्धति, गोरक्षशतक, योगतारावली, बिन्दुयोग, योगबीज, योगकल्पद्रुम, योगनिबन्ध आदि अनेक योग के ग्रन्थ हैं ।

योग यहींतक नही बढ़ा किन्तु देशी और विदेशी महात्माओंने अपने अपने अनुभव के अनुसार लोगोंको ज्ञान कराने के लिये महाराष्ट्री, गुजराती, बंगला, तैलंगी, तामिली, औत्कली, द्राविड़ी और इंग्लिश आदि अलग अलग भाषाओंमें योगका वर्णन किया । कबीर साहब, नानकसाहब, दादूजी, हरिदासजी, सुन्दरदासजी, जनतुरसीजी, चरणदासजी, सेवादासजी, सन्तदासजी, दरियासाजी आदि महात्माओंने हिन्दी साहित्यमें उसी योगवाणी का वर्णन किया कि जिनसे मुमुक्षुओं को बड़ा ही लाभ पहुँचा और पहुँच रहा है ।

जिस योग की मुक्तकंठ से प्रशंसा की गई और जिस योग की प्राप्ति महापुरुष परब्रह्मराम के उपदेश² द्वारा श्रीजैमलदासजी महाराज को हुई-

---

1 योगशास्त्राच्चाध्यात्मविधिः प्रतिपत्तव्यः (न्यायद० ३–४–४६ भाष्य).

2 सुणरे बालक बात हमारी, तोकूं दाखूं गुंझ हदारी ।
गेडे में गुरु ज्ञान सुणाया, जोग सहित निजनाम बताया ॥
(श्रीराम० भक्तमाल)

आपने पूर्ण कृपा करके श्रीहरिरामदासजी महाराज को उसीका तारकमंत्र[1] सहित उपदेश देकर रामस्नेह सम्प्रदाय प्रवृत्त करने की नींव लगाई। उसी योग का वर्णन लोकोद्धार के अर्थ पूज्यपाद श्रीहरिरामदासजी महाराजने इस ग्रन्थके निशानी नामक छन्दों में किया है। अतएव इस ग्रन्थ को अत्यन्त ही उपयोगी समझकर इस की टीका बनाकर सर्व साधारणके लाभार्थ प्रगट कीगई।

श्रीमान् माननीय ज्योतिषी पं० श्रीनिवासजी पाठक महोदय रतलाम-निवासी का मैं विशेष आभारी हूं जिन्होंने बहुत कष्ट उठाकर इसकी टीका करने में परिश्रम किया है।

जिन पुस्तकों से या जिन महात्माओंसे सहायता ली गई है उनके प्रणेताओं तथा उन महात्माओं का भी विशेष आभारी हूं।

भवदीय
चौकस राम वैद्य.

---

१ तारकमंत्र:—[illegible]
[illegible] ॥ १ ॥

॥ श्रीः ॥

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥ १ ॥

घघरं निसांणी प्रारंभः ॥



पैद्मापूजितपादपद्मयुगलं रामं दधंतं हृदि
रागद्वेषकरालजालमखिलं वृंदं रिपूणां हरम् ।
याता ये शरणं विशुद्धमनसस्तेषां प्रबोधादिदं
वंदे श्रीहरिरामदासमनिशं रामाय सन्मंत्रदम् ॥ १ ॥

हरिरामं गुरुं नत्वा कृत्वा चारुप्रदक्षिणाम् ।
निसानीनामग्रन्थस्य भाषाटीकां करोम्यहम् ॥ १ ॥

साखी ।

हरिया सम्वत् सत्रहसे वर्ष सईको जान ।
तिथि तेरस आषाढ वदि सतगुरु पड़ी पिछान ॥ १ ॥

---

१ घटघट । २ चिह्न । ३ पं० दिगंबरेण रचितमिदं पद्यम् । ४ रामदासाय ।
५ सद्गुरुलक्षणः—

श्रीगुरुः परमेशानि शुद्धवेशो मनोहरः ।
सर्वलक्षणसंयुक्तः सर्वावयवशोभितः ॥ १ ॥
सर्वागमार्थतत्त्वज्ञः सर्वमंत्रप्रधानवित् ।
लोकसंमोहनकरो देववत्प्रियदर्शनः ॥ २ ॥
सुमुखः सुलभः स्वच्छः शुद्धांतश्छिन्नसंशयः ।
इंगिताकारतत्त्वज्ञो दूरतः कृतदुर्जनः ॥ ३ ॥
अंतर्मुखो बहिर्दृष्टिः सर्वज्ञो देशकालवित् ।
आज्ञासिद्धिस्त्रिकालज्ञो निग्रहानुग्रहक्षमः ॥ ॥ ४ ॥
वेदवेदांतविच्छांतः सर्वजीवदयापरः ।
स्वाधीनेंद्रियसंचारः षड्वर्गविजयक्षमः ॥ ५ ॥
अग्रगण्योऽतिगंभीरः पात्रापात्रविशेषवित् ।
निर्मलो नित्यसंतुष्टो निर्द्वंद्वो नित्यशक्तिमान् ॥ ६ ॥
भक्तवत्सलो धीरः कृपालुः स्मितपूर्ववाक् ।

श्रीहरिरामदासजी महाराज स्वयं अपने मुखारविंद से अपने को ही संबोधित कर वर्णन करते हैं कि, संवत् सत्रह सौ का सईका वर्ष अर्थात् अठारहवीं शताब्दी के आषाढ कृष्णा त्रयोदशी के दिन मेरे को सद्गुरु की पहिचान पड़ी ॥ १ ॥

छंद निसार्नी ।

सतगुरु पहिचानी परचे मानी सब सिध काम सरंदा है ॥ १ ॥

सद्गुरु की पहिचान होने से सर्व कार्य सिद्ध होगये ऐसा परचा (प्रत्यक्षबोध) जीवको होगया अर्थात् अनुभव प्राप्त होगया ॥ १ ॥

सतगुरु से मिलिया अंतरभिलिया सारंशब्द मोलपंदा है ।

भक्तिप्रियः सर्वसमो दयालुः शिष्यवत्सलः ॥ ७ ॥
शेषदेवगुरुः प्राज्ञो विनयी पूजनोत्सुकः ।
नित्ये नैमित्तिके काम्ये रतः कर्मण्यनिन्दिते ॥ ८ ॥
रागद्वेषभयक्रोधदंभाहंकारवर्जितः ।
स्वविद्यानुष्ठानरतो विद्यानां च प्रकाशकः ॥ ९ ॥
सच्छास्त्रज्ञानसंयुक्तो गुणदोषविभेदकः ।
श्रीहरिजनपरायणो कुसंगव्यसनोज्झितः ॥ १० ॥
अलोभोऽद्वैतपक्षपाती विचक्षणः ।
सितसिद्धान्तनिर्मथसंप्रदायविभेदी ॥ ११ ॥
निःसंकल्पो निर्विकल्पो निर्णीतात्माऽऽत्मनिश्चयः ।
मुमुक्षुर्दाननिर्मोही निष्कामोऽतिनिस्पृहः ॥ १२ ॥
इत्यादिलक्षणोपेतः श्रीगुरुः कथितः प्रिये । (कुलार्णव)

१ सारशब्द—

एक शब्द मैं कहि समझाऊं, सुनहो सब संतन ।
सबहन सो सारशब्द है, और शब्द है अन्य ॥ १ ॥
(श्रीहरि॰ सारशब्द)

कहै कबीर सुनो हो साधो, सारशब्द कहूं बताई ।
सबशब्दन सो सारशब्द है, और शब्द सब भाई ॥ २ ॥
(कबीर)

सारशब्दः सर्वशब्देभ्यः स्वानुभूतैकविग्रहः ।
स्वेनैव संवेद्यतया सद्रूपात् स्फुरतः स्फुटः ॥ १ ॥
सर्वेन्द्रियाणां तत्त्वेभ्यो महत्तरः । (स्पंदनिर्णय)

सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् रुशद्भिर्वर्णैरभिराममस्थात् ।
अर्थः—रामं कृष्णवर्णं शार्वरं तमः अभ्यस्थात् सायं होमकाले अभिभूय तिष्ठति इति तद्भाष्ये सायणाचार्याः (जिनका उत्तराश्रममें विद्यारण्यस्वामी नाम है)।
(ऋग्वेद १० अ. ३ म. ३)

गाणपत्येषु शैवेषु शाक्तसौरेष्वभीष्टदः ।
वैष्णवेष्वपि मंत्रेषु राममंत्रः फलाधिकः ॥ १ ॥ (श्रीहयशीर्षपंचरात्र)

शतकोट्यो महामंत्रा उपमंत्रास्त्रयोदश ।
एक एव महामंत्रो रामनाम परात्परम् ॥ १ ॥ (शिवतंत्र)

गाणपत्यादिसौराश्च हरिः शेषः शिवः शिवा ।
तेषां प्राणो महामंत्रो रामेति चाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
गणेशे भास्करे चैव शिवे शक्तौ हरावपि ।
राममंत्रप्रभावेण सामर्थ्यं जायते ध्रुवम् ॥ २ ॥ (भारद्वाजसंहिता)

विना शक्तिं कथं कार्यं किं कर्तव्येन वा बलम् ।
तदाकाशाद्भवेद्वाणी रामनाम दृढं कुरु ॥ १ ॥
तदा संसरति विश्वं लयं यांति मुमुक्षुभिः ।
तस्माद्राम महामंत्र आदिमंत्र उदाहृतः ॥ २ ॥ (जैमिनि)

श्रीरामेति परं मंत्रं तदेव परमं पदम् ।
तदेव तारकं विद्धि जन्ममृत्युभयापहम् ॥ १ ॥ (हिरण्यगर्भसंहिता)

श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्मसंज्ञकम् ।
ब्रह्महत्यादिपापघ्नमिति वेदविदो विदुः ॥ १ ॥ (सनत्कुमारसंहिता)

यथा घटश्च कलशः पदार्थस्याभिधायकः ।
तथैव ब्रह्मरामश्च नूनमेकार्थतत्परः ॥ १ ॥ (अगस्त्यसंहिता)

रमन्ते योगिनो यत्र नित्यानंदे चिदात्मनि ।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते ॥ १ ॥ (रामतापिनी)

राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तपः ।
राम एव परं तत्त्वं श्रीरामो ब्रह्म तारकः ॥ १ ॥ (हनुमदुपनिषद्)

श्रीराममंत्रराजस्य माहात्म्यं गिरिजापतिः ।
जानाति भगवाञ्छंभुर्ज्वलत्पावकलोचनः ॥ १ ॥ (बृहद्ब्रह्मसंहिता)

मंत्रराजं प्रवक्ष्यामि शृणु नारद तत्परः ।
रकारादिर्मकारांतो मंत्रः षड्वर्णसंयुतः ॥ १ ॥

रकारः प्रथमाक्षरो भवति अकारो द्वितीयाक्षरो भवति मकारस्तृतीयाक्षरो भवति अर्धमात्राश्चतुर्थाक्षरो भवति विंदुः पंचमाक्षरो भवति नादः षष्ठाक्षरो भवति तारकतारको भवति तदेव रामेति तारकं ब्रह्म त्वं विद्धि ।

प्रणवं केवलमकारोकारोर्धमात्रासहितं तस्मात्प्रणवस्याकारस्योकारस्य च रकारः मकारः अर्धमात्रस्य इति । (रामोपनिषद्)

अंशांशैः रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि ।
बीजमोंकारः सोऽहं च सूत्रमुक्तमिति श्रुतिः ॥ १ ॥
रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः ।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः ॥ २ ॥ (महाशम्भुसंहिता)
रकारश्च परब्रह्म नादमोंकारसंयुतम् ।
ॐबिंदुश्च मकारोयं जातं रामाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
रकारस्तत्पदं ज्ञेयं त्वंपदाकार उच्यते ।
मकारोसिपदं ज्ञेयं तत्त्वमसि सुलोचने ॥ १ ॥
चिद्वाचको रकारः स्यात्सद्वाच्याकार उच्यते ।
मकारानन्दवाच्यं स्यात्सचिदानंदमव्ययम् ॥ २ ॥ (श्रीमहारामायण)
प्रणवं केचिदाहुर्वै बीजश्रेष्ठं तथापरे ।
तत्त्वतो रामवर्णाभ्यां सिद्धिमाप्नोति मे मतम् ॥ १ ॥ (महाशंभुसंहिता)

ॐ भृगुर्वै वारुणिः । वरुणं पितरमुपससार । अधीहि भगवो ब्रह्मेति । सोऽब्रवीद्राम एव परं ब्रह्म रामादन्यन्न किंचन यत एते रामोद्वा उत्पद्यंते राम एव विलीयंते राम एव स्थितिं वसंति तस्माद्राम एव विभुरिति तैत्तिरीयश्रुतिः (रामतापनी)

यथैव वटबीजस्थः प्राकृतोऽस्ति महाद्रुमः ।
तथैव रामबीजस्थं जगदेतच्चराचरम् ॥ १ ॥ (याज्ञवल्क्य)
रकाराज्जायते ब्रह्मा रकाराज्जायते हरिः ।
रकाराज्जायते शंभू रकारात्सर्वशक्तयः ॥ १ ॥ (रुद्रयामलक)
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः ।
तं रामं सच्चिदानंदं नित्यं रामेश्वरं भजेत् ॥ १ ॥ (हनुमत्संहिता)
रामनाम परं जाप्यं ज्ञेयं ध्येयं निरंतरम् ।
कीर्तनीयं च बहुधा मुमुक्षुभिरहर्निशम् ॥ १ ॥ (जाबालिसंहिता)
अथापि रुद्रः काश्यां वै सर्वेषां त्यक्तजीविनाम् ।
दिशत्येतन्महामंत्रं तारकं ब्रह्मनामकम् ॥ १ ॥
विनैव दीक्षां विप्रेंद्र पुरश्चर्यां विनैव हि ।
विनैव न्यासविधिना जपमात्रेण सिद्धिदम् ॥ २ ॥
तस्मात् सर्वात्मना रामनामरूपं परं प्रियम् ।
मंत्रं जपेत्सदा धीमान् संविहायान्यसाधनान् ॥ ३ ॥ (हारीतस्मृति)
जपतः सर्ववेदांश्च सर्वमंत्रांश्च पार्वति ।
तस्मात्कोटिगुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते ॥ १ ॥

योगिनो ज्ञानिनो भक्ताः शुद्धकर्मनिरताश्च ये ।
रामनाम्नि रताः सर्वे रघुवीरा त एव वै ॥ २ ॥ (पद्मपुराण)

रामेत्यक्षरयुग्मं हि सर्वमंत्राधिकं द्विज ।
यदुच्चारणमात्रेण पापी याति परां गतिम् ॥ १ ॥ (क्रियायोगसार)

श्रद्धया हेलया नाम वदंति मनुजा भुवि ।
तेषां नास्ति भयं पार्थ रामनामप्रसादतः ॥ १ ॥

प्रमादादपि संस्पृष्टो यथानलकणो दहेत् ।
तथौष्ठपुटसंस्पृष्टं रामनाम दहेदघम् ॥ २ ॥ (आदिपुराण)

रकारोऽनलबीजं स्यात्ते सर्वे वडवादयः ।
कृत्वा मनोमतं सर्वं भस्म कर्म शुभाशुभम् ॥ १ ॥

आकारो भानुबीजं स्यात् वेदशास्त्रप्रकाशकः ।
नाशयत्येव सो दीप्त्या हृत्स्थमज्ञानजं तमः ॥ २ ॥

मकारश्चंद्रबीजं स्याद्यदपो परिपूरणम् ।
त्रितापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥ ३ ॥

वैराग्यहेतुः परमो रकारः कथ्यते बुधैः ।
अकारो ज्ञानहेतुश्च मकारो भक्तिहेतुकः ॥ ४ ॥

आकृष्टिः कृतचेतसां सुमहतामुच्चाटनं चांहसा-
माचांडालममूकलोकसुलभो वश्यश्च मोक्षश्रियः ।
नो दीक्षां न च दक्षिणां न च पुरश्चर्यामनागीक्षते
मंत्रोयं रसनास्पृगेव फलति श्रीरामनामात्मकः ॥ ५ ॥
(श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण)

छत्ररूपो रकारोऽस्ति अनुस्वारः शिरोमणिः ।
राजराजाधिराजेति तस्माद्रामः शिरोमणिः ॥ १ ॥ (पद्मपुराण)

निर्वर्णं रामनामेदं केवलं च स्वराधिकम् ।
सर्वेषां मुकुटं छत्रं मकारो रेफव्यंजनम् ॥ १ ॥

यन्नामसंसर्गवशाद्विवर्णी
नष्टस्वरौ मूर्ध्निगतौ स्वराणाम् ।
तद्रामपादौ हृदये निधाय
देही कथं नोर्ध्वगतिं प्रयाति ॥ २ ॥

रैफोच्चारणमात्रेण बहिर्निर्याति पातकम् ।
पुनः प्रवेशसंदेहात् मकारश्च कपाटवत् ॥ १ ॥ (नारदपंचरात्र)

तुलसी राके कहत ही, निकसत पाप बहार ।
फिर आवन पावत नहीं, देत मकार किवार ॥ १ ॥

तावदेव हृदं तेषां महापातकदाहनम् ।
यावन्न श्रूयते रामनामपंचाननध्वनिः ॥ १ ॥ (शिवसंहिता)

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य ।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥ १ ॥ (हनुमन्नाटक)

रामरामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥ १ ॥
(पद्मपुराण उत्तरखंड ६ अध्याय श्लो० ७१)

य एततारकं ब्रह्मणो नित्यमधीते स पाप्मानं तरति स मृत्युं तरति स ब्रह्महत्यां तरति स भ्रूणहत्यां तरति स वीरहत्यां तरतीत्यादि द्रष्टव्यम् ।
(रामतापिनीयो० द्वि० कंडिका० मंत्र० ४)

अंतःकरणसंशुद्धिर्नान्यसाधनतो भवेत् ।
कलौ श्रीरामनामैव सर्वेषां सम्मतं परम् ॥ १ ॥ (मार्कंडेयसंहिता)

जपे यस्य लाभोऽजपे यस्य हानिः
सदा सर्वथा सर्ववेदान्ततत्त्वम् ।
शिवो नारदो व्यासमुख्या वदंति
कलौ केवलं राजते रामनाम ॥ १ ॥ (इति)

शृणुष्व मुख्यनामानि वक्ष्ये भगवतः प्रिये ।
विष्णुर्नारायणः कृष्णो वासुदेवो हरिः स्मृतः ॥ १ ॥
नाम्नामेव च सर्वेषां रामनामप्रकाशकः ।
ग्रहाणां च यथा भानुर्नक्षत्राणां यथा शशी ॥ २ ॥ (इति)

नारायणादिनामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनामप्रकाशकः ॥ १ ॥ (इति)

सप्तकोटिमहामंत्राश्चित्तविभ्रमकारकाः ।
एक एव परो मंत्रो राम इत्यक्षरद्वयम् ॥ १ ॥ (वृद्धमनुस्मृतिः)

श्रीरामाय नमो ह्येतत्तारकं ब्रह्मनामकम् ।
मन्त्रो विष्णोः सहस्राणां तुल्य एव महामनुः ॥ १ ॥ (हारीतस्मृतिः अ० ४)

अहं भवन्नाम गृणन् कृतार्थो
वसामि काश्यामनिशं भवान्या ।
मुमूर्षमाणस्य विमुक्तयेऽहं
दिशामि मंत्रं तव रामनाम ॥ १ ॥ (अध्यात्मरामायण)

योगिनो ज्ञानिनो भक्ताः सुकर्मनिरताश्च ये ।
रामनाम्नि रताः सर्वे रसुक्रीडा त एव वै ॥ २ ॥ (पद्मपुरा

रामेत्यक्षरयुग्मं हि सर्वमंत्राधिकं द्विज ।
यदुच्चारणमात्रेण पापी याति परां गतिम् ॥ १ ॥ (क्रियायोगसा

श्रद्धया हेलया नाम वदंति मनुजा भुवि ।
तेषां नास्ति भयं पार्थ रामनामप्रसादतः ॥ १ ॥

प्रमादादपि संस्पृष्टो यथानलकणो दहेत् ।
तथौष्ठपुटसंस्पृष्टं रामनाम दहेदघम् ॥ २ ॥ (आदिपुरा

रकारोऽनलबीजं स्यात्ते सर्वे वड्वादयः ।
कृत्वा मनोमतं सर्वे भस्म कर्म शुभाशुभम् ॥ १ ॥

आकारो भानुबीजं स्यात् वेदशास्त्रप्रकाशकः ।
नाशयत्येव सो दीप्त्या हृत्स्थमज्ञानजं तमः ॥ २ ॥

मकारश्चंद्रबीजं स्यात्तदपां परिपूरणम् ।
त्रितापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥ ३ ॥

वैराग्यहेतुः परमो रकारः कथ्यते बुधैः ।
अकारो ज्ञानहेतुश्च मकारो भक्तिहेतुकः ॥ ४ ॥

आकृष्टिः कृतचेतसां सुमहतामुच्चाटनं चांहसा-
माचांडालममूकलोकसुलभो वश्यश्च मोक्षश्रियः ।
नो दीक्षां न च दक्षिणां न च पुरश्चर्यामनागीक्षते
मंत्रोयं रसनास्पृगेव फलति श्रीरामनामात्मकः ॥ ५ ॥
(श्रीमद्वाल्मीकीयरामाय

छत्ररूपो रकारोऽस्ति अनुस्वारः शिरोमणिः ।
राजराजाधिराजेति तस्माद्रामः शिरोमणिः ॥ १ ॥ (पद्मपुरा

निर्वर्णे रामनामेदं केवलं च स्वराधिकम् ।
सर्वेषां मुकुटं छत्रं मकारो रेफव्यंजनम् ॥ १ ॥

यन्नामसंसर्गवशाद्विवर्णौ
मद्यस्वरौ मूर्ध्निगतौ स्वराणाम् ।
तद्रामपादौ हृदये निधाय
देही कथं नोर्ध्वगतिं प्रयाति ॥ २ ॥

रेफोच्चारणमात्रेण बहिर्निर्याति पातकम् ।
पुनः प्रवेशशंदेहात् मकारश्च कपाटवत् ॥ १ ॥ (नारदपंचरा

तुलसी रके कहत ही, निकसत पाप पहार ।

इति षोडशकं नाम्नां कलिकल्मषनाशनम् । नातः परतरं प्रायः सर्ववेदेषु दृश्यत इति षोडशकलावृतस्य पुरुषस्यावरणविनाशनं । ततः प्रकाशते परं ब्रह्म मेघापाये रविरश्मिमंडलीवेति । पुनर्नारदः पप्रच्छ भगवन्कोऽस्य विधिरिति । तं होवाच नास्य विधिरिति । सर्वदा शुचिरशुचिर्वा पठन् ब्रह्मणः सलोकतां समीपतां सरूपतां सायुज्यतामेति । यदास्य षोडशकस्य सार्धत्रिकोटिर्जपति । तदा ब्रह्महत्यायास्तरति । स्वर्णस्तेयात् पूतो भवति । वृषलीगमनात्पूतो भवति । सर्वधर्मपरित्यागपापात्सद्यः शुचितामाप्नुयात् । सद्यो मुच्यते सद्यो मुच्यत इत्युपनिषद् । हरिः ॐ सहनाववत्विति शांतिः शांतिः शांतिः । हरिः ॐ कलिसंतारणोपनिषद्)

(राम एव परं ब्रह्म परमात्माभिधीयते ।
रामात्परतरं नास्ति यत्किंचित्स्थूलसूक्ष्मकम् ॥ १ ॥ (पराशरस्मृति)
रामान्नास्ति परो देवो रामान्नास्ति परं व्रतम् ।
नहि रामात्परो योगो नहि रामात्परो मखः ॥ १ ॥
राशब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः ।
विश्वेषामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्तितः ॥ २ ॥ (पद्मपुराणे)
पदश्रवणकराननवाणी लमयननासिकादीन्द्रियविषयाधीशैः ।
विवर्जितो रामः साक्षात्परब्रह्मविग्रहः सच्चिदानंदात्मकः स्वयम् ॥ १ ॥
(शिवस्मृतिः)

(रकारार्थो रामः सगुणपरमैश्वर्यजलधिः
मकारार्थो जीवः सकलविधकैंकर्यनिपुणः ॥
तयोर्मध्याकारो युगलमय संबंधप्रमुखः
अनन्यार्हो ब्रूते त्रिनिगमसहस्रोऽयमतुलः ॥ १ ॥ (आचार्यवाक्यम्)

(श्रीरामं ये च हित्वा खलमतिनिरता ब्रह्मजीवं वदंति
ते मूढा नास्तिकास्ते शुभगुणरहिताः सर्वबुद्ध्यातिरिक्ताः ॥
(पापिष्ठा धर्महीना गुरुजनविमुखा वेदशास्त्रैर्विरुद्धा-
स्ते हित्वा गांगमंभो रविकिरणजलं पातुमिच्छंति भ्रस्ताः ॥ १ ॥
(शिववाक्यम्)

श्रीमद्रामानुसुतातटे प्रविलसद्दिव्यं महत्पत्तनं
तत्कंसस्य जगत्त्रयेऽपि विदितं वर्णैः शुभैर्वह्निभिः ।
अन्त्याद्यौ विबुधाः स्मरंति भुवि ये धन्याः कुलं पावितं
तौ येषां न भजंति स्याच्च वदने मध्यस्थितं चाक्षरम् ॥ १ ॥
पठति सकलशास्त्रं वेदपारं गतोपि
यमनियमपरो वा धर्मशास्त्रार्थवेत्ता ।
अटति सकलतीर्थं राजिता वा हुताग्नि-
र्यदि भजति न रामं सर्वमेतद्वृथा स्यात् ॥ २ ॥

पेयं पेयं श्रवणपुटके रामनामाभिरामं
ध्येयं ध्येयं मनसि सततं तारकं ब्रह्मरूपम् ।
जल्पं जल्पं प्रकृतिविकृतौ प्राणिनां कर्णमूले
वीथ्यां वीथ्यामटति जटिलः कोऽपि काशीनिवासी ॥१॥ (काशीखंड)

रामनाम परं ब्रह्म सर्वदेवप्रपूजितम् ।
महेश एव जानाति नान्यो जानाति वै मुने ॥ १ ॥
(जैमिनि॰ व्यासवाक्यम्)

रामेति द्व्यक्षरं नाम यत्र संकीर्त्यते बुधैः ।
तत्राविर्भूय भगवान् सर्वदुःखं विनाशयेत् ॥ १ ॥ (लोमशसंहिता)

यस्य नामप्रभावेण सर्वज्ञोऽहं वरानने ।
रामनाम्नः परं तत्त्वं नास्ति किंचिज्जगत्त्रये ॥ १ ॥ (शिववा॰)

रामेति वर्णद्वयमादरेण सदा स्मरन्मुक्तिमुपैति जंतुः ।
कलौ युगे कल्मषमानसानामन्यत्र धर्मे खलु नाधिकारः ॥ १ ॥

कवले कवले कुर्वन् रामनामानुकीर्तनम् ।
यः कश्चित्पुरुषोऽश्नाति सोऽन्नदोषैर्न लिप्यते ॥ २ ॥
सिक्थे सिक्थे लभेन्मर्त्यो महायज्ञादिकं फलम् ।
यः स्मरेद्रामनामाख्यं मंत्रराजमनुत्तमम् ॥ ३ ॥ (वैष्णवस्मृतौ)

दैवाच्छूकरशावकेन निहतो म्लेच्छो जराजर्जरो
हा रामेति हतोस्मि भूमिपतितो जल्पंस्तनुं त्यक्तवान् ।
तीर्णो गोष्पदवद्भवार्णवमहो नाम्नः प्रभावात्पुनः
किं चित्रं यदि रामनामरसिकास्ते यांति रामास्पदम् ॥ १ ॥ (वराहपुराण)

द्विजो वा राक्षसो वापि पापी वा धार्मिकोऽपि वा ।
त्यजन्कलेवरं रामं स्मृत्वा याति परं पदम् ॥ १ ॥ (अध्यात्मरामायण)

ॐ अथाह भारद्वाजो याज्ञवल्क्यं पप्रच्छोवाच श्रीराममन्त्रस्य माहात्म्यं नो ब्रूहि भगवन् यद् उवाच याज्ञवल्क्यः तारकस्तारको भवति तदेव तारकं ब्रह्म त्वं विद्धि तदेवोपास्यं य एतत्तारकं ब्रह्मणो नित्यमधीते स पाप्मानं तरति स मृत्युं तरति स ब्रह्महत्यां तरति स भ्रूणहत्यां तरति स वीरहत्यां तरति स सर्वहत्यां तरति स संसारं तरति स विमुक्तात्मा भवति स महान् भवति सोऽमृतत्वं च गच्छतीति (सामवेदपिप्पलायनशाखा)

हरिः ॐ द्वापरान्ते नारदो ब्रह्माणं जगाम कथं भगवन् गां पर्यटन् कलिं संतरेयमिति । स होवाच ब्रह्मा साधु पृष्टोऽस्मि सर्वश्रुतिरहस्यं गोप्यं तच्छृणु । येन कलिसंसारं तरिष्यसि भगवत आदिपुरुषस्य नारायणस्य नामोच्चारणमात्रेण निर्धूतकलिर्भवति । नारदः पुनः पप्रच्छ । तन्नाम किमिति । स होवाच हिरण्यगर्भः—

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

इति षोडशकं नाम्नां कलिकल्मषनाशनम् । नातः परतरं प्रायः सर्ववेदेषु दृश्यत इति षोडशकलावृतस्य पुरुषस्यावरणविनाशनं । ततः प्रकाशते परं ब्रह्म मेघापाये रविरश्मिमंडलीवेति । पुनर्नारदः पप्रच्छ भगवन्कोऽस्य विधिरिति । तं होवाच नास्य विधिरिति । सर्वदा शुचिरशुचिर्वा पठन् ब्रह्मणः सलोकतां समीपतां सरूपतां सायुज्यतामेति । यदास्य षोडशकस्य सार्धत्रिकोटिर्जपति । तदा ब्रह्महत्यास्तरति । स्वर्णस्तेयात् पूतो भवति । वृषलीगमनात्पूतो भवति । सर्वधर्मपरित्यागपापात्सद्यः शुचितामाप्नुयात् । सद्यो मुच्यते सद्यो मुच्यत इत्युपनिषत् । हरिः ॐ सहनाववत्विति शांतिः शांतिः शांतिः । हरिः ॐ
(कलिसंतारणोपनिषद्)

राम एव परं ब्रह्म परमात्माभिधीयते ।
रामात्परतरं नास्ति यत्किंचित्स्थूलसूक्ष्मकम् ॥ १ ॥ (पराशरस्मृति)

रामान्नास्ति परो देवो रामान्नास्ति परं व्रतम् ।
नहि रामात्परो योगो नहि रामात्परो मखः ॥ १ ॥
राशब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः ।
विश्वेषामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्तितः ॥ २ ॥ (पद्मपुराणे)

पदश्रवणकराननवाणी लमयननासिकादीन्द्रियविषयाधीशैः ।
निवर्जितो रामः साक्षात्परब्रह्मविग्रहः सच्चिदानंदात्मकः स्वयम् ॥ १ ॥
(शिवस्मृतिः)

रकारार्थो रामः सगुणपरमैश्वर्यजलधिः
मकारार्थो जीवः सकलविधकैंकर्यनिपुणः ॥
तयोर्मध्याकारो युगलमथ संबंधप्रमुखः
अनन्यार्हो ब्रूते त्रिनिगमसरूपोऽयमतुलः ॥ १ ॥ (आचार्यवाक्यम्)

श्रीरामं ये च हित्वा खलमतिनिरता ब्रह्मजीवं वदंति
ते मूढा नास्तिकास्ते शुभगुणरहिताः सर्वबुद्ध्यातिरिक्ताः ॥
पापिष्ठा धर्महीना गुरुजनविमुखा वेदशास्त्रैर्विरुद्धा-
स्ते हित्वा गांगमंभो रविकिरणजलं पातुमिच्छंति ग्रस्ताः ॥ १ ॥
(शिववाक्यम्)

श्रीमज्जाह्नुसुतातटे प्रविलसद्दिव्यं महद्रत्नं
तत्कंसस्य जगत्त्रयेऽपि विदितं वर्णैः शुभैर्द्वाभिः ।
अन्यार्थौ विबुधाः स्मरंति भुवि ये धन्याः फुलं पावितं
तौ तेषां न भजंति स्याच्च वदने मध्यस्थितं चाक्षरम् ॥ १ ॥
पठति सकलशास्त्रं वेदपारं गतोपि
यमनियमपरो वा धर्मशास्त्रार्थवेत्ता ।
अटति सकलतीर्थं राजिता वा हुताग्नि-
र्यदि भजति न रामं सर्वमेतद्वृथा स्यात् ॥ २ ॥

कबीर कसोटी रामकी, झूठा टिकै न कोय ।
राम कसोटी सो सहै, जो मरजीवा होय ॥ १ ॥
कबीर कहताहूं कहजातहूं सुणता है सब कोय ।
राम कह्यां भल होयगा, नहिंतर भला न होय ॥ २ ॥ (कबीर०)
गूरत तान धर कहा कमायो ।
राम भजन बिन जन्म गुमायो ॥ (श्रीरामानन्दजीम०)
रसना राम उचार रे तुरो आयमिटेंगे ।
अर्धनाम उद्धार करेगो, नहिं तो फिरिफिरि जन्म धरेगो ॥
(श्रीजैमलदासजी म०)

रामनाम निजमूल है, और सकल विस्तार ।
जन हरिया फल मुक्ति कूं, लीजे सार संभार ॥ १ ॥
(श्रीहरि० वाक्यम्)

राम कह्या सबही रह्या, सबहि राम के माहिं ।
रामदास इक राम बिन, दूजा कोऊ नाहिं ॥ १ ॥
धिन साधू संसार में, सुमरावे निजनाम ।
रामदास सत शब्द दे, पहुंचावे सुन गाम ॥ २ ॥
बड़ा बडेरा मंडका, ब्रह्मा विष्णु महेश ।
रामदास उन भी कह्यो, राम सर्व उपदेश ॥ ३ ॥ (श्रीराम० वाक्यम्)
एक राम के नाम बिन जिवकी जरनि न जाय ।
दादू केते पचि मरे करि करि बहुत उपाय ॥ १ ॥
रामनाम गुरु शब्द सूं, रे मन पेल भरम्म ।
निहकरमी सूं मन मिल्या, दादू काट करम्म ॥ २ ॥ (दादू दयाल)
राम नाम जपिवो श्रवनन सुनिवो, सलिलमोहमें बहि नहिं जइवो ।
(नामदेव)
रे मन राम नाम संभार, माया के भ्रम कहा भूलो चलेगो कर झार ।
(रैदासजी)

दया बोधमाँहीं कही, करि करि ऊंची बाँह ॥
दयावंत जिनके बसे, राम राम उरमाँह ॥ १ ॥ (गोरखनाथजी)
सुंदर कहत एक दियो जिन राम नाम ।
गुरुसो उदार कोउ देख्यो नाँहि सुन्यो है । (सुंदरदासजी)
रज्जब मिनखा देह धृक, आतमराम न जानियो । (रज्जबजी)
हरिहां बाजीद रामभजन में, देह गळे तो गालिये । (बाजीदजी)
रसना रटै न रामकूं, आन कथा मुख बोल ।
जन हरिदास वे मानवी, काग बिलाई कोल ॥ १ ॥ (हरिदासजी)

मृगतृष्णा ज्यूं जगरचना, यह देखो हृदय विचार ।
कह नानक भज रामनाम, नित जातें हो उद्धार ॥ १ ॥ (गुरुनानक)
माया त्याग भजै नित राम, सो अरिहंत हवे सब काम ।
जैनशास्त्र दशलाख गरथ, तिनमें भाख्यो यही अरथ ।
राम राम सो अरि हंत कहिये, ताही भज अरिमनकूं गहिये ॥ १ ॥
(जैनमत समयसारनाटक)

राम राम सब कोइ कहै, ब्रह्मा विष्णु महेश ।
राम चरण साचा गुरु, देवे यो उपदेश ॥ १ ॥
राम चरण शिव धर्म कूं, जानत नाँहीं कोय ।
शिव सुमरे ताकूं भजे, सो शिव धरमी होय ॥ १ ॥
(श्रीमद्वीतराग रामस्नेही पूज्यपादाचार्य रामचरणजी महाराज)
को काहू के शब्द से, फाट जाय आकाश ।
संत नमाने संतदास, बिना राम विश्वास ॥ १ ॥
पाई न गति केहि पतित पावन, राम भज सुनु शठ मना ।
गणिका अजामिल गृद्ध व्याध, गजादि खल तारे घना ॥
आमीर यवन किरात खल, श्वपचादि अति अघरूप जे ।
कहि नामवारक तेपि पावन, होत राम नमामि ते ॥ १ ॥
न मिटै भव संकट दुर्घट है, तपतीरथ जन्म अनेक अटो ।
कलिमें न विराग न ज्ञान कहूं, सब लागत फोकट झूट जटो ॥
नट ज्यों जनि पेट कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाठ ठटो ।
तुलसी ज सदा सुख चाहिये तो, रसना निशि वासर राम रटो ॥ १ ॥
राका रजनी भक्ति तव, राम नाम सोइ सोम ।
अपर नाम उडगण विमल, बसहु भक्त उर व्योम ॥ १ ॥
यद्यपि प्रभु के नाम अनेका । श्रुति कह अधिक एकते एका ॥
राम सकल नामनते अधिका । होउ नाथ अघखगगणवधिका ॥ (रामायण)
राम नाम मणिदीपधर, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरे, जो चाहसि उजियार ॥ १ ॥
हिय निर्गुण नैनन सगुण, रसना राम सुनाम ।
मनहु पुरट संपुट किये, तुलसी ललित ललाम ॥ २ ॥
जन मन वन नहिं कर सके, कलिमल गज पैसार ।
बसत सिंह गरजत सदा, नाथ रकार मकार ॥ ३ ॥ (तुलसी)
घर घट चौकी रामकी, विष्र धसै नहि चौर ।
ज्यों सूरज मंडल विषे, नहीं तिमिर को ठौर ॥ १ ॥

सद्गुरु के मिलने से (साक्षात्कार हो जाने से) जीवात्मा में जो भेदभाव का अंतर था यह सब मिटगया और अभेद (अद्वैत) भाव होकर सारशब्द जो मन्त्रवाचक राम नाम है जिसकी श्रुति, स्मृति, उपनिषद्, इतिहास, पुराण, आप्तवाक्य (महापुरुषवाक्य) संस्कृत प्राकृत सर्व ग्रंथों में मुक्तकंठ से प्रशंसा की है उस रामनाम की ओळखान हो गई।

तन मन फर देती रसना सेती रामहि राम रटंदा है ॥ २ ॥

तब तन मन उसी में तल्लीन होगया और अनन्य प्रेमपूर्वक रसना (जिह्वा) से राम ही राम शब्द की रटना अहर्निश (दिनरात) होने लग गई ॥ २ ॥

---

१ रसना से राम नाम रटन—

राम नाम को कीजिये, आठों पहर उचार ।
हरिया बंदीवान ज्यों, करिये कूक पुकार ॥ १ ॥ (श्रीहरि॰ वाक्यम्)
रसना सों रटिबो करै, आठों पहर अभंग ।
रामदास उण संत को, राम न छांडे संग ॥ १ ॥ (श्रीराम॰ वाक्यम्)
कबीर राम राम कहि कूकिये, ना सोइये असरार ।
रात दिवस के कूकने, कबहुक लगे पुकार ॥ १ ॥
राम नाम जपते रहो, जब लग घटमें प्रान ।
कबहुक दीन दयालुके, भनक परेगी कान ॥ १ ॥
रामनामको नित भजो, रसना होट समेत ।
हरिया जोग रु जुगति विन, सहज न को सिवरेत ॥ १ ॥
राम नाम रसना रटै, सोई जग में साध ।
हरिया सुमिरन सहज का, वांका मता अगाध ॥ २ ॥

स्मरण के स्थान—१ रसना २ कंठ ३ हृदय ४ नाभी ।
स्मरण के भेद—१ अधम २ मध्यम ३ उत्तम ४ अत्युत्तम ।

प्रथम राम रसना सुमरि, द्वितिये कंठ लगाय ।
तृतिये हिरदै ध्यान धरि, चौथे नाभि मिलाय ॥ १ ॥
प्रथम सो प्रथम अध नाम रसना लिया, दूसरे नाम मध कंठ धारा ।
तीसरे उत्तम सो नाम हिरदै कथा चतुरथे नाभि अतिउत्तमधारा ॥
(श्रीहरि॰ वाक्यम्)
तुरसी अध सुमरिण यों एह, रसना राम राम जपिलेह ।
यह आलंबन तोलों करै, मध सुमिरण की सोझी परै ॥ १ ॥

बरस्या है प्रेमा दरस्या नेमा कंठ कमल फूलंदा है।
भँवरा गुंजारू खुला धारू मुरली टेर सुणंदा है॥ ३॥

और प्रेम की वर्षा होने लगी, जिससे स्वयं ही (आपोआप) योगशा-स्रोक्त षट्चक्र भेदन तथा क्रमानुसार राम नाम रटने (जपने) के नियम (विधि) जान पड़ने लग गये और राम नाम की रटना अहर्निश अखंड होती रहने से प्रथम ही प्रथम कंठस्थ कमल का विकास हो गया (कंठ-कमल फूलगया), जब कंठ में स्मरण होने से कंठ कमल फूला तब जैसे भ्रमर (भँवरा) शब्द करता है उसके समान कंठ में (राम नाम रटन) गुंजार शब्द होने लगा और कंठ कमल का द्वार खुलगया जिससे उस नाद की टेर बांसुरी की टेर के सदृश सुनाई पड़ने लगी॥ ३॥

श्वास व उच्छ्वासा हिरदै वासा सुमिरण ध्यान धरंदा है।
नाभी घर आया नाच नचाया सहजाँ सुरत सुमरंदा है॥ ४॥

तुरसी मध सुमिरण जु यह, कंठ कमल अस्थान।
राम नाम उचार हुय, घायल करे सो प्रान॥ १॥
उत्तम सुमिरण हिरदा में, आरंभै धरि ध्यान।
श्वासोच्छ्वास रट्यो करे, तुरसी नाम निर्वान॥ २॥
तुरसी अति उत्तम भजन, कापे वरण्या जाय।
लख्यो ज कापे परे, भाग हुवे तो पाय॥ १॥ (जन तुरसी)
आठ पहर चौसठ घड़ी, रहै राम से रत्त।
जब जाय फाटे संतदास, चौरासी का खत्त॥ १॥ (संतदासजी)

१ त्रिकुटिचक्र।

२ गदगद सुमरण कंठ में, अमृत की सी धार।
एक अखंडी होत है, भवर पंख भणकार॥ १॥ (श्रीहरि॰ वाक्यम्)

३ रसना कंठ और हृदय इन तीन स्थानों में स्मरण क्रम से पहुँचने में श्रीहरि-रामदासजी महाराज को ७ वर्ष और २ मास की अवधि लगी थी।
राम राम रसना किया, मास दोय विश्राम।
हरिया हिरदै कंठ बिच, सागर वर्ष मुकाम॥ १॥ (श्रीहरि॰ वाक्यम्)

४ गुण तारे माया तिमिर, शीतं भरम मन चन्द।
रजब सुमिरण सूरतें, सहज पड़े सब मन्द॥ १॥

५ हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिमंडले अर्थात् हृदयमें प्राणवायु, गुदामें अपानवायु और नाभिमें समानवायु रहता है एवम् उदानः कंठदेशे स्यात् व्यानः

तदनंतर हृदयस्थान (अनाहत चक्र) में श्वास और उच्छ्वास की गति का ठहरता हुवा और मन ही मनमें स्मरण का ध्यान धरने लगा, हृदय में स्मरण होने के पश्चात् नाभिस्थान (मणिपुरचक्र) में स्मरण करता हुवा प्राणवायु समानवायु में आकर मिला (प्राणवायु समानवायु के घर में अर्थात् नाभिस्थान में जब आया) तब अनेक प्रकार के नाच नचाने लगा और सहज में ही आपसे आप मुखसे रामनाम का स्मरण होने लग गया ॥४॥

रग रग आरंभा भया अचंभा सुच्छम वेद भणंदा है।

और व्यानवायु जो सर्व शरीर में व्यापक हो रहा है उससे प्राण और समानवायु का योग होनेसे रग रग में (नस नसमें) आश्चर्यजनक एक क्रिया का आरंभ हुवा जिसका भेद वर्णन करना बडा सूक्ष्म है।

ओऊँ अरु सोऊँ देख्या ओऊँ पारब्रह्म परसंदा है ॥ ५ ॥

ऐसी स्थिति होने के पश्चात् ओऊँ=हंसः और सोऊं=सोहं इन दोनों

सर्वशरीरगः इति अर्थात् कंठ में उदानवायु और सर्व शरीरमें व्यानवायु निवास करता है।

१ नाभि स्थान में जब स्मरण होने लगता है तब सहज स्मरण होता है।

ररंकार सुमरण सहज, नाभि कमल अस्थान।
हरिया पश्चिमदेशकों, पहुँचन का परमान ॥ १ ॥
ज्यूं जल सेती सिंधुका, न्यारा थाह न होय।
हरिया सुमिरन सहजका, निशिदिन घटमें होय ॥ २ ॥

सोरठा।

हरिया सुख ममकार, अब सहजों सुमिरण नहीं।
मरे परे आकार, मेला जीव र शीव बिन ॥ १ ॥

अर्थात् सहज सुमिरन नाभिस्थान में जब रकारका स्मरण होने लग जाय तो पश्चिम देश को पहुंचने का प्रमाण समझना। सहज सुमरण में मकार का स्मरण बंद होकर केवल ररंकार शब्द की रात दिन रटना होने लग जाती है तभी जीव और शिव एक हो जाते हैं।

१ सुषम भेद:—यह महात्माओंका सांकेतिक शब्द है जिसमें सुषम भेद (बारीकियों) का वर्णन है अथवा सर्ववेद गुप्त को भी कहते हैं अथवा भगवानके स्वरूपभूत इस वेदको भी कहते हैं अथवा उपनिषद् यस्य यथोक्ति मर्म भेद व वेदविद इसको भी कहते हैं।



Sri Harilal Dasji Maharaj (Khedapa).

Sri Arjundasji Maharaj (Khedapa).

मम्मा हुए पागे समन्द निकासे अर्ध नाम भागंदा है।
ऊ नामज केवल पढे महापन रोम रोम उचांदा है॥६॥

जिससे राम राम शब्द जो मैं जपताथा उसमें से मकार केवल होगया अर्थात् माया से रहित अद्वैतरूप अर्धनाम जो केवल रका उसी रकार का (राँ राँ राँ राँ राँ राँ) स्मरण होने लग गया नाभि का विकास होगया जिससे शुद्ध निर्गुण (मायारहित) पर परब्र दर्शन हुवा तब महाबलशाली अर्धनाम रकार जो अद्वैतरूप है केवल उ का उच्चारण रोम रोम में होरहा है ऐसा मालूम होने लगा ॥ ६ ॥

रहता से रत्ता है निज तत्ता न्यारा हुय निरखंदा है।
ऐसा अविनाशी आप न जासी आप घंडे मेटंदा है॥७॥

यह रकार का स्मरण इस शरीर में रहनेवाले आत्मानें तत (स्वर्ज होने से निज तत्व रूप होजाने के कारण न्यारा होकर देखने लग गय अर्थात् द्रष्टा होकर अपने आपको देखने लगा, जिस परब्रह्मको न्य होकर देखने लगा वह परब्रह्म ऐसा अविनाशी है जो न तो कहीं से आता है न कहीं जाता है अपने में ही सदा सर्वदा विराजमान रहता है उस परब्रह्म की भेट बड़े महाभाग्य होते हैं तब ही होती है ॥ ७ ॥

सोऽहं सोऽहं शब्द की, सहजों सुनी अवाज।
जन हरिया इन वारे, ररंकार का राज ॥ १ ॥
सोऽहं सोऽहं शब्द की, तीन लोक लग सोर।
जन हरिया ररंकारका, वार पार नहीं छोर ॥ २ ॥ (श्रीहरि॰ वाणी)

अजपाजपनिष्कृष्ट लक्षण—

मन पवना अरु सुरति ले, आतम पकडे आप।
रज्जब लावे सुरति सो, एहै अजपाजाप ॥ १ ॥ (रज्जबजी)

अजपाजाप लगावे हेत, नीरक्षीर न्यारा करिदेत।
विष छांडे अमृत कूं पीवे, समस पिछाणै सुमरीण सार।
अन्तर एक राम सुख राखे, और सकल सुख माने कार ॥
(श्रीजैमलदासजी महाराज)

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ १ ॥
बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ २ ॥ (गीता)

के "हंसः सोहं सोहं हंसः" इस अजंपा नाम गायत्री के जप का ज्ञान प्राप्त होने से परब्रह्म परमात्मा के दर्शनकी प्राप्ति होतीहै वह हुई ॥ ५ ॥

---

१ अजपा के जप से परब्रह्म परसता है—

ओऊं सोऊं जाप अजप्पा, घटमें कीया संप असंपा । (श्रीहरि॰ वाक्यम्)

ओऊं सोऊं अर्थात् हंसः सोहं अजपा जप है इसने घट में असंप (जीव ब्रह्मका भेद) का संप (अभेद) करदिया ठीक वाच्यार्थ सफल कर दिया ।

उलटा अजपा जाप जपाया । हद को जीत वेहदमें आया ॥

(श्रीराम॰ वाक्यम्)

नासापथसमाकृष्टः पवनः फुस्फुसं गतः ।
शोधयेच्छोणितं दुष्टं तेन जीवंति जंतवः ॥ १ ॥
सोहंशब्देन जीवानां श्वासोच्छ्वासौ निरंतरम् ।
स्यातां वा हंसशब्देनोच्छ्वासश्वासौ विपर्य्ययात् ॥ २ ॥
इत्ययं द्व्यक्षरो मंत्रो जीवजप्योऽजपा मता ।
जपारंभो हि जननं मरणं तत्समापनम् ॥ ३ ॥

इसी अजपा मंत्र को अजपा गायत्री कहते हैं ।

एकविंशतिसाहस्रं षट्शताधिकमीश्वरि ।
जपते प्रत्यहं प्राणी सान्द्रानन्दमयीं पराम् ॥ ४ ॥
विना जपेन देवेशि जपो भवति मन्त्रिणः ।
अजपेयं ततः प्रोक्ता भवपाशनिकृंतनी ॥ ५ ॥ (दक्षिणामूर्तिसंहिता)
अजपा नाम गायत्री जीवो जपति सर्वदा ।
षट् शतानि दिवारात्रौ सहस्राण्येकविंशतिः ॥ १ ॥
एतत्संख्यान्वितं मंत्रं हंसः सोहं क्रमेण वै । (कुलार्णव)
जातः स इति वैशन्दमुच्चार्यारभते जपम् ।
महाप्रयाणसमये हमुच्चार्य समापयेत् ॥ १ ॥ (दक्षिणामूर्तिसंहिता)

यह अजपा जप तो स्वाभाविक रीत्या अहर्निश होता ही रहता है, परंतु यही अजपा जप राममंत्र के सहित जपने से फलदायक होता है ।

ओऊं सोऊं ऊंबरा, दोऊं खाली थोक ।
नाम बिना ऊगे नहीं, पच पच मरे करोड़ ॥ (रज्जबजी)
ओऊं सोऊं देह लग, निशि दिन आवे जाय ।
एक अखंडी शब्द में, हरिया सुरति समाय ॥ १ ॥

अर्थात् हंसः सोहं यह श्वासोच्छ्वास शब्द, शरीर है तबतक रात दिन आता जाता रहता है, इसी के द्वारा एक अखंडी शब्द जो रंकार आत्मा का वाचक शब्द है उसमें सुरति समाय दो यानी समावेश करदो—

मम्मा हुय पारी कमल विकासे अर्ध नाम आयंदा है।
ऊ नामज केवल बडे महाबल रोम रोम उचरंदा है ॥ ६ ॥

जिससे राम राम शब्द जो मैं जपताया उसमें से मकार बोलना बंद होगया अर्थात् माया से रहित अद्वैतरूप अर्धनाम जो केवल रकार है उसी रकार का (रँ रँ रँ रँ रँ रँ) स्मरण होने लग गया नाभिकमल का विकास होगया जिससे शुद्ध निर्गुण (मायारहित) पार परब्रह्म का दर्शन हुवा तब महाबलशाली अर्धनाम रकार जो अद्वैतरूप है केवल उसी का उच्चारण रोम रोम में होरहा है ऐसा मालूम होने लगा ॥ ६ ॥

रहता से रत्ता है निज तत्ता न्यारा हुय निरखंदा है।
ऐसा अविनासी आय न जासी भाग बडे मेटंदा है ॥ ७ ॥

यह रकार का स्मरण इस शरीर में रहनेवाले आत्मामें रत (लवलीन) होने से निज तत्व रूप होजाने के कारण न्यारा होकर देखने लग गया अर्थात् द्रष्टा होकर अपने आपको देखने लगा, जिस परब्रह्मको अलग होकर देखने लगा वह परब्रह्म ऐसा अविनाशी है जो न तो कहीं से आता है न कहीं जाता है अपने में ही सदा सर्वदा विराजमान रहता है उस परब्रह्म की भेट बडे महाभाग्य होते हैं तब ही होती है ॥ ७ ॥

ओऊं सोऊं शब्द की, सहजाँ सुणी अवाज ।
जन हरिया इन ऊपरे, ररंकार का राज ॥ १ ॥
ओऊं सोऊं शब्द की, तीन लोक लग सोय ।
जन हरिया ररंकारका, आर पार नहिं कोय ॥ २ ॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)

अजपाजपनिष्कृष्ट लक्षण—

मन पवना अरु सुरति से, आतम पकडे आप ।
रज्जब लावे सुरति सो, एहै अजपाजाप ॥ १ ॥ (रज्जबजी)
अजपाजाप लगावे हेत, नीरक्षीर न्यारा करिदेत ।
विष छांडे अमृत कूं पीवे, समझ पिछाणे सुमरिण साच ।
अन्तर एक राम सुख राखे, और सकल सुख मानै काच ॥
(श्रीजैमलदासजी महाराज)

१ मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ १ ॥
बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ २ ॥ (गीता)

रेचक अरु पूरक कर बिन कुंभक आप उलटि पलटंदा है।

विना हाथ की सहायता के जब आपसे आप स्वयं बाँये से दहिना और दहिने से बाँई तरफ उलट पुलट रेचक पूरक होकर कुंभक होने लगता है, अथवा रेचक और पूरक के करे विना "केवल कुंभक" ही होने लगै।

---

१ प्राणायामः—

प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तो रेचपूरककुंभकैः।
सहितः केवलश्चेति कुंभको द्विविधो मतः॥ १॥
यावत्केवलसिद्धिः स्यात्सहितं तावदभ्यसेत्।
रेचकं पूरकं मुक्त्वा सुखं यद्वायुधारणम्॥ २॥
न रेचको नैव च पूरकोऽत्र नासापुटे संस्थितमेव वायुम्।
सुनिश्चलं धारयते क्रमेण कुंभाख्यमेतत्प्रवदंति तज्ज्ञाः॥ ३॥

(हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् जबतक "केवल कुंभक" सिद्ध न हो तबतक रेचक पूरकादि क्रिया करके कुंभक का अभ्यास करता रहै, जब रेचक और पूरक के विना ही स्वयं वायु नासापुट में ही सुनिश्चल स्थिर होकर कुंभक होजावे उसको केवल कुंभक कहते हैं, यह जिसके सिद्ध हो जाता है उसको—

कुंभके केवले सिद्धे रेचपूरकवर्जिते।
न तस्य दुर्लभं किंचित्त्रिषु लोकेषु विद्यते।
शक्तः केवलकुंभेन यथेष्टं वायुधारणात्॥
राजयोगपदं चापि लभते नात्र संशयः।
कुंभकात् कुंडलीबोधः कुंडलीबोधतो भवेत्॥
अनर्गला सुषुम्ना च हठसिद्धिश्च जायते।
हठं विना राजयोगो राजयोगं विना हठः॥
न सिध्यति ततो युग्ममानिष्पत्तेः समभ्यसेत्।

तीन लोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं होता है। जो केवल कुंभक करने को समर्थ हो जाता है और जो यथेष्ट वायु धारण कर सकता है वह राजयोग के पदको प्राप्त होता है इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं। कुंभक से कुंडली का प्रबोध होता है और कुंडली के प्रबोध होनेसे सुषुम्ना सरल हो जाती है जिसमें हठयोग की सिद्धि हो जाती है।

---

1 स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवांतरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यंतरचारिणौ॥
यतेंद्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः॥ (श्रीमद्भगवद्गीता)

त्राटक हुय ध्यानू घात विज्ञानू आपा पट खूलंदा है ॥ ८ ॥

त्राटक (विना पलक झपकाये एक सरीखे नेत्र किसी सूक्ष्म लक्ष्य की ओर जमाकर एकाग्र अनन्य भाव का चित्त हो) ध्यान करने से विज्ञान (भूतभविष्यवर्तमानज्ञान) प्राप्त होता है तब अपने आपका पड़दा खुल जाता है और अपने आपको पहिचानने लग जाता है । अर्थात् "अहं ब्रह्मासि" ज्ञान होजाता है ।

सुखमण की घाटी चढियावाटी अरसधरां ठहरंदा है ।

उपरोक्त प्रकार से प्राण वायु का कुंभक एकाग्रता से रकार रटण पूर्वक होता हुवा सुषुम्णा की महाघाटी के पथ में जब प्राणवायु अपानवायु के

१ त्राटकः—

निरीक्षेन्निश्चलदृशा सूक्ष्मलक्ष्यं समाहितः ।
अश्रुसंपातपर्यंतमाचार्यैस्त्राटकं स्मृतम् ॥ १ ॥
मोचनं नेत्ररोगाणां तंद्रादीनां कपाटकम् ।
यत्नतस्त्राटकं गोप्यं यथा हाटकपेटकम् ॥ २ ॥ (हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् इधर उधर नहीं देखते हुए विना पलक झपकाये निश्चल दृष्टि से किसी लक्ष्य को एकाग्र चित्त होकर जब तक नेत्रों में से पानी टपकने न लगजाय तब तक देखते रहने को आचार्यों ने त्राटक कहा है । यह त्राटक नेत्र के सर्व रोग को और तंद्रा आदि को मिटाने वाला यत्नपूर्वक गुप्त रखनेयोग्य है ।

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥
समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १३ ॥
प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥ १४ ॥
युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥ १५ ॥
(भगवद्गीता अध्याय ६)

२ सुषुम्णा—इडा और पिंगला नाडी के मध्य में सुषुम्णा है ।

१ निरन्तर एकटक देखते प्राण निरोध करने को भी त्राटक कहते हैं ।

दोहा।

इला चंद रवि पिंगला, मध सुखमण का घाट ।
हरिया गुरु परसाद ते, खुला सहज कपाट ॥ १ ॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)

इडा भगवती गंगा, पिंगला यमुना नदी ।
तयोर्मध्ये प्रयागस्तु यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १ ॥ (बृहत्सामब्राह्मण)

सुषु इत्यव्यक्तं शब्दं म्नायति म्ना-कः मेरुदंड बाह्ये इडा पिंगला नाडी मध्यस्थ नाडी-विशेषः ।

मेरोर्बाह्यप्रदेशे शशिमिहिरशिरे सव्यदक्षे निषण्णे ।
मध्ये नाडी सुषुम्ना त्रितयगुणमयी चंद्रसूर्याग्निरूपा ॥ १ ॥
(शब्दकल्पद्रुम)

मेरुबाह्ये इडा नाडी पिंगला या समन्विता ।
सुषुम्ना भानुमार्गेण ब्रह्मद्वारावधिस्थिता ॥ १ ॥ (योगस्वरोदय)

नाडीर्दश विदुस्तासु मुख्यास्तिस्रः प्रकीर्तिताः ।
इडा वामे स्तनोर्मध्ये सुषुम्णा पिंगला परे ॥
मध्या तास्वपि नाडी स्यादग्निसोमस्वरूपिणी ॥ १ ॥

अनेडा वामाण्डाधःस्था धनुर्वक्रा वामनासापर्यंतगता, एवं पिंगला दक्षिणाण्डाधःस्था धनुर्वक्रा दक्षिणनासांतं गता, पृष्ठवंशांतर्गता सुषुम्णा इत्यर्थः । (शारदातिलक)

तात्पर्य यह है कि, मेरुदंड के बाहर के बाँये भागमें इडा नाम की नाडी बाये अंड के मूलसे निकलकर धनुष के समान टेढी होकर वामनासा के अंतपर्यंत गई है, एवं दक्षिण अंडके मूलसे निकलकर धनुषके समान टेढी होकर मेरुदंडके दक्षिणभागमें रहकर पिंगलानामकी नाडी दक्षिणनासिका के अंतपर्यंत गई है, और इन दोनों (चंद्र-सूर्यस्वरूपिणी) इडा पिंगला नाडी के मध्यमें (मेरुदंड के बीचमें अर्थात् मेरुदंड के भीतर के मध्यभागमें अग्निरूपिणी सुषुम्नानाडी मूलाधार से निकलकर ब्रह्मद्वारपर्यंत गई हुई है, यह नाडी त्रिगुणात्मिका चन्द्रसूर्याग्निरूपा है। मेरुदंड को ही पृष्ठवंश कहते हैं। इसी पृष्ठवंश के भीतर के भागमें सुषुम्णा नाडी रहती है और बाहर के भागमें बाँई ओर इडा दहिनी ओर पिंगला नाम की नाडियें आजु बाजु मिली हुई रहती हैं। इन्हीं तीनों नाडियों को गंगा यमुना और प्रयाग भी कहते हैं।

सुषुम्णा को पश्चिमद्वार अथवा बंकनाल अग्निरूपिणी भी कहते हैं। इसके और भी कई नाम शास्त्रों में इस प्रकार कहे हैं—

सुषुम्ना शून्यपदवी ब्रह्मरंध्रं महापथः ।
श्मशानं शांभवी मध्यमार्गश्चेत्येकवाचकाः ॥ १ ॥

इस सुषुम्णा नाडी के विषय में विशेष विवेचन इस प्रकार है—

मस्तिष्क का स्वरूप कछुए की खोपड़ी के समान है, इस में श्वेत रुई के समान चरबी की गिल्टियां बारीक झिल्लियों में लिपटी हुई भरी हैं जिनको भेजा कहते हैं। इसके चौड़ाई में दो भाग नारंगी की फांकों की समान हैं और लम्बाई में भी दो भाग हैं। सामने का भाग पेशानी की तरफवाला डाक्टरीमें (CEREBURM) सेरीबर्म कहलाता है और पिछला भाग (CEREBLLUM) सेरीब्लूम कहलाता है। यह पिछला भाग पतला होता हुवा बारीक सूतकी तरह रीढ की हड्डी में फैला हुआ है। जिसको हराम मगज कहते हैं। इस रीढ की हड्डीमें शरीर की सम्पूर्ण शक्तियों और प्रत्येक प्रकार के स्नायुओं के केंद्र हैं। सम्पूर्ण केंद्रों में गांठ लगी हुई है, जिससे मनुष्य अपनी शक्ति को प्रयोग में नहीं ला सकता। कुंडलिनी नाम केंद्र यदि जगाया जावे तो यह जोर में भरकर इन गांठों को तोड़ सकता है, क्योंकि जीवात्मा इसी में छिपा हुआ अचेत रहता है, जो इच्छाओं की व कर्मोकी जंजीर में बंधकर शरीर के अंदर कैद है। शरीर में ऐसे आत्मिक केंद्र तो चौदह हैं परन्तु इनमें से छः अधिक विख्यात हैं जो षट्चक्र कहलाते हैं। डाक्टरों की सम्मति में ये वे स्थान हैं जहां किसी प्रकार के स्नायु के झुंड आकर इकट्ठे होते हैं, और जहां अत्यंत अधिक बल दूसरे अंगों की अपेक्षा इकट्ठा रहता है और इनमें प्रतिसमय शक्ति भरी और बहती रहती है।

रीढ की मेरुदंड (SPINAL CORD) स्पाइनल कोर्ड में जो हराम मगज भरा है उसके बीचों बीच बालके बराबर बारीक नाली मस्तिष्क से लेकर नीचे गुदातक चली गई है जिसको अंग्रेजीमें (CANAL OF STRING) केनाल आफ स्ट्रिंग और संस्कृत में सुषुम्ना कहते हैं, यह रंग तेजी से भरी हुई है, और यही स्थान शक्ति व जिंदगी का घर है। और जिस प्रकार बेंत में गांठ होती है इसी तरह इस में षट्चक्रों का स्नायु केंद्र है और इनके स्थान की ठीक पहिचान यह है कि, इस स्थान के सामने शरीर में जरासा गड्ढा व खाली स्थान अवश्य होता है। (षट्चक्रों का विशेषवर्णन षट्चक्रवर्णन के प्रसंग में आगे लिखने में आयगा)। इड़ा नाम की नाड़ी सुषुम्ना के बांई तरफ होती हुई आज्ञाचक्र तक आती है, फिर वहां से मुड़कर सीधे नथने में पहुंचती है। और पिंगला सुषुम्ना के सीधी तरफ लिपटी हुई आती है फिर वहां से मुड़कर बाँये नथने में जाती है। सुषुम्ना रीढ के भीतर होकर जाती है। इसके मध्यमें खाली स्थान है जिसको चित्रा कहते हैं इसी में आत्मा रहता है। इस नाड़ीके छः दरजे हैं जिनमें केवल पांच साधारणतया प्रगट किये जा सकते हैं। डाक्टरी मत से तो नाड़ियाँ रुधिर ले आनेका काम करती हैं परंतु योगशास्त्र में ऐसा माना है कि ये वायु और शक्ति भी ले जाती हैं। यह गिनती में सब चौदह हैं, परंतु इनमें से उपरोक्त (इड़ा पिंगला सुषुम्ना) तीन अधिक विख्यात और आवश्यकीय हैं। यह नाड़ियां बारीक सूतके समान स्नायु हैं जो कि हड्डियों से निकलती हैं। योगी का अभीष्ट यह होता है कि रीढ की नाड़ी अर्थात् सुषुम्ना को स्वच्छ रक्खे जिससे तेजी की लहर बराबर जारी रहे और सम्पूर्ण केंद्र स्वतंत्र और दृढ रहें जिससे इच्छानुसार काम दे सके।

साथ मिलकर सुषुम्णा नाड़ी के मार्ग में चढा तब अरसघर (शून्यस्थान) में जाकर ठहरा।

फिरिया मन पूरब चले अपूरब ठाम ठाम ठमकंदा है ॥ ९ ॥

तत्पश्चात् पूर्व से मन फिरकर कंठ हृदय नाभि में क्रमसे ऊपर से नीचे स्थान २ पर श्वास ठहरता हुवा (स्थिर होता हुवा) पश्चिम के तरफ याने सुषुम्णा मार्ग के द्वार की ओर चलने लगा ॥ ९ ॥

जालंधर बंधा उरधे कंधा मन अरु पवन मिलंदा है।
उलट्या है आसण पलट्या वासण सुरत शब्द परसंदा है ॥ १० ॥

कंधे के ऊपर का जालंधर बंध करने से प्राणवायु की ऊर्ध्वगति रुक जाती है और पश्चिमतानसे ब्रह्मनाड़ी में जाने लगता है। तथा मूलबंध करने से अपानवायु उलटकर ऊर्ध्व गामी होता है एवं जालंधरबंध और मूलबंध करने पर प्राण अपान वायु के आसन उलट पुलट होने के कारण दोनों मिलजाने से सुरत शब्द का स्पर्श हुवा।

इस प्रकार सुषुम्ना के स्वरूप का वर्णन योगशास्त्र में किया हुआ है। इस परसे सुषुम्ना का मार्ग कितना अधिक कठिन है यह सहज ही ध्यान में नहीं आसकता है। इसी अति कठिन मार्ग की घाटी को अर्थात् गांठें बीच बीचमें जो आड़मारनेवाली हैं उन को लांघ के छेदन करके प्राण की गति जब सुषुम्ना में होती है तब शनैः शनैः ठहरता हुवा ब्रह्मद्वार पर त्रिकुटी में पहुंचता है।

प्रथम ध्यान पूरब दिशा, गगन गर्जिया जाय।
ठाम ठाम पाताल कूं, पछे पिछम कूं थाय ॥ १ ॥

१ बंध तीन प्रकार के होते हैं जालंधर, मूल, और उड्डियान।

१ जालंधर बंधः-

कंठको सिकोड़ कर मजबूती से चिबुक अर्थात् ठोडीको हृदय में जमा के सीधा बैठने को जालंधर बंध कहते हैं।

कंठमाकुंच्य हृदये स्थापयेच्चिबुकं दृढम्।
बंधो जालंधराख्योऽयं जरामृत्युविनाशकः ॥ १ ॥
है जालंधर बंध में, मन पवना की गांठ।
हरिया मिल्या उतान में, सुरत शब्द की सांठ ॥ १ ॥
सुरत चली आकाश कूं, दे जालंधर बंध।
जन हरिया जहां जाणिये, हद बेहद की संध ॥ २ ॥

चलती बंकनाड़ी खुली किवाड़ी भँवरगुफा मणकंदा है।
उलंध्या मेरा गुरुमिलचेरा चहुँ चकडोल फिरंदा है ॥ ११ ॥

चलती हुई बंक नाड़ी (सुषुम्ना) की किवाड़ी खुलगई (सुषुम्ना नाड़ी का द्वार खुलगया) जिससे भँवर गुफा (ब्रह्मरंध्रस्थान) में पहुंचने का

हरिया शब्द पयाल को, चल्या गगनवें होय।
जब जालंधर बंध को, विरला जाने कोय ॥ ३ ॥

(श्रीहरि० वाक्यम्)

२ मूलबंधः–

एडी से योनिस्थान को दबाकर गुदाको संकोचकरे और नीचे जाने वाले अपान वायु को बलपूर्वक ऊपर खींचके चढाते रहने को मूलबंध कहते हैं।

पार्ष्णिभागेन संपीड्य योनिमाकुंचयेद्गुदम्।
अपानमूर्ध्वमाकृष्य मूलबंधोऽभिधीयते ॥ १ ॥
अधोगतिमपानं वा ऊर्ध्वगं कुरुते बलात्।
आकुंचनेन तं प्राहुर्मूलबंधं हि योगिनः ॥ २ ॥

३ उड्डियानबंधः–

नाभी के ऊपर के भागको पीठ की ओर खींचके चिपका रखने को उड्डियानबंध कहते हैं।

उदरे पश्चिमं तानं नाभेरूर्ध्वं च कारयेत्।
उड्डियानो ह्यसौ बंधो मृत्युमातंगकेसरी ॥ १ ॥
मूलस्थानं समाकुंच्य उड्डियानं तु कारयेत्।
इडां च पिंगलां बध्वा वाहयेत्पश्चिमे पथि ॥ २ ॥
बंधत्रयमिदं श्रेष्ठं महासिद्धैश्च सेवितम् ॥ ३ ॥

इन तीनो बंधों के करने से सुषुम्णामार्ग में दोनों वायु का गमन होजाता है।

मूलबंधादपानस्य गतिरूर्ध्वं प्रजायते।
जालंधरात्तथा प्राणस्त्वधोगामी भवेत्पुनः ॥ १ ॥
प्राणापानौ मिलित्वाऽधः सुषुम्नावदनांतरे।
उड्डियानेन बंधेन विशते नात्र संशयः ॥ २ ॥
एवमभ्यासतो नित्यं कुंभकस्य निरंतरम्।
ब्रह्मरंध्रं प्रविश्याथ प्राणो भवति निश्चलः ॥ ३ ॥ (योगगीता)

मूलबंधसे अपान वायु की ऊर्ध्वगति होती है और जालंधरबंधसे प्राणकी अधोगति होती है एवं दोनों प्राण अपान मिलके सुषुम्ना के मुखके भीतर उड्डियान बंध के करने से निःसंशय प्रवेश होते हैं। इस प्रकार नित्य कुंभक करने का अभ्यास निरंतर करते रहने से प्राण ब्रह्मरंध्र में प्रवेशकर निश्चल होजाता है।

ज्ञान होगया। तत्पश्चात् जालंधर बंध और मूलबंध के करने से प्राणवायु अपानवायु से मिलके उड्डियान बंधद्वारा सुषुम्ना नाडी के खुले हुए द्वार में प्रवेश करगया। उड्डियानबंध के अभ्यास से प्राण को कहीं जाने का मारग नहीं मिला अतः वह पीठ की तरफ से मेरुदंड मध्यस्थित सुषुम्ना के मेरु को उलंघ कर गुरु चेला दोनों (प्राण अपान वा प्राण मन) मिलके च्यारों तरफ चकडोल (नीचेसे ऊपर ऊपरसे नीचे) चक्र के समान फिरने लगे। अर्थात् तीनों प्रकार के बंधनों के साधनद्वारा कुंडलिनी जागृत हो जो अपने मुखसे सुषुम्ना के मार्ग को रोक रखा है उस को खुला करदेती है और प्राण अपान दोनों मिलके उस सुषुम्ना के विवर में प्रवेश कर नीचे से ऊपर और ऊपरसे नीचे फिरने लगते हैं।

> षट्चक्र[1] भेद्या भवदुख छेद्या साँसा शोक नसंदा है॥
> गरजत है गेणूं बरजतवेणूं सरवर शून्य वसंदा है॥ १२॥

---

1 षट्चक्र:—

१ मूलाधार २ उपस्थ ३ नाभिमूल ४ हृदय ५ तालुमूल ६ ललाट इन छः स्थानों में एकत्रित हुए वायुसमूह मूल के केंद्रों को षट्चक्र कहते हैं।

> आधारे लिंगनाभौ प्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे
> द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्धे चतुष्के।
> वासांते बालमध्ये डफकठसहिते कंठदेशे स्वराणां
> हंक्षंतत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं नमामि॥ १॥

षट्चक्रों का कोष्टक।

संख्या	नामचक्र	स्थान	पत्रदल-संख्या	[illegible]	[illegible]	[illegible]
१	मूलाधार	मूलाधार	४	व से स पर्यंत.	उत्पत्तिशक्ति.	अधःशक्ति.
२	स्वाधिष्ठान	लिंग	६	ब से ल ,,	ब्रह्मा	शिव
३	मणिपुर	नाभि	१०	ड से फ ,,	विष्णु	
४	अनहद	हृदय	१२	क से ठ ,,	महादेव	ब्रह्मा
५	विशुद्ध	तालुमूल	१६	स्वर सोलह	दुर्गा	सुषुम्ना
६	आज्ञा	ललाट	२	ह क्ष	शून्यस्थान	

सहस्रारचक्र (सहस्रदल) यह सातवां चक्र है इसका ब्रह्मरंध्र स्थान है इसके ऊपर १००० दल हैं और परमपद इसकी शक्ति है। इनके उपरांत किसी किसी ने सूर्यचक्र और मनचक्र नामक २ चक्र और माने हैं।

शरीरस्थ पद्माकार षट्प्रकारचक्रम् ।

सप्त पद्मानि तत्रैव सन्ति लोका इव प्रभो ।
१ गुदे पृथ्वीसमं चक्रं हरिद्वर्णं चतुर्दलम् ॥ १ ॥
२ लिंगे तु षट्दलं चक्रं स्वाधिष्ठानमिति स्मृतम् ।
त्रिलोकवह्निनिलयं तप्तचामीकरप्रभम् ॥ २ ॥
३ नाभौ दशदलं चक्रं कुंडलिन्या समन्वितम् ।
नीलांजननिभं ब्रह्मस्थानपूर्वकमन्दिरम् ॥ ३ ॥
मणिपूराभिधं स्वच्छं जलस्थाने प्रकीर्तितम् ।
४ उद्यदादित्यसंकाशं हृदिचक्रमनाहतम् ॥ ४ ॥
कुंभकाख्यं द्वादशारं वैष्णवं वायुमन्दिरम् ।
५ कंठे विशुद्धिशरणं षोडशारं पुरोदयम् ॥ ५ ॥
शांभवी वरचक्राख्यं चंद्रबिंदुविभूषितम् ।
६ षष्ठमाज्ञालयं चक्रं द्विदलं श्वेतमुत्तमम् ॥ ६ ॥
षट्चक्राणीह मेयानि नैतद्गेयं कथंचन ।
राधाचक्रमिति ख्यातं मनःस्थानं प्रकीर्तितम् ॥ ७ ॥
७ सहस्रदलमेकार्णं परमात्मप्रकाशकम् ।
नित्यज्ञानमयं सत्यं सहस्रादित्यसन्निभम् ॥ ८ ॥

पहिलाः—मूलाधार चक्र=यह रीढ की हड्डी के आखीर या सबसे नीचेवाला स्थान है जो गुदा का कमल भी कहलाता है, इसको अंग्रेजी में SACRAL PLEXUS सेक्रे प्लेक्सस कहते हैं। योगी लोग इसको सूरज का स्थान कहते हैं। इसमें सत-रज-तम तीनों का भंडार समझते हैं। इसीपर संपूर्ण जीवन निर्भर मानते हैं। इस स्थान पर कुंडलिनी देवी साढे तीन आंटे देके लिपटी है जो उत्पत्ति की शक्ति रखती है। इसका चक्र पृथ्वी के समान हरे रंग का है, इसमें चतुर्दल कमल है, उनमें व, श, ष, स, ये चार वर्ण हैं इसको ब्रह्मचक्र भी कहते हैं।

दूसराः—स्वाधिष्ठान नाम का चक्र है=यह उपस्थ इंद्री के ऊपर दबाने से जो खाली स्थान ज्ञात होता है इसके ठीक सामने रीढ की हड्डी में है, यह कमल छः दल का है, इसमें ब, भ, म, य, र, ल, ये छः व्यंजनाक्षर हैं, इसको ब्रह्मा का स्थान बतलाते हैं। कोई कोई शिव का स्थान भी कहते हैं। यह संपूर्ण संसार का उत्पन्न करनेवाला है और यही त्रिलोक में अग्नि का स्थान है और तपाये हुए सुवर्ण के समान रंगवाला है।

तीसराः—मणिपुर नाम का चक्र है=यह नाभि के मुकाबले में है, इसको अंग्रेजी में SOLAR PEXUS सोलर पेक्सस कहते हैं। इसमें दशदल का कमल चक्र है। जिनमें ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ये दश अक्षर क्रम से विराजमान हैं

यह विष्णु का स्थान है और नील कमल के समान घनश्याम वर्ण का है इस को तच्छ जल का स्थान और ब्रह्मस्थान भी कहते हैं।

चौथाः—अनाहत नाम का चक्र है=इसको अंग्रेजी में CARDIAK PLEXUC कार-डेये प्लेक्सेस कहते हैं। यह छाती के मध्यमें जो गड्ढा कौडी कहलाता है उसके मुकाविले में है और महादेव का स्थान है, इस में द्वादश १२ दल का कमल है, बारहों दलों में क्रमसे क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ये बारह वर्ण हैं, इसका रंग उदय होवे हुए सूर्य के समान है. और इसको कुंभक स्थान वायु का स्थान तथा विष्णु का स्थान भी कहते हैं। कितनेक इसको ब्रह्मा का भी स्थान कहते हैं।

पाँचवाँः—विशुद्धि नाम का चक्र है यह गले में हँसली की हड्डी के ऊपर जो गड्ढासा है इसके मुकाविले में है। इसमें सोलह १६ दल का कमल है जिनमें क्रमसे सोलह ही स्वर अनुस्वारयुक्त विराजमान हैं (अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं, ॠं, ऌं, ॡं, एं, ऐं, ओं, औं, अं, अः,) इसको दुर्गाका स्थान कई पार्वतीपति का स्थान तथा सुषुम्नाका स्थान भी कहते हैं। यह महत्प्रभ धूम्रवर्ण का है, कितनेक शुक्र वर्ण का भी कहते हैं। यह जीव की विशुद्धि करने वाला है। कंठ में सुषुम्ना, इडा, पिंगला इन तीनों नाडियों का वेष्टन, मनुष्यों के रहता है। यह षट्कोण आकृतिका और छः अंगुल प्रमाण का है।

छठाः—आज्ञा नाम का चक्र है=यह दोनों भ्रुवों के मध्यमें नाक की जड के स्थान पर है। यहां इडा, पिंगला, सुषुम्ना इन तीनों नाडियों का प्रांत आकर मिला है इस कारण इस को त्रिपथ स्थान कहते हैं। यह षट्कोणाकृति चार अंगुल का रक्तवर्ण है। इसमें दो दल का उत्तम श्वेतवर्ण का कमल है इसमें ह और क्ष इन दो अक्षरों का निवास है। इसको राधाचक्र तथा मनका स्थान व शून्य स्थान अथवा शून्य सरोवरभी कहते हैं। इसका ध्यान करने से वायु, जल, अग्नि पर अधिकार होता है, भय जाता रहता है और कर्म के बंधन से छुट जाता है।

सातवाँः—सहस्रदल कमल चक्र का स्थान वह है=जो ईश्वरी ज्ञान से संबंध रखता है जिसका वर्णन करना जिह्वा और लेखनी से बाहर है, परंतु कुछ योगीजन ऐसा कहते हैं। कि तालू के ऊपर एक सहस्रदल का कमल है जिसमें चन्द्रमा का स्थान है और जो सुषुम्ना की जड है, इसीके ऊपर ब्रह्मरंध्र है इस चंद्रमा से प्रतिसमय अमृत वर्षा होती रहती है, जिसकी दो धार होकर नीचे सूरज के स्थान तक आती है, एक रीढ की बाँई ओर को जो इडा कहलाती है. दूसरी रीढके अंदर होकर जो सुषुम्ना कहलाती है। रीढ के नीचे का केंद्र जो सूर्यस्थान कहलाता है, इसमें से एक आतशी किरण निकलती है जो सीधी होकर ऊपर चढती है मानों वायु शक्ति की लहर बांई ओर से सीधी ओर को प्रतिसमय आती और चक्कर लगाती रहती है। मूलाधार कमल से एक प्रकार का विष निकलता है। जो सीधे नयने में आता है और नाशकारी है, परंतु उसको चंद्र का अमृत प्रभावित करता रहता है इसीसे उसका

अधर जाता रहता है। सहस्रदल पद्म एक महासागर के समान है इसमें परमात्म तत्व का प्रकाश हो रहा है जो नित्य ज्ञानमय सत्यस्वरूप एक हजार सूर्य के प्रकाश के तुल्य प्रकाशवाला है यही ब्रह्मस्थान है, इसी को परमपद स्थान कहते हैं, इसमें जो योगी अपनी योगसाधन क्रियाद्वारा पहुँचजाता है वह परमपद को प्राप्त होजाता है और जन्म मरण से रहित होजाता है। "यद्गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परमं मम"।

इस प्रकार के ये षट्चक्र हैं, इनको भेदकर जो सातवें ब्रह्मरंध्र चक्र में पहुँच जाता है उसको कुछभी कष्टसाध्य नहीं रहता है।

मूलाधार चक्र की विवेचना:—पीछे कह आये हैं कि छःस्थानों में एकत्रित हुए स्नायुसमूह मूलके केन्द्रों को षट्चक्र कहते हैं।

स्नायु (नाड़ी) समूह ७२००० बहत्तर हजार हैं उनमें से २४ मुख्य हैं। उनमें से भी १० मुख्य हैं।

नाडीनां संवहो देवि कन्दयोनिः खगांडवत्।
तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणां द्विसप्ततिः ॥ १ ॥
प्रधाना दशवाहिन्यो भूयस्तत्र दश स्मृताः।
ईडा च पिंगला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ॥ २ ॥
गांधारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी।
अलंबुषा कुहूश्चैव शंखिनी च दश स्मृताः ॥ ३ ॥
एवं नाडीमयं चक्रं विज्ञेयं शक्तिचक्रके।
इडायाः पिंगलायाश्च मध्ये या सा सुषुम्निका ॥ ४ ॥
इयं च त्रिगुणा ज्ञेया ब्रह्मविष्णुशिवात्मिका।
रजोगुणा च वज्राख्या चित्रिणी सत्वसंयुता ॥ ५ ॥
तमोगुणा ब्रह्मनाडी कार्यभेदक्रमेण च ॥ (निरुत्तरतंत्र)

तात्पर्य यह है कि बहत्तर हजार नाड़ियों में इडा १ पिंगला २ सुषुम्ना ३ गांधारी ४ हस्तिजिह्वा ५ पूषा ६ यशस्विनी ७ अलंबुषा ८ कुहू ९ शंखिनी १० ये दश नाड़ी और इनके अतिरिक्त वज्रा ११ चित्रिणी १२ और ब्रह्मनाडी १३ कुंडली मुख्य नाड़ियें हैं, इनमें इडा पिंगला के मध्य में त्रिगुणात्मिका सुषुम्ना रहती है, यह ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मिका है। सुषुम्ना के मार्ग को रोक के कुंडलिनी नाड़ी स्थित है। वज्रा इसी के पास में और चित्रिणी (चित्रा) सुषुम्ना के मध्यमें खाली स्थान में रहती है। इन नाडीसमूहों में जब तक कुंडलिनी नाड़ी जागृत न हो तब तक सब योगसाधन वृथा के समान ही है। जब यह कुंडलिनी नाड़ी जागृत होकर सुषुम्णा के द्वार को खुला कर सरल हो सुषुम्णा में प्रवेश करती है तब योगसाधन होता है। इसलिये प्रथम मूलाधार जो षट्चक्र का प्रथम चक्र है उसमें कुंडलिनी का निवास रहता है उस कुंडलीका वर्णन इस प्रकार है—

कुंडली को कुंडलिनी, कुंडली, कुटिलांगी, भुजंगी, नागन, बालरंडा, शक्ति, ईश्वरी, और अरुंधती नाम से भी पुकारते हैं।

गुह्यलिंगयोर्मध्ये अंगुलिद्वयमितस्थानं। तत्तु शरीरस्थसकलनाडीनां मूलस्थानं। अत्र व-श-ष-साक्षरयुक्तं स्वर्णवर्णं चतुर्दलपद्ममस्ति। तन्मध्ये इच्छा-ज्ञान-क्रिया-स्वरूपं त्रिकोणं वर्तते। तन्मध्ये कोटिसूर्यसमप्रभस्वयंभूलिंगमस्ति। अत्र पृथिवी वर्तते। तत्रैव मृणालसूत्रवत् सूक्ष्म-सार्धत्रिवलयाकार-स्वयंभूलिंगवेष्टितविद्युत्तुल्यप्रभ-कुल-कुंडलिनी वर्तते। यथा—

मूलाधारे त्रिकोणाख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मके।
मध्ये स्वयंभूलिंगं तु कोटिसूर्यसमप्रभम्॥
तद्बाह्ये हेमवर्णाभं वसवर्णं चतुर्दलम्॥ १॥　　(इति तंत्रसारः)

अथाधारपद्मं सुषुम्नाख्यलग्नं ध्वजाधो गुदोर्ध्वं चतुःशोणपत्रम्।
अधोवक्त्रमुद्यत्सुवर्णाभवर्णैर्वकारादिसांतैर्युतं वेदवर्णैः॥ १॥
अमुष्मिन्धरायाश्चतुष्कोणचक्रं समुद्भासि शूलाष्टकैरावृतं तत्।
लसत्पीतवर्णं तडित्कोमलांगं तदंतः समास्ते धरायाः स्वबीजम्॥ २॥
वज्राख्या वक्त्रदेशे विलसति सततं कर्णिकामध्यसंस्थम्
कोणं तत्त्रैपुराख्यं तडिदिव विलसत्कोमलं कामरूपम्।
कन्दर्पो नाम वायुर्निवसति सततं तस्य मध्ये समंतात्
जीवेशो बंधुजीवप्रकरमभिहसन् कोटिसूर्यप्रकाशः॥ ३॥
तन्मध्ये लिंगरूपीद्रुतकनककलाकोमलः पश्चिमास्यो
ज्ञानध्यानप्रकाशः प्रथमकिसलयाकाररूपः स्वयंभूः।
विद्युत्पूर्णेंदुबिंबप्रकरकरचयस्निग्धसंतानहासी
काशीवासी विलासी विलसति सरिदावर्तरूपः प्रकारः॥ ४॥
अस्योर्ध्वे बिसतंतुसोदरलसत् सूक्ष्मा जगन्मोहिनी
ब्रह्मद्वारमुखं मुखेन मधुरं संच्छादयंती स्वयम्।
शंखावर्तनिभा नवीनचपला माला विलासास्पदा
सुप्ता सर्पसमा शिवोपरिलसत् सार्धत्रिवृत्ताकृतिः॥ ५॥
(तत्त्वचिंतामणिः)

इत्यादि वचनों के भावार्थ पर से कुंडली मूलाधारस्थान में अर्थात् गुदा और लिंगके मध्यमें दो अंगुल प्रमाण का भगस्थान है, वह शरीरस्थ सकल नाडियों का मूलस्थान एक वालिस्त लम्बा और चार अंगुल चौडा शुभ्र और कोमल वेष्टनांबर (लपेटनेके वस्त्र) के समान (कंद) है। यहां चतुर्दल की आकृति का एक पद्म है उसमें चार दल हैं उनमें व, श, ष, स, ये चार वर्ण स्वर्ण के तुल्य देदीप्यमान हैं। उस चतुर्दल पद्म में इच्छा ज्ञान क्रिया स्वरूप एक त्रिकोण है और वह पश्चिममुखी है अर्थात् पीछे

को मुख है ऐसे कंदनाल में ही से ऊर्ध्वगमन होता है। इसकी कर्णिका में बज्र नाम नाडी रहती है और त्रिकोणमें कोटिसूर्यसमप्रभ स्वयंभू लिंग है यहीं पृथ्वी है इसी पर कमल के तंतु के समान सूक्ष्म विद्युत्पुंजप्रभावाली कुंडलिनी स्वयंभू लिंग को और सब नाडियों को घेरकर साडे तीन आंटे देकर कुटिल आकृति से अपने मुख में पूंछ को दबाकर ब्रह्मद्वार (सुषुम्ना का द्वार) को आच्छादित करके बैठी हुई है। इसके जागृत करने पर जब यह सुषुम्ना के मार्ग से अपना मुँह हटाती है तब ब्रह्मद्वार का कपाट खुलजाता है इसी कारण योगियों को इसके जानने और जगाने का प्रयत्न करते रहना चाहिये।

अथवा यह कुंडलिनी नाडी सब नाडियों के ऊपर स्थित होकर मनिपूरक चक्र कर्णिका को आवृत करके ब्रह्मरंध्र के द्वारको सर्वदा रोके रहती है और सुषुम्ना के द्वार को बन्द किए रखती है। इसलिये प्राणवायु और अपानवायु को धोंकनेवाला अर्थात् उत्तेजित करनेवाला जो पुरुष है वह उस प्राण और अपानवायु की एकता से उत्तेजित हुई अग्नि से जाग्रत होकर मन और प्राण वायुसहित सुषुम्ना को सूचितंतुन्याय से ऊपर लेजाता है, इनके ऊपर जाने से वह अपने इच्छित परमानंद को प्राप्त होजाता है।

अथवा कुंडलिनी नाडी सोते हुए सर्प के समान है उसको जाग्रत करने के लिये पहिले अपानवायु और प्राणवायु से विधिपूर्वक दीवकी अग्नियों के स्वरूप को तेज करें उनकी तेजी से उसे जगाकर वह पुरुष ज्योतिर्मय स्वरूप होकर सुषुम्ना मार्ग से आत्मा में लय होजाता है।

अथवा वज्रासन (सिद्धासन) लगाकर हाथों से पावों की एडी पकड कर कन्दस्थान को दृढतासे दबावे और वज्रासन से ही धोंकनी को कुंभक वायु से प्रचलित करे उसके प्रचलित होने से अग्नि प्रज्वलित होता है। उसकी गरमी से यह बालरंडा मुख फैला देती है उस समय में सुषुम्नाद्वारा ही योगीश्वर अपने स्वरूप के आनंद को पाते हैं।

अथवा नाभिदेशमें सूर्य रहता है। उस का आकुंचन कर चार घडीपर्यंत नित्य निर्भय होकर शक्ति (कुंडली) का चालन करे तो कुंडली कुछ ऊपर को खिंचती है जिससे प्राणवायु स्वयं (आपही) सुषुम्ना में प्रवेश कर जाता है।

सुप्ता गुरुप्रसादेन यदा जागर्ति कुंडली।
तदा सर्वाणि पद्मानि भिद्यंते ग्रंथयोपि च ॥ १ ॥

(हठयोगप्रदीपिका)

क्रिया करने से गुरु की कृपासे जब सोती हुई कुंडली जाग्रत हो जाती (संपूर्ण पद्मचक्र) भेदित होकर ब्रह्मग्रंथि, विष्णुग्रंथि, रुद्रग्रंथि, ये तीनों भेदित होजाती हैं।

जैसे सूई में धागा पिरोया हुआ हो तो वह सूई कपडे के अनेक सूतों में से तंतु ऊपर को निकल जाता है उसको सूचितंतुन्याय कहते हैं।

उपरोक्त प्रकार से सुपुम्ना मार्ग में प्राण अपान दोनों मिलके प्रवेश करने के बाद मेरुदंड के मध्य जो षट्चक्र के स्थान की गाँठें सुपुम्ना में पहिले बता आये हैं उन ही षट्चक्र की गाँठों को शनैः शनैः क्रमसे भेदते (छेदते) हुए (प्राण अपान मिलके) जब ब्रह्मरंध्रमें पहुँच गये तब सर्व भवसागर का दुःख छेदन (नाश) होगया और संशय तथा शोक नष्ट होगया और जिस शून्य सरोवर में अकथनीय गगन गर्जना का अलौकिक गंभीर नाद होरहाहै उसमें वास (निश्चल निवास) प्राप्त होगया।

हंसा सुन होती मंझे मोती मुख विन चूण चुगंदा है॥
आतम ब्रह्मंडा एक अखंडा विन रसना गावंदा है॥ १३॥
अंबर घर आये ब्रह्म वधाये अनहद नाद घुरंदा है॥
नोवत नीसाणा दिल दीवाणा बाजा भेरि वजंदा है॥ १४॥

---

१ नादकी चार अवस्था—

आरंभश्च घटश्चैव तथा परिचयोऽपि च।
निष्पत्तिः सर्वयोगेषु स्यादवस्थाचतुष्टयम्॥ १॥

१ आरंभावस्था—

ब्रह्मग्रन्थेर्भवेद्भेदो ह्यानंदः शून्यसंभवः।
विचित्रः क्वणको देहेऽनाहतः श्रूयते ध्वनिः॥ १॥

हृदय स्थान के द्वादशदल अनाहत चक्र में ब्रह्मग्रंथि है। जब प्राणायाम के अभ्यास से सुपुम्ना मार्गद्वारा इस ग्रंथी को प्राण भेदन करता है तब शून्य हृदयाकाश में आनंद हो जाता है और उस हृदाकाशोत्पन्न आनंद में विचित्र (नानाविध) प्रकार का आभूषण का नाद अर्थात् स्त्रियों के पाँव में पहनने के आभूषणों की मधुरध्वनि श्रवण होने लगती है इस को आरंभावस्था कहते हैं। जब आरंभावस्था प्राप्त हो जाती है तब वह पुरुष दिव्य देहवाला, तेजस्वी (प्रतापवान्) उत्तम सुगंधिवाला और रोगरहितदेहवाला होजाता है। और जब हृदाकाश में नाद का आरंभ होजाता है उस समय हृदाकाश, विशुद्धाकाश, और भ्रूमध्याकाश को योगीजन शून्य, अतिशून्य और महाशून्य पद के नाम से मानते हैं और उनके नाद का श्रवण क्रमसे करते जाते हैं।

२ घटावस्था—जब प्राणवायु हृदाकाशास्थ ब्रह्मग्रंथि को भेदन कर प्राण, अपान और नादबिंदु से मिलकर कंठस्थान के षोडशदल विशुद्धिनामक चक्र को जिसको मध्यचक्रभी कहते हैं और जो विष्णुग्रंथि का स्थान है इसको भेदन करता है तब परमानंद (ब्रह्मानंद) सूचक अतिशून्य नामक आकाश में अनेक प्रकार के नादों की

ध्वनि को ग्रंमर्दन करनेवाली भेरीकीसी ध्वनि सुनाई देने लगती है और वह योगी दृढ़ासन और पूर्व की अपेक्षा विशेष ज्ञानी देव के समान दिव्यदेहवाला हो जाता है। यह मध्यचक्र षोडशाधार का बंधक है

मध्यचक्रमिदं ज्ञेयं षोडशाधारबंधनम् ॥

जो षट्चक्र, षोडशाधार, द्विलक्ष्य और पंचाकाशको नहीं जानता उसको योगसिद्धि कैसे हो सकती है—

षट्चक्रं षोडशाधारं द्विलक्ष्यं व्योमपंचकम् ।
स्वदेहे यो न जानाति कथं योगी स सिध्यति ॥ २ ॥

इतनी बातें योगी को अवश्य जान लेना चाहिये—

षट्चक्र—१ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान, ३ मणिपुर, ४ अनाहत, ५ विशुद्ध, ६ आज्ञाचक्र।

सोलह आधार—१ पग का अंगुष्ठ, २ मूलाधार, ३ गुह्याधार, ४ वज्रोली, ५ उड्डियानबंध, ६ नाभिमंडलाधार, ७ हृदयाधार, ८ कंठाधार, ९ क्षुद्रकंठाधार, १० जिह्वामूलाधार, ११ जिह्वा का अधोभागाधार, १२ अर्धदंत मूलाधार, १३ नासिकाग्राधार, १४ नासिकामूलाधार, १५ भ्रूमध्याधार, और १६ नेत्राधार।

मतांतर से सोलह आधार—१ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान, ३ मणिपुर, ४ अनाहत, ५ विशुद्ध, ६ आज्ञाचक्र, ७ बिंदु, ८ अर्धेन्दु, ९ रोधिनी, १० नाद, ११ नादांत, १२ शक्ति, १३ व्यापिका, १४ शमनी, १५ रोधिनी, १६ ध्रुवमंडल।

द्विलक्ष्य—१ बाह्यलक्ष्य (भ्रूमध्य तथा नासिकाग्र) २ आभ्यंतरीयलक्ष्य (मूलाधारादिषट्चक्रों को अंतर्दृष्टि से देखना)

पांच प्रकार के आकाश—

पहिला—श्वेतवर्ण ज्योतीरूप आकाश।

दूसरा—पहिले के भीतर धूम्रवर्ण ज्योतीरूप महाकाश।

तीसरा—दूसरेके भीतर नीलवर्ण ज्योतीरूप महत्तत्त्वाकाश।

चौथा—तीसरेके भीतर पीतवर्ण ज्योतीरूप महाशून्याकाश।

पांचवाँ—चौथे में बिजलीके वर्ण ज्योतीरूप सूर्याकाश।

उपरोक्त प्रकार से शरीर में ६ चक्र १६ आधार २ लक्ष्य और ५ आकाश हैं इनको जो योगी नहीं पहिचानता उसको योगकी सिद्धि नहीं होती है।

३ परिचयावस्था—जब प्राण ब्रह्मग्रंथि और विष्णुग्रंथि को भेदन कर भ्रूमध्यमें द्विदल आज्ञाचक्र को जो सर्वेश्वर का पीठस्थान है जिसमें रुद्रग्रंथि है इस रुद्रग्रंथि [illegible] भेदन करता है तब भ्रूमध्याकाश (महाशून्याकाश) में प्राण पहुंचता है [illegible] कहते हैं। इसमें एक विशेष जानने योग्य मर्दल (एक प्रकार का [illegible] पड़ती है, इस अवस्था में सहजानंद और सर्व सिद्धियों की

जब षट्चक्रों को भेदन करता हुआ प्राणरूपी हंस शून्य सरोवर पर (त्रिकुटी में) पहुंच जाता है, तब यह सुन (निश्चल तथा शून्य स्थिति का) होजाता है और उस शून्य सरोवर में ब्रह्मानंदरूपी मोती का चुग गुरु के विना ही हंसरूपी प्राण चुगने लगता है (आनंदास्वादन करने लगता है) जिस से आत्मा और अखिल ब्रह्मांड एकही मालूम होने लगता है, इसलिये "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" इत्यादि महावाक्यों का जो अर्थ है उसका ज्ञान प्राप्त होजाता है और विना जिह्वा के ("यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह") "प्रज्ञानमानंदं ब्रह्म" इस प्रकार आनंददायक पद के गुण गाने लग जाता है ॥ १३ ॥

ऐसी स्थिति होने के पश्चात् जब प्राणरूपी हंस अंबर घर (ब्रह्मरंध्ररूपी महा आकाश) में प्रवेश करता है और ब्रह्मसे साक्षात्कार होने में तत्पर होता है तब मानों उसको परब्रह्म की ओर से तदाकार वृत्ति करने को बधाने के लिये अनहदनाद बजने लगता है। जिसमें नोबत, निसाण, दिल, दिवाण, भेरी, मृदंग आदि अनेक बाजों का नाद सुनाई पड़ने लगता है ॥ १४ ॥

मन शिक्खर मिलिया त्रयगढ भिलिया पद चोथा पायंदा है ॥
अध सिल उर्घो पवन निरुध्या ध्यान समाधि लगंदा है ॥ १५ ॥

अनाहतस्य शब्दस्य ध्वनिर्य उपलभ्यते।
ध्वनेरंतर्गतं ज्ञेयं ज्ञेयस्यांतर्गतं मनः ॥ १ ॥
मनस्तत्र लयं याति तद्विष्णोः परमं पदम् ॥
(हठयोगप्रदीपिका प्र० उप० ४)

१ ध्यान और समाधि के लक्षणः—

ध्यान—

१ तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।
नाभि आदि देशों में ध्येय का जो ज्ञान होता है वह ध्यान है।

२ ध्यातृ-ध्येय-ध्यान-कलना वद् ध्यानम्।
ध्यान करनेवाला और जिसका ध्यान किया जाय तथा ध्यान इन तीनों का प्रभेद जिसमें प्रतीत हो वह ध्यान कहलाता है।

३ धारणयोग्यदेशे अखंडतैलधारावत् प्रवाहो ध्यानम्।

...भेद की और अखंड अनीहित देवता के ध्यान करते रहे उसको ध्यान ... है। [illegible] कहलाती है।

... ध्यान के भेद दो प्रकार के होते हैं—

... एक पूर्ण ध्यान।

... दूसरा [illegible] ध्यान।

...पूर्णध्यान:—[illegible] से तथा [illegible] से [illegible] ध्यान को [illegible] करते हैं। इसमें [illegible] का [illegible] होता है और इस ध्यान में [illegible] होते हैं। पूर्ण ध्यानी [illegible] है।

...[illegible]ध्यान:—[illegible] का [illegible] [illegible] से ध्यान को [illegible] करते हैं इस से [illegible] की प्राप्ति होती है।

[illegible]
[illegible] ॥ १ ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥ २ ॥
[illegible] ॥ ([illegible])

...[illegible] का [illegible] है वह "[illegible]" [illegible] है।

...[illegible] के ध्यान की [illegible] है—

...[illegible] के [illegible] प्रकार के [illegible] हैं, [illegible] के [illegible] हैं [illegible] है। [illegible] करते हैं [illegible] हैं। [illegible] ४४ [illegible] हैं। [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] ११ [illegible] हैं। [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है।

...[illegible] के [illegible] में इस प्रकार लिखे हैं—

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ १ ॥

...[illegible] ([illegible]) [illegible] है ([illegible] हैं) [illegible] है [illegible] ([illegible]) [illegible] ([illegible])

११

और सूखे काष्ठके समान कड़ा होकर सर्व इन्द्रियों को अपने काबू (वश) में करके नेत्रों को अचल दृष्टि से भृकुटी के मध्य में लगाकर बैठने को सिद्धासन कहते हैं। यह सिद्धासन मोक्षद्वार के कपाट को भेदन करनेवाला (मुक्ति को देनेवाला) कहा है।

योगशास्त्र में इस आसन का नाम सिद्धासन कहा है और इसको ही वज्रासन, मुक्तासन, गुप्तासन आदि कई नामों से पुकारते हैं। और फलश्रुति में भी "मोक्षकपाटभेदजनकम्" यह वाक्य कहकर "नासनं सिद्धसदृशम्" परमावधि लिखा है इससे प्रमाणित होता है कि इस के समान कोई अन्य आसन नहीं है, परंतु इसकी जितनी महिमा वर्णन की है उतना उसका कारण नहीं बताया गया। यदि कारण बताया जाता तो इसकी महत्ता हृदयंगम होने से सिद्धासन की सिद्धियों का पता चल जाता। इसको परमोत्तम बताने का कारण जानने योग्य है इसका सविस्तर वर्णन कहीं नहीं मिलता है अत एव यहां उस का वर्णन करना आवश्यक जानकर किया जाता है।

"योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितं" इस पूर्वोक्त श्लोक में सिद्धासनसाधन की ५ बातें मुख्य मानी गई हैं—

१—योनिस्थान को दृढता से एड़ी से दबाना।

२—ठोडीको हृदयसे ४ अंगुल ऊपरवाले स्थानमें सुस्थिर (दृढ) जमाना।

३—स्थाणु (काष्ठ) के समान सीधा कड़ा होकर बैठना।

४—संयमितेंद्रिय अर्थात् इंद्रियों को दमन करना।

५—नेत्रों को अचलदृष्टि से भृकुटि के मध्यमें जमाना।

इन पांच बातों के करने से सिद्धासन होता है। इनका क्रमानुसार वर्णन इस तरह है।

पहिली—योनिस्थान को एड़ी से दबाने का प्रयोजन सुषुम्ना को जाग्रत करने का है। योनिस्थान (सीवन) में सुषुम्ना का ठीक विवरस्थान है। सुषुम्नाको सिद्ध करना ही योग का पर्यवसान है। इस ग्रंथ में श्रीहरिरामदासजी महाराजने फरमाया है-"सुखमण की घाटी चढिया वाटी अरस घरों ठहरंदा है" तथा "सुषुम्ना शून्यपदवी ब्रह्मरंध्र-महापथः" इत्यादि वाक्यों से सुषुम्ना ही मोक्षपदवी है इसी सुषुम्ना के द्वारा पश्चिम योग ध्यानसाधक योगी का बंकनाल से ऊर्ध्वगमन होता है। सुषुम्ना के विवर में कुंडलिनी नाड़ी साढ़े तीन आंटे लगाकर कुटिलाकृति से सर्पिणी के समान अपने मुख में पूँछको दबाकर सुषुम्नामार्ग के द्वार (छिद्र) को रोके बैठी है जो योगीको सुषुम्नातक जाने देती नहीं है इसीलिये बाँये पाँव की एड़ी से योनिस्थान को दृढ दबाने से मूलबंध होगा और अपान वायु की ऊर्ध्वगति होगी जिससे एक प्रकार की प्रबल ऊष्मा उत्पन्न होती है उसी के कारण वह योनिस्थानस्थ कुंडलिनी जाग्रत होकर सुषुम्नामार्ग को अपना मुख हटाकर रास्ता दे देती है। जिससे योगीलोग सुषुम्नामार्ग में प्राण अपान को प्रवेशकर अपने स्वरूप के आनंद को प्राप्त होते हैं।

दूसरी—हृदय में चिबुक को दृढता से जमाने की है=उससे जालंधरबंध होता है। जालंधरबंध होने से प्राण वायु की गति अधोगामिनी होती है और प्राण अपान

वायु से मिलकर सुषुम्ना के द्वार में प्रवेश करने योग्य हो जाता है इस कारण हृदयमें चिबुक (ठोडी) को दृढता से जमा के बैठने के लिये लिखा है।

तीसरी—स्थाणु के समान सीधा बैठनाः उसका प्रयोजन है, कि सीधा अकड़ कर बैठने से श्वासोच्छ्वास की गति बराबर सीधी आने जाने से सुषुम्ना में प्रवेश होने में कठिनाई नहीं पड़ती, तथा अन्य किसी नाडी में प्राण अपान प्रवेश नहीं कर सकते अगर (ऋजुकाय नहीं बैठने से) अन्य नाडी में वायु प्रवेश हो जावे तो मृत्यु तथा महाव्याधियों का उत्पन्न होना संभव है।

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १ ॥
प्रशांतात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥ २ ॥

श्रीमद्भगवद्गीता के उक्त श्लोकों में भी ऋजुकाय (सीधा अकड़कर) बैठकर योगाभ्यास करने के लिये लिखा है जिससे कुंभकादि साधन अच्छी तरह से हो जाय।

और प्राण अपान वायु दूसरी नाडियों में प्रवेश न करे इसी कारण स्थाणु पद देकर भी सिद्धासन में बैठना लिखा है। सच पूछो तो एक सिद्धासन ही सर्व योगसाधन की कुंजी है। इसीलिये सिद्धासन मोक्षद्वार के किवाड़ तोड़ने का बड़ा भारी साधन है।

चौथी—इंद्रियों को काबू में रखकर बैठने की है। अगर इनको स्वाधीन न की जाय तो मन स्थिर नहीं होगा और इसके स्थिर न होने से योग की सिद्धि प्राप्त करना भी असंभव है। अतः इंद्रियों का दमन करना ही पहिला काम है।

यततो ह्यपि कौंतेय पुरुषस्य विपश्चितः।
इंद्रियाणि प्रमाथीनि हरंति प्रसभं मनः ॥ १ ॥
तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येंद्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ २ ॥　(श्रीमद्भगवद्गीता)

इंद्रियों के दमन करने के लिये प्रयत्न करनेवाले विद्वान् के भी मन को हे कुंतीपुत्र! ये प्रबल इंद्रियां बलात्कार से मनमानी ओर खींच ले जाती है। अतएव इन सब इंद्रियों का संयमन कर युक्त अर्थात् योगयुक्त और मत्परायण होकर रहना चाहिये। इस प्रकार जिसकी इंद्रियां अपने स्वाधीन हो जाँय (कहना चाहिये) उस की बुद्धि स्थिर होगई।

ऐसा स्थिर बुद्धि होकर बैठने के लिये ही "संयमितेंद्रिय" यह पद सिद्धासन में दिया है।

इतना तो मालूम हो ही गया है कि इंद्रियों का वेग बड़ा ही बलवान् होता है परन्तु इनमें भी लिंग और रसना दो इन्द्रियां बड़ी प्रबल हैं प्रायः इन्हीं से संसारी

और चपलता होती है। इन नाड़ियों का स्थान पाँव के पीछे बाहर की तरफ टखने और नड़े के बीच में है। जो यहां से ये नाड़ियाँ पिंडली और जंघा में से ऊपर को जाती हैं। और इन्हीं से इन्द्रियों को प्रबलता प्राप्त होती है। (डाक्टर लोग भी शैतान आदमियों की इन नाड़ियों को काट देते हैं जिससे उनकी वे इंद्रियां निकम्मी हो जाती हैं) योगमें इसके लिए बहुत ही सरल उपाय बताया गया है। जिससे किसी प्रकार की तकलीफ न हो और वे प्रबल इंद्रियें स्वाधीन हो जाती हैं। योगिराज श्रीजैमलदासजी महाराज ने सिद्धासन में भी एक नया लक्षण दिखाया है जिससे वे प्रबल इंद्रियां स्वयं विना कठिनाई के स्वाधीन हो जाती हैं—

"जंघनपर कर धारि के ये सम आसण चितलाय"

अर्थात् हठयोगप्रदीपिका के अनुसार ही सिद्धासन कर के बैठे परंतु दोनों हथेलियों के तलवों को जाँघोंपर धारणा करो। तात्पर्य यह है कि हथेली तलके दबाव से एक प्रकार की विद्युत् शक्ति उत्पन्न होती है वह सर्व शरीर में अपने प्रभाव का प्रसार कर उन प्रबल इन्द्रियों के वेग को दमन कर अपने स्वाधीन कर लेती है। अत एव सिद्धासन से बैठकर सर्व इन्द्रियों का दमन और मन को समाहित करने के लिये दोनों हाथों की हथेलियों को जोर से जांघों पर जमा कर बैठना चाहिये।

पांचवीं—नेत्रों को अचलदृष्टि से भृकुटी के मध्य जमाकर बैठने की है। ऐसा करने का मुख्य प्रयोजन मन की चंचल वृत्ति को स्थिर करना और ध्येय में तल्लीनता प्राप्त कर समाधि अवस्था प्राप्त करना है।

भ्रूमध्यस्थान में नेत्रों को अचल दृष्टि से जमा कर बैठने से खेचरी नामकी मुद्रा होती है।

सूर्याचन्द्रमसोर्मध्ये निरालम्बांतरे पुनः।
संस्थिता व्योमचक्रे या सा मुद्रा नाम खेचरी ॥ १ ॥

(हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् इडा पिंगला नाड़ी के बीच में निरालंब भ्रूप्रदेश (आकाशस्थान) में मनोवृत्ति स्थित हो जाने को खेचरी मुद्रा कहते हैं।

इस खेचरी मुद्रा के अभ्यास से उन्मनी अवस्था स्वयंसिद्ध हो जाती है।

"अभ्यस्ता खेचरी मुद्राप्युन्मनी संप्रजायते"

इसलिये खेचरी का एक भेद उन्मनी है ऐसा कहसकते हैं।

शंखदुंदुभिनादं च न शृणोति कदाचन।
काष्ठवज्जायते देह उन्मन्यावस्थया ध्रुवम् ॥ १ ॥

उन्मनी अवस्थामें असंप्रज्ञात निर्विकल्प समाधि के लक्षण हो जाते हैं इससे चतुर्थपद की प्राप्ति होती है।

चतुर्थ पद के लक्षण—

भ्रुवोर्मध्ये शिवस्थानं मनस्तत्र विलीयते ।
ज्ञातव्यं तत्पदं तुर्यं तत्र कालो न विद्यते ॥ १ ॥

भ्रूमध्यस्थान में शिव का स्थान है उसमें जब मन विलीन हो जाता है तब तुर्य पद (चतुर्थपद) प्राप्त हो जाता है ऐसा जानो। इसमें कोई कालकी (समयकी) अवधि नहीं है। क्योंकि भ्रूमध्यस्थानमें अचलदृष्टि जमाके मनको उसमें विलीन करनेसे ही चतुर्थपद की प्राप्ति होती है। इसीलिये सिद्धासन में अचल दृष्टिसे भ्रूमध्यको देखना बतलाया है।

रामस्नेहिसंप्रदायके आदि योगिराज श्रीजैमलदासजी महाराज ने भी चाचरी अगोचरी मुद्रा को इंगितकर यही बात कही है—

"निरत धरे निजनासिका वे सुनमें सुरत समाय"

अर्थात् निज नासाग्रभाग पर दृष्टि जमा के स्थिर होने को चाचरी मुद्रा कहते हैं। गीताजी में भी इसीको जमानेका लिखा है—

"संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्"

तथा "सुनमें सुरत समाय" इस पदसे चौथी अगोचरी मुद्रा बताई है।

मुद्रा पांच होती हैं:—

चाचरि, भूचरि, खेचरी, और अगोचरि नाम ।
उन्मनि मिल यह मुद्रिका, पंच लखहु सुखधाम ॥ १ ॥
अब सुन मुद्रा पंचविध, प्रथम खेचरी होय ।
मुखमें सास निवास है, बढवे जीभ विलोय ॥ २ ॥
दूसरि मुद्रा भूचरी, नासा आसु निवास ।
प्राणापान जुदी जुदी, कर देवे इक पास ॥ ३ ॥
तीजी मुद्रा चाचरी, बसे दृगन बिच सोपि ।
नासा आगे दृष्टि धरि, देखे अचरज कोपि ॥ ४ ॥
चौथी मुद्राऽगोचरी, करत श्रवणमें वास ।
ज्ञान सुरत इक होत है, अनहद शब्द प्रकाश ॥ ५ ॥

पांचवी उन्मनी मुद्रा है जिसका स्थान दशमद्वार है, इसकी सिद्धिके लिये ही तो सब कुछ करना पड़ता है। समाधि की सिद्धि इसी से ही होती है। यह स्वयं समाधि-रूप है। इस प्रकार पांचों मुद्राओं का साधन सिद्धासन से सिद्ध होता है। ये पांचों मुद्रा निश्चल दृष्टि से नासांत (भ्रूमध्यभाग) वा नासाग्रभाग में दृष्टि जमाने से सिद्ध होती हैं। अतएव भ्रूमध्यमें निश्चल दृष्टि जमा के सिद्धासन में बैठने से सर्व मुद्रा सिद्ध होना बतलाया है। उपरोक्त पांचों बातों को लक्ष्य में रखकर देखा जाय तो सिद्धासन कोई साधारण नहीं है, क्योंकि योगशास्त्रमें सारभूत और मोक्षद्वार के कपाट का भेदन कर सिद्धिका दाता यही कहा है, इसलिये ऐसा विश्वास है कि जिसको

केवल यह सिद्ध हो जाता है, वह परमपदका भागी होता है। इस प्रकार सिद्धासन लगाकर पश्चिमध्यानाभ्यासी योगी बैठे और मुखसे राममंत्र का जप करता हुआ रसना १ कंठ २ हृदय ३ नाभि ४ इन चार स्थान में क्रम से प्राणों का निरोध करे। प्रथम पूर्व ध्यान जो नाभि से सीधा हृदयादि स्थान में होकर भ्रुकुटीदेश में जाता है वहीं त्राटक ध्यान होता है।

पूरब ध्यान भया जब त्राटक।
खुला सहज गगन का फाटक॥

भ्रूमध्य में प्राण के रुकने को त्राटक कहते हैं, यह होने के पश्चात् क्रम से जिन जिन स्थानों में होता हुआ ऊपर गयाथा उन्हीं स्थानों में से होता हुआ नीचे नाभी में आकर पाताल में (आधार चक्र से नीचे के अंगों की पातालसंज्ञा मानी है, जैसे कटिप्रदेश को अतल, लिंगप्रदेश को वितल, गुह्यप्रदेश को सुतल, जंघाप्रदेश को तलातल, गुल्फप्रदेशको रसातल, पादप्रदेश को महातल, पादतल को पाताल माना है) जाकर फिर बंकनाल में पृष्ठ वंशांतरगत सुषुम्ना में प्रवेश होकर मेरुदंड में जो २१ ग्रंथियाँ हैं उनको छेदन करता हुआ पृष्ठ त्रिकुटी में पहुँच कर सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा दशमद्वार (ब्रह्मरंध्र) में प्रवेश करता है। तब योगी जीवन्मुक्त हो जाता है। त्रिकुटी तक तो माया तथा मृत्यु है।

त्रिकुटी ताँई रामदास, पड़े काल की घात।
त्रिकुटी पहुँता सुन गया, जाकी पूरण बात॥ १॥
मन मनसा का रामदास, त्रिकुटी ताँई सूत।
आगे केवल ब्रह्म है, जहाँ माया नहिं भूत॥ २॥
रामदास वीसोवरष (१८२०), तामें काती मास।
ता दिन छाँडी त्रिकुटी, किया ब्रह्म में वास॥ ३॥

(श्रीरामवाक्यम्)

इस प्रकार ध्यान करने को पश्चिमध्यान कहते हैं इस ध्यान को करनेवाले मुक्त हो जाते हैं। एवं ध्येय का ध्यान करते करते जब ध्याता की वृत्ति अभेदात्मक स्थिर हो जाती है तभी समाधि अवस्था प्राप्त होती है।

२ समाधि—

१ तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।
२ धातृ-ध्येय-ध्यान-कलनावद् ध्यानं तद्रहितं समाधिः।

ध्यान अर्थ मात्र रहजाय और स्वरूप शून्यसा प्रतीत हो उसे समाधि कहते हैं। ध्येय में एकाग्रचित्तवृत्ति की स्थिति को समाधि कहते हैं। इस स्थिति में ध्याता (योगी) ध्यान (चिंतवन) ध्येय (वस्तु) इन त्रिपुटी की कलना जिसमें हो वह सविकल्प तथा संप्रज्ञात समाधि कहाती है। और जिसमें ध्यातृ आदि त्रिपुटी का

स्फुरण तक नहीं हो वह निर्विकल्प समाधि तथा असंप्रज्ञात समाधि कहाती है । उसके लक्षण योगशास्त्र में ये हैं ।

सलिले सैंधवं यद्वत् सात्म्यं भजति योगतः ।
तथात्ममनसोरैक्यं समाधिरभिधीयते ॥ १ ॥

अर्थात् जिस प्रकार जलमें सैंधव (नमक का टुकड़ा) एकरूप हो जाता है इसी प्रकार योगी समाधि अवस्थामें आत्मा और मनकी एकता को प्राप्त हो ब्रह्ममें लीन हो जाता है । और उसको देहसंबंधी कुछ भी ध्यान नहीं रहता उसी को समाधि अवस्था कहते हैं।

यह समाधि दो प्रकार की होती है ।
एक जड़समाधि. दूसरी चेतनसमाधि.
चेतनसमाधि के दो भेद हैं.
एक पिपीलिकामार्ग. दूसरा विहंगममार्ग.
विहंगममार्ग के भी दो भेद हैं—
एक युंजानयोगी. दूसरा युक्तयोगी.

परंतु ये सब भेद संप्रज्ञात तथा असंप्रज्ञात समाधिके अंतर्गत आचुके हैं । अतएव मुख्य समाधि दो प्रकार की ही हैं

समाधि के पर्यायवाचक शब्द १५ हैं—१ राजयोग २ समाधि ३ उन्मनी ४ मनउन्मनी ५ अमरत्व ६ लय ७ शून्याशून्य ८ परंपद ९ अमनस्क १० अद्वैत ११ निरालंब १२ निरंजन १३ जीवन्मुक्ति १४ सहजावस्था १५ तुर्या ।

समाधि का दूसरा क्रम स्कंदपुराण में इस प्रकार लिखा है ।

एकश्वाससमयी मात्रा प्राणायामे निगद्यते ।
प्राणायामद्विषट्केन प्रत्याहार उदाहृतः ॥ १ ॥
प्रत्याहारद्विषट्केन धारणा परिकीर्तिता ।
भवेदीश्वरसंगत्यै ध्यानं द्वादशधारणम् ॥ २ ॥
ध्यानद्वादशकेनैव समाधिरभिधीयते ।
यत् समाधौ परं ज्योतिरनंतं स्वप्रकाशकम् ॥ ३ ॥

प्राणायाम में एक श्वास की मात्रा ।
बारह प्राणायाम का एक प्रत्याहार ।
बारह प्रत्याहार करने से एक धारणा ।
बारह धारणा का साधन करने से एक ईश्वर से संगति प्राप्त करनेवाला ध्यान प्राप्त होता है ।

इस प्रकार के ध्यान बारंबार करने से एक समाधि होती है । इस समाधि अवस्थामें परमज्योति अनंत स्वप्रकाशमय परब्रह्म परमात्मामें तद्रूपता प्राप्त हो जाती है ।

धारणा पंचनाडीभिर्ध्यानं षष्टिकनाडिकम् ।
दिनद्वादशकेन स्यात्समाधिः प्राणसंयमात् ॥ १ ॥ (गोरक्षपद्धति)
निर्गुणो ध्यानसंपन्नः समाधि च ततोऽभ्यसेत् ।
दिनद्वादशकेनैव समाधि समवाप्नुयात् ॥ १ ॥ (मार्कंडेयपुराण)
षट् श्वासा की एक पल, इसा सास सो साय ।
छठे महीने चेतसी, सुरति मेर चढ जाय ॥ १ ॥ (चेतसीयोगीराज)

ऐसी दशा प्राप्त होने का मुख्य साधन योग है । इस विषय के संबंध में पहिले बहुत कुछ लिखा जा चुका है उससे जो कुछ अवशिष्ट रहगया है उसीका दिग्दर्शन संक्षेप से यहां कराया जाता है ।

योग का सब खेल यथावत् मन और वायु के ऐक्य होनेसे ही सिद्ध होता है। क्योंकि जब इनकी एकता होगी तब चित्त एकाग्र होकर जिस काम में लगेगा तो वह कार्य अवश्य ही सफल होगा । भगवान् पतंजलि ने भी योगदर्शन में लिखा है ।

१ योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ।
२ युज्यतेऽसौ योगः ।
चित्त की वृत्ति के निरोध को योग कहते हैं । १ ।
जो युक्त किया जाय उसको योग कहते हैं । २ ।
योग दो प्रकार का होता है—
एक हठयोग और दूसरा राजयोग ।

हठयोग में आसनाभ्यास की तथा आग्रहयुक्त और हठयुक्त नियमों की प्रधानता होती है ।

राजयोग में ध्यानधारणाद्वारा मनःसामर्थ्य बढानेका महत्त्व विशेष है तथा आत्मशक्ति का अनुभव लेना मुख्यतया होता है इन दोनों में से राजयोगकी प्रशंसा अधिक की है । राजयोग को ही सहजयोग, सहजावस्था और समाधि कहते हैं । सर्व हठयोग के उपाय राजयोगकी सिद्धि के लिये ही किये जाते हैं जब राजयोगसिद्ध हो जाता है तो पुरुष मृत्यु को भी जीत लेनेवाला हो जाता है ।

सर्वे हठलयोपाया राजयोगस्य सिद्धये ।
राजयोगसमारूढः पुरुषः कालवंचकः ॥ १ ॥

अतएव राजयोग ही योगों में प्रधान माना गया है ।

योग के अष्टांग

१ यम, २ नियम, ३ आसन, ४ प्राणायाम, ५ प्रत्याहार, ६ धारणा, ७ ध्यान, ८ समाधि ।

यम—१ अहिंसा २ सत्य ३ अस्तेय ४ ब्रह्मचर्य ५ अपरिग्रह ।
नियम—१ शौच २ संतोष ३ तप ४ स्वाध्याय ५ ईश्वरप्रणिधान ।

आसन—चौरासी लक्ष हैं उनमें से जो मुख्य हैं उन का वर्णन पश्चिमध्यान साधन में देखिये।

प्राणायाम—तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः। पद्मासन सिद्धासन में से कोई भी आसन लगाके श्वास प्रश्वास की गति को रोक कर बैठने को प्राणायाम कहते हैं। इसके तीन प्रकार हैं १ पूरक २ कुंभक और ३ रेचक।

लक्षण—

इडया पवनं पिब षोडशभिश्चतुरुत्तरषष्ठिकमौदरकम्।
त्यज पिंगलया शनकैः शनकैर्दशभिर्दशभिर्दशभिर्द्वयधिकैः॥ १॥

अर्थात्—वाम नासापुट से सोलहवार प्रणवस्मरण करता हुवा वायु को ऊपर खींच-कर पान करे (इसी को पूरक कहते हैं) तत्पश्चात् उस वायु को ६४ चौंसठ वार ॐकार का स्मरण करने पर्यंत उदर के भीतर धारण कर रखे (इसको कुंभक कहते हैं) तत्पश्चात् दाहिने नासापुट से उस वायु को धीरे धीरे बत्तीस वार ॐकार स्मरण की मात्रा के प्रमाण से बाहर निकाले फिर कुछ देर बाहर श्वास को रखे फिर दहिने नासापुट से १६ सोलह वार वायु खींचे। इस भाँति ६४ वार में कुंभक (धारण करना) ३२ वार में रेचक और १६ वार में पूरक करे ऐसा तीन वार करने से एक प्राणायाम होता है।

इस प्राणायाम के दो भेद हैं सगर्भ और अगर्भ। जिस में ॐकार तथा राममंत्र का जप और ध्यान हो वह सगर्भ है। और जिसमें प्राणायाम के सिवाय जप ध्यान वगैरह कुछ भी नहीं किया जाता है वह अगर्भ है। अगर्भ से सगर्भ प्राणायाम १०० गुणा अधिक फलदायक है।

जपध्यानं विनाऽगर्भः सगर्भस्तत्समन्वयात्।
अगर्भात् गर्भसंयुक्तः प्राणायामः शताधिकः॥ १॥ (महाभारत)
जाप्येन तु अयं कुर्यादविलंबितमद्रुतम्।
मनसैव प्रसंख्यातं प्राणायामविधौ सदा॥ २॥ (नंदिपुराण)

अर्थात् सगर्भ प्राणायाम में जप करना वह न तो अधिक धीरे से न अधिक जल्दी से करना समानवृत्ति से मन ही मन में गिनती लगाके जप करना चाहिये। इस रीति के साधन को प्राणायाम कहते हैं। इसके और भी कई भेद हैं यथा १ जघन्य, २ मध्यम, ३ उत्कृष्ट। और कुंभक ८ प्रकार का है १ सूर्यभेदन, २ उज्जई, ३ सीत्कारी, ४ शीतली, ५ भस्त्रिका, ६ भ्रामरी, ७ मूर्छा, ८ प्लावनी, इनके करने से कुंडलिनी जागृत होती है।

प्रत्याहार—जो पांचों इंद्रियों के शब्दादि विषयों से मनको हटाने से होता है। इसके भी पांच भेद हैं कई कई इसके अठारह भेद भी कहते हैं।

ऐसे अनहद नाद को श्रवण करता हुवा मन जब ब्रह्मरंध्र में प्रवेश कर परब्रह्म से मिलजाता है तब त्रिगढ़ अर्थात् हृदय, कंठ, भ्रूमध्य, स्थानस्थ तीनों प्रबल ग्रंथिरूप गढ़ (किले) को भेदकर ब्रह्मपद, विष्णुपद और रुद्रपदरूपी तीनों पदसे भी पर परब्रह्मरूपी चौथे परमानंद पद को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार से जब अपानवायु प्राणवायु से मिलकर कुंभकद्वारा निरुद्ध होता है तब चित्तका ध्यान उस परब्रह्म परमात्मा की ओर लगने और ध्येयाकार वृत्ति प्राप्त होने से समाधि लगाने की अवस्था प्राप्त हो जाती है।

अष्टादशसु यद्वायोर्मर्मस्थानेषु धारणम् ।
स्थानात् स्थानात् समाकृष्य प्रत्याहारो निगद्यते ॥ १ ॥

धारणा—एक लक्ष्य पर या ध्येय पर चित्तवृत्ति स्थिर करने को कहते हैं। यह धारणा ५ प्रकार की है–१ स्तंभनी २ द्राविणी ३ दाहिनी ४ शोषणी ५ भ्रामणी। ये पृथिव्यादि पंचभूतों की है। शरीर में इनके ये स्थान हैं

१ पादादिजानुपर्यंतं पृथिवीस्थानमुच्यते ।
२ आजानोः पायुपर्यंतमपांस्थानं प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥
३ आपायोर्हृदयान्तं वह्निस्थानं तदुच्यते ।
४ हृन्मध्यात् भ्रुवोर्मध्ये यावद्वायुकुलं भवेत् ॥ २ ॥
५ आभ्रूमध्यात्तु मूर्धान्तमाकाशस्थानमुच्यते ॥

इन पांचों स्थानों में पांच पांच घटिकापर्यंत प्राण रोक कर ब्रह्मादि देवता का ध्यान करने से भूमि आदि पांच तत्वों का जय हो जाता है।

ध्यानः—तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ।

समाधिः—तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः । इनके सिवाय नेती, धोती, ब्रह्मदातन, गजकर्म, नौली, बस्ती, गणेशक्रिया, बज्रोलीकर्म, शंखप्रक्षाली, त्राटक आदि साधन तथा १ महामुद्रा २ बंधमुद्रा ३ महावेधमुद्रा ४ खेचरीमुद्रा ५ उड्डियानमुद्रा ६ मूलबंधमुद्रा ७ जालंधरमुद्रा ८ विपरीतकरणीमुद्रा ९ वज्रोलीमुद्रा १० शक्तिचालनमुद्रा ये दस महामुद्रा हैं। इनका साधन करने से चित्तको शांति प्राप्त होती है और जरावस्था भी दीर्घ प्राप्त होती है इनका विस्तारपूर्वक वर्णन "गोरक्षपद्धति" "हठयोगप्रदीपिका" "शिवयोगनिषद्" आदि योग के ग्रंथों में देखिये। इन पूर्वोक्त साधनोंके अभ्याससे वज्रावस्था प्राप्त होती है।

आज कल के धूर्त लोगों धनादि शरीरशुद्धिपूर्वक अभ्यासानुभव के लिये नहीं किंतु लोकप्रदर्शन के लिये केवल नेती, धोती, ब्रह्मदातुन, उड्डियानबंध, त्राटकादि क्रिया

धरिया नहिं धारूं अधर आधारूं सहजाँ सेयकरंदा है ।
दशमें मिल द्वारी लाई तारी अम्मर बींद वरंदा है ॥ १६ ॥
मनवा थिर पवना पांचूं दमना प्याला अजर पिवंदा है ।
निरमल जहां नूरा उदय अंकूरा परमानंद परसंदा है ॥ १७ ॥
तिरवेणी छाजै ब्रह्म विराजै निरभै राज करंदा है ।
झिलमिल्ला जोती ओत रु पोती जीव रु शीव मिलंदा है ॥ १८ ॥

जब समाधि अवस्था प्राप्त होती है उस समय नाम रूप धारण करनेवाले सगुण ब्रह्म की ध्यान धारणा मिटजाती है । और नाम रूप रहित निरंजन निराकार परब्रह्म परमात्मा का आश्रय (अवलंबन) प्राप्त कर स्वतः स्वाभाविक रीति से ही (आपसे आप) सेवा करने लगता है । एवं दशम द्वार (ब्रह्मरंध्र) में मन और प्राण मिलकर अमर बींद (परम पुरुष

दिखाकर योगकी बडी बडी डींगें मारते हैं । उन फर्रा बाजोंको योगी मत समझो, ये तो पेटभराई का रस्ता इन्होंने निकाल लिया है । इन धूर्तचालाक योगियों के फन्दे में आगये तो जर और जान दोनों से ही हाथ धो बैठोगे, सिवाय लोकमान्यताके खाली इन दिखाने की क्रियाओं में क्या पड़ा है—

मनकी मिटी न वासना नवतत किये न नास ।
तुलसी केते पचिमरे देदे तनकों त्रास ॥ १ ॥
पाणीमांही परगटी पावक एक प्रचंड ।
सातूं द्वीप सावत रह्या दग्धभया नवखंड ॥ २ ॥

यदि आपको इसकी चाट लगगई है अभ्यास करना चाहते हैं तो चेटकमेटक बातें बनानेवाले कुगुरुदियों के कथन को छोड़कर अच्छे भजनानंदी योगिराज सद्गुरु की तलाश करो कि जिस गुरु के पास अभ्यास करने से अपना जन्म सफल कर आप कृतकृत्य होजाँय ।

(टिप्पणीकार)

१ जाप न अजपा जहँ नहीं, तहँ नहिं सास उसास ।
हरिया जीव रु शीव का, एक अखंडी वास ॥ १ ॥
(हरि० वाक्यम्)

इसी अवस्था को निर्विकल्प समाधि कहते हैं ।

---

1 अंतःकरण । 2 ब्रह्मज्ञान । 3 सात धातु । 4 नव तत्व ।

परमात्मा) का करमेलन करता है। मानों मन प्राणरूपी स्त्री ने परब्रह्म-रूपी वरसे कर मेलन (हथ लेवा जोड़) कर विवाह किया है ॥ १६ ॥

मन की गति स्थिर होजाती है तब पांचों ही पवन (प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान नाम के वायु) दमन (वशीभूत अथवा काबूमें) होजाते हैं। और अजर प्याला (ब्रह्मानंद रूपी प्याला) पीने लगजातेहैं। जहाँ निर्मल निर्विकार शुद्ध सच्चिदानंद सरूपी नूर (ज्योति) के दर्शन का अंकुर उदय होता है तहाँ परमानंद परब्रह्म की प्राप्ति होती है ॥ १७ ॥

जहां त्रिवेणी (त्रिकुटी स्थान) पर परब्रह्म विराजमान होकर निर्भय राज्य करता है उसी की झिलमिलज्योति (प्रकाशमानज्योति) में जीव और शिव (ब्रह्म) तिलमें तैल के समान ओतप्रोत होकर मिल जाते हैं ॥ १८ ॥

हरि हीरा पाया विणज हलाया तोल न मोल लहंदा है।
हरि हीरा होती पारख कोती खोट न चोट चढंदा है ॥ १९ ॥
मन पंचे रहता मुखा न कहता अंतर लिव लावंदा है।
सुध बुध को विसरी सुरत न निसरी पूरण ब्रह्म अनंदा है ॥ २० ॥
जीवत जहाँ मुक्ती शिवमिल शक्ती जन्म न फेर मरंदा है।
अम्मी रस पीया जुगजुग जीया खालिक मिल खेलंदा है ॥ २१ ॥

हरिरामदासजी महाराज ने फरमाया कि मैंने ध्याता ध्यान ध्येय इस त्रिपुटी के ऐक्यतारूपी अनमोल हीरे को पाया फिर उसका विणज (व्यापार) शुरू किया तो न तो तोल ही ज्ञात हुआ और न मोल ही ज्ञात हुआ (अचिंत्य अतुल अमूल्य है) इस हीरे की परीक्षा कठिन है। यह हीरा ऐसा प्राप्त हुआ कि जो न तो कभी खोटा होवे न कभी चोट ही चढने का प्रसंग आवे ॥ १९ ॥

पंच=पंचायत में बैठकर निर्णय करनेवाला विचार करता जैसे मध्यस्त पुरुष होता है वैसे ही इस शरीर में अंतःकरण का अगुवा मन-

रूपी पंच है उस हीरे की परीक्षा करनेवाला रहते हुए भी वह (मन) अपने मुखसे कुछभी वर्णन नहीं कर सका और भीतर ही भीतर लौ लगादी और सब सुध बुध भूलगया, परंतु जो सुरत पूरण ब्रह्म आनंदरूप में बस गई थी वह नहीं निकली ॥ २० ॥

शिव और जीव का योग (मेल) सुषुम्ना में जहाँ हुआ बस यही जीवन्मुक्ति है और इसीसे जन्म मरण का फेरा मिट जाता है और अमृत-रस का पान कर युगोयुग जीवित रह अखिल ब्रह्मांड के स्वामी सच्चिदानंद आनंदकंद पूरण परब्रह्म परमात्मा से मिलकर खेलता रहता है ॥ २१ ॥

हंसा परहंसा एको अंसा सुन पर सुन सोहंदा है।
उडे बिन पंखा मिले असंखा पार न को पावंदा है ॥ २२ ॥
जाहर जुग जोगी है अणभोगी ओघट घाट रमंदा है।
नाथन के नाथू मस्तक हाथू शिव ब्रह्मा सेवंदा है ॥ २३ ॥
हरिजन हरि जाणी वेद वखाणी शेष विष्णु ध्यावंदा है।
धरिया अवतारू अनँत न पारू रहता एक रहंदा है ॥ २४ ॥

जब आत्मा और परमात्मा दोनों एकरूप होकर परम शून्य स्थानमें विराजमान (सुशोभित) होते हैं अर्थात् आत्मा परमात्मा में तदाकार हो जाता है तब उसको विना पंख के उडनेकी सामर्थ्य प्राप्त हो जाती है। ऐसे अनगिनत आत्मा इस प्रकार लय होजाते हैं जिनका कोई पार नहीं है ॥ २२ ॥

जाहिरात में (प्रकटरूपमें) योगाभ्यासी योगी जान पडता है, परंतु अभोक्ता होकर वह औघट घाट में रमता रहता है। जिस के मस्तक पर ईश्वर के भी ईश्वर परमेश्वर का हाथ होजाता है। (परब्रह्म परमात्मा की जिसपर पूर्ण कृपा होजाती है) उसकी शिव ब्रह्मादि सर्व देवता सेवा करने लगजाते हैं ॥ २३ ॥

वेद कहते हैं जिनका शेष और विष्णु ध्यान करते हैं उन भगवान् को हरि के जनों ही ने जाना है। जिसने अनेक अवतार धारण किए जिसका न आदि है और न अंत है और जो सर्वदा एकही रहता है ॥ २४ ॥

अंतः नहि करण् बाल न तरण् बुद्द न को वरपंदा है।
पाषाण न पाती छाप न साती थान न आन थपंदा है ॥ २५ ॥
अणघड़ अजात् मात न तात् निराकार निर्द्वंदा है।
हाट न कोइ शहरू विणज न वोहोरू खरच न को खूटंदा है ॥२६॥
सूरा नहि सत्ती जोग न जत्ती जरा न जम पूजंदा है।
तीरथ नहि वरत् आभ न धरत् अकल कला आपंदा है ॥ २७ ॥
नारि न को पुरषा चतुर न मुरखा वेद न चार वचंदा है।
अनुभव पद बोल्या अंतर खोल्या विधि विरला बूझंदा है ॥२८॥

जिसके अंतःकरण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) नहीं हैं। और जो न बालक, न तरुण, (जवान) न वृद्ध है न आयुवाला है। और जो न पाषाण न पत्ता है और तप्तमुद्रा भी जिसके नहीं है और न जिसके कोई स्थान है न आन है ॥ २५ ॥

वह अनघड़ (आकाररहित) अजात (अजन्मा) माता-पिता-रहित है। जो निराकार निर्द्वंद्वस्वरूप है। उसका न कोई शहर है न कोई दुकान है। न वाणिज्य करनेवाला है न लेन देन करनेवाला वोहरा है। न उसके खरच है न कभी उसके खूट ही आती है ॥ २६ ॥

न वह शूर है न सती (दानादि देनेवाला) है, न वह जोगी है न जती है, और जिसके पास न कभी जरा (बुढापा) और जम (मृत्यु) पहुंच सकते हैं। न वह तीर्थ है न कोई व्रत है। न आकाश है और न धरती (पृथ्वी) है अर्थात् निरंजन निराकार निर्विकल्प निर्गुण आदि-मध्यांतरहित वह अजन्मा और अकल है और कला का देनेवाला है ॥ २७ ॥

न स्त्री है न पुरुष है न चतुर है न मूरख है और चारों वेद भी जिसकी महिमा नहीं बांच सकते हैं और नेति २ कहते हैं। यह अनुभव की वार्ता जो गुप्त थी उस को पदों में और छंदों में प्रकट की है जिसकी विधि कोई विरला ही समझ सकता है ॥ २८ ॥

मिलिया गुरु आदू पाय अनादू पूरबले लेखंदा है।
जाण्या हम जैसा कहिये कैसा कछु इक मन सरभंदा है ॥ २९ ॥

काथम कुरवाणी कर आसाणी तुहि तुहि काम फमंदा है ।
तूही है रामा तु ही रहीमा जन हरिराम जपंदा है ॥ ३० ॥

पूर्व जन्म के लेख से आदिगुरु मिलगये और उनकी कृपा से अनादि रूप को पाया (जाना) जैसा हमने जाना है उसको कैसे वर्णन किया जाय! क्योंकि वह अवर्ण्य है इसलिये मन बतलाने में कुछ संकोच करता है ॥ २९ ॥

यदि उपरोक्त विधि से स्थिर होकर अपने को इस पर कुर्बान करदोगे तभी आसानी से सफलता प्राप्त करोगे । ग्रंथ की समाप्ति में श्रीहरिरामदासजी महाराज ईश्वरके प्रति प्रार्थना करते हैं कि हे भगवन्! आपही राम हो आपही रहीम हो और जो कुछ हो सो आप ही आप हो ॥ ३० ॥

॥ इति श्रीहरिरामदासजी महाराजकृतनिशानी संपूर्णा ॥

पद॰

१ भाई नाम समझीने बेसी रहिये आत्मा चीन्हीने मनमा मगन थईये । टेक
रामने रहिमान तमे एक कर जानज्यो कृष्ण ने करीम एक कहिये ।
विष्णु बिस्मिल्ला में भेद नथि भाई अल्लाह अलख एक लहिये ॥ १ ॥ भाई० ॥
गफूर गोविंद तमे एक कर जाणज्यो मोलाने माधव गुण गहिये ।
हरि हक ताला नो भेद तमे जाण्यो हवे चोरासी मार नव सहिये ॥ २ ॥ भाई० ।
परवरदिगार प्रभु एक कर जाणिये नरपी नारायण चोंव्यो हृदये ।
चावल ने चोखा पण डांगर छे एक एवुं समजो वेना थई रहिये ॥ ३ ॥ भाई० ।
साहेब नाम पाकछे प्रभु नो बीजो नापाक सब कहिये ।
ये वे साधन सीधा देमा पडे छे साचो एची ब्रह्मज्ञान नित ग्रहये ॥ ४ ॥ भाई० ।

अथ ग्रंथ नाम परचा प्रारंभः ।

सत गुरु के सत शब्द तें, उपज्यो मन विश्वास ।
राम नाम छाँड़ूं नहीं, धरूं न दूजा पास ॥ १ ॥
प्रथम राम रसना सुमर, द्वितिये कंठ लगाय ।
तृतिये हिरदै ध्यान धरि, चौथे नाभि मिलाय ॥ २ ॥

चौपाई ।

अध मध उत्तम त्रय घर ठानू । चौथे अति उत्तम अस्थानू ॥
यह चहुँ भिन देखे आसरमा । रामभक्ति को पावै मरमा ॥ १ ॥
अध सुमरन जू ऐसें कहिये । रसना राम राम कूं गहिये ॥
निशिदिन रसना राम उचारा । ज्यों दर बंदीवान पुकारा ॥ २ ॥
ज्यों रसना तन यों तृण वेली । तन तृण संग तंतु या मेली ॥
वेली पान फूल फल लागा । रसना राम सुमिरि भव भागा ॥३॥
अध सुमरन रसना से करिया । करताँई सुझि पार उतरिया ॥
रसना राम सुमर अध तालू । मध सुमरन की आया नालू ॥४॥
मध सुमरन जू ऐसा भाई । मुख सुमरन हालत रह जाई ॥
गद्गद कंठहि कमल विकासा । पाया प्रेम भया परकासा ॥ ५ ॥
ज्यों घायल उर सालैपीरा । त्यों त्यों व्यापे राम सरीरा ॥
घायल की घायल सो जानै । राम भजै सोई मन मानै ॥ ६ ॥
निश्चय रामनाम लिव लागी । भ्रमना कंठ कमल की भागी ॥
मध सुमरन की ये परतीति । अब उत्तम सुमरन की रीति ॥ ७ ॥
उत्तम सुमरन हृदय स्थानू । माँहो माँहि भया धरि ध्यानू ॥
रसना लेत राम का नामा । उर भीतर पाया विश्रामा ॥ ८ ॥
सहजाँ सासा शब्द पिछानी । रसना सहत नाम निर्यानी ॥
उत्तम सुख सुमरन हिरदामें । यूं नारी पुरुषा मन कामें ॥ ९ ॥
उत्तम सुमरन की सुधि आई । ढुकि इक ध्यान रह्या ठहराई ॥
अध मध उत्तम सुमर सुजाना । अति उत्तम के माँहि मिलाना ॥१०॥
अति उत्तम सुमरन जू ऐसा । या उपमा बरनूं मैं कैसा ॥
अति उत्तम सुमरन परकारा । रोम रोम लागा ररंकारा ॥ ११ ॥
अति उत्तम नाभी अस्थानू । मन संकल्प विकल्प न ठानू ॥
अति उत्तम सुमरन सरबंगा । अक्षर एक भया अणभंगा ॥ १२ ॥

---

१ ररंकार ।

साखी ।

सुमरन मारग संतका, ताते भरम नसाय ।
हरिरामा हरि बंदगी, करिहों चित्त लगाय ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

नाम चेतन्न कूं चेत भाई । नाम तें चित्त चौथे मिलाई ॥ १ ॥
नाम तें केवला होय भजना । नाम तें सहज सुमिरन्न रसना ॥ २ ॥
नाम तें अजपा जाप ओऊं । नाम तें सास उस्सास सोऊं ॥ ३ ॥
नाम तें हक्क है एक अल्ला । नाम महमान की आखि गल्ला ॥ ४ ॥
नाम तें चंद सूरा समेला । नाम तें करत मन सुक्ख केला ॥ ५ ॥
नाम तें खोलि कप्पाट गैणूं । नाम तें ध्यान ताटक्क नैणुं ॥ ६ ॥

साखी ।

नाभी परचा नामका, गुरु तें पाया ज्ञान ।
हरिया पूरब एक पल, धन्या गगनमें ध्यान ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

पलटि पूर्व अपुरब्ब प्याणा । करि बंकनाली लिये मेरु थाणा ॥ ७ ॥
ध्यान आकास धरि अधर छाजै । सुरति अरु शब्दका एक राजै ॥ ८ ॥
मन बुद्धि चित अरु अहंकारा । पाँच पचीस मिल एक तारा ॥ ९ ॥
नाद अनहद जहाँ तूर बाजै । विन बादलाँ बीज विन अंबुं गाजै ॥ १० ॥
विन गंग जमुना वहे नीर पारा । चलै सुषमणा सीर अमृत धारा ॥११॥
झिलमिला होत जहाँ अखंड ज्योती । निर्मला नूर तहाँ ओत पोती ॥१२॥
अगम अप्पार अवगत्त पारा । मिला मुक्तमें मुक्त पीतम्म प्यारा ॥१३॥
फद्दल फूँ जीत पति अदल साँई । सुन्य का सहर निरभै वसाँई ॥ १४ ॥

साखी ।

हंसा सुन सरवर मिल्या, सरवर हंस मिलाय ।
हरिया पैर सर खेलताँ, सहजाँ रहे समाय ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

सहज तन मन करि सहज पूजा । सहज सा देव नहिं और दूजा ॥१५॥
सहज का जोग साधन्न पवना । सहज थिर नाद अरु बिंद गगना ॥१६॥
सहज तीर्थ जप तप्प ध्यानू । सहज षट्कर्म सेवा सनानू ॥ १७ ॥
सहज कथ काथ कीर्तन्न काजा । सहज का शब्द सुर वाय बाजा ॥१८॥

---

१ गहन । २ मेघ, जल । ३ परसर, सबके ऊपर का सर ।

सहज में माय ये नृत्य ताली । सहज आकाश पर भोम माली ॥ १९ ॥
मंत्रगा सहज करि दीस धरिया । सहज हरिनाम यकसीस करिया ॥२०॥
सहज का भेद सोइ भेद भेदै । सहज विन अंतर मूजा न छेदै ॥ २१ ॥
सहज का भेद सोइ संत जाणै । दह कूं जीत बेहद माणै ॥ २२ ॥
सहज आसण किया सहज वासा । सहज में खेल अजीत पासा ॥२३॥
सहज का खेलणा रूप भाई । सहज सम्माधि सहजां मिलाई ॥ २४ ॥

साखी ।

सहजाँ मारग सहज का, सहज किया विश्राम ।
हरिया जीव रु सीव का, एक नाम अरु टाम ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

जीव अरु सीव मिल एक राई । पूरणा ब्रह्म जहाँ सुख्ख छाई ॥ २५ ॥
आदि अरु अंत ना मध्य कोई । जीव जहाँ शिव मिल एक होई ॥ २६ ॥
जीव अरु सीव का थोघि वासा । ना आभ धरती न होते निरासा ॥२७॥
जीव अरु सीव करि एक जाणी । सिले सिंधु सिंधौ जिमि बूंद पाणी ॥२८॥
ब्रह्म निरपाय गुण गर्व गलिया । जरा नाहिं झंफ भय कंप टलिया ॥२९॥
ब्रह्म भवतार भव रहत होई । ब्रह्म अवगत्त आनंद सोई ॥ ३० ॥
ब्रह्म निर्बंध निर्वाण निर्तुं । ब्रह्म पी अपी परमा निरत्तुं ॥ ३१ ॥
ब्रह्म अनहद अनवी नवीसा । ब्रह्म अनाथ के नाथ ईसा ॥ ३२ ॥
ब्रह्म विदेह देवघ देवा । ब्रह्म निरपाप निरपुण्य लेवा ॥ ३३ ॥
ब्रह्म अडोल भय नाहिं डोलै । ब्रह्म अब्बोल ता नाम बोलै ॥ ३४ ॥
ब्रह्म अत्तोल नहि मोल माया । ब्रह्म अप्पार किन पार पाया ॥ ३५ ॥
ब्रह्म निरँजन निर्गुण न्यारा । ब्रह्म परमात्मा आतम्म प्यारा ॥ ३६ ॥
ब्रह्म अगाध कोइ साधु जाणी । और खुर घींस सिर नाक ताणी ॥३७॥

साखी ।

जीव सीव मिल एकडा, रहे निरंतर छाय ।
हरिया ब्रह्मानंद में, ना कोइ और समाय ॥ १ ॥

छंद भुजंगी ।

न को रस भोगी । न को रहत न्यारा ॥
न को आप हरता । न कर्तुं व्यवहारा ॥ १ ॥

---

१ मायारहित । २ शान्त । ३ लेखक, कातिव, नमनेवालोंके ईश है । ४ जिसकी उत्पत्ति मातापितासे न हो ।

न को विष्णु ब्रह्मा । न कोई नगेशं ॥
न को आदि शक्ती । न कोई महेशं ॥ २ ॥
न को नाद बिंदु । न को जीव जिंदा ॥
न को गाम धरती । न कोई गिरिंदा ॥ ३ ॥
न को मोह माया । न को काम क्रोधं ॥
न को वृद्ध तरुणा । न को बाल बोधं ॥ ४ ॥
न को खाणि च्यारे । न को च्यार बाणी ॥
न को चंद सूरा । न को पौन पाणी ॥ ५ ॥
न को मास पक्षं । न को तिथ्थि वारा ॥
न को राति दिनं । न को अंधियारा ॥ ६ ॥
न को सात द्वीपं । न को नव्व खंडा ॥
न को तेज तारा । न को ब्रह्म अंडा ॥ ७ ॥
न को सिंधु सरिता । न को द्वारं भारूं ॥
न को तीन लोका । न को जुग्ग च्यारूं ॥ ८ ॥
न को ऋद्धि सिद्धं । न को मान धाता ॥
न को आय जाये । न को नेह नाता ॥ ९ ॥
न को नारि पुरुषा । न को जाति पाँती ॥
न को ऊंच नीचा । न को छोति भ्राँती ॥ १० ॥
न को लोक लज्जा । न को कुटुंब धर्मा ॥
न को पित्त मातं । न को भर्म कर्मा ॥ ११ ॥
न को थान मानं । न को पान पाती ॥
न को देव दोसं । न को जग्ग जोती ॥ १२ ॥
न को शुचि किरिया । न को वेद पाठं ॥
न को मुख वाणी । न को मौनं काठं ॥ १३ ॥
न को तप्र त्यागी । न को गृह चारा ॥
न को नव्व नाथूं । न को पंथ बारा ॥ १४ ॥
न को जोग जुगता । न को जत्तजोगा ॥
न को सात सुरखं । न को देंदश दोग्जा ॥ १५ ॥

---

१ सुमेरु आदि । २ अठारह भार वनसति । ३ एक चक्रवर्ती राजा । ४ जात देनेवाला । ५ काष्ठवत् मौन, न बोले न चेष्टा करे । ६ नवनाथ=आदिनाथ, परमानन्दनाथ, प्रकाशानन्दनाथ, वाकुलेश्वरानन्दनाथ, श्रीडेश्वरानन्दनाथ, भुगानन्दनाथ, सहजानन्दनाथ, गगनानन्दनाथ, विमलानन्दनाथ । ७ नाथोंके तथा कामभागंमें १२ पन्थ हैं. बारहबाट अठारह पेडा । ८ जतजोगा=इंद्रियदमनका हिसाब=तवधार यथा—

न को मन्न याचा । न को खाल शब्दी ॥
न को हद्द माही । न को बेहद्द हद्दी ॥ १६ ॥
न को राग दोषं । न को बंध मोषा ॥
न को घाटि बाधं । न को आध ओषा ॥ १७ ॥
न को राज तेजं । न को देश पत्ती ॥
न को महल छाजा । न को रूप रत्ती ॥ १८ ॥
न को खवास दासी । न को आसपासं ॥
न को साथ संगी । न को सास वासं ॥ १९ ॥
न को राग बागं । न को पट्ट भाषा ॥
न को हाले माली । न को लक्ख पाषा ॥ २० ॥
न को सूर सत्ती । न को खग्ग धारा ॥
न को आगि लागे । न को जूझ मारा ॥ २१ ॥
न को शीख सोई । न को दूज दाखे ॥
न को जाति जूई । न को पक्ख राखै ॥ २२ ॥

तियथलवास प्रेमरुचि निरखन दे परिच्छ भाखन मधु बैन
पूर्वभोग केलिरस चिंतन गुरुअ अहार लेत चित चैन ।
करि शुचि तन शृंगार बनावत तिय परयंक मध्यसुखसैन
मन्मथकथा उदर भरि भोजन ये नववाड़ जानमत जैन ॥ १ ॥

अथवा यतिजोंका दशनामका हिसाब नहीं है । दशनाम=तीर्थ आश्रम वन अरण्य गिरि पर्वत सागर सरस्वती भारती पुरी ये दशनाम शंकराचार्य्य स्वामीके चार प्रधान शिष्योंसे चला है जिन चारोंके नाम=पद्मपादाचार्य हस्तामलकाचार्य मण्डनाचार्य तोटकाचार्य ।

स्वामी पद्मपादके २ शिष्य तीर्थ, आश्रम ।
„ हस्तामलकके २ शिष्य वन, अरण्य ।
„ मण्डनके ३ शिष्य गिरि, पर्वत, सागर ।
„ तोटकके ३ शिष्य सरस्वती, भारती, पुरी ।

स्वामी शंकराचार्य्य के स्थापन किये हुए चार मठोंमें इन दश प्रशिष्योंकी शिष्य-परंपरा चली आती है ।

मठ ४:—शृंगेरीमठ शारदामठ गोवर्द्धनमठ जोशीमठ पर्याय (बद्रिकाश्रम करवीर-पीठ द्वारकापीठ शारदापीठ)

पुरी	तीर्थ	वन	गिरि
भारती	आश्रम	अरण्य	पर्वत
सरस्वती			सागर

९ प्रथममुख निरोगी काया आदि । १० क्वचित् क्वचित् मनमानि ।

१ संपूर्ण । २ सेवहंत फकीर शेखसेनी मार्गपी मार्गेनी अर्थात । ३ परिस्थिति । ४ कलदार अर्थात् नकदी द्रव्य । ५ युद्ध । ६ मना, मार्ग । ७ सम्बन्ध, डरी । ८ जुदे ।

न को ध्वज्ज नेजा । न को तूरवाजै ॥
न को मेघ बरषा । न को बीज गाजै ॥ २३ ॥
न को दैत्य देवा । न को दसावतारा ॥
न को खेल जूवा । न को जीत हारा ॥ २४ ॥
न को भक्ति नवधा । न को षट्ट बरनूं ॥
न को कान्ह गोपी । न को कीरतनूं ॥ २५ ॥
न को मूर्ति सेवा । न को देव द्वारा ॥
न को भोग चाढ़े । न को खाण हारा ॥ २६ ॥
न को तीर्थ ब्रत्तू । न को असनाता ॥
न को होम जापू । न को तप्प दाना ॥ २७ ॥
न को पिंड पोहरा । न को चोर लागै ॥
न को रैण सूता । न को दिन्न जागै ॥ २८ ॥
न को च्यार बेदं । न को है पुराना ॥
न को है कतेबा । न को है कुराना ॥ २९ ॥
न को अचल हिंदु । न को कोलं मुल्ला ॥
न को दाय पालं । न को मेह रसुल्ला ॥ ३० ॥
न को राह पीरां । न को तेग मरदां ॥
न को हक्क मूवां । न को हक्क करदां ॥ ३१ ॥
न को सुनत काजी । न को बंग न्वाजा ॥
न को ईद रोजा । मका नाहिं ख्वाजा ॥ ३२ ॥
न को राव रंकू । न को सुलताना ॥
न को खाक़ पाकं । न को मस्सताना ॥ ३३ ॥
न को भूत प्रेतं । न को जक्षजूणा ॥
न को काल जालं । न को तत्त दूणा ॥ ३४ ॥
न को स्वप्न जागै । न को सुस्पत पत्ती ॥
न को पद तुरिया । न को मोक्ष मुक्ती ॥ ३५ ॥

साखी ।

ज्यौं देख्या त्यौं मैं कहा कार्णे न राखी काय ।
दरिया परचा नाम का तन मन भीतर पाय ॥ १ ॥

---

१ निशान । २ तुरी, नगारा । ३ जोगी जंगमें सेवड़ा संन्यासी दरवेष । छट्यौं दर्शन बिप्रैका जामें मीन न मेष ॥ १ ॥ ४ म्लेच्छजाति । ५ मुहम्मद । ६ रसूल=पैगंबर । ७ तुरी । ८ बादशाह, सम्राट् । ९ मर्यादा ।

धारंकमें पायक धरी यूं आलम घट माहिं।
दरिया पयमें घृत है बिन मथियाँ कछु नाहिं ॥ २ ॥

इति नाम परचा।

अथ पदपचीसी।

चरण।

एक शब्द में कहि समझाऊँ, सुनिहो सब संसारा।
रामनाम सो सारशब्द है, और कथन है छारा ॥ १ ॥
आपा भेद बिना सोइ सुरता, कहै सुणे सो झूठा।
जबलग अनुभव तत्व न दरसे, मरि मरि आवे पूठा ॥ २ ॥
मनकों उलटि गहै जो गाढ़ा, पकड़े पाँचू थाना।
तीन गुणां की माया त्यागे, पद पावे निरबाना ॥ ३ ॥
माया मोह विषय संसारा, दुस्तर मारग दूरा।
कायर ताहि बीचमें गड़िया, डाकि परे सो सूरा ॥ ४ ॥
सूर महातम सझि संग्रामा, स्वामि काम इक धारा।
खाग त्यागि दोऊँ तड़ जोड़ै, मोड़ै खल दल मारा ॥ ५ ॥
जोग जज्ञ जपतप अज्ञाना, ये सब आशा बंधी।
पूरण ब्रह्म सकल ते न्यारा, दुनी न जानै अंधी ॥ ६ ॥
निर्गुण पद का भेद नियारा, कहा सुण्या नहिं पावे।
आपा उलटि आपमें देखे, जब ते मन पतियावे ॥ ७ ॥
भाव हीण करि पृथिवी होसी, पूजा दांभिक चाड़ा।
नानाविधि का मारग होसी, रामनाम बटवाड़ा ॥ ८ ॥
मैं नहिं कहत कहत परबाना, सुनिहो सबे सयाना।
मैं तैं रागद्वेष जग बंधे, ये कलि के अहनाना ॥ ९ ॥
दुनियाँ दुष्ट बुद्धिता होसी, मनमुख ज्ञान समर्था।
धर्ता कों कर्ता करि जाने, अर्थां करे अनर्था ॥ १० ॥
धका धेद धकै बहुलेरा, सहजाँ सुद्धि न आवै।
नाटक चेटक करिकरि ऊला, पेला पार न पावै ॥ ११ ॥
बाबू पलटि नाम धरि बावा, बहुरँग भस्मी लाया।
देहदशा करि भया दिगंबर, मन वैराग्य न पाया ॥ १२ ॥
बाहिर हेम रामका बाना, भीतर भरा भँगारू।
या तनको कारी नहिं लागे, मनवा भरा विकारू ॥ १३ ॥

---

१ काष्ठ। २ विषय।

तनके काज घरा बहु बाना, मन स्थिर करि नहिं लीया।
चंचल चित्त चहूँ दिशि डोलै, पकड़ि काल बस कीया॥ १४॥
देखा देखि सकल जग भरम्या, पखा पखी के सरमा।
आशा तृष्णा भई अखंडी, लोक लाज कुल करमा॥ १५॥
दुइ अक्षर का सकल पसारा, यामें कौन सनेहा।
एके लागि सकल जग मोहा, एक रहा निरछेहा॥ १६॥
तन मन वचन ज्ञान दृढ़ करिके, एक शब्द गुँझि आखूं।
जाताकों जावनदे भाई। रहताकों गहि राखूं॥ १७॥
सुमरण सार सकल का सौदा, रामनाम निज एकू।
अलख पुरुष आतम अविनासी, माया और अनेकू॥ १८॥
माया तीन लोक मुंसि खाया, सुरनर नाग नरेसा।
याकौं जीति चले कोइ साधू, सद्गुरु के उपदेसा॥ १९॥
रामनाम गुरु शब्द हमारे, सो सबते सिरताजू।
और शब्द गुरु मेरे भावे, कहन सुनन के काजू॥ २०॥
रामनाम परताप सदाई, तारे पतित अनेका।
शिव सनकादिक ऋषि नारद से, पाया ज्ञान विवेका॥ २१॥
अधः ऊर्ध्व को किया पयाना, जाने विरला जोगू।
मन पवना पश्चिम की घाटी, आया नाम तिरोगू॥ २२॥
सुधि बुधि पलटि गया गुण देहा, ररंकार रस पीया।
ऐसा अछक छक्या अवधूता, जुग जुग अनभय जीया॥ २३॥
ऐसी अकथ कथा औरन से, कहिये कौन विवेखी।
आपा अजर जरे अवधूता, सो जन विरला देखी॥ २४॥
अजरामर का मारग औला, सौला सन्त पिछाणै।
घंकनाल में मेरु सँचरि के, भँवर गुफा सुख माणै॥ २५॥
इला पिंगला नाड़ी मिल करि, सुषमण किया पिछानी।
अरस परस पीया से खेलै, मग्न भई दिवानी॥ २६॥
धर अंबर के बीच कलाली, बिन कर प्याला पावै।
भट्ठी अधर पिये मतवाला। रोम रोम रुचि आवै॥ २७॥
तीनू पेल खेल घर चोथे, दिल अंदर मिल यारा।
पाँचूं उलटि एक घर आया, पाया दशमद्वारा॥ २८॥
षोडश द्वादश गऊ मिलाई, अजपा मही जमाया।
सत मटकी मन किया झेरणा, मुक्त जु माखण आया॥ २९॥

---

१ ठगकरिके। २–१६ चन्द्रकलारस गऊ। ३–१२ सूर्यकलारस गऊ।

शुन्य सुभर में बालक जाया, त्वचा हाड नहिं माँसू।
जाति पाँति बरण नहिं वाके नाम जु धरिये काँसू ॥ ३० ॥
अगम निगम बिच खेल हमारा, जहँ एको निरवासा।
रूप रेख नख शिख नहिं वाके, देह न गेह न सासा ॥ ३१ ॥
जैमलदास गुरू परतापे, तोड़्या भर्म किंवारू।
जन हरिराम कहत है सन्तो, पदबत्तीस विचारू ॥ ३२ ॥

साखी।

पदबत्तीस विचारिके, उपज्यो आतम ज्ञान।
आपा ले उन्मन रहै, लहै परम निज ध्यान ॥ १ ॥

इति।

अथ प्रश्नोत्तरी।

चौपाई।

प्रश्न।

कहो कौन घर प्रेम निवासा। कहो कौन घर ध्यान प्रकासा ॥
कहो कौन घर मन मिल पवना। कहो कौन घर सहज सुमरना ॥ १ ॥
कहो कौन घर अमरा भरि है। कहो कौन घर नीझर झरि है ॥
कहो कौन घर अनहद तूरा। कहो कौन घर परसत नूरा ॥ २ ॥
कहो कौन घर उन्मनि लाई। कहो कौन घर सुरति समाई ॥
कहो कौन घर पीव मिलावे। कहो कौन घर आय न जावे ॥ ३ ॥

उत्तर।

कंठ कमल घर प्रेम निवासा। हृदय कमल घर ध्यान प्रकासा ॥
नाभि कमल घर मन मिल पवना। रोम रोम घर सहज सुमरना ॥४॥
बंक नाल घर अमरा भरि है। अधः ऊर्ध्व घर नीझर झरि है ॥
सून्य शिखर घर अनहद तूरा। दसम द्वार घर परसत नूरा ॥ ५ ॥
ललाट घर उन्मनि लाई। सुरत निरत घर माहिं समाई ॥
तिरबेणी घर पीव मिलावे। शिवसत्ता घर आय न जावे ॥ ६ ॥
जन हरिराम जहाँ घर पाया। जन्म मरण सन्देह मिटाया ॥
बिन गुरगम देखे नर दूरा। ब्रह्म बताया आप हजूरा ॥ ७ ॥

साखी।

गुरु हमारी जो करै, सोई हमारा यार।
हरिरामा दूजा दुनी, जाकों जम जुहार ॥ ८ ॥

इति।

अथ रेखता ।

(१)

जिंदरी भीतरै अजब जोगी बसै । जुक्ति विन जाणिया नाहिं आई ।
प्रथम गुरुदेवकी आय सस्तुति करि । मन्न अरु तनकूं देत भाई ॥
रसना राम कूं सुमरि नहिं ढीलकरि । एक विन दूसरी आस नाहीं ।
पाट हिरदा खुलै कमल नाभी फुलै । बोलता पुरुष कुं देख माहीं ॥
आप गुरु देवका दस्तं राखै नहीं । और कूं ज्ञान उपदेश देवै ।
आठही पहर हरिनाम जो उचरै । साच नहिं जानि गुरुविमुख सेवै ॥
आवता एक अरु एक ही जात है । अंध अज्ञान बहु करत मोहा ।
दास हरिराम निज भेद पायाँ विना । हाथ कंचन गह्या होत लोहा ॥

(२)

प्रथम गुरु ज्ञान अरदास तन बंदगी । शील संतोष लघु दीन यारा ।
राग अरु द्वेष तिहुं ताप मनतें तजै । झूठ अरु कपटसूं रहत न्यारा ॥
एक अभ्यास दिल आस नहिं दूसरी । ब्रह्मका ध्यान मन सुरत सेती ।
जोग जिग दान तप नेम व्रत तीरथा । तुल्य तिहुँ लोक नहि नाम जेती ॥
भर्म कूं भांजि कछु कर्म कूं काटिकरि । साहि शमंशेर सत शब्द सूरा ।
दास हरिराम कहै दिल दीवानमें । राज सोइ करत है संत पूरा ॥

(३)

आपकूं खोज पर ज्ञान की खबर करि । अलख आराध मन साधि प्यारा ।
जीव अरु जिंदकी झूठ यारी तजो । भेष भगवान करि देख न्यारा ॥
अणक्षरी बेद कूं निरख निरतायले । अगम अरु निगमका भेद बाचै ।
तन मन बचन तें दोष निर्दोष रहि । साम सूं सरपैरु संत साचै ॥
साँझ सव्वेर क्या करत नर बावरे । वेग भजि वेग अब दाव आई ।
दास हरिराम तन खाक मिल जाहिंगे । चूक मत जानि जग चतुराई ॥

(४)

भरम अज्ञान की भींत कूं ढाहि के । ज्ञान चोगान में खेल सूरा ।
कूड़ अरु कपट की झपट कूँ छाँडिदे । त्रिगँढ सिर वाय अनहद तूरा ॥
पांच पचीस गनीमकूं साझिले । मन्न कूं जीत महरँम्म होई ।
आदि जुगादि ले नाम निरभै भया । भरै सब संत या साख सोई ॥

---

१ हाथ । २ तलवार । ३ सन्मुख । ४ हृदय, कंठ, भ्रूमध्य । ५ बजाना । ६ दुस्मन । ७ महरम=भेदी ।

ब्रह्म कूं भेद कछु कर्म कूँ छेद करि । बेद कतेब से निरख न्यारा ।
दास हरिराम कहै उलटि आपा चिन्हे । परस लै परम दीदार प्यारा ॥

(५)

मन की मूँठ पलंलूंण गादी गही । तत्त का तीर करि हाथ साहो ।
ज्ञान कल्याण कर ध्यान घोरा धरो । आन अज्ञान का ढिगं दाहो ॥
अरसें का अश्व पर नृप नीकां चढ़ो । नाम नीसाण सिर डंक लावो ।
एक असवार अरु पंच प्यादा पुलै । लारि ललकार हरि वेग ध्यावो ॥
तन की नालि करि चित्त दारू भरो । सुरति की जामँकी शब्द गोला ।
भूमिया भरम कूँ मारि मुजरा करो । पांच परधान कूं पालि पोला ॥
सत्त का सेल करि खाग क्षम्मा तणी । दोय दल मोड़ि गढ़ तीन तोड़ो ।
दास हरिराम सब राज एको भया । साम सम्मूह मिल हाथ जोड़ो ॥

(६)

तन का तखत पर मन राजा भया । मान गुमान के महल माहीं ।
पाँच परधान पचीस चींरांगरी । करत हैं काम किलोल वाहीं ॥
जाणिरे जाणि जग माहिं जन सूरमा । दोय दल बीच में रोल घालै ।
निरति असवार अरु सुरति घोड़ा लियां । काम अरु कोघ कूँ दपटि पालै ॥
ज्ञानकी गुरज ले पाणि आघाधसै । तत्त तरवार करि हाथ साहै ।
पांच परधान मन मारि राजान कूँ । मान गुम्मान का महल ढाहै ॥
नाम नृप कोट सिर चाढि तावै किया । नक्ख अरु सिक्ख बिच एक राई ।
दास हरिराम सब राज अविचल भया । दशम द्वार नौबत्त बाई ॥

(७)

समझि रे समझि मन मूढ़ मेरा कह्या । कुडुंब परिवार कह कौन केरा ।
सकल संसार सराय की सोवती । एक पल माहिं हुय कूच डेरा ॥
एक मन चित्त नित नाम निरभै भजो । तुज्झि सिरकाल नहिं करत जोरा ।
बेद कत्तेब सब जानि काची कथा । देखि भूलै मतै मन मोरा ॥
तप्प तीर्थ व्रत साझि एकादशी । सातही द्वीप नव खंड डोलै ।
जोग जिग जाप षट्कर्म खाली रह्या । आपकूं उलटि आपा न खोलै ॥
आदि अरु अंत सतशब्द कूं ध्यायले । पायले दद्दशम द्वार सोई ।
दास हरिराम तहाँ मुक्ति संसा नहीं । जीव अरु सीव मिल एक होई ॥

(८)

खबर करि खबर गाफिल तुमसे कहूँ । बहुरि नहिं पाय नरदेह धारी ।
सिर धारि दूजा नहीं । मानि मेरा कह्या पुरुष नारी ॥

। २ ढिगा । ३ अरसनाम है महल का जहाँ राजा बैठे । ४ बत्ती ।
भूमि का असल मालिक । ६ मसालचन । ७ दाद ।

लोभ लालच मद मोह लागा रहै। आपदा[1] पासि पडपंच ठाणै।
आन उपाधि बहु ताप हिरदै उठै। राग अरु द्वेष मनमान ताणै॥
काम अरु क्रोध भय जोध जोरावरी। जहर अरु कहर जग माहिं जाडा।
काल कव्वाण कसी सिर ऊपरै। मारसी जोय नहिं कोय आडा॥
मात अरु तात सुत भ्रात भ्रत भामिनी। कुटुंब परिवार की प्रीति झूठी।
दास हरिराम कहै खेल वीतां पछै। मेल सोह ऊठियो झाड़ि मूठी॥

(९)

सत्तगुरु देव की गम्म कैसे लहै। कान गुरु फूंकिया मान लीया।
भाव निज भक्तिकी गम्म कैसे लहै। सेव कृत्रिम्म[2] कुल काज कीया॥
साधु सतसंग की गम्म कैसे लहै। जगत जंजालमें फिरत डूला।
ज्ञान विज्ञान की गम्म कैसे लहै। आन अज्ञानमें जात भूला॥
अजपा जाप की गम्म कैसे लहै। जुगति से जाप नहिं करत जाणी।
आतमा देवकी गम्म कैसे लहै। वेद कत्तेव की देखि पुराणी॥
रोम ररंकार की गम्म कैसे लहै। शब्दके संग ममकार होई।
दास निर आस की गम्म कैसे लहै। आस दुनियानकी करत सोई॥
नाम निर्गुण्ण की गम्म कैसे लहै। ताप तिर्गुण्ण के पंथ पुलिया।
उन्मनी ध्यान की गम्म कैसे लहै। नाम कूं लेत है कान सुणिया॥
सुरति अरु निरत की गम्म कैसे लहै। विषय मन वासना रहत माहीं।
अधः अरु ऊर्ध्व की गम्म कैसे लहै। कंठ रसना हृदै ध्यान नाहीं॥
पिंड ब्रह्मंड की गम्म कैसे लहै। खंड फिर मंडका देख देखै।
नाम निर्वाण की गम्म कैसे लहै। वाद बकवाद के राग धेखै॥
वात विदेह की गम्म कैसे लहै। देह में रातदिन रहत राता।
ब्रह्म आनंद की गम्म कैसे लहै। मोह माया तणै मद माता॥
जाण विज्ञाण की गम्म कैसे लहै। शुद्ध बुधि आपणी सार चूका।
दास हरिराम सिर भार कैसे मिटै। भर्म अरु कर्म के दिग्ग ढूका॥

(१०)

गुरु परचै विना ज्ञान कैसे गहै। नाम परचै विना ठाम नाहीं।
जीव परचै विना पीव कैसे मिलै। आप परचै विना क्यूँ न काहीं॥
मन परचै विना ध्यान कैसे धरै। त्याग परचै विना शान्ति नावै।
अधः परचै विना ऊर्ध्व कैसे चरै। नाद परचै विना बिंद जावै॥
अखंड परचै विना अनहद कैसे धुरै। अगम परचै विना निगम बोलै।
साँच परचै विना झूठ कैसे मिटै। दास हरिराम कहै दिल खोलै॥

---

१ विपत्ति, आफत, गजब। २ कृत्रिमःबनावटी। ३ खुशी, आनंद। ४ चलनादि।

(११)

शब्द का शाम बिन सहज दरसै नहीं। तत दरस्याँ बिना मन दैसे।
सुरति उलटी बिना ब्रह्म भेटै नहीं। दिल दरस्याँ बिना साजे दौरे।
देम सरसा बिना नाम निरजै नहीं। आत्मा देव बिन सेव हुवै।
भाव उपज्याँ बिना भक्ति भावै नहीं। साधु दरस्याँ बिना सिद्ध हुवै।
जुक्ति जाणी बिना जोग दरसै नहीं। एक दरस्याँ बिना अनंत धारे।
पार दरस्या बिना पार कैसे लहै। दास हरिराम सब रंग सारे।

छप्पय।

राम बखानै वेद राम कूं दास पुरानै।
राम शास्त्र स्मृति राम शास्त्र सुजानै॥
राम गीता भागवत राम रामायन गावै।
राम विष्णु शिव शेष राम ब्रह्मा मन भावै॥
राम नाम तिहुँलोकमें ऐसा और न कोय।
जन हरिया गुर गम बिना कहा सुण्याँ क्या होय॥१॥
प्रथम गुरू शिव जानि नाम पार्वती दीया।
तासेती नारद नाम तन मन करि लीया॥
दे नारद उपदेस नाम सनकादिक जान्यो।
गुरुतें जनक विदेह पीव उर माहिं पिछान्यो॥
सतगुरुतें शुकदेव मुनि किया भर्म सब दूर।
जन हरिया गुरुगम अगम ताहि लहै कोई सूर॥२॥

छंद इंदव।

[1]अंग सुकोमल पेम सरोवर चूंप सबै चित रंग चितारे।
[2]साधु सती जति राग रसायन सूरक्षमा कवि वास बतारे॥
ज्ञान विज्ञान ये जानि सबै विधि रूप तपो मन मोह धुतारे।
दास कहै हरिराम बिना हरि होय नहीं नर को निस्तारे॥१॥
राग न द्वेष न कोप कहूँ पुनि संशय शोक न पिंड प्रकासे।
[3] तैं मान अमान न को उर कूड़ कपट्ट कों दूरि निकासे॥
घरपा पासि न और धरै दिल सुरति लगी सतशब्द प्रकासे।
र लि कहै हरिराम भजो हरि ज्ञान दियो गुरु होय मँडासे॥२॥

---

१ [illegible] छिकना या कालक्षका तोड़ना। २ आहारविहारादिनियम। ३ इस [illegible]
र भूमि ४ परमेश्वर, धना। ५ सकाश=समीप।

शील संतोष सदा तन शीतल आनंदरूप रहै जहँ ताहीं।
प्रेमे प्रवाह भये उर अंतर श्रौर विकार लिपे नहिं काहीं॥
द्वंद न को सुख दुःख न हिंसा कूड़ कपट्ट दिशा नहिं आहीं।
दास कहै हरिराम बसो वन भावै बसि रहो घर माहीं॥ ३॥
तूं कहा चिंत करै नर तेरी हि तो करता सोइ चिंत करैगो।
जो मुख जानि दियो तुझि मानव सो सबद्दनको पेट भरैगो॥
कूकर एक ही टूकके कारन नित्य घरोघर बार फिरैगो।
दास कहै हरिराम विना हरि कोई न तेरो काज सरैगो॥ ४॥

मनहर छंद।

राजी राव रंक भूप नारी ही पुरुष राजी
झूठी सी बनाई बाजी खुसी सब ख्याल में।
संन्यासी दुहाई दत्त जोगी आदिनाथ जाने
जतीही बखाने जैन रता मता हाल में॥
मोषना शक्ति सेवै वैष्णव अवतार ध्यावै
संभना के वेद पाठ चतुराई चाल में।
पखाई पखी में लोक निरापखी जन कोई
हरिया के राम एक नहीं लाल पाल में॥ १॥

राग विलावल।

पद १

एकै माहिं अनंत है अनंता में एको।
मन महरम कूं पायके हुवा एक मेको॥ टेर॥
अछती माहीं छति है छति माहीं अछती।
वसती माहीं शून्य है शून्य माहीं वसती॥ १॥
या जल सेती लूण हुय लूंणा फिर नीरा।
सतगुरु सेती सिख भया सिखसूं गुरु पीरा॥ २॥
पाणी तें पाला हुवा पाला फिर पाणी।
यूं सीव हुतां जीव हुवा जीव सीव समाणी॥ ३॥
सासामाहिं उसास है उसास में सासा।
हरिरामां हरि मुझि में हरि में हरि दासा॥ ४॥

१ भक्ति कल्पतरु पात गुण, कथा फूल बहु रंग।
नारायण हरि प्रेमफल, चाखत सन्तविहंग॥ १॥

२ दत्तात्रेय।

पद २

ता घर संतोसमाधि है हम सो घर लहिया ।
एक अखंड घट भीतरे अकहा जु कहिया ॥ टेर ॥
रहता से रहता रहै जाता नहिं जाणी ।
रोम रोम रंरकार हुय ताही सुरसमाणी ॥ १ ॥
उलंघ मेरु आकाश में धाए अनहद्दा ।
निशंधे निर्द्वंद हुय धसिया बेहद्दा ॥ २ ॥
पद परमानंद परसिके जीयत ही मूवा ।
अपना आपा पलटिके निजमनवा हूवा ॥ ३ ॥
दृष्टि न आवे मुष्टि में नहिं रूप न रेखा ।
हरिरामा पर शून्य में मुक्ति मिल्या अलेखा ॥ ४ ॥

राग आसा ।

पद ३

संतो दोनूं राह हरामी खून करै विन सामी ॥ टेर ॥
हिंदू घात करै अंजका हरि सूं बेफरमांणी ।
मुख सूं स्वाद करै मनसेती जीव दया नहिं जाणी ॥ १ ॥
पहली तरपण करै गऊको पुण्य दे पाप नसाई ।
पीछे धन धाड़ो करि लावै दुष्ट दया नहिं आई ॥ २ ॥
सहजे जीव जिंद कुं छाँडै ताकूं कहत हरांमा ।
काजी करद गऊ सिर सारे विना दोस विसरामा ॥ ३ ॥
मुई हराम कहै हक मारी पसुवो करत पुकारा ।
काजी जाय कौनसा देसी सांई के दरबारा ॥ ४ ॥
मुहम्मद पीर जन्हें गउ कीन्ही या फिर मारि जिवाई ।
होनहार मिटै नहिं जिव की तूं सिर लै क्यों भाई ॥ ५ ॥
मूई मटिया मुरदार कहत है मारे हक निवाला ।
देख देख दुनिया फर भूली काजी कौन हवाला ॥ ६ ॥
हिंदू के पण जाणि गऊ को सो सूअर तुरकाणे ।
दोऊ मारि भखै मुख माँसा घट वधि कोन वखाणे ॥ ७ ॥
विषय कर्म कूं सब कोउ आधा हरि धर्म सेती पाछा ।
जन हरिराम राम रस पीजै छाडि सुअर गउ बाछा ॥ ८ ॥

१ असंप्रज्ञातसमाधि । २ बकरे का । ३ विनाँ हुक्म । ४ विधिविरुद्ध । ५ बड़ा । ६ कुरबानी, हलाल । ७ मास, हुकमा ।

राग सोरठी।

पद ४

संतो ऐसे लोक निपूती।
अपनो सांई याद न आनै औरां जानि नपूती ॥ टेर ॥
घर घर देवस्थान थापना नरनारी मिल पूजै।
आप स्वार्थ करै इछना[1] परमारथ नूं सूझै ॥ १ ॥
गहली दुनिया ज्ञान विहूणी गोगा पाबू गावै।
पंचपीर[2] पाखंड से राती राम भक्ति नहिं भावै ॥ २ ॥
चौवड आगे भैंसा मारै भलो आपणो मांगै।
झूठे तन का जतन करत है जीव दया नहिं आवै ॥ ३ ॥
आन देव कूं करै इछना पिता पूत के तांई।
जिन पै जीव सकल कूं सिरज्या सो सूझै नहिं सांई ॥ ४ ॥
मुंवे मड़े को चौसो राखै चेतन सेती चोरी।
खालिक[3] छोडि खलक सूं लागा धोकै गोरां दोरी ॥ ५ ॥
आनदेव का आधा देखै आप न देखै मांही।
आदम[4] और नहीं कोई माडो जब जम पकड़े बांही ॥ ६ ॥
लाडो लाडी जाय लड़ायण राख्यूँ भोजक सारे।
जन हरिराम फिरे मन फीटो ध्यान न हरि का धारे ॥ ७ ॥

पद ५

संतो यूंतो भक्ति न होई।
इंद्री हठ निग्रह करि मूवा पारन पहुँता कोई ॥ टेर ॥
नाड़ी निरख भया वैदंगर[5] अनंत औषधी कीन्हा।
सारी धात रसायण करि करि आतम एक न चीन्हा ॥ १ ॥
गायण वायण[6] ताना तूनी करि करि लोक रिझावै।
मुख तैं राग छतीस अलापे धुनि अधिकेरी लावै[7] ॥ २ ॥
वेद पाठ बहु करत विचारा ज्ञान ग्रंथ भरपूरा।
उडत गडत राखत थिर देहा साधु सती सिध सूरा ॥ ३ ॥
ज्योतिष सीख ज्योतिषी हूवा अगम अगोचर भाखै।
औरां कूं ग्रह गोचर लावै आप लैण की राखै ॥ ४ ॥

---

१ इच्छा करना। २ गोगा चौहाण, रामदेव तँवर, हड़बू साँखला, मेहो माँगलिया, पाबू मल्लीनाथ। ३ सिरजनहार। ४ इबरानी और अरबी लेखकों के अनुसार मनुष्यों का आदि प्रजापति। ५ वैद्यराज। ६ बजाना। ७ लगावे।

तप तीरथ मत भरत फलांपा करि मत भरमो भाई।
जन हरिराम राम भज निश्चै नहिं तो परलै जाई॥ ५॥

राग सोरठ।

पद ६

हे जाए जिंदरी तैं जोगियो, न जान्यो मूंडी भेष।
जोगी आदि जुगादिरो, तूं करि मुई कुसेव॥ टेर॥
जोगी एक न आणियो, यहु मन पैठी लाय।
जोगण जोगी बाहिरो, पलमें गई विलाय॥ १॥
चेतन थकी न चेतियो, पीछे भई अचेत।
जो न गहेसी मौन मुख, रसना राम न लेत॥ २॥
सैणाँ सेती रोपणो, असैणाँ सूं गुंहि।
साम सनेही नां किया, औराँ रही अलुँझि॥ ३॥
निरंजन देख्या जोगिया, रही निहार निहार।
सारा तन फिर जोइया, नहीं जोगीरी उनिहार॥ ४॥
जोगी राख्या ना रहै, जोगी रमता राम।
सुरति निरति कर देखिया, जोगी तणा मुकाम॥ ५॥
जननी जन्यो न जोगियो, पिता न इन के कोय।
हरिरामा आतम जोगी, जिंद भीतर जोय॥ ६॥

पद ७

हंसा सुन सरवर रय करे।
चंच विना चुग चुग निजमोती ध्यान न दूजा धरे॥ टेर॥
पाँव रु पंख विना इक हंसो वास किया सुन घरे।
अधर महल जहाँ अजब झरोखा है हरि रास अटर रे॥ १॥
तहाँ नहिं धर अंबर नहिं तारा चंद न सूर संचर रे।
वेद पुराण कथा नहिं कीर्तन वहाँ अण अच्छर उचर रे॥ २॥
नर सुर असुर लोक नहिं नागा दिवस रैन नहिं पर रे।
जन हरिराम मिल्या परहंसै जरा न जम का डर रे॥ ३॥

पद ८

मनवा रामभजन करि चल रे।
तज संकल्प विकल्प कौं तबही आपा हुय निर्मल रे॥ टेर॥

---

१ समूह।

देखि कुसंग पाँव नहिं दीजे जहाँ न हरि की गल रे।
जो नर मोक्ष मुक्ति कूं चाहे संतां बैसि मिसल रे ॥ १ ॥
संशय शोक परे करि सबही द्वंद दूर करि दिल रे।
काम क्रोध भर्म करि काने राम सुमर इक हल रे ॥ २ ॥
मनवा उलटि मिल्या निजमनसूं पाया प्रेम अटल रे।
पांच पचीस एक रस कीना सहज भई सब सल रे ॥ ३ ॥
नख सिख रोम रोम रग रग में तालो एक अटल रे।
जन हरिराम भये परमानंद सुरति शब्द सूं मिल रे ॥ ४ ॥

राग मल्हार।

पद ९

रे नर सतगुरु सौदा कीजे।
इन सौदा में नफा बहुत है एक मना होय लीजे ॥ टेर ॥
मात पिता सुत भ्रात सनेही चौरासी लख हीजे ॥ १ ॥
जे कोइ चाहे रामभक्ति कूं गुरु की शरण गहीजे ॥ २ ॥
गुरुबिन भरम न भाजे भवका कर्म न काल कटीजे ॥ ३ ॥
गुरु गोविंद बिन मुक्ति न जिय की कहियो वेद सुनीजे ॥ ४ ॥
जन हरिराम और सब कूकस राम शब्द सत बीजे ॥ ५ ॥

पद १०

रे नर राम नाम सुमरीजे।
यासूं आगे संत उधरिया वेदाँ साखि भरीजे ॥ टेर ॥
यासूं धू प्रह्लाद उधरिया करणी साँच करीजे ॥ १ ॥
यासूं दत्त मछंदर उधरे गोरख ज्ञान गहीजे ॥ २ ॥
यासूं गोपीचंद भरथरी पैले पार लंघीजे ॥ ३ ॥
यासूं रंका बंका उधरे आपा अजर जरीजे ॥ ४ ॥
यासूं रामानंद उधरिये पीपा जुग जुग जीजे ॥ ५ ॥
यासूं दास कबीर नामदे जम का जाल कटीजे ॥ ६ ॥
यासूं जन रैदास उधरिये मीरां बात बनीजे ॥ ७ ॥
यासूं काल्हू कीता उधरे वास अमरपुर कीजे ॥ ८ ॥
यासूं जन हरिदास उधरिये दादू दीन भनीजे ॥ ९ ॥
जन हरिराम कहे सबही कूं जपताँ ढील न कीजै ॥ १० ॥

१ समूह।

राग बिभास।

पद ११

प्रभुजी प्राण सकल के दाता।
दूजा देव किया दुनिया का तेरै तात न माता॥ टेर॥
जोतिस्वरूप सकल घट जोती रमता राम कहायो।
दृष्टि न मुष्टि सुन्यो नहिं देख्यो आप ऊपनो आयो॥ १॥
सांख्य योग भक्ति सब जान्या एकते एक सवायो।
रामभजन बिन कोइ न सीधा वेद पुराना गायो॥ २॥
तीन लोक में नाम न तुमसा हमसा संत अनेकू।
मुख भरि बोल करूं क्या महिमा रोम रोम रटि एकू॥ ३॥
तुम निर्मल दातार दयानिधि मैं मंगन मल धारी।
जन हरिराम शरण तेरी आयो दोय दुख मेटि मुरारी॥ ४॥

पद १२

प्रेम भक्ति मोहि आपो।
मांग मांग दाता हरि आगे जपूं तुमारा जापो॥ टेर॥
आठ नवे निधि रिधि भंडारा क्या मांगूँ थिर नाहीं।
दे मोकूं हरिनाम खजाना खूट कयहु नहिं जाहीं॥ १॥
इन्द्र अपसरा सुख विलासा क्या मांगूँ छिन भंगा।
दीजे मोहिं परम सुख दाता सेवत ही रहुं संगा॥ २॥
तीन लोक राज तप तेजूं क्या मांगूँ जम त्रासा।
दीजै राज अभै गुरु देया अटल अमरपुर वासा॥ ३॥
आठ पहर औलंग अणघड़ की ता सेती निस्तारू।
जन हरिराम स्वामि अद सेवक एकमेक दीदारू॥ ४॥

राग बहंस।

पद १३

प्राणी करलो राम सनेही।
विनस जायगी एक पलकमें या गंदी नरदेही॥ टेक॥
रातो मातो विषय स्वाद में पंकलित मनमाहीं।
अंधतणा माया जम्भेकर पकड़ि लेगया बाहीं॥ १॥
मूरख मगन भयो माया में मेरी करि करि माने।
अंतकाल में भई बिड़ाणी खूणो जाय मसाने॥ २॥

---

१ औढरदानदैरहद। २ अङ्गुष्ठ।

राग रंग रूप नर नारी सब हुय जाहिंगे खाका।
जन हरिराम रहैगा अम्मर एको नाम प्रह्लाद का ॥ ३ ॥

पद १४

रे नर या घर में क्या तेरा।
जीव जंतु न्यारा घर माहीं सोई कहै घर मेरा ॥ टेक ॥
चीटी चिड़ी कमेड़ी उंदर घर माहीं घर केता।
आया ज्यों सबही उठि जासी वासो दिन दस लेता ॥ १ ॥
मैड़ी मंदिर महल चिणावै मांरे ऊंडी नीवां।
दिन पूगे नर छांडि चलैगो ज्यूं हाली हल सीवां ॥ २ ॥
नव रंग रूप सोलह सिणगारा माया विषै विलासा।
जन हरिराम राम बिन दुनिया होसी खासरं फासा ॥ ३ ॥

राग धनाश्री।

पद १५

मँगन कूँ दान देवो राम राय ॥ टेक ॥
मैं मंगन जन द्वार तुह्मारे राखो हरि शरणाय ॥ १ ॥
मैं भिखियारी भया बापुरा तुम दातार सदाय ॥ २ ॥
दीजै दान अभय पद दाता ऊणत रहै न काय ॥ ३ ॥
आठ पहर औलँग हरि आगै करिहों चित्त लगाय ॥ ४ ॥
रीझैगा जब अमर गुसाँई देगा पटा लिखाय ॥ ५ ॥
खातां कबू न खूटै रोजी दिन दिन अधिकी थाय ॥ ६ ॥
जन हरिराम भक्ति बगसीजै मुक्ति न मांगूँ काय ॥ ७ ॥

पद १६

ऐसे हैं राम गरीब निवाज ॥ टेक ॥
भीर परी प्रह्लाद उबारे हिरण्यकशिपु हण ताज ॥ १ ॥
मा उपदेस दियो ध्रुव सेती अटल वसायो राज ॥ २ ॥
टेर सुनत वेग हरि आये तार लियो गजराज ॥ ३ ॥
जन द्रौपां को चीर वधान्यो भई पंच भरताज ॥ ४ ॥
देवल फेर कियो जन साम्हो भक्तनामदे काज ॥ ५ ॥
दास कबीर घरे लदि बालद आन उतारे नाज ॥ ६ ॥
मीरां जहर कियो चरणोदक राखि भरोसो राज ॥ ७ ॥
सब संतन के कारज सारे भक्त विरद की लाज ॥ ८ ॥

---

१ खसर फसर। २ फरियाद।

जन हरिराम सदा सिध कामा राम सुमर महाराज ॥ ९ ॥

पद १७

परम सनेही प्यारो प्रीतमो देख्यो दिलड़ा के माँहिं ॥ टेक ॥
बादल बादल बीजली ऐसे घट घट राम।
मूरख मर्म न जाणियो पायो नाम न ठाम ॥ १ ॥
सतगुरु तो बोहरा भया सिख सौदागर होय।
हरि सौदो चित बोहरो तोल न मोल न कोय ॥ २ ॥
सतगुरु बोहरा होय के वस्तु अमोलक देह।
सिख साचा गाहक भया मन अरु तन करि लेह ॥ ३ ॥
विषम सरोवर नीर की अति ऊंडी बहु धार।
एक मना तिर जाहिंगा दूजा डूबणहार ॥ ४ ॥
अगम देस अमरा पुरी जहाँ हरिजन का वास।
तहाँ हरिरामें घर किया जन्म मरण तजि आस ॥ ५ ॥

राग गोड़वाड़ी धनाश्री।

पद १८

ब्रह्म विदेही बालिमा जीव नियारो नाहिं।
एक अखंडी रमिरह्यो सून्य सेझड़ियाँमाहिं ॥ टेक ॥
सुरति सुहागिन सुंदरी लाडो शब्द सुजाण।
सदा सनेही ऊपरे वारूं मन अरु प्राण ॥ १ ॥
धरिया कूँ नहिं धारती धुनि अधराँ सूं धारि।
गगन मंडल में घर किया संशय शोक निवारि ॥ २ ॥
जन हरिरामा सुंदरी वर अजरामर पाय।
अरस परस हुय मिलरही आवण जाण मिटाय ॥ ३ ॥

राग आसा।

पद १९

अब नर चेतो रे कहुँ भाई तोकूं बार बार समुझाई ॥ टेक ॥
यो संसार भयो भवसागर ऊंडो अथग अपारा।
बीच वहै विषयन की लहरां के बहग्या के पारा ॥ १ ॥
यो मन जानि भयो बाजीगर बाजी बहु विस्तारा।
सुरति निरति की राँमति मंडी के जीता के हारा ॥ २ ॥
मोह माया की चोंवरि मंडी भरम करम का फंदा।

१ बाल।

जाया जीव सय काल अहेरै के छूटा के बंधा ॥ ३ ॥
तूं नर कौन पसाय नचीतो जम सारीपा जोधा।
जन हरिराम राम भजि लीजे तजिये काम रु क्रोधा ॥ ४ ॥

पद २०

पांडे देख पाखि मति भूलो आयो ओसर दूलो ॥ टेक ॥
एको पिंड एक है पाणी एक जोणि में आया।
यामें ऊंच कौन है नीचा सब अवगत की माया ॥ १ ॥
कुल आचार करी कठिणाई ज्ञान विचार न पाया।
वेद पुराण पढ़े पढ़ि पंडित आपा जग भरमाया ॥ २ ॥
चारों वरण चार आसरमा यामें आतम एक।
जन हरिराम राम सुमरीजे या संतन की टेक ॥ ३ ॥

राग गवडी।

पद २१

संतो देख चाल पग धरिये अंध कूप नहिं परिये ॥ टेक ॥
यो संसार भयो अँध कूपा पाँच विषय पनिहारी।
तृष्णा वरत काम का चड़सा सींचत है मन सारी ॥ १ ॥
माया मोह वण्या कुसेर्टा कूड़ कपट की क्यारी।
नेपै दुख सुख भया अनेका भुगतें नर अरु नारी ॥ २ ॥
तीन लोक अरु भवन चतुर्दश जनम जनम मरि जासी।
जन हरिराम रहैगा सोई राम भजो अविनासी ॥ ३ ॥

पद २२

संतो है इक मरणा सबकूं।
जो कुछ किया जाय अब करणा वेग सुमरणा रबकूं ॥ टेक ॥
धंधे माहिं भयो नर अंधो मनवो माया सेती।
एक राम नाम विन सेरे मुर्रा पड़ेगी रेती ॥ १ ॥
धुंवा गोली ज्यूं घन गहला खिण खिण ऊंडा घालै।
जब ते जीव पकड़ि ले जावै तब धन साथ न हालै ॥ २ ॥
वेद पुरान पढे पढि पंडित खंडित करै न कोई।
मच्छर एक अखंडित ही विन जावै दोझग सोई ॥ ३ ॥
बालापण तरुणा भयो वूढो तोइ न आयो चेती।
जन हरिराम बीज विन पाधाँ कहा निपावै खेती ॥ ४ ॥

---

१ शिकार। २ प्रसाद। ३ दुलह=दुर्लभ। ४ मुरदावन्दी।

पद २३

संतो माया सबकूं लूटै ।
है जगमें ऐसा जन कोई राम नाम कहि छूटै ॥ टेक ॥
काया कोट दसुंदरवाजा ताक भरम का भारी ।
काम करम की भोगल मारी खसि खसि गया संसारी ॥ १ ॥
बलवंत मोह मारको सबमें मन मेवासी राजा ।
दोड़ै माहिं थको गढ बाहिर एक न राखै साजा ॥ २ ॥
आस पास माया को घेरो बिच है जीवका बासा ।
पांच पचीस मोरचा लागा धँचैगा कोइ दासा ॥ ३ ॥
जमरै आय जीव बस कीया देस दुहाई फेरी ।
जन हरिराम एक पल माहीं कोट भया ढिग ढेरी ॥ ४ ॥

पद २४

संतो ऐसा रे कोई सूरै काया गढ कूं चूरै ॥ टेक ॥
छूटा सारशब्दका गोला मुँही मोरचा भागा ।
ज्ञान ध्यान का हाथ खड्ग ले मनसूं लड़बा लागा ॥ १ ॥
साथी सबल मारि संताप कूं मन मोहादिक पाड़या ।
मान गुमान घालि मुँह आगे काम क्रोध कूं ताड़या ॥ २ ॥
नाम किया गढ के बिच डेरा अनहद नाद बजाया ।
एके घरमें राग छतीसूं आनंद मंगल गाया ॥ ३ ॥
जन हरिराम धैति छवि छाजै अटल अमर पद पाया ।
नाम नृपति की फेर दुहाई चहुँ दिस राज जमाया ॥ ४ ॥

राग मारू ।

पद २५

सयाने साच गहीजे हो ।
झूठी माया मोह में कांइ साच गहीजे हो ॥ टेक ॥
मात पिता सुत बांधवा को माने को पूठ ।
म्हारो थारो करतड़ां आप गये सब ऊठ ॥ १ ॥
राम नाम कूं सुमरिये और बिसारो पंथ ।
एक नाईं पाहिरो आम सकल जग अंध ॥ २ ॥
वाद विरोध विकार कूं वेगे माहिं निवार ।
अंध धुंध में बहि गयो बिन गुरु ज्ञान विचार ॥ ३ ॥

---

१ [illegible]

सुमति सुमारग सोध के चालैगा कोइ सूर।
हरिरामा दरगाह में मेटेगा निज नूर ॥ ४ ॥

पद २६

इन मन कूँ जान न दीजै हो।
मनसा साजन को नही तन भीतर लीजै हो ॥ टेक ॥
मन राख्याँ सब रस रहै मन ग्याँ सब रस जाय।
मन ही प्याला प्रेम का मन पीव प्यारा पाय ॥ १ ॥
सेझड़ियां सुख सुंदरी रमै राम दिन रैन।
उर परमानंद ऊपजै अब और न को दुख दैन ॥ २ ॥
काम न काई कल्पना संसा गया नसाय।
नेह लग्यो रहमान सूं दिल दूज न आवै दाय ॥ ३ ॥
मैं मनसूं करि जानती सो मुझि मिलिया आय।
हरिरामा निज मन विचै कुछ अंतर रही न काय ॥ ४ ॥

पद २७

पाऊं मुझ पीतम प्यारा हो।
तन मन सोंपूं तुझिसूं मिल यार हमारा हो ॥ टेक ॥
जो दम अहला जात है सुमरन बिन सारा हो।
आपा उलटि विचारिये ब्रह्म बारंबारा हो ॥ १ ॥
तन जोवन हुय जावसी छिनमाहीं छारा हो।
सासोसास सँभारिये आतम आधारा हो ॥ २ ॥
सुख दुख सब संसार का अंकूर अंकारा हो।
अधर बिना घर को नहीं भर दूभर भारा हो ॥ ३ ॥
जन हरिराम प्रकासिया अंतर उजियारा हो।
दर्शन हरि दीदार का दसवैं हुय द्वारा हो ॥

पद २८

साजन सुख दीजै प्यारा हो।
रोम रोम में रमि रहे पीरन के प्यारा हो ॥ टेर ॥
अबला अति आतुर भई आपनपो दीजै हो।
साँइयां तुझ बिन नाँ सरै मुझ बेग मिलीजै हो ॥ १ ॥

---

१ बडा दयालु। २ गडबड में। ३ कोमल। ४ बेकार, व्यर्थ। ५ दुःसाध्य, मुश्किल

तन मन तेरा तूं धणी मेरा नहिं सारा हो।
भली बुरी सब जीव की तुही जाननहारा हो ॥ २ ॥
मैं मध्यम तन हीनता तुम उत्तम यारा हो।
प्रीति पूरबली जान के होयत नहिं न्यारा हो ॥ ३ ॥
आपा अंतर मेटिके अपनी करलीन्हीं हो।
जन हरिरामैं दोस्ती आतम से कीन्हीं हो ॥ ४ ॥

राग विहागड़ो।

पद २९

देख्या राम निरंजन राया।
शोभा अनँत कही नहिं जावै बाजा अनहद पाया ॥ टेक ॥
काया कोट बन्यो विन टाँची चूनो कली न लाया।
करता पुरुष भया कारीगर छाजा खूब बनाया ॥ १ ॥
यामें एक विदेही पुरुषा इला पिंगला राणी।
सुषुमन सदा सुहागनि सुंदरि मोक्ष मुक्ति जहाँ जाणी ॥ २ ॥
अणभै राज करत अविनाशी जहाँ चित चाकर लाया।
जन हरिराम छाँड़ि हदवासा बेहद वास बसाया ॥ ३ ॥

पद ३०

संतो सतगुरु करण सिहाई।
अंतर माहिं निरंतर देख्या सहजाँ भेद बताई ॥ टेक ॥
सहजाँ पुस्तक वेद पुराना सहजाँ अंछर बाचै।
सहजाँ तार तबल घन तूरा सहज नचइया नाचै ॥ १ ॥
सहजाँ गंग जमुन का मेला सहजाँ करत स्नाना।
सहजाँ देव सेव घट भीतर सहजाँ ब्रह्म ज्ञाना ॥ २ ॥
सहजाँ जोग जुगति भी सहजाँ सहजाँ ऋधि सिधि दासी।
सहजाँ गगन ध्यान धुनि लागी सहज मिल्या अविनाशी ॥३॥
सहजाँ सहजाँ एक भया सब रामनाम कूं जाण्या।
मोक्ष मुक्तिका ना कोई संसा सहजाँ शब्द पिछाण्या ॥ ४ ॥
सहजाँ सुरति निरत भी सहजाँ सहज मंदिर में वासा।
सहज पिया सूं सेझ रमंता सहज किया घर वासा ॥ ५ ॥
सहजाँ इला पिंगला सहजाँ सहजाँ सुषुमणि नारी।
जन हरिराम सहज घटभीतर पाया देव मुरारी ॥ ६ ॥

राग केदारो।

पद ३१

रहियै राम रंग में डूब चंगा राखि तन मन खूब ॥ टेक ॥
सावा पीला लाल सपेता केता रंग लगाया।
जबलग राम रंग नहिं लागा उडताँ वार न लाया ॥ १ ॥
सिरपर सांग पहरि भयो स्वामी छापा तिलक वणाय।
जबलग हरि की भक्ति न जानी संग दुनी के जाय ॥ २ ॥
करि करता पूजे कृत्रिम कूं हेत घणै हितकार।
जबलग प्रेम पियास न हरिका मोह्या मोह विकार ॥ ३ ॥
वेद कथा बहु करत उचारा अनुभव ज्ञान सुणाय।
जबलग आपा खोजत नाहीं भूलो और भुलाय ॥ ४ ॥
बाजा राग छतीसूं सा रे करि तणतण तांत बजाय।
जब अंतर अनुराग न उपज्यो गाय भाँवै मत गाय ॥ ५ ॥
जन हरिराम रची है रंगत करि करि अधिकी ख्याँति।
प्रेम पास दे रंगी पिछोरी लगै न दूजी भाँति ॥ ६ ॥

पद ३२

रहियै नाम में गलतान नहि तो जाहिंगो निसतान ॥ टेक ॥
मारि द्वंदर मेट दुबध्या धारि अधरा ध्यान।
होइ तन मन माहिं परचा दाखिया गुर ज्ञान ॥ १ ॥
शब्द कुहाड़ी सूड़ साँसो सुकृत करि किरसान।
नाम निज कण बहुत नेपै भूख दुःख नसान ॥ २ ॥
मन पवना मिल लियो लाटो सिखर आई साख।
ज्ञान की भरि गुण गादी लदे बालद लाख ॥ ३ ॥
सत्त ताँडे तणो नायक जाय समदाँ पार।
हरिरामां जब आय बैठा आर भार उतार ॥ ४ ॥

पद ३३

जिंदरिया जाहिंगी रहता है हरिनाम ॥ टेक ॥
जिंद धकी नहिँ जाणियो प्राण आपणो पीव।
औघ पड़े कर पारकै जम लेजासी जीव ॥ १ ॥
बालपणे नहिँ जाणियो भर जोबनमें काम।
तन तरुणा वृद्धा भयो तोइ न चेतै राम ॥ २ ॥

---

१ काला। २ एक प्रकार का निकृष्ट सोहा।

हल चल सास सरीर में मन छाँड्यो अहंकार।
पूत पिता परिवार में संग न चालणहार ॥ ३ ॥
पिंड धरती पोढावियो कहु तेरा नर कौन।
राम भजन बिन दूसरा सब ही आवागौन ॥ ४ ॥
हरिरामा सतगुरु मिल्या सतका शब्द सुनाय।
राम नाम कूं सुमरताँ जीव न परले जाय ॥ ५ ॥

पद ३४

गगरिया ज्ञान की जाविच अधरा ध्यान ॥ टेक ॥
काया काची बेलड़ी विच पाका फल जानि।
चाखत ही चेतन भया अंधा रह्या अजानि ॥ १ ॥
नर मूरख निश्चै विना दूर दिसंतर डोल।
सोसाहिब घट भीतरै ताहि न देखै खोल ॥ २ ॥
जग सागर विष लहरियाँ के आवै के जाय।
हरि बेमुख से बहिगया हरिजन पार कराय ॥ ३ ॥
पीव मिलन के कारणे लंघिया अवघट घाट।
अगम अगोचर धामकी सहजाँ पाई वाट ॥ ४ ॥
हरिरामा हद छाँडिके बेहद में लयलीन।
अलख अजोनी आतमा सोई दोसत कीन ॥ ५ ॥

राग सोरठ।

पद ३५

कोई मन मृगे कूं मारे रे।
तन खेती में चरि चरि जाये है नहिं मेरे सारे रे ॥ टेक ॥
मृग एक पाँच है हिरणे लारि पचीस लपारे रे।
मर्म कर्म इनका है संगी जे कोई दूरि विडारे रे ॥ १ ॥
निशि दिन नाम करत रखवाली ज्ञान ध्यान डार धारे रे।
उलटी दृष्टि मुष्टि विन संधे सुरति निरति नहिं टारे रे ॥ २ ॥
शील की बाड़ सँवार चहुँ दिशि प्रेम की पासी डारे रे।
जन हरिराम मारि मन मिरगा सब ही काम सुधारे रे ॥ ३ ॥

पद ३६

माधव का चाकर मैं हूं हो।
आदि अंत मध्य नाम तुम्हारो पार उतारण तैं हूं हो ॥ टेक ॥
मैं दुखिया काटे दारिद्री तेरे कमी न काई।
दीनबंधु दाता सबही का भाग पराजनि पाई ॥ १ ॥

तीन लोक का ठाकुर तुम हो और किसी को जाचूँ।
तुम हरता तुमही करता नाच नचावो नाचूँ ॥ २ ॥
का तो देश दिशंतर डोलूं का बैठूं घर माहीं।
डिग मिग मिटे नहीं जब जीवकी कारज सरै न काहीं ॥ ३ ॥
जो मैं घास करूं बन बनमें मनयो रहण न पावै।
घरमें धका धूम बहुतेरी कहु कैसे बनिआवै ॥ ४ ॥
मुझि औगुणका छेह न कोई तुझि गुणवंता साँई।
जन हरिराम कहे जहां राखो हरि तरवर की छाँई ॥ ५ ॥

पद ३७

संतो करक कलेजा माहीं हरि विन भाजे नाहीं ॥ टेक ॥
सूती ही सुपने में जानूँ सही पधारे सैन।
आधी हुय हुय मिलवा लागी ऊघरि आये नैन ॥ २ ॥
तुम तो अंतरजामी कहियो मुझ माहिंलैरी जानो।
मुश्किल होय हमारे मन में तुम करता आसानो ॥ ३ ॥
राज पाट सुंदरि सुत वित ही दूजा सुख संसारा।
एता परंत न माँगूं कबहू रामनाम विन सारा ॥ ४ ॥
जन हरिराम कहै सो कीजै दीजै दरशन तेरा।
अरस परस मिल मोहि मिटावो आवन जावन फेरा ॥ ५ ॥

पद ३८

जीव रे जुगति सों कर जीण।
पांच पायक पेल पैतेल मान का गढ़ लीण ॥ टेक ॥
सुरति घोड़ा निरति सापेति क्षमा करि खोगीर।
पागड़े पग देत सासा डाक पैलै तीर ॥ १ ॥
चौकेडे चित धारि चौकस लगाम लिवकीलाय।
प्रेम की सिर पहर पाखर अगम दिशि कूँ ध्याय ॥ २ ॥
तन तैरकस बांधि गाढा ज्ञान गह कम्याण।
ध्यान मूँठी धारि उन्मनि शब्द लायो बाण ॥ ३ ॥
साच की बंदूक साहो वचन गोली वाहि।
जामकी सिलगाय जतना ढिग्गं सुंदर दाहि ॥ ४ ॥

---

१ तह। २ पैरोंके नीचे। ३ सांटका, ताजना। ४ घोडेकी काठी के थंदे। ५ घोफाल डुलान। ६ बख्तर। ७ भायाय। ८ कब्जा, काबू। ९ दिग=दिशा या आसपास।

सेल सुमरण सांहि सहजाँ तत्त कर तरवार।
हरिरामा जन यह औसर जीत भावे हार॥५॥

पद ३९

मन रे गुरू का उपकार।
विना कूंची खोल ताला मुक्ति का भंडार॥ टेक॥
भेद विन इक भेद मेघा कह्या सुणिया नाहिं।
सहज ब्रह्म पढै पोथी एक अक्षर माहिं॥१॥
उलट हद कूं चढ़्या वेहद वंकनाली पूर।
इला पिंगला वीच सुषुमण निरख आतम नूर॥२॥
विना बाती ज्योति झिलमिल अखंड दीया लोय।
देह विन विदेह पुरुषा लहै महरम सोय॥३॥
पंख विन इक जान भँवरा विना बाड़ी बीच।
हरिरामा रहु ऐसे न्यारा कमल कैदम न कीच॥४॥

पद ४०

भरम कोई सतगुरु भांजैरे। साचो नाम सुनाय॥ टेक॥
सतगुरु मेरे सिरधणी मैं सतगुरु का दास।
याके पास विलंबिये काटै जम के पास॥१॥
योग यज्ञ जप तप करै अठ सठ तीरथ न्हाहिं।
उर आतम इक तार विन जग के गैलै जाहिं॥२॥
वेद कथा सुन सीख के बाचै देवै विचार।
नाम नियारो रहिगयो करि करि लोकाचार॥३॥
विन गुरु गम निश्चय विना कहै कहावै कूर।
हरिरामा उन जीव सूं देख रहीजे दूर॥४॥

राग जैतश्री।

पद ४१

सोई अभागिया रे हरि सूं नाहिं सनेह।
माया मोह मगन भयो मनमें विषयां सेती नेह॥ टेक॥
रामनाम चेत्यो नहीं वालक तरुणां माहिं।
पीछै पांव थके सिर कंपै अँखियाँ सूझै नाहिं॥१॥
औसर मिनखा देह को मोंदूपणे न भूल।
आयो हीरो गांठि सूं जाहि जतन विन खूल॥२॥

१ छाइनी=फौज। २ चरण।

कूड़ कपट फिर फिर किया जहँ तहँ आया होय।
आवै विरियां अंतकी कारज सरै न कोय ॥ ३ ॥
विणज वटा धन बहु किया अपने स्वारथ जानि।
निज परमारथ बाहिरो आखिर होगी हानि ॥ ४ ॥
घार घार मैं क्या कहूं कह्यो न मानै कोय।
ऐसे कीड़ो आक को अंब कहां रे होय ॥ ५ ॥
या जग माहीं आयके केता काम कमाय।
जन हरिराम भजन बिनपकी न्याय रीता नर जाय ॥ ६ ॥

पद ४२

सोई बड़भागिया रे खालिक से मिल खेल।
द्वंद वाद से रहत है पाँच पचीसूं पेल ॥ टेक ॥
उलटा मन गगन किया आसन दृढ पचि मरना नाहिं।
पिंड ब्रह्मंड अखंड भया परचा सुरति शब्द के माहिं ॥ १ ॥
अष्ट प्रहर आनँद रहै मनमें रोम रोम जस गाय।
जाति न पाँति वरण नहिं वाके तासे ध्यान लगाय ॥ २ ॥
घोधे चित चेतन किया मेला बोलै अनहद बैन।
आतम एक सकल करि देखै दुर्जन ना कोई सेन ॥ ३ ॥
मर्म कर्म संशय नहिं सोगा आसा छांडि निरास।
जन हरिराम शब्द किया सुनमें एक निरंतर वास ॥ ४ ॥

पद ४३

सुणो नर नारिया रे अपनो पीव पुकार।
नहिं तो परले जापसी लख चौरासी धार ॥ टेक ॥
सतगुरु शब्दांसों कहै मनवा ताहि न भूल।
ऐसो सुनमें को नहीं रामनाम से तूल ॥ १ ॥
साधु बिना कुन सीखवै रामभजन की रीति।
बूडा से नर पापड़ा करि करि जग सूं प्रीति ॥ २ ॥
यारी हरि सूं कीजिये दूजा दाय नियारि।
पासो पिउसों खेलतां कदे न आवै हारि ॥ ३ ॥
साधु मिल्या सुख संपज्या उपज्या परम आनंद।
जन हरिराम कहै बलि जाऊं जिन मेट्या दुखद्वंद ॥ ४ ॥

इत्यपूर्णम्।

---

१ समस्त वाणी श्लोक संख्या ४११८।

अथ श्रीविहारीदासजी महाराज का झरझरा।

बज्रत संत ररंकार लगत रग धमक मृदंग तत दम्भ गचकता।
मध मध उत्तम उत्तमभति सुमरण कीर्तन करण कल्याण गचकता॥
कमंडलु जल स्नान धळळ जल निर्मल धरचत अंग तिलकता।
अधःकमल पर अमृत भरंत छकत अकथ छक अकथक थकता॥
ऊर्ध्व घरर घर अंबर घणणण भणण भृंग मध सिंधु झलकता।
विधिविधि बाज अनंत गम उरमध घटघट प्रगट अघट ध्वनि गुनता॥
सब तनु थरर रोम रग ररररर फरर पंचसरि रंग रचकता।
त्रिगटि फिरत पग नूपर घणणण चणणण मधुरिसि टेर पजकता॥
करमद ताल स्तबक जय झरझर थरथर झणणण जींझ झणकता।
त्रिकुटि अघट ध्वनि मुनियर तणणण तार तबल ततकार तनकता॥
शिवपद अचल अमल घट हलललल बदन मलल बपु चन्द झलकता।
नमस्कार पद परम चरित्र नित्य करत विहारी वारी तुमारि पलकता॥१॥

॥ इत्यलम् ॥

श्रीसिंहथल धाम की जितनी पाठ-वाणी की पुस्तकें हैं उन सब का क्रम इस भांति है। श्रीरामानन्दजी महाराज, श्रीजैमलदासजी महाराज, श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीनारायणदासजी महाराज, श्रीहरदेवदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज की वाणी तदनन्तर श्रीकबीर साहब, नामदेवजी, और रैदासजी की वाणी लिखी हुई हैं जिनका नित्य प्रति पाठ होता है। तथा श्रीखेड़ापा धाममें श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज, श्रीपूरणदासजी महाराज, और श्रीअर्जुनदासजी महाराजकी वाणी का पाठ होता है बाकी पाठ पूर्वोक्त ही है। परन्तु अब कई महानुभावों के हृदय में शंका होने लगी है कि श्रीनारायणदासजी महाराज थांभायत थे अतः श्रीसिंहथल पाटगादी पर विराजमान आचार्यों की वाणी से पहिले श्रीनारायणदासजी महाराज की वाणी का यह विपरीतक्रम किस कारण से हुवा। श्रीरामदासजी महाराजनें भक्तमाल में थाँभायतों से पहले पाटगादी ही का क्रम वर्णन किया है। यथाः—श्रीहरिरामदासजी महाराज के वर्णन के बाद—

"रोम रोम सहजाँ लिव लागी। व्यारीदास मिल्या बडभागी" ॥

पाटगादी के अधिकारीजी का वर्णन कर फिर थांभायतों के लिये फरमाया—

"दास नरायण अमी धियाया। आदूराम रामगुण गाया" ॥

इन क्रम वाक्यों से यह निश्चय हुवा कि पहिले पाटगादी का और फिर थांभायतों का वर्णन है।

आगे चलकर श्री दयालदासजी महाराज की वाणी देखते हैं तो पहिला ही क्रम दिखाई देता है। श्रीहरिरामदासजी महाराज के बाद ही

"व्यारीदास अपार बुधि राम संत जस उचर्‌यो"।

फिर हरदेवदासजी महाराज का वर्णन किया—

"हरदेव मेव सतगुरु कृपा भक्त अंश परगट भए"।

इस प्रकार क्रमशः पाटगादी का लेख देकर पश्चात् संवत् १८०६ में सबसे पहिले दीक्षा धारण करने की वजह से थाँभायतों में बडे जो श्रीनारायणदासजी महाराज है उनको स्थान दिया

"निर्मल दशा निर्दोषता नारायणदास विचार बुधि"।

ऐसा नारायणदासजी महाराज के वास्ते लिखकर फिर श्रीरामदासजी महाराज के लिये वर्णन करते हैं।

"भक्त समय भूमंडमें बलि बलि वारंवार नित।
समत अठार प्रसिद्ध वर्ष नवको भल आयक।
शुक्ल पक्ष वैशाख तिथी एकादशि लायक ॥

१ श्रीखेड़ापा थाँभायतों के ठिकानो में भी इसी प्रकार पाठ है। केवल थाँभायत महात्माओं की वाणी अधिक है जिसका कई ठिकानों में अनुक्रम से श्रीदयालुदासजी महाराजकी वाणीका पाठ न करके अपने महात्माओं की वाणीकाही पाठ करलेते हैं।

तादिन उदय उद्योत परस रामगुरु पद पूरा ।
अल्प भाल मिल भाल राम भज उदय अंकूरा ॥
सद्गुरु मिल सद्गुरु सदा दास बाल धर ध्यान नित ।
भक्त समय भूमंडमें बलि बलि बारंबार नित ॥ १ ॥"

यह दास महाराज विरचित भक्तमालका लेख है । आगे चलकर श्रीपूरणदासजी महाराज की वाणी को देखते हैं तो आपने भी यही क्रम दर्शाया है, श्रीहरिरामदासजी महाराजका वर्णन कर फिर

"दास बिहारी विमल वाणी जासु शिष हरदेव ।
तासु मोतीराम शिष रघुनाथ सतगुरु सेव ।
सो निजगेवजी निजभेव पायो भक्ति को निजमेव ॥ १ ॥"

इस प्रकार पाटगादी का वर्णन कर फिर श्रीरामदासजी महाराजके लिये वर्णन करते हैं

"हरिराम शिष धिन रामदासजु और नहिं कोइ आज ।
निरख सब निरताय निर्णय करण जीवों काज ।
सो महाराज जी महाराज मंडमें अवतरे महाराज ॥ १ ॥"

इस प्रकार श्रीरामदासजी महाराज श्रीदयालदासजी महाराज और श्रीपूरणदासजी महाराज के फरमाने के अनुसार पाटगादी के क्रमसे उन उन आचार्यों की वाणीका यथाक्रम पाठ बराबर होता चलाआता है सिरफ श्रीनारायणदासजी महाराज की वाणीके पाठ में पूर्वोक्त आशंका होती है. परंतु यह शंका तो श्रीदयालदासजी महाराजने अपने गुरुप्रकरणके प्रकरण ७ में पहिलेही निवारण करदीहै ।

सं. १८३४ के चैत्रकृष्णा ७ को श्रीहरिरामदासजी महाराजके शिष्योंने श्रीगुरुदेवजी श्रीहरिरामदासजी महाराजका जीवित महोत्सव (मेला) मनाया जिसमें श्रीजी महाराजके सब शिष्य प्रशिष्योंको कुंकुमपत्रिका दीगई सेंकडो कोसों से हजारों यात्री दर्शनार्थ आये जिसके बारे में श्रीरामदासजी महाराजने अपनी वाणी में फरमाया है—

"मेलो कर गुरुदेवजी सब कों लिए बुलाय ।
दर्शन दे पावन किए मिले ब्रह्म में जाय" ॥ १ ॥

श्रीहरिरामदासजी महाराजकी परची का वर्णन—

"धाये जबै महोत्सव मांये जहँ जहँ पूगे समंचार ।
भाई धाई रामसनेही सब आये स्वामी के द्वार ॥
रामप्रताप कमी नहिं काई इहाँ धन ईशतणा भंडार ।
मावै नहीं लोक पुर माहीं ऐसो मचियो थाट अपार ॥ १ ॥

दोहा ।

अष्टसिद्धि नवनिधिजु पुनि, हाजर हुई सो आन ।
श्रीस्वामी के भवनमध्य, सब विधि भए समान ॥ १ ॥"

इस प्रकार बडे धूम धाम के साथ पांच दिन तक मेलेका उच्छवसमाज होता रहा, इसका आनंद तो वेही जानते हैं जिन्होंने उसका अनुभव किया ।

"यह शोभातु समाज सुख, कहत न बने खगेश ।
बरणे शारद शेष पुनि, सो रस जान महेश ॥ १ ॥ (रामायण)

महादेव के समान इस आनंदको पाकर लोक कृतकृत्य हो आज्ञा माँग माँग सब चलेगए। तत्पश्चात् श्रीरामदासजी महाराजभी श्रीजीमहाराज श्रीहरियानंदजी महाराजसे आज्ञा लेकर दिव्य अलौकिक गुरुमूर्तिका ध्यान करते हुए पीछे खेडापे पधार गये ।

जीवित महोत्सव से पंद्रहवें दिन अर्थात् संवत् १८३५ के चैत्र शुक्ल ७ शुक्रवारके दिन श्रीहरिरामदासजी महाराज ने परम धाम पधारनेका दृढ निश्चयकर विरहदुःख से दुःखित श्रीनारायणदासजी महाराज को जिसप्रकार अंतिम शिक्षा, आज्ञा और जो महत्त्व प्रदान किया उनका वर्णन श्रीदयालुदासजी महाराज गुरुप्रकरणमें श्रीकृष्ण उद्धव रूपसे इस तरह करते हैं:—

निजपुर हरिजातौंह प्रसन्न हुए उद्धव कह्यो ।
शब्द ब्रह्म सायँह कलेवर हित कीज्यो मती ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

अर्थात् परमधाम पधारते हुए कृष्णस्वरूप गुरुमहाराज श्रीहरियानंदजी महाराज उद्धवरूप नारायणदासजी महाराजको निज विछोहके कारण अत्यंत दुःखित देखकर आपने उपदेश किया कि शब्दब्रह्म तो अपने साथ है और कलेवर (शरीर) के लिए सोच करना मत । क्योंकि यह तो पांचभौतिक नाशवान् ही है ।

महापुरुषवाक्य है-जो तूं चेला शब्द का शब्द ब्रह्म कर जान ।
जोतूं चेला देहका देह खेह की खान ॥ १ ॥

इसलिये सोच तो तीन ही कालमें नहीं करना चाहिये । फिर आप श्रीमुखसे फरमाते हैं—

"मैत्रेय रामदास सखो एक मेरो यहाँ ।
धीरज ध्यान प्रकाश हरदेवो होवी इसो ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

अर्थात् हे नारायणदासजी, यहां एक मेरा रामदासजी जो है वह साक्षात् मैत्रेय

---

१ "यूं रामै जन मांगी आज्ञा । लागत जान गुरांकी जाग्या ॥
स्वामी कह्यो रहो तुम याहीं । इन कारण ठहरे जब नाहीं ॥
कर परणंत बहुत परहारे । ध्यावे गुरधर देश मँझारे ॥
(परची श्रीहरि॰)

२ इस सोरठेमें सखापद जो है सो उद्धव के लिये ही है क्योंकि भगवान् के सखा उद्धवजी ही थे—

ऋषि हैं बड़े धैर्यवान् हैं औ ज्ञान का प्रकाश करने वाले हैं। तत्रापि उनके लिये भी यही कहना है कि इस नाशवंत शरीरके लिये सोच न करें, और हरदेवजी रामदासजी के तुल्य ही धैर्यवान् और ज्ञान का प्रकाशक होगा; परंतु अभी बालक है इसलिये इसको धीरज दिलासा बंधाते रहना; इस प्रकार फरमाकर जैसे परमधाम पधारते हुए भगवान्ने उद्धवजी के लिये महत्त्व प्रदान किया—

> नोद्धवोऽण्वपि मन्न्यूनो यद्गुणैर्नार्दितः प्रभुः।
> अतो मद्वयुनं लोकं ग्राहयन्निह तिष्ठतु ॥

(श्रीमद्भागवत स्कंध ३ अध्याय ४ श्लोक ३१)

अर्थात् उद्धव मुझसे अणुमात्र भी न्यून नहीं है क्योंकि यह विषयोंसे बिलकुल क्षोभयुक्त न हुआ, इसलिये यह समर्थ उद्धव लोकों को मद्विषयक ज्ञानका उपदेश करता यहीं रहना चाहिये।

दयालुदासजी महाराजने गुरुप्रकरणमें इसका रूपक इस प्रकार वर्णन किया कि उद्धवरूप नारायणदासजी महाराजको महत्त्वता दिराते हुए श्रीजीमहाराज फरमातेहैं—

> *"नारायण आज्ञा आदि, इण संज्ञा रहजे यहां।*
> दासा सेव समाधि, भक्ति प्रेम सुमरण सदा" ॥ (गुरुप्रकरण)

हे नारायणदासजी, तुम्हें आदि आज्ञा है अर्थात् सबसे पहलही पहल तुम शिष्य हुए हो और दासातन, सेवा, समाधि, तथा प्रेमभक्ति और सुमरणमें तुम सदैव बड़े तत्पर हो। अधिकारी विहारीदासजीका तो देहान्त होगया है और हरदेवजी छोटे १० वर्षके बालक हैं और यह गुरुपरंपरा शिक्षा प्रणाली लोकोद्धारार्थ शुरू रखनेकी जरूरत है इसलिये तुमसे अंतिम यही आज्ञा है कि तुम्हारे शिष्य बेशक थांभायत बनें परंतु तुम इन संज्ञामें इसी धाममें निवास करना। इस आज्ञाको सुनकर श्रीनारायणदासजी महाराज विरहसमुद्रमें विव्हल होने लगे तब तो *श्रीजीमहाराजने* फिर उनको दिलासादे आशीर्वादात्मक दो शब्द फरमाए—

प्रमाण—वृष्णीनां प्रवरो मंत्री कृष्णस्य दयितः सखा।
शिष्यो बृहस्पतेः साक्षादुद्धवो बुद्धिसत्तमः ॥
श्रीमद्भागवत स्कंध १० अध्याय ४६ श्लो० १

शुचि बुद्धि संतो सुनो पराधर्म आधार।
कृष्णसखा केहि विधि रहत उद्धव बुद्धि उदार ॥ १ ॥
[illegible] कथा १०

इस प्रमाण से सखा शब्द उद्धव काही संबोधन है।

सोरठा।

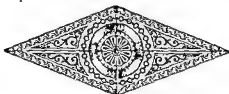
सब मेरा गुरु माँय, रामशब्द राता जिके ।
दूरा कदे न थाय, शब्दरूप मिलशां उठे ॥ १ ॥

दोहा।

आनंदमें रह ज्यो सदा, कहज्यो सुमरण सार ।
रामसनेही रामजन सांचो एह विचार ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

यह अंतिम उपदेश फरमाकर अपनी वाक् वाणी बंधकर मोक्ष पधार गए। इस अंतिम गुरुवाक्योपदेशको धारणकर श्रीनारायणदासजी महाराजने जहाँतक आपका शरीर विद्यमान रहा तहाँतक श्रीसिंहथल निजधाम को छोडकर अन्यत्र कहींभी चरण न धरा। यहीं आप धाम पधारे; सिंहथल देवलोंमें श्रीजीमहाराजके देवलके पास सामनेही आपपर छत्री बनीहुई है। सब थांभायतों का वर्षी मेला अपने अपने स्थान ठिकानोंमें होता है परंतु नारायणदासजी महाराजकी वर्षी तो सिंहथलमें ही श्रीपाट कोठारसे साजानी होती चली आती है।

अब देखिये श्रीहरिरामदासजी महाराजने जिन नारायणदासजी महाराजको इतना महत्त्व दिया और श्रीदयालदासजी महाराजने गुरुप्रकरण में जिनके महत्त्वका पूरा पूरा वर्णन किया क्या ये वचन अप्रमाणिक समझे जा सकते हैं? पाठकवृंद स्वयंही विचार करलें। वास्तवमें महात्माओंकी अनुभववाणीमें पहले पीछेकी शंका करणी ही व्यर्थ है क्योंकि उन महापुरुषोंके अनुभवशब्द हृदयांधकारको मिटानेके लिये साक्षात् सूर्यरूप हैं। उनमें पहिले पीछे क्या।



१ वर्ष तेतीसा चैत सुदि, सातम शुकरवार ।
हरिरामा तन छांडिके, जाय मिले निरकार ॥ १ ॥

अथ श्रीनारायणदासजी महाराज की अनुभव वाणी ।

साखी ।

सत्त गुरू अरु सन्त जन, राम निरंजन देव ।
दास नारायण वीनवै, दीजे परभू सेव ॥ १ ॥
नरिया मन का दुःखड़ा, किसकूं कहै सुनाय ।
मन विषयारी विष दशा, दमदम दौड़यो जाय ॥ २ ॥
मन माया के संग फिरै, अंतर करै विकार ।
मन करि मनको मारिहो, हरि से करूं पुकार ॥ ३ ॥
सद्गुरु की आज्ञा हुई, सुखसैं सुमऱ्या राम ।
नरिया निश्चो पाइयो, तजिया कुल बेकाम ॥ ४ ॥
तीन लोक का राजवी, राम निरंजन राय ।
सतगुरु के परताप तें, नरिया तन में स्याय ॥ ५ ॥
नरिया गुरु आछी करी, चेतन चरण लगाय ।
भरम विषै वह जावता, अपणा जान समाय ॥ ६ ॥
नरिया गुरु ऐसी करी, तैसी करै न कोय ।
जग सागर संग जावतां, राखलियो है मोय ॥ ७ ॥
नरिया रामहिं सुमरियै, टालै जमकी घात ।
आलस ऊंघ न कीजिये, अवसर बीतो जात ॥ ८ ॥
नरिया रसना राम कह, कंठ कमल सुमराय ।
प्रेम पियाला भर पिया, पीवत पाप नशाय ॥ ९ ॥
हिरदै धुन लागी रहै, सुमरै मांहो मांहिं ।
तन सारो चेतन भयो, नरिया सुख उपजाहिं ॥ १० ॥
नरिया नाभी आवताँ, हूआ सास उसास ।
मन तन सबही नाचिया, सुमरन रग रग पास ॥ ११ ॥
रसना नाभी बीचमें, एक अखंडी तार ।
नरिया रोम हि रोम में, सार शब्द झणकार ॥ १२ ॥
नरिया भाग्य उदय हुआ, धनि है विधी अपार ।
रोम रोम में रम रह्यो, एक शब्द ररकार ॥ १३ ॥

अथ चेतावनी प्रारंभः ।

चेतावनि सुन चेतरे, मूरख मन्न गँवार ।
राम निरंजन ध्यायले, दैगो सुक्ख अपार ॥ १ ॥

छन्द जाति ऊधोर।

फिरियो जीव जन्मां माहिं। कित्थे चैन पायो नाहिं।
अब तो मिनख करि मोकूंह। साँई सुमरसूं तोकूंह ॥ १ ॥
नायक जन्म देयो मोहि। हिरदै वीसरूं नहिं तोहि।
फरसूं संत की सेवाक। भज सूं राम कूं देवाक ॥ २ ॥
दीया गर्भ ही में वास। जठराग्नि ही के पास।
कीया देह का आकार। सारा अंग ही सुधार ॥ ३ ॥
उद्दर माहिं कीवी सार। ऊंधे मुक्ख अम्मी धार।
राख्यो मास ही नव जाण। उद्दर वीच ओखो प्राण ॥ ४ ॥
माहीं करत है पुकार। वाहिर लाव हो कर्तार।
मेरे तोहि को आधार। करसूं याद प्रियतम यार ॥ ५ ॥
श्वासोश्वास ही संभार। प्यारा राखसूं उरधार।
अब तो जन्मियो है वाल। दया करी है दय्याल ॥ ६ ॥
दाई कहै सुधन्यो काम। वाहिर काढियो है जाम।
माता हर्ष करि परसैह। वालो कान्ह सो दरसैह ॥ ७ ॥
पिता कहै हुओ न्याल। बेटो कमासी धनमाल।
भाई कहै अपनो वीर। बल तो वंधियो शरीर ॥ ८ ॥
वहिनड़ घाल लेवै पास। राखै मनां मोटी आस।
कड़ुंवै हुओ मंगलचार। गावै गीत बैठी नार ॥ ९ ॥
माता पिता सेती प्यार। सवसें करत है हितकार।
वालो रमै खेलै सोय। माता पिता विकसै जोय ॥ १० ॥
मही दूध पीवै आय। लाडू चूरमाँही खाय।
अब तो साथियाँ में जात। खेलै वहुत ही दिनरात ॥ ११ ॥
कूदै फैल ही करैक। किनता विड्ढी मरैक।
राखै पिताही समझाय। मानै नहीं जोरै जाय ॥ १२ ॥
ख्याली खलकसूं खुशियाल। अब तो वीसऱ्यो गोपाल।
वाँगी पाघ ही झुकाय। चंगा चौलणा लगाय ॥ १३ ॥
आछो करत है शृंगार। जोवै रूप ही दीदार।
हुवो मरद ही मोट्यार। माहीं ऊपज्या विकार ॥ १४ ॥
करमी करै जारी जाय। कसरी काढ़सी जमराय।
राखै जोश ही मनमाहिं। मोसा और कोई नाहिं ॥ १५ ॥
मुखसे बुरो ही भाखैह। सव सूं वैर ही राखैह।
हरि से हुओ गुनहै गार। जमरो मार करसी ख्वार ॥ १६ ॥

गाफिल समझ रे अज्ञाण। माथै रारा पति कूं जाण।
कीयो नीरसे पैदाक। ताकूं भजरे गन्दाक॥ १७॥
दोलत दियी है तोईक। गोविंद गाय रे खोईक।
अब तो व्याहि लायो नार। पारे बांधियो घरबार॥ १८॥
माता पिता से करि जुद्ध। माया बांटि ली बेसुद्ध।
गाडै व्याज ही देवैज। दूणा दाम ही लेवैज॥ १९॥
पिय सूं प्रेम ही भागोक। लोभ र मोह सूं लागोक।
मेहा नारि सें दिनरात। बूडो कामना में जात॥ २०॥
धंदो घिरत रोटी गाय। सोवै नींद ही अघाय।
चाँवल खाय चंगा माल। सांई बिना भूंडो हाल॥ २१॥
हत्या करे मारै जीव। बदला मांगसी रे पीव।
मांसहु खाय पीवै मद्द। हैगो मरद ही गरद्द॥ २२॥
पीवै पोस्त ही को लाय। पोसत पिंड ही को खाय।
पीवै तमाकू अरु भंग। जावै नीच जूणाँ संग॥ २३॥
पांचूं पसरिया अप्पार। कीया कर्म ही हुशियार।
मनवो विषै सूं भरियोह। खाताँ लागके मरियोह॥ २४॥
धंदा छाँड मैला खाज। मांहे सुमर लै महाराज।
निश्चै नाम लै निराश। नहिं तो होय सत्यानाश॥ २५॥
दया दीनता कर भाय। माया राम लेखै लाय।
मन को देत है विचार। समझै नाहिं रे गंव्वार॥ २६॥
कीयो संपदा विस्तार। मेरै पूत पोता नार।
मेरै गाय गोधा अन्न। मेरै ऊंठ घोड़ा धन्न॥ २७॥
आंधो अहूं में डोलैह। मुख ता राम नहिं बोलैह।
कहारे भरमियो भइयाह। हरि से दूर ही रहियाह॥ २८॥
झूठै बंधियो रे जाल। बंदा खायसी रे काल।
हिरदै नाहिं हरि का हेत। मुंहडे पड़ेगी बहु रेत॥ २९॥
कीया श्याम से बचन्न। जासूं झूठ पड़ियो मन्न।
रक्षा करी दोहरी माहिं। तासें प्रीति कीवी नाहिं॥ ३०॥
कीया गुण ही अप्पार। ऐसा भूलग्यो करतार।
जाण्यो नाहिं सिर्जन हार। माथै पड़ैगी बहु मार॥ ३१॥
अब तो जरा जोजर थाय। बूढो अंग ही धूजाय।
कुड़ियो डांगड़ी संभाय। आंखे धुंध लागी जाय॥ ३२॥
बूढा काम होवै नाहिं। आंधा अकल नाहीं माहिं।
नारी कहै कैसे काम। नाखो छानड़ी में धाम॥ ३३॥

बेटा कहि घरमें साल । पापी पड़्यो है बेहाल ।
दाको टूक देवै लाय । गल में ऊलड़े नहिं भाय ॥ ३४ ॥
तन से काम करता सब्ध । आदर भाव करता जब्ब ।
अब तन थाकियो म्हारोक । सब कूं लागियो खारोक ॥ ३५ ॥
यो तो स्वारथी संसार । तेरो नाहिं रे परिवार ।
बूढो दुखी है मनमाहिं । यामें कोई मेरो नाहिं ॥ ३६ ॥
घर में घणो रे कीतोक । कुछ इक चोह रे पूतोक ।
पूतां कियो है विचार । पिता करांगा कुछ लार ॥ ३७ ॥
दुनिया लोक बूझेआय । बूढ़ा व्यथा तेरे काय ।
खोटा कर्म लागा आय । पीड़ा पिंड सारे दाय ॥ ३८ ॥
बूढ़ा राम कहि भाईह । दुखी हायही लाईह ।
अब तो मौतही आईह । संगी कोई नहीं भाईह ॥ ३९ ॥
नर तूं बीसर्‌यो बेकाम । संगी नाहिं कीयो राम ।
चेत्यो नाहिं रे गंवार । आछो जन्म चार्‌यो हार ॥ ४० ॥
नर तूं काहे कूं आयोह । हरि को नाम नहिं पायोह ।
कंठ कूं काल रोक्यो आय । सब ही द्वार मूंधा लाय ॥ ४१ ॥
मारां दियी मांहो माहिं । दोहरो पिंड छूटे नाहिं ।
बहुतो कष्ट ही हुवोह । माया मोह करि मूयोह ॥ ४२ ॥
लोकां घाल कीयो छारि । देखा देखि रोवे नारि ।
जमरो मारि लेग्यो जीव । आडो नाहिं आयो पीव ॥ ४३ ॥

साखी ।

पति सूं ये मुख होय करि, सिख्यो मायाके साथ ।
अज्ञानी नर अहं में, पड़्यो पराये हाथ ॥ २ ॥

छंद जाति ऊधोर ।

अब तो लेचल्या जमदूत । कीयो मार करि धर पूत ।
लेग्या धर्मके आगेह । लेखा सर्व ही मांगेह ॥ ४४ ॥
झूठा बोल कह नहि सोय । सुकृत नाहिं कीयो कोय ।
मैला काम ही कीयाक । हरि का नाम नहिं लीयाक ॥ ४५ ॥
जापर कोपिया जमराय । मारां दियी जाही लाय ।
छातां मारियो पिच्छाड़ । गल में घाल बींस्यो माड़ ॥ ४६ ॥
ऊंधो टेर दीर्घा मार । जम्मां जोर कूटयो जार ।
हिरदे मांहि हरिका लेस । नांख्यो मुगदरां सूं पेल ॥ ४७ ॥

आगै भक्ति का ब्यपार । तपती माय ताता सार ।
ऊपर ताहिके फेन्योह । धंदो घाल करि गेन्योंह ॥ ४८ ॥
माख्यो नरक ऊंडे ताण । कीड़ा तोड़ घूंटै प्राण ।
फूकै पड़ै माथै मार । धंदा तोहि कूं धिरकार ॥ ४९ ॥
सापां विच्छुवां का कुंड । तामें डार दीयो दंड ।
विच्छू साँप पिंजरमांहि । दूतां मुगदराँ की न्हाहि ॥ ५० ॥
ऐसी त्रास दीधी ताहि । प्राणी पड्योही बिललाहि ।
एहा नरक ही भुगताहिं । भुगते बहुत जुग्गां माहिं ॥ ५१ ॥
जग में स्वाद ही लीयाह । साहिब याद नहिं कीयाह ।
यो तन फेर पावै काँय । पड़ियो अनंत ऊंडे माँय ॥ ५२ ॥
धंदा राम सुमन्यो नाहिं । दुःखां पार कैसे पाहिं ।
मनमें राखता अभिमान । जोधा गया मैली खान ॥ ५३ ॥
करता गर्व ही गुम्मान । गया नरक ही निदान ।
ऊंचा महल ही अव्वास । करता नारि नर विलास ॥ ५४ ॥
खाता मेवा मीठा भात । प्याला पीवता निव्वात ।
निर्गुण नाम राता नाहिं । गया गंदकी कै माहिं ॥ ५५ ॥
मांही केई जुग्गां ताहिं । पीछे चोरासी कूं जाहिं ।
जूणाँ अनेक ही भुगताय । जामें ऊपजै खपजाय ॥ ५६ ॥
बहुतो दुःख पावै जीव । सुमन्यो नांहिरे तैं पीव ।
तातें कष्ट तन पायोक । जुग जुग माहिं भटकायोक ॥ ५७ ॥

साखी ।

सतगुरु शरणै ऊबऱ्या, तरिये सुमन्या राम ।
नहिं तो भरम्या जावता, दुख पड़ता वे काम ॥ ३ ॥

छंद जाति ऊधोर ।

शरणै संत के आयाक । भावरु भक्ति ही भायाक ।
सेवा घाल की लागाह । दुविधा दोष ही भागाह ॥ ५८ ॥
रसना नाम ही लीयाह । अमृत कंठ ही पीयाह ।
हिरदै ध्यान ही धरियाह । तन मन सहज थरहरियाह ॥ ५९ ॥
नामी नाम ही निरधार । सुमरण सहज ही उच्चार ।
संगी साँचही धाऱ्याह । झूठा पास ही डाऱ्याह ॥ ६० ॥
[illegible] सूं प्रेम ही ल्यायाह । हरि गुण हेत सूं गायाह ॥
सहजाँ ज्ञान ही आयाह । मनवै शान्ति ही पायाह ॥ ६१ ॥

उलटा पछिम कूं ध्यायाइ । ऊंचा मेरु करि थायाइ ।
वाजा गगन ही वायाइ । निरंजन शून्य ही पायाइ ॥ ६२ ॥
सुन में शब्द ही निरकार । लागी सुरत ही इकतार ।
शुन में सुक्ख ही मइयाइ । दूजा दुःख ही गइयाइ ॥ ६३ ॥
पूरण ब्रह्म ही कूं पाय । सहजाँ रहे सुख सम्माय ।
मिटिये जनम अरु मरणाक । अब तन फेर नहिं धरणाक ॥६४॥
मिलिया नीर में हुय नीर । हंसा चुगत है हरि हीर ।
पाया राम ही महाराज । सरिया सहज जनका काज ॥ ६५ ॥

साखी ।

सतगुरु के परताप तें, नरियै नाम पियाइ ।
प्यासा प्राण पिलाइया, पीवत ही जीयाइ ॥ ४ ॥
और सकल कूं छाँडि करि, परस्या आतमराम ।
नरिया साँसा को नहीं, जाय मिल्या निजधाम ॥ ५ ॥

इति चेतावनी ।

अथ प्राण-परचा प्रारंभः ।

साखी ।

जन्म जन्म जिव भरमियो, माया मोह लगाय ।
भवसागर में डूबताँ, सद्गुरु लियो रसाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

सद्गुरु न्यारा है निर्वांणी । दे दे ज्ञान तारिया प्राणी ॥
सद्गुरु पूरण ब्रह्म पियारा । दर्शन पायाँ मिले विकारा ॥ १ ॥
सद्गुरु एकमेक है साँई । भूल पड़्या जग जाणे नाँई ॥
सद्गुरु सेव करूँ मैं थाँरा । मैं हों तन मन जीय तुम्हारा ॥ २ ॥
सद्गुरु मोकौं शरण उबारो । निशिदिन मेरे लोहि अधारो ॥
सद्गुरु मोकौं डूबत तारो । भव सागर तें पार उतारो ॥ ३ ॥
सद्गुरु ऐसी दया उपायो । दुख दोजख कौं दूर गमायो ॥
सद्गुरु काम क्रोध कौं पालो । मैं तो कपटी विषय विहालो ॥ ४ ॥
सद्गुरु आशा तृष्णा जालो । म्हारी मन माया मोह टालो ॥
सद्गुरु मैं तो अन्ध अज्ञानी । काटो कर्म करो निज ज्ञानी ॥ ५ ॥
सद्गुरु मो मन दौड़ मिटायो । लालच लोभ र मोह हटायो ॥
सद्गुरु देवो शील सन्तोषा । म्हारो मन करो निर्दोषा ॥ ६ ॥

सद्गुरु देवो ज्ञान विचारा । अवगुण मेटि करी निस्तारा ॥
जन हरिरामजु भर्म गमाया । संशय शोक रु कर्म नसाया ॥ ७ ॥

साखी ।

सद्गुरुसिरजन हार है, सब का समर्थ साम ।
अवगुण मेट्या थालजी, दिया मोहि निज नाम ॥ २ ॥

चौपाई ।

राम राम रसना से लीया । प्रेम प्रकाश कंठमें कीया ॥
मनवा माहिं नाम से लाया । हिरदै सुमरण हेत लगाया ॥ १ ॥
नाभी भजन किया अधिकारा । पिंड सारेमें रमै पियारा ॥
रोम रोम में अर्ध उचारा । अंग अंग में है विस्तारा ॥ २ ॥
सहजाँ सुरति शब्द उलटाया । छांड्या देश विदेशां ध्याया ॥
बंकीनाल चलै इक धारा । मेरुदंड में हुआ करारा ॥ ३ ॥
वर्षा सहज वणी चहुँ खंडे । उलटा नीर चढ्या ब्रह्मंडे ॥
सुनसागर के माहिं समाया । अनहद गाज गगन गणणाया ॥ ४ ॥
पहुँता सन्त अमीरस पीया । तृष्णा घटी जिके नर जीया ॥
परब्रह्म से प्राण पिलाया । निशिदिन चरणे ध्यान लगाया ॥ ५ ॥
जित्थे काल कर्म नहिं काया । जित्थे विषय विघ्न नहिं माया ॥
राम निरंजन जग से न्यारा । दिया नरेकों सुक्ख अपारा ॥ ६ ॥

साखी ।

मैं हों प्राणी आपका, कदां न कीजे दूर ।
प्रेम भक्ति नरेकों दियो, राखो नित्य हजूर ॥ ३ ॥

चौपाई ।

शरणै आइ दीनता दाखे । सद्गुरु मोकों चरणाँ राखे ॥
मो गुरु दीया ज्ञान विचारा । भर्म कर्म तैं कीया न्यारा ॥ १ ॥
सद्गुरु मेरे किरपा कीनी । भाव भजन की आज्ञा दीनी ॥
सद्गुरु मनका शब्द सुणाया । मुखसे रामनाम सुमराया ॥ २ ॥
रामनामसा नाम न कोई । भावे मोड़ सकल फिर जोई ॥
राम राम कहि राम मिलावे । लख चौरासी कबहु न जावे ॥ ३ ॥
सद्गुरु ऐसा तत्त्व बताया । निश्चय पक्को राम कहाया ॥
सद्गुरु ऊपर प्राण धँवारी । तन मन शीश चरण में डारी ॥ ४ ॥
रटन जु नेह लगाया । कंठ कमल में सुमरण आया ॥
होर प्रेमरस पाया । पी पी प्राणी कर्म गमाया ॥ ५ ॥
रणकार नाम निज भाया । हिरदै ध्यान धणी का आया ॥
दीनता ज्ञान विचारी । दिलकी दुर्मति दूर निवारी ॥ ६ ॥

चेतन चलकरि नाभि सिधाया । श्वास उश्वासे सुमरण लाया ॥
तन मन सब ही सहज नचाया । भाँति भाँतिका नृत्य कराया ॥ ७ ॥
रग रग भीतर सहज पसारा । रोम रोम में है ररकारा ॥
नाड़ि नाड़ि में जीव जगाया । सारशब्द के संग लगाया ॥ ८ ॥
जीव पलटिया ब्रह्म जु होई । और विकार लिपे नहिं कोई ॥
विरहनि झुरी अती अपारा । अब तो पाया पीतम प्यारा ॥ ९ ॥
दया करी मोहि दुःख मिटाया । चरणकमल के बीच रखाया ॥
ररंकार सहजाँ लिव लाया । प्राणी बहुत परम सुख पाया ॥ १० ॥
पीया ऐसी कृपा जु कीनी । शरणे सदा आपमें लीनी ॥
सहाय करी अरु सुलटा धाया । पातोसाने बंध लगाया ॥ ११ ॥
शिखरपर चढ़िया पूरब ध्याना । ठाम ठाम का पाट खुलाना ॥
सूला ध्यान धरणि कों धाया । पातालां में पन्थ जु पाया ॥ १२ ॥
उलटा शब्द पछिम कों ध्याया । मन पवनाका बंध लगाया ॥
बंकनाल में सहजाँ चढ़िया । मेरु मंझि मेवासा दहिया ॥ १३ ॥
अधः ऊर्ध्व बिच राह चलाया । आकाशाँ में अनहद पाया ॥
चंद्र रु सूर गगन घर लाया । नाद बिन्दु के माँहि समाया ॥ १४ ॥
गहरी गाज गगन गणणाया । वर्षे अमृत प्राण पिलाया ॥
पी पी सन्त शुन्य में धाया । चित शान्ती घर सहज मिलाया ॥१५॥
मन पवना स्थिर दशम द्वारा । पांच पचीसों बंध्या सारा ॥
इड़ा पिंगला सुषमण मेला । सुरति शब्द जहँ हुवा मेला ॥ १६ ॥
शब्द निरंजन काज सुधारा । भवसागर से पार उतारा ॥
शब्द अकेवल ऊपर धारी । अपना ज्ञान रु लिया उपारी ॥ १७ ॥
उत्तर दक्षिण ध्यान मिलाना । पूर्व पश्चिम माँहि समाना ॥
परम शून्य है गरजनहारा । सहजाँ मिलिया प्राण हमारा ॥ १८ ॥
सुखसागर है निर्गुण राया । दर्शन किया परम सुख पाया ॥
त्रिवेणी में पीव निवासा । मिली पियारी लील विलासा ॥ १९ ॥
पती पत्नी प्रीति लगाई । झिलमिल ज्योती से लिपटाई ॥
मन कों धीरज धरणी आई । सहजाँ रहे अखंड लिवलाई ॥ २० ॥
संशय शोक सकलही मेटा । निर्भय निराकार कों भेटा ॥
पूर्ण भया परम सुख पाया । तातें अंतर ध्यान लगाया ॥ २१ ॥

साखी ।

पीव पीवमें मिल रहे, दूर कहाँ नहिं जाय ।
नारिये नाम जु ल्यायकर, सहजाँ रहे समाय ॥ ५ ॥

चौपाई।

तहाँ न त्रिगुण मोह न माया। पांच तत्व नहिं कर्म न काया॥
धरती वायु न आभ न तारा। राति दिवस नहिं अंध न कारा॥ १॥
चंद सूर नहिं इंद न पानी। घाट न वाट न दुज न प्रानी॥
जीव न जिंद न खानि न वानी। काम न क्रोध न लोभ न जानी॥२॥
तीन लोक नाहीं ब्रह्मंडा। सात द्वीप नाहीं नव खंडा॥
सात समुद्र नहिं नदी नहाया। भार अठारह वनी न राया॥ ३॥
चार वर्ण नहिं भटक न मरणा। जत्त न सत्त न भेष न धरणा॥
काज़ी कुरान न वेद न ब्रह्मा। राय न रंक न रूप न रंभा॥ ४॥
योग यज्ञ जप तप नहिं वरता। सेव न पूज न मूर्ति न धरता॥
देव न दानव जोध न जुद्धा। जरा न जाल काल नहिं फंधा॥ ५॥

साखी।

एकाएकी ब्रह्म है, न्यारा सब घट माहिं।
संत सयाना मिल रह्या, दुनिया को गम नाहिं॥ ५॥
बाहिर भीतर एक है, घट घट में निरकार।
जिन पाया जिन सुमरि के, आप उपावनहार॥ ६॥
परचा बहुता प्रानमें, हुआ लेवताँ नाम।
कहनी को आवे नहीं, नरियो मिल्यो मुकाम॥ ७॥

इति प्राणपरचा।

पद १

गुरु दर्शन दो महाराजा।
अब प्राणी पर दया करीजै सार सकलही काजा॥ टेर॥
सगुरु विछड़्याँ दुःख अपारा निशि दिन रहत उदासा।
कृपा करो जन्म बेहाला कलपत पल पल प्यासा॥ १॥
या जग माहीं सबै विडाणा किसका लेऊं अधारा।
हरिरामा निजधाम पहूंता प्राणी करत पुकारा॥ २॥
अवगुण गारो जीव हमारो शरणै करो सहाई।
झूरै तन मन माहिं विचारा सतगुरु चरण लगाई॥ ३॥
दरशन पायाँ पावन होई भय साँसा सब जाई।
कहै नारायण गुरु सुखसागर सुखमें लौ जी मिलाई॥ ४॥

पद २

मोहिं राखो राम हजूरा।
जन्म जन्म के अवगुण मेटो जान न दीजे दूरा॥ टेर॥

दया करी गुरुदेव हमारे रसना राम रटाया ।
कंठ हिरदा विच सुमरण साझ्या प्रेम पियाला पाया ॥ १ ॥
नाभिकमल निज नाम उचार्‌या रग रग में ररंकाय ।
सारशब्द का सकल पसारा तन सारे ततकारा ॥ २ ॥
करता ऐसी कृपा कीनी उलटा ध्यान लगाया ।
दास नारायण निरभै नेड़ा चरणां चाकर लाया ॥ ३ ॥

॥ इत्यंपूर्णम् ॥

अथ श्रीहरिदेवदासजी महाराजकृत ब्रह्मस्तुतिः ।

छप्पय ।

नमो आदि अविगत्त अगम हो आप अरूपी ।
अवरण नदा अपाद लहै कुण थाह सरूपी ॥
ब्रह्म सार निरकार परापर नूर पियारो ।
वसो सर्व जहँ पास नाथ निज आप नियारो ॥
अणदेह अखंड अजन्म अलख आप आप सम आखिए ।
हरिदेव स्वामि सस्तुति निज पावक तन मन पाखिए ॥ १ ॥
ब्रह्म नूर भरपूर सर्व निज रह सधारा ।
दृष्टि सार अनदृष्टि सृष्टि सब आप अधारा ॥
जीवन ज्योति सजीव जीव सबही का पेखो ।
परे सकल अणपार बीच तहाँ सार विसेखो ॥
निज जहाँ नाथ अविगत्त अरस परम परा पुरुषोत्तमो ।
हरिदेव स्वामि निज राम हो नमो नमो निर्गुण नमो ॥ २ ॥
नमो नमो निरकार सकल सिर सार सहाई ।
कला अकल अणवीन महा निज नीति कहाई ॥
देखण हार दयालु सर्व गत घेरा रपाना ।
पोखण भरण विचार करै हरि सहज पपाना ॥
परकार अघट घट घट प्रगट सुघट होय अणघट सना ।
हरिदेव ब्रह्म हित उर प्रणम्य धर्म सबै निज हरि भता ॥ ३ ॥
सुख सागर हरि सोई अगम आगर अति आनँद ।
सुमर्‌यां देह संतोष प्रीति परस्यां परमानँद ॥
अट विधि सादि आधार संत उर धार सदाई ।
सुख आलय दुख हरण तारण शीतल हरि थाई ॥

---

१ इसका अर्थी श्लोक देखा १४० ।

मेटै जु मरण भय जा जनम सोइ मेटै साहिब सचा।
हरिदेव स्वामि हरि है सही कबहू नह काई कचा ॥ ४ ॥
अलख आप अण रूप पलक में विश्व पसारे।
कारण आप कल्याण देव कारज उन सारे ॥
समरथ नाम सचाह थाट ऐसो जग थाप।
घट मठ एह अकार करे हरि सहज किताप ॥
आतम्म आप आपै सहित रूप शक्ति यही रचे।
हरिदेव ताहि प्रणमै सरस साहिब हो साहिब सचे ॥ ५ ॥
सर्व रूप सर्वज्ञ अंग अन अंग अनेका।
संग रहत नहिं संग रंग अनरंग है एका ॥
अंश आप अवतार धार आतम अनपारा।
गुणां रहित सो रूप रहै निज रूप नियारा ॥
कैताहि नूर विधि विधि कला करै नाथ सहजां मही।
हरिदेव दास वंदै हरप सोइ स्वामि समरथ सही ॥ ६ ॥
सहाय करण सब जान एक भगवान अनेका।
विश्व बहुत विस्तार आप सबही में एका ॥
पोषै सहज प्रकार परम तोषै सोइ प्यारे।
आदि मध्य अंत एक आप हरि होय अधारे ॥
निज पीव शीव जीवन सरव मेटै जन जामण मरण।
हरिदेव दास आनन्द करण नमो नाथ अशरण शरण ॥ ७ ॥
हरि गहरा गंभीर धीर हरि समा न होई।
सीर सुधा निज सार पीर पर जाणै सोई ॥
हरि हीरा दीदार पार हरि नको पुणीजै।
हरि वैराट हकीम महा निज मूल सुणीजै ॥
हरि समा आप हरि है सही पाप जीव करि है परा।
हरिदेव पाप सब का अगम ताप तुरत मेटंतरा ॥ ८ ॥
दाता दीन दयालु जीव किरपालु सदाई।
अधः मूँह उरमात होय हरि जहाँ सहाई ॥
नर शिर सोंज सुरेश धणी हरि सहज बढाले।
दई जान नर देह प्रीति पाली सोइ पाले ॥
जीवियां जुगत मूयां मुगत हरि बिन कुण पेमी करै।
...भि सरस्मृति निज तन यापक मन उधरै ॥ ९ ॥
... होय सर्व कदा कबहि सयानो।
... अरथां जन कहै परम अनपार पयानो ॥

हरि सायर गुण तोय कहा सुगुरा नर सारै।
उत्ती आवै प्यास वाव गुण पियै सुवारै॥
निज म्राज ब्रह्म उर विच अवश्य कर उराह अवगाहियो।
हरिदेव धारि तन मन वचन चरण शरण हम चाहियो॥ १०॥

इति।

अथ गुरुस्तुतिः।

गुरु दाता निज ज्ञान ब्रह्म सत्ता विधि वाचे।
अनुभव दत्त अपार लेह सिख जाचक जाचे॥
भक्ति सार सोइ वाच वयण कर देह विचारा।
गुरु यह गम गंभीर कुरँद अघ मेटण हारा॥
आरम कला ऐसी अगम सुगम करै संपति सची।
हरिदेव शिखाँ आनँद सरस वन्दन गुरु याविधि वची॥ १॥
गुरु विन भक्ति न भेव गुराँ विन जुक्ति अजुक्ती।
गुरु विन शिष ना सुखी परम गुरु विना न मुक्ती॥
गुरु विन सुधी न सार पार गुरु विना न पहुंचै।
गुरु विन किरिया कूर नाहिं गुरु विना सुनिहचै॥
गुरु विना काय न है गमा शून्य समा गुरु विन सिको।
हरिदेव कहै गुरु विन तिके जग जल बूहा नर जिको॥ २॥
गुरु विन सर्वे गँवार पुनः पंडित है प्यारे।
गुरु विन कथनी कूर विना गुरु कहा विचारे॥
गुरु विन अर्चा किसी विना गुरु चर्चा अंधी।
गुरु विन नहिं व्यवहार सूंज गुरु विना न संधी॥
गुरु विना जिको गुण है अगुण सर्व सगुण गुरु साहिवी।
हरिदेव दास गुरु के शरण चरण कमल चित चाहिवी॥ ३॥
गुरु है दीन दयाल करै सिखपाल सदाई।
अखै भक्ति परसंग सदा सेवक सुखदाई॥
गुरु पावन गुरु परम जीव सिख जीवन जानो।
गुरु का गुण गंभीर दिपै रस राम दियानो॥
गुरु समा आप गुरु है गहर मिटै सर्व जग वासना।
महाराज गुरां प्रणमूं तुहै यह हरिदेव उपासना॥ ४॥
दर्पण भयाँ मलीन दृष्टि मुख नूर न दरसै।
हीर जवै अणघाट शोभ सागी नहिं परसै॥
पंडित पूत अपाठ असत है जगमें आदर।
इम गति होय हठील मोल के सर्म बेयादर॥

एता जु आदि कुल है सगुण गुरु बिन अगुण गिणीजिया।
हरिदेव मिले जब गुरु सही तब गुणपात सुणीजिया ॥ ५ ॥

इति।

अथ करुणानिधान ग्रंथ प्रारंभः ॥

आदि ब्रह्म जन अनँत के, सारे कारज सोय।
जेहि जेहि उर निश्चो धरे, तेहि ढिग प्रगट होय ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

राक्षस ठगवाने ब्रह्मा छाने जाय लुकाने अपथाने।
मच्छा धरि प्राने जद भगवाने जलवहराने तिहठाने ॥
शंखासुर हाने निगम लराने श्याम दराने विधिसेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी आनंदराशी दोष विनाशी सुखदेतम् जिय० ॥१॥
हिरणख जब ठाढ़े फौन समाढ़े धर पय चाढ़े तब डाढ़े।
वेरा हरिताढे आयस गाढ़े धाराहगाढ़े तन बाढ़े ॥
राक्षस हणि दाढ़े इल गह काढ़े सो थिर माढ़े निजखेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ २ ॥
अवनीके तवरे अगनिज्ञ अवरे मंजा कँवरे विच मवरे।
सिरियादे सिवरे हरि हित हिवरे न्याही निवरे जो जिवरे ॥
स्वालत सुत सँवरे यहँ विन भँवरे खेलत नँवरे निजखेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ३ ॥
प्रहलाद पुकारे जिह्व ररकारे निश्चय भारे गमसारे।
हिरणाकश धारे नहीं हमारे क्रोध विचारे खगसारे ॥
प्रगटे अवतारे खंभ प्रहारे राक्षस मारे जनहेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ४ ॥
वालक ध्रू ध्याये पिता बेठाये माँइ रिसाये दुखपाये।
गम पूछी माये हरि नहि गाये जब लिव लाये वनधाये ॥
धन धाम धमाये सब छिटकाये हरि उर पाये निज हेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ५ ॥
धूमर जब आये शिव भरमाये कँकण लराये उठधाये।
अस्त्रीक जिताये लारि पठाये शंभू माये हरि आये ॥
तिरिया तन थाये नाच नचाये कर शिर आप भसेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ६ ॥
तजि आरण करि जल कारण ग्राह विदारण जुध सारण।
यहँ यारण परे पुकारण उर इक धारण ररकारण ॥

सुनिये जय तारण चक्र सँभारण कपे वधारण करमुकतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ ७ ॥
भवपुञ्ज के अंगा कुलधर्म भंगा गणिकासंगा विपरंगा ।
अजमेल अनंगा दोष उपंगा कर्म कुसंगा नितसंगा ॥
हो तारण चंगा सुतहित यंगा जव जम जंगा छूटेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ ८ ॥
अमरीप भुवाले ऋपि सुखपाले जेहि करआले दुखटाले ।
घट्टी यदु चाले उलटी भाले दुख असराले तपवाले ॥
दुर्वासा पाले सोइ भवनाले राजा टाले दुखदेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ ९ ॥
आये जल अगरे सोइ ऋपि सगरे याहरन लगरे स्रीवगरे ।
तासुं ऋपि झगरे दीनी तगरे जलरत रगरे नय जगरे ॥
प्रिय रजवा डगरे शवरी पगरे परशत सगरे जलनेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ १० ॥
कौरव मद भरिये है पंड हरिये द्रौपां हरिये थरहरिये ।
दुःशासन लरिये गहन कचरिये अंवर परिये कर अरिये ॥
विलखी जय तिरिये तो हरि विरिये चीर पधरिये निजचेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ ११ ॥
कौरव पंड मारे जुद्ध करारे गयंद हजारे जहँ गारे ।
सुत यहँ टीटारे श्याम सँभारे गज घँट डारे दुखटारे ॥
राखे जय सारे इसा मुरारे तो कुण पारे पेखेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ १२ ॥
तुरकज तन साले नर अनभाले वेदपराले ह्व हाले ।
मगचल पयपाले डगडगटाले शूकरवाले हतयाले ॥
कहियो अँतकाले हराम आले जेहि अमजाले छूटेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ १३ ॥
चातक तद ठाणे शिर अरि जाणे पारधि वाणे दिसताणे ।
जाकूँ अहि हाणे शर छूटाणे जाप लगाणे सीयाणे ॥
पप्पीह सु भ्राणे टल विघनाणे हरिहि पिछाणे निजहेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ १४ ॥
निज भक्त नामा अरि पति गामा हते पछामा दिगतामा ।
जीयादे जामा तो तेहि रामा नतो हतामा ह्व कामा ॥
गोगमने धामा लाय लगामा सुगल लिलामा फरिहेतम् ।
म्रह हो अविनाशी० ॥ १५ ॥

अथ प्रश्नोत्तर ।

चौपाई ।

निश्चल कहा ब्रह्म सुखदाई । चंचल कहा माया है भाई ॥
जीवन कहा सुजस भलजानो । मृतक कहा अपयशहि बखानो॥१॥
जागे कौन विवेकी होई । सोवे कौन मूढमति सोई ॥
बडा कौन जरणा उरपेखो । दाता कौन सत्यगुरु देखो ॥ २ ॥
गहिये कहा वचन गुरुमानो । तजिये कहा चिकर्म अज्ञानो ॥
सद्गुरु कौन तत्व के वेता । धन्य कौन ब्रह्म निज हेता ॥ ३ ॥
बुधिवंत कौन जोनिसे टारे । मोक्ष कहा निजज्ञान विचारै ॥
जाने कहा सांख्य विधिसारी । साधे कहा मन पवन विचारी ॥ ४ ॥
शुचिहै कौन दमन इंद्रयांको । पंडित कौन विचारे नीको ॥
कौन विचारै नित्य अनित्य । विषमु कहा गुरु निन्दा चित्त ॥५॥
कृतघ्न कौन प्रीतिही चोरे । नदी कहा तृष्णा बहु बोरे ॥
सार कहा चित शुद्ध विचारै । वचन कहा सत वचन उचारै ॥६॥
अंध कौन अति क्रोध अनीता । सूर कौन मनसे जुध जीता ॥
सुने कहा हरिगुन उपदेश । पीये कहा प्रेम रस वेश ॥ ७ ॥
जिह्वरस कहा वचन सुध भाखै । दान कहा ज्ञानागुण दाखै ॥
शीतल कहा हिरदे सन्तोष । तप्त कहा आह्रों अतिदोष ॥८॥
सुखी कौन जग वांछा तजे । दुखी कौन भव बन्धन भजे
अथिर कहा धन जोबन जानो । गरवा कौन सन्त सो मानो ॥ ९ ॥
नरक कहा गर्भवासा सोई । बन्धन कहा पराधिन होई ॥
मुक्ति कहा स्वाधीन अदोष । भूषण कहा शील सन्तोष ॥ १० ॥
करिये कहा सत्संगति सोई । सन्त कौन उपकारी होई ॥
मित्र कौन अशुभतें टारे । वैरी कौन आलस ठग मारै ॥ ११ ॥
बुरा कौन हरि विमुख विराम । चिन्ता कहा चिन्तवन साम ॥
निंदिये कहा मिथ्या संसार । वँदिये कहा सन्तजन सार ॥१२॥
दुर्लभ कहा प्रीति निरवाय । सुमरिये कहा राम निज राय ॥
विसरिये कहा पर अवगुण सोई । पापमूल कहा लोभहि होई ॥ १३ ॥
दुःखमूल कहा मूर्ख से प्रीति । तीर्थ कहा सत्संगति नीत ॥
शुभहि कहा सबसे मित्राई । धन्य कहा हरिनाम सदाई ॥ १४ ॥
पढ़िये कहा भगवन्त वाच । सुनिये कहा हरि कथा जु साच ॥
जीतिय कहा लोभ अरु मोह । सोभ कहा हरि भजन अदोह ॥ १५ ॥
डरसो कहा कालसो मानो । तरभय कहा विषय सो जानो ॥
वश कहा कीजे मन मतवारो । मीठो कहा जग बाद निवारो ॥ १६ ॥

कबीर जन भारे द्विज दुख धारे पतिया फारे दिश गारे ।
भाये जन भारे प्रेम अपारे पति निज प्यारे बिणजारे ॥
बालक जन हारे आनि उतारे मोह विधि सारे पोषेतम् ।
प्रभु हो अविनाशी० ॥ १६ ॥

रैदासजु लागा हरि प्रतिभागा ब्राह्मन जागा सब सागा ।
जिन से नहिं रागा ना अनरागा ऐसे लागा मंदभागा ॥
काढे उरभागा नाम सुहागा जब द्विजभागा सबसेतम् ।
प्रभु हो अविनाशी० ॥ १७ ॥

मीरां मोह मारी निज हरिप्यारी राणे विचारी विषगारी ।
अंजलि भरि गारी मुखमें डारी हरि हितकारी दुख टारी ॥
भूपति पच हारी निज पलदारी भक्ति करारी भावेतम् ।
प्रभु हो अविनाशी० ॥ १८ ॥

जनसे दुख दाये कुलके ताये रामत भाये नर ध्याये ।
नरसी के नाये अंक लिखाये हुंडी भाये जेहि गाये ॥
साँवल हुय साये दिर्यो भराये सब सुख दाये जनसेतम् ।
प्रभु हो अविनाशी० ॥ १९ ॥

दादू दुख धारे लोक पुकारे मुगल ख्वारे हुय प्यारे ।
कीने सब ख्वारे कुल धर्म हारे एह विचारे घेसारे ॥
जन दिश झोकारे मदमँत भारे चंदन सारे शुंडेतम् ।
प्रभु हो अविनाशी० ॥ २० ॥

तारे जन सारा अधम अपारा असंख्य जुगाँरा नहिं पारा ।
आवे बुध सारा कहै विचारा लहै कुण पारा बिर्दमारा ॥
ऐसे निरकारा जिवके प्यारा तारणहारा उरहेतम् ।
प्रभु हो अविनाशी० ॥ २१ ॥

दोहा ।

जहँ जिव उर करुणा धरे, वहाँ करे हरिपाल ।
अपनो विरद विचारियो, करुणामयी कृपाल ॥ १ ॥
अधम जीव तुम तारिया, तुम ही तारे संत ।
अब किरपा मोपर करहु, यों हरिदेव कहंत ॥ २ ॥

इति ।

तजै वास आसा वनै धाम तथू । रहै संग पाखै सदासोय रथू ।
थपै सोय थानं जहाँ अडिगवासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥३॥
धरै ध्यान ऐसे रहै एक सारा । सवै श्रुती साझन करै कृत्तकारा ।
सवै धर्म सासाज आसा उसासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥४॥
गहै सहज काया महा दोष साझै । वसै गेह न्यारा न को जाल वाझै ।
पखै होय नित्तुं प्रियै देह पासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ५ ॥
सझै आप ऐसा सवै देह सरमा । कला सील करणी करै नोलि करमा ।
मलूं अँतर धोये सवै निर्मल थासी । विना रामनामं न को ब्रह्म वासी ॥६॥
वसै सुरत सोई सदा जीव वासा । सवै अंग साझै गिनै आप सासा ।
रहै माहिं राता सदा जोति रासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥७॥
लहै भेव नासा सुरति स्वास लध्धुं । सरूँ देस सोई करै काम सिध्धुं ।
सवै सरजु फेरै फकै गृह लासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ८ ॥
फुरै धाक सोई करै वहुत फत्तूं । नमै लोक सारा सको सेव नित्तूं ।
सधै सोय मानूं तवै ताँह वासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥९॥
तजै आस तारां सजै सहज तनमां । अनंत सिद्धि आवै सहत सोय अनमां ।
छडै आप काया परा देह धासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१०॥
घहै सोय आपा धरै आनि चित्तूं । नवी देह थापै सही आप नित्तूं ।
जहँ धार भयूं छिनक देह जासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥११॥
धरै सोय धारै इसी दृष्टि ध्याना । वसै वास देवा लहै स्वर्ग थाना ।
रमै संग अमरा सदा रंगरासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १२ ॥
इसी अँतर आना लहै भेव आपा । तनूं दोष पीया तजै सोय तापा ।
करै ऋद्धि निरधं निरिधं ऋद्धि थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१३॥
यही विध्ध वहुती महासिद्धि आवै । धरै सोय अंगू गुणह तास ध्यावै ।
यही भांति आपा महा मान मासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१४॥
करै धंग आचार सुप्यार येता । लजा कर्म किरिया सवै साझि लेता ।
इसा ब्रह्म था मय करै थान आसी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१५॥
पिया वेद पाठी कहा ठीक धारा । सई होम जापा करै धंग सारा ।
सवै आप धर्मा गहै अंग धासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १६ ॥
करै वेदमभ्यास जो छिद्र वेता । यहा सोय पाचीक स्रो ग्यान वेत्ता ।
सवै आप देनाज धोता सुनासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १७ ॥
धरै सोय आपा सही ब्रह्मवाना । पिया लोक सारे तजै ग्यानपाना ।
गिनै आन छोतों इसे देत तासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १८ ॥

बोवै को भव मान वडाई । सारै को निर्मल बुधिताई ॥
सन्त मिल्यां सारा सुख भाई । दुष्ट मिल्यां होवै दुखदाई ॥ १७ ॥
प्रश्नोत्तर माला सुन लीजै । याच विचार हृदय शुध कीजै ॥
ज्ञान सार वरण्यो इन माहीं । ध्यान अज्ञान दियो छिटकाहीं ॥ १८ ॥

दोहा ।

प्रश्नोत्तर माला करी, ज्ञान ध्यान को भेव ।
जासे शुध हिरदो हुवै, दाखै जन हरिदेव ॥ १ ॥
भक्ति ज्ञान वैराग्य भल, बुधि निर्मल चित सार ।
शान्ती हिरदो है सरस, बाचै करै विचार ॥ २ ॥
प्रश्नोतर सन्तां करी, अर्थ वचनका ज्ञान ।
सो हरिदेव विचारके, कियो चौपई ज्ञान ॥ ३ ॥

इति प्रश्नोत्तर ।

अथ आत्मकृते विज्ञानक्रियायाः पंचमः समुल्लासः ।

दोहा ।

विन भक्ती भगतं विविध, जुक्ति सीख सब जानि ।
ऐसा आदिम जग अनंत, अखूं असिध सिध आनि ॥ १ ॥
अक्षर उभय उचार विन, अंतर सोझि अरूप ।
विन पग पारे कया परसि, सागी दृष्टि स्वरूप ॥ २ ॥
त्यागी तन मन तास विन, आस बहुत उर आन ।
पास ग्रह किह विध लहत, नास विना गमनान ॥ ३ ॥
जोग अष्ट साझन जुगति, कष्ट देह अनकाज ।
घयोवृद्ध है सिध विगति, जीव मुगति नै साज ॥ ४ ॥
कारज शुभ करता करम, अशुभ कछू नहिं पह ।
अशुभ शुभ पावै अलप, न को ताहि विध नेह ॥ ५ ॥
करि हठ मारै तन करम, इंद्री भोग अनोह ।
राजकाज को सिध हाकि, भक्ति ब्रह्म नह कोह ॥ ६ ॥

छंद भुजंगी ।

पखै सहज स्यामं रहै भेष सारा । उभै अंक ऐसा रहै जीह न्यारा ।
रहै सोय रत्ता सबै अंग रासी । विना रामनामं न को ब्रह्मधामी ॥ १ ॥
करै जोग भ्रष्टा दिवै कष्ट काया । नसैं अंग सारा नवै देह साया ।
तनू सहज सारै पखै सहजवासी । विना रामनामं न को ब्रह्मधामी ॥ २ ॥

अथ हरिजस लिख्यते ।

राग आसा ।

पद १

रामराय मैं हूं मंगन तेरा तुम दानपती सबकेरा ॥ टेर ॥
तुम दाता मैं जाचक तोरा द्वार खड़ा निज देवा ।
निशि दिन अदिग नूर तुम निरखूं सदा करूं तोहि सेवा ॥ १ ॥
तोरा संत विरद कहे आदू सो सुनि तो ढिग आयो ।
मैं तो मनू पाव उरसेती साचो नाम संभायो ॥ २ ॥
ओलग करूं अभंग हरि आगे विरदवचन निदिधासा ।
याचूं विरद न को उर बीजा एक तुम्हारी आसा ॥ ३ ॥
सुनिहो वचन दीनका साहिब अभै दान मोहि आपो ।
थापे भरज हमी हरिदेवो । फुरंद करमरा कापो ॥ ४ ॥

पद २

राम राय मैं हूं बालक तोरा पिताज तुम हो मोरा ॥ टेर ॥
मैं बालक मति भोर रहे उर कछ नहीं जानूं काई ।
दीनबंधु देख हम शिशु मति आप विरद निरवाई ॥ १ ॥
सेवा साज न जानूं साहिब है मति हीन हमारी ।
करिहो अबै सुधें मोहि करता सो है रजा तुमारी ॥ २ ॥
मैं तो बाल केलि संग राता का तो मन गृह मोहा ।
का तो असन पान पक्वादिक ए उर सदा समोहा ॥ ३ ॥
तुम हो पिता सुधैं हरि नीका मैं मति भोर अजाना ।
जानूं नहीं कछु हम काई तुम हो दयाल सुजाना ॥ ४ ॥
मैं मतिहीन किया अति औगुन तुम मा गिनो दयाला ।
कह हरिदेव पिता हरि सुनिज्यो बाल करो प्रतिपाला ॥ ५ ॥

राग सोरठ ।

पद ३

कृपा निधान करियो कछु कृपा दीन माथे ॥ टेक.
मैं आदि तुम के अंशा । अब विसर गए निजवंशा ॥
गौरे में आय विहावे । प्रभु मोहि दया सुध पावे ॥ १ ॥
तुम जीवों के प्रतिपाला । निज देवा देव दयाला ॥
सब के जो अंतरजामी । अब मोहि दया करि स्वामी ॥ २ ॥

निगूं पाठ गीता करै आप गामी । त्रिपै नेम गङ्गतं मनू धार पामी ।
सहीं देक पाषे मक्ष मैक प्यासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १९ ॥
करै लोय गाथा सुनी भाव सैती । दुनै अंग हत्या घटै नेम सेती ।
परा स्नान मान्या मपै मालिकामी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२०॥
करै ईशपूजा सोई सहकर्मा । गहै हेत भूतादिका अंग सर्मा ।
सपै सेव प्रतिमा करै पाप कामी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२१॥
निपै अंग मक्ता करै सेव नामी । सहै भेय पती तनू मेय सामी ।
विष्णु सेव पूजा हिये हेत ब्यासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२२॥
मनूं हेत नपधा मपै अंग माने । जिके सेव धर्मा सपै अंतर जाने ।
सोई जहाँ सेव मनू माहिं धामी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ २३ ॥
इति पूज्य प्रतिमा मपै अंग माने । मनु हेत सोई नाना भाँति माने ।
प्रिय मेम सहितं सको नेम प्यासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२४॥
सपै देयपूजा करै भांति सारी । नमै हेत हीये सदा रीत न्यारी ।
दिपै देय परचा रमै निकट रामी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२५॥
परै भेद लोका पुले पंथ पारा । सठं अष्टतीर्थं नहिं देह सारा ।
नऊं पंड जोये फिरे ब्रह्म आसी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२६॥
दिये दान विप्रां सधै मानि देवा । सोई भांति सारी करै ख्यात सेवा ।
सधै आधि आपा द्विजां पूज थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२७॥
घटे आधि यहुती यना लोक यांचे । जिके दूर सोमा सुने आय जांचे ।
गुणे लोय गाथा तिके विरद गासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२८॥
सती आग मंझे फरै गेह साचो । कनै लोय केता गिनै नेह काचो ।
जरै आप काया तनू वाच प्यासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२९॥
महाजुद्ध माँहे करै मार माराँ । तजै आस काया सोई सूर ताराँ ।
लहै हेत ऐसे पन्या नेह थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ३० ॥
सधै शुभ कर्मा सोई आप साझै । जके नाम पाखै जपै नेह जाझै ।
इता धर्म आना सधै भुगति आसी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥३१॥

दोहा ।

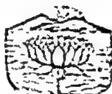
आन धर्म साझै अनँत, मरम पखै निज नाम ।
फय याकूं हरिदेव कह, न को ब्रह्मको धाम ॥ १ ॥
ज्ञान कथै सीखै ग्रंथ, अर्थ अगम का आखि ।
विना भजन नहिँ ब्रह्मघर, ए हरिदेवो दाखि ॥ २ ॥

(संपूर्ण)

द्वितीयपरिच्छेदः ।

धुरमेल ।

बानी सुखदानी विमल श्रीरामदास महाराजकी ।
अद्भुत आनंदकंद द्वन्द मायाकृत कटि है ।
आदि अन्त सिद्धान्त दान्त ररकार सुरटि है ॥
अनआतम अध्यास न्यासकृत निश्चय हट्टै ।
गुरुगम करत विचार पार भवमूल जु पट्टै ॥
मनुगृहि पृष्टि प्रश्न हु करत घनघुमंड मृदु गाजकी ।
बानी सुखदानी विमल श्रीरामदास महाराजकी ॥ १ ॥

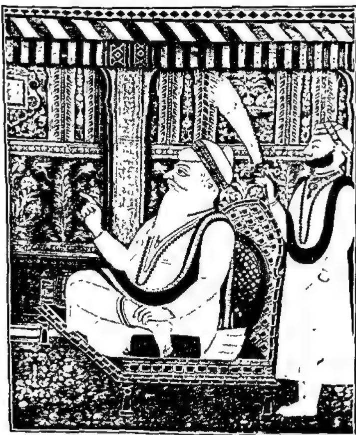


हम दीना दीन पुकारे। तुम सुणौ निरजन हारे॥
थव तारण विरद विचारो। साँई वेग मुझे तुम तारो॥ ३॥
हमसूं कुछ नाहिं लहीजे। तुम देव दया निज कीजे॥
हरिदेव सदा हरि तेरो। चित चरण कमलको चेरो॥ ४॥

पद ४

विरदां निधान यहियो निज विरदां आप केरा॥ टेक॥
अजामेल से अघभारे। अंत पुत्र हेत पुकारे॥
साद सुणे सुण ध्याये। जमदूतां पासि छुडाये॥ १॥
गजराज की सुणि वाणी। सो ध्याये सारंगपाणी॥
निज आगे चक्र चलाये। गज ग्राह के दुःख मिटाये॥ २॥
आगे अधम अपारे। सो अर्ध टेर सुणि तारे।
हम औगुण अधिके यातैं। प्रभु साद सुणो नहिं तातैं॥ ३॥
मुझ औगुण तुझ ना लहियो। सो अधमतार तुम कहियो।
निज आपा विरद विचारो। हरिदेव दया करि तारो॥ ४॥

इत्यपूर्णम्।



Sri Ramdasji Maharaj Achariya
(Khedapa).

॥ श्रीः ॥

पद १

चेतनराम शरण मैं तेरी। अबकी बेर अरज सुन मेरी ॥ टेर.
जो रीझो तो भक्ति मोहि दीजै। अपनो जानि कृपा हरि कीजै ॥ १ ॥
आदि अन्त मध्य सकल पसारा। सोई आतमराम हमारा ॥ २ ॥
अचरज देख अचंभो नाहीं। तेरे जनको संशय नाहीं ॥ ३ ॥
जिके पात तमहीमें पाया। जैमलदास शरण तेरी आया ॥ ४ ॥

पद २

मन रे जो तू राम पिछानै। नेड़ाही सो निश्चय आनै ॥ टेर.
पांच तत्त्व ले किया पसारा। जल स्थल जीव सकल संसारा ॥ १ ॥
तीन भवन के बाहिर माहीं। हरि बिन काज सरै को नाहीं ॥ २ ॥
पालन पोषण करण सँहारण। दीन दया करि दुस्तर तारण ॥ ३ ॥
जेमलदास साच मन भजिये। राम विमुख विषय रस तजिये ॥ ४ ॥

अष्टपदी।

बाद विषयास्वाद तज मन, गहो ज्ञान विज्ञान रे।
और ऐसो नाहिं जगमें, राम सम कोइ ध्यान रे ॥ १ ॥
भूल मत भ्रम माहिं भोंदू, अलख करियै याद रे।
उलटि आपा देख दिलमें, प्रेमबिन पशु बाद रे ॥ २ ॥
नाम निश्चय ध्याय निशि दिन, परम पीतम पाय रे।
शोक संशय मेट, सबही, भेंट त्रिभुवन राय रे ॥ ३ ॥
राम विन विश्राम नाहीं, स्वर्ग मध्य पयाल रे।
जीव हरि विन केम छूटै, कर्म कूटै काल रे ॥ ४ ॥
भलो पूरण भाग तेरो, जिन्द जबलग जाग रे।
आयु दम दम घटै निशिदिन, रहो निजमन लाग रे ॥ ५ ॥
मानुषो अवतार बीछुरि, बहुरि आवै नाहिं रे।
भक्ति विन बहु भया दुखिया, चौरासी लख माहिं रे ॥ ६ ॥
राम घट घट माहिं न्यारा, रूप ताहि न रेख रे।
और आप अमर अलेख रे ॥ ७ ॥
लगन लागी जाय रे।
सहज समाय रे ॥ ८ ॥

॥ श्रीरामो जयति ॥

विभुं पद्मनेत्रं दधानं तुरीयं प्रकाशस्वरूपं नतं विश्वदेवैः ।
श्रुतिज्ञानगम्यं शुभं विश्वनाथं स्तुवे वेदवेद्यं गुरुं रामदासम् ॥ १ ॥

अथ श्री १००८ श्रीरामदासजी महाराजकी अनुभव गिरा प्रकाश ।

स्तोत्रमंत्र ।

सतगुरु सेती वीनती, परब्रह्मसूं परणाम ।
अनँत कोटि सँत रामदास, निशिदिन करूं सलाम ॥ १ ॥
प्रथम वंदि परब्रह्म तित, जिना दिये सिरपाव ।
दुतिय वंदि गुरुदेवकूं, दिये भक्तिके भाव ॥ २ ॥
तृतिय वंदि चिन संतकूं, सब के लागूं पाय ।
परब्रह्म गुरु संतकूं, रामदास नितगाय ॥ ३ ॥
प्रथम वंदि गुरुदेवकूं, जिनाँ दियो ततज्ञान ।
दुतिय वंदि परब्रह्मकूं, अंतर प्रगटे भान ॥ ४ ॥
तृतिय वंदि सब संतकूं तिहूँ ठोरलौं मान ।
नाम तीन वपु एक है, रामदास कह ज्ञान ॥ ५ ॥
नमस्कारतें रामदास, कर्म सबै कटिजाइ ।
जाइ मिलै परब्रह्ममें, आवागमन मिटाइ ॥ ६ ॥
परब्रह्म सब घट रम रह्या, दूजा कोऊ नाहिं ।
रामदास दुविधा मिटी, जब देख्या घटमाहिं ॥ ७ ॥
परब्रह्म गुरु संतकूं, एकमेक दरसाय ।
रामदास या ऊपजी, जदही मुक्ति कहाय ॥ ८ ॥

इति ।

अथ गुरुदेव को अंग ।

अटल वैण गुरुदेव के, रामदास सत मान ।
पता पूठा ना फिरै, गिरिवर गंग ज्ञान ॥ १ ॥
गिरी मेरु अरु गंगकी, या हद ऊली बात ।
रामदास गुरुशब्दतें, मिलै निरंजन नाथ ॥ २ ॥
तिलक राम रस चरणामृत, लिया प्रेम निजनूर ।
सतगुरु शब्दाँ रामदास, दुखदारिद भय दूर ॥ ३ ॥

---

१ निर्मातास्य पद्यस्य पं. दिगम्बरदासः ।

॥ श्रीरामो जयति ॥

विभुं पद्मनेत्रं दधानं तुरीयं प्रकाशस्वरूपं नतं विश्वदेवैः ।
श्रुतिज्ञानगम्यं शुभं विश्वनाथं स्तुवे वेदवेद्यं गुरुं रामदासम् ॥ १ ॥

अथ श्री १००८ श्रीरामदासजी महाराजकी अनुभव गिरा प्रकाश।

स्तोत्रमंत्र।

सतगुरु सेती वीनती, परब्रह्मसूं परणाम।
अनँत कोटि सँत रामदास, निशिदिन करूं सलाम ॥ १ ॥
प्रथम वंदि परब्रह्म नित, जिना दिये सिरपाव।
दुतिय वंदि गुरुदेवकूं, दिये भक्तिके भाव ॥ २ ॥
तृतिय वंदि धिन संतकूं, सब के लागूं पाय।
परब्रह्म गुरु संतकूं, रामदास नितगाय ॥ ३ ॥
प्रथम वंदि गुरुदेवकूं, जिनाँ दियो ततज्ञान।
दुतिय वंदि परब्रह्मकूं, अंतर प्रगटे आन ॥ ४ ॥
तृतिय वंदि सब संतकूं तिहूँ ठोरलौं मान।
नाम तीन वपु एक है, रामदास कह ज्ञान ॥ ५ ॥
नमस्कारतें रामदास, कर्म सबै कटिजाइ।
जाइ मिलै परब्रह्ममें, आवागमन मिटाइ ॥ ६ ॥
परब्रह्म सब घट रम रह्या, दूजा कोऊ नाहिं।
रामदास दुविधा मिटी, जब देख्या घटमाहिं ॥ ७ ॥
परब्रह्म गुरु संतकूं, एकमेक दरसाय।
रामदास या ऊपजी, जदही मुक्ति कहाय ॥ ८ ॥

इति।

अथ गुरुदेव को अंग।

अटल बैण गुरुदेव के, रामदास सत मान।
एता पूठा ना फिरै, गिरिवर गंग ज्ञान ॥ १ ॥
गिरी मेरु अरु गंगकी, या हद ऊली बात।
रामदास गुरुशब्दतें, मिलै निरंजन नाथ ॥ २ ॥
तिलक राम रस चरणामृत, लिया प्रेम निजनूर।
सतगुरु शब्दाँ रामदास, दुखदारिद भव दूर ॥ ३ ॥

१ निर्मातास्य पद्यस्य पं. दिगम्बरदासः ।

दुःख दारिद्र भाजिगे, मिल्या निरंजन नाथ।
ररंकार रट रामदास, कर सतगुरु को साथ ॥ ४ ॥
सतगुरु समँदस्वरूप है, सिख नदी हुइ जाइ।
रामदास मिल एकता, सहजाँ रहे समाइ ॥ ५ ॥
रामनाम तो दुलभ है, जैसी खाँडा धार।
सतगुरु सेती संगरमें, से जन उतरै पार ॥ ६ ॥
सतगुरु सेती प्रीतड़ी, जे करि जाणै कोइ।
रामनाम धन पाइयो, आवागमन न होइ ॥ ७ ॥
राम रसायन भरपियै, सतगुरु सेतीसंग।
रामदास लागा रहै, रोम रोम विच रंग ॥ ८ ॥
रोम रोममें रुचि पिया, मनमें भया मगन्न।
अर्ध नाम रत्ता रहै, रामदास हरिजन्न ॥ ९ ॥
गुरु जैसा गुरुदेव है, रामा दूजा नाहिं।
भवसागरमें डूबताँ, काढ़ि लिया गहि बाहिं ॥ १० ॥
रामदास सतगुरु मिल्या, भरम किया सब दूर।
निशि अँधियारा मिटगया, ऊगा निर्मल सूर ॥ ११ ॥
रामदास गुरुदेव की, मैं वलिहारी जाहिं।
साँसा सबही मेटकै, ब्रह्म बताया माहिं ॥ १२ ॥
रामदास सतगुरु मिल्या, कह्या अमोलक बैण।
गुन सागर साँईं मिल्या, आदि आपका सैण ॥ १३ ॥
सतगुरु का मुख देखतां, पाप शरीरां जाइ।
साधुसंगति सत राम दास, अटल पदी लेजाइ ॥ १४ ॥
ब्रह्म विलासी संत जन, अगमी गम्म अपार।
सायरसा सूभर भऱ्या, सतगुरु सिरजणहार ॥ १५ ॥
सतगुरु मेरे शीशपर, मैं चरणांकी रज्ज।
शरणे आयो रामियो, लख चौरासी तज्ज ॥ १६ ॥
चौरासी का जीव था, शरणै लिया लगाय।
औगुण मेट्या रामदास, सतगुरु करी सहाय ॥ १७ ॥
रामदास की बीनती, साँभलिये गुरुदेव।
और कछू माँगूं नहीं, जुग जुग तुमरी सेव ॥ १८ ॥
रामदास की बीनती, साँभलिये गुरु बाल।
रामनाम सुमराइये, मेटो विषय जंजाल ॥ १९ ॥
किरपा की गुरुदेवजी, शब्द दिया निजसार।
रामदास निशिदिन भजो, छाँडो सबै विकार ॥ २० ॥

भवसागर में डूबताँ, सतगुरु काढ्या आय।
रामदास गुरुदेव जी, सहजाँ करी सहाय ॥ २१ ॥
गुरुकी महिमा रामदास, कहिये कहा बणाय।
हमसा पतित उधारिया, जमपै लिया छुडाय ॥ २२ ॥
गुरुसा दूजा को नहीं, भवसागर के मांहिं।
अनँता जीव उधारिया, मिल्या आदि घर जाहिं ॥ २३ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा पारस जाणि।
लोहाती कंचन करै, तन मन सौंपे आणि ॥ २४ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा सूर प्रकास।
रात अज्ञान मिटाइ कर, अंतर करै उजास ॥ २५ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा पूरण चंद।
सिखकूं अमृत पाइ कर, अमर किया आनंद ॥ २६ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा इंदर जान।
किरपा करि बरषा करी, भीज गया सब प्रान ॥ २७ ॥
दिया एकही रामदास, घर घर दीया जोय।
सबै अंधारा मिटगया, जगै अखंडित लोय ॥ २८ ॥
सतगुरु दीपक रामदास, सिख चल आया पास।
अनँता जीव जगाइया, अंतर भया उजास ॥ २९ ॥
गुरु जैसा गुरु देव है, सांची कहूं विचार।
गुरू मिलावै ब्रह्म कूं, और पार के पार ॥ ३० ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा चंदन होइ।
सिख सेती सीतल करै, विषिया डारै खोइ ॥ ३१ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसी तरवर छाहिं।
सीतल छाया मुक्ति फल, ता बिच केलि कराहिं ॥ ३२ ॥
गुरुकी महिमा कहा कहूं, मोपै कही न जाय।
चौरासी का जीव कूं, मुक्ति देदा लेजाय ॥ ३३ ॥
गोविंदतैं गुरु अधिक है, रामैं कहा विचार।
गुरू मिलावै रामकूं, राम अमर भरतार ॥ ३४ ॥
राम सबंही सिरजिया, लख चौरासी जीव।
रामदास सतगुरु बिना, परस न पावै पीव ॥ ३५ ॥
लख चौरासी जोनिमैं, सबही बंध्या जीव।
सतगुरु बंद छोडाइ कर, मेल्या आदू पीव ॥ ३६ ॥

रामदास सतगुरु मिल्या, मिलिया राम दयाल।
सुख सागर में रमरह्या, मैट्या विषय जंजाल ॥ ३७ ॥

इति।

अथ गुरुवंदन को अंग।

गुरु वंदनतें रामदास, मिटजाइ भाल जंजाल।
जाइ मिले परब्रह्ममें, आठ पहर मत वाल ॥ १ ॥
गुरुकूं वंदन कीजिये, मुख सूं कहिये राम।
रामदास सो सिक्ख जन, पावे आदू धाम ॥ २ ॥
सतगुरु वंदन अधिक फल, जाका वार न पार।
रामदास मैं क्या कहूं, कहिगए संत अपार ॥ ३ ॥
सतगुरु वँदियाँ अधिक फल, चौरासी मिट जाइ।
स्वर्ग नरक दोनों मिटे, जामण मरण मिटाइ ॥ ४ ॥
सतगुरु वँदियाँ रामदास, टलि जाइ कोटि विकार।
करम कटै सवजीव का, मिलै मुक्ति के द्वार ॥ ५ ॥
सतगुरु वँदियाँ वाहिरो, राम न पावै कोइ।
चौरासी में रामदास, जीव जूण बहु होइ ॥ ६ ॥
वंदन कर निंदा करै, जाका मूंह मदीठ।
रामदास वा जीवकूं, जम दरगा मे पीठ ॥ ७ ॥
वंदन कर निंदा करै, भुगतै नरक दुवार।
रामदास वा दुःख को, है कोइ वार न पार ॥ ८ ॥
किरपा की गुरु देवजी, अंतर किया उजाल।
रामदास निंदा कियां, आँन झपेटै काल ॥ ९ ॥
सतगुरु जो सिख ऊपरै, कोप करै सोवार।
सोही सिख शीतल हुवै, आणै नहिं अहँकार ॥ १० ॥
सतगुरु लोभी लालची, क्रोधरूप बहु होइ।
वलिराजा प्रह्लाद कूं, देख निवाज्या सोइ ॥ ११ ॥
सतगुरु का गुण अनंत है, औगुण एक न जाण।
रामदास घट भीतरै, आपा लेह पिछाण ॥ १२ ॥
सतगुरु दीया रामनाम, निराकार निरवाण।
या में औगुण को नहीं, आपालेहु पिछाण ॥ १३ ॥
पारसरूपी सतगुरु, सिख है लोह निराट।
रामदास मिलियाँ समा, पलट और ही घाट ॥ १४ ॥

लोह पारस की कथा कहूं, सतगुरु अगम अपार।
तन मन सौंप्या रामदास, करै आप दीदार ॥ १५ ॥

इति।

अथ गुरुधर्म को अंग।

सतगुरुसूं पूठा फिरै, जाके अंतर काण।
रामदास ताकूं येयां, बहुती हूंगी हाण ॥ १ ॥
सतगुरु सूं पूठा फिरे, सो अपती बहु जीव।
अति निंदा गुरुदेव की, परत न पावै पीव ॥ २ ॥
निंदक का मुंहडा बुरा, दीठां लागे पाप।
गुरुद्रोहीसूं रामदास, अलगा रहिये आप ॥ ३ ॥
गुरुधर्मी का रामदास, दर्शण कीजे जाइ।
दर्शण सूं अवगुण मिटै, कर्म विलै हुइजाइ ॥ ४ ॥
सतगुरु बड़ सिख सालहि, दपी धरणि में आइ।
रामदास वड़ लग गया, गगन गरजिया जाइ ॥ ५ ॥
गगन गरजिया रामदास, फूल्या सून्य मँझार।
डाल घली घड़ं कूंटमें, सिख फल लगे अपार ॥ ६ ॥
डाल घली घड पेडतें सब बड़ का विस्तार।
रामा पेड जु सींचिया, सब हरियाली डार ॥ ७ ॥
विट लागा सो नीपना, जल पड़ियां फँद जाइ।
गुरु त्यागे हरि कूं भजे, निश्चय नरकां जाइ ॥ ८ ॥
गुरु हितकारी रामदास, दिन दिन दूणा थाइ।
उलटि समावै ब्रह्म में, ओत पोत हुइ जाइ ॥ ९ ॥
सिख जो ऐसा चाहिये, रह सतगुरु सूं रत्त।
सतगुरु जो न्यारा रहै, सिक्ख न छांडै तत्त ॥ १० ॥

इति।

अथ सुमरन को अंग।

प्रथमहि सुमरन जीभसूं, चोड़े करो पुकार।
दो अक्षर रट रामदास, साँई साद सुणाइ ॥ १ ॥
सुमरन कीजे रामदास, रोम रोम भरपूर।
सुमरन सूं साँई मिलै, सेवक सदा हजूर ॥ २ ॥
रामदास सुमरन कियां, रोम रोम सुख स्वाद।
माहि माहि स्वर सांभलै, घुरै अनाहद नाद ॥ ३ ॥

रामदास सुमरन कियौ, सुमरन निपजै साधि ।
सुमरनसैं सुन गढ़ चढ़े, सुमरन लगी समाधि ॥ ४ ॥
श्रवणों सुनियों रामदास, मुखसूं सुमर्यौ राम ।
रसना हिरदै नाभि चित, सहज किया विश्राम ॥ ५ ॥
रसना सूं सुमरण किया, अंतर लागी तार ।
रोम रोम चित रामदास, ऊठन एक पुकार ॥ ६ ॥
गुप्त रोली सुमरण किया, मन आयो इतबार ।
दूजा सब ही झूठ है, रामा सुमरण सार ॥ ७ ॥
रामा सुमरण सार है, श्वासोच्छ्वासाध्याय ।
किया करम सबही कटै, दूजा लगै न आय ॥ ८ ॥
केताही कुकरम किया, जाण्यां नहीं विचार ।
सरब पाप पल में कटै, रामनाम चितधार ॥ ९ ॥
कुकरम करूं न चित धरूं लगी शब्द की चोट ।
सतगुरु शरणें रामदास, पाई हरि की ओट ॥ १० ॥
बुरा भला सब तुम किया, घटमें बैठे राम ।
मैं तैं मिटगी रामदास, सहज मिल्या निज धाम ॥ ११ ॥
बुरा किया सब मैं किया, तुम केवल हो राम ।
रामदास की वीनती, मेटो सकल विराम ॥ १२ ॥
रामदास सुमरण विना, फंदे न छूटे जीव ।
अनँत जन्म जोइ पुण्य करै, तोइ न पावै पीव ॥ १३ ॥
पाप पुण्य सूं रामदास, स्वर्ग नरक में जाय ।
सुमरण विन छूटै नहीं, कोटिक करो उपाय ॥ १४ ॥
सुमरण एको सार है, दूजा आलजंजाल ।
रामदास सब सोझिया, हरिबिन परलै काल ॥ १५ ॥
हरि सुमरण कर लीजिये, सास उसासाँ ध्याय ।
रामदास सुमरण कियां, साहब मिलसी आय ॥ १६ ॥
सब इन्द्री सुमरण करै, मन ही करै पुकार ।
रामदास अब पाविया, सुखसागर भरतार ॥ १७ ॥
रामदास सुमरण तणा, विवरा देउँ बताय ।
घट माँहीं अजपा हुवै, सुणो सकल चित लाय ॥ १८ ॥
रामदास सुमरण कियाँ, प्रथम जगी इक नार ।
सहस्र एक चौवनमहीं, शब्द करत गुँजार ॥ १९ ॥
कंठ में प्रेम प्रकासिया, हृदै होत धमकार ।
नाड़ि नाड़ि चेतन भई, मन आयो इतबार ॥ २० ॥

नाभि कमल में संचऱ्या, सहस्र चार परकास।
नाडि़ नाडि़ न्यारी घुरै, सुणत रसिया दास ॥ २१ ॥
बहत्तर नाड़ी बंक की, मिली बंक में आय।
रामदास सब घेरकै, उलटा अभर भराय ॥ २२ ॥
नाडि़ सवासै एक ही, सहस्र पांच परवाण।
रामदास घट भीतरै, ए बहि नाडि़ बखाण ॥ २३ ॥
मही नाडि़ दूजी घणी, तीन लोक विस्तार।
रामदास तन सोझकर, सब का करो विचार ॥ २४ ॥
नाड़ी बहत्तर हजार है, सब ही तनके माहिं।
सबहि मिलाणी तीनसूं, त्रिवेणी में जाहिं ॥ २५ ॥
इड़ा पिंगला सुषमणा, त्रिवेणी के तट्ट।
रामदास ता ऊपरै, मंड्या सहज ही भट्ट ॥ २६ ॥
बाँसे चल आधा गया, परम सून्य के माँय।
गगन कूप में रामदास, अमृत भरभर पाँय ॥ २७ ॥
नाडि़ नाडि़ अमृत झरै, पीवत सबै सरीर।
रोम रोम बिच रामदास, चलत सुखम की सीर ॥ २८ ॥
साढ़ा तीन करोड़ में, एक होत ररकार।
सहजे सुमरण रामदास, ताका अंत न पार ॥ २९ ॥
उर अंतर नख सिख विचै, एक अजप्पा होय।
राम दास या संत गति, साधू जाणै कोय ॥ ३० ॥
जाप कियाँ मुख द्वार तें, रसना चाली सीर।
अजपा सुमरण घट विषै, को जाणै गुरु पीर ॥ ३१ ॥
गगनमंडलमें रामदास, अनहद घुरिया नाद।
रोम रोम साँई मिल्या, सुमरण पायो स्वाद ॥ ३२ ॥

इति।

अथ विरह को अंग।

नैण हमारा रामदास पिय बिन रह्या विसूर।
अंतर दारुण विरह की तन इंद्रिय मनझूर ॥ १ ॥
अंतर दारुण अति घणी, पिंजर करै पुकार।
नैण रोय राता किया, तो कारण भरतार ॥ २ ॥
घाव कलेजे भाल बिन, रामा सालै नित्त।
रात दिनां खटकत रहै, तुझ कारण मुझ मित्त ॥ ३ ॥
विरह भाल उरमें लगी, अंतर सालै नित्त।
रामदास सुख उपजै, आप मिले मुझ मित्त ॥ ४ ॥

बांझ नारि के पुत्र बिन, नित झूरत दिन जाय।
रामदास यों तुझ बिना, तालाबेली माँय ॥ ५ ॥
निरधन झूरै धन बिना, फल बिन नागरबेल।
रामा झूरै राम बिन, विरही सालै सेल ॥ ६ ॥
विरह आय घायल किया, रोम रोम में पीर।
रामदास दुखिया घणा, हदे खटूके तीर ॥ ७ ॥
कुंजर झूरै वन्न कूं, सूवा अंबा काज।
विरहिन झूरै पीव कूं, कवै मिलो महाराज ॥ ८ ॥
वैनड़ झूरै वीर कूं, वर कूं झूरै नार।
रामा झूरै पीवकूं, दरसण द्यो भरतार ॥ ९ ॥
दरसण कारण रामजी, तलफतहूं दिनरात।
रामा पिव पायो नहीं, आन हुवो परभात ॥ १० ॥
आठ प्रहर चोसठ घड़ी, झूरत मेरा जीव।
रामदास दुखिया घणा, दरसण दो अब पीव ॥ ११ ॥
तुमरे दरसण बाहिरो, सब दिन अहला जाय।
सो दिन नीका होयगा, तुमहि मिलोगा आय ॥ १२ ॥
तुम मिलवाके कारणै, रामा झूरै सास।
तालावेली जीवमें, कद पूरोगे आस ॥ १३ ॥
विरह आय अंतर बसै, सतगुरु के परताप।
रामदास सुख ऊपजे, आय मिलोगे आप ॥ १४ ॥
तुमरे मिलियाँ बाहिरो, दाझी बारंबार।
रामा विरहन कारणै, आण मिलो भरतार ॥ १५ ॥
तुम मिलियां बिन मैं दुखी, विरही ऊठै लाय।
रामदासके तुम बिना, दम दम अहला जाय ॥ १६ ॥
रामा स्वारथ कारणै, झूरै सब संसार।
मैं झूरूं परब्रह्म कूं, अंतर द्यो दीदार ॥ १७ ॥
अंतर दारुण विरह की, तुमकारण निज राम।
तुमरे दरसण बाहिरो, सकल अहूणो काम ॥ १८ ॥
तुम मिलवा के कारणै, विरहन वूझी धाय।
राम तणो संदेसड़ो, कहो बटाऊ जाय ॥ १९ ॥
बाट बटाऊ सब थक्या, थकिया मेरा प्राण।
रामदास तन भीतरै, विरहकु लागो बाण ॥ २० ॥
पाँव पंख मेरे नहीं, मैं अबला घर मांहि।
मिलवा की श्रद्धा नहीं, झुरणो पिंजर मांहि ॥ २१ ॥

मो झुरवाको जोर है, दूजो कछु न होहि ।
तुम हो जैसा कीजिये, दरशण दीजे मोहि ॥ २२ ॥
विरह विलापां कर रही, दुखी होय बहु जप ।
रामदास निजपीव कूं, झूरे रैण र दिव ॥ २३ ॥
रैण विहाणी जोवताँ, दिन भी वीतो जाय ।
रामदास विरहिन झुरे, पीव न पाया माँय ॥ २४ ॥
रामदास विरहिन दुखी, दुखी होत बहु जिंद ।
दुखी जीव करुणा करे, तोहि विना गोविंद ॥ २५ ॥
रामदास कह विरहिनी, जाल करूं तन छार ।
हरि दरसण पायाँ विना, धृक जीतव जम्मार ॥ २६ ॥
धिक हमारा जीविया, माँग करूं तन भुःख ।
रामदास सांई विना, रोम रोम में दुःख ॥ २७ ॥
विरही तणो संदेसड़ो, सुणो पियारे मित्त ।
तुम विन झूरे रामियो, सास उसासा नित्त ॥ २८ ॥
तुम आवो अब रामजी, तुम विन दुखिया जीव ।
तुम विन झूरे विरहिनी, परम सनेही पीव ॥ २९ ॥
तुम मिलवा के कारणे, दिन दिन दूणी धाय ।
रामदास विरही भया, अंदर लागी लाय ॥ ३० ॥
आठ प्रहर विरही जगे, जाका मोटा भाग ।
रामा प्रीतम कारणे, उनमुन मति वैराग ॥ ३१ ॥
अंतर दारुण विरहकी, ताकूं लगे न कोय ।
रामदास सो जाणसी, जा घट लागी होय ॥ ३२ ॥
लागी जबही जाणिये, आठों पहर विसूर ।
रामा प्रीतम कारणे, रोम रोम सब झूर ॥ ३३ ॥
पिव मिलवाके कारणे, विरहिन ऊठे लाय ।
रामदास कैसे मिटे, पीव विना दुख पाय ॥ ३४ ॥
तुम सुखसागर गोंइयाँ, विरही दाझ मिटाय ।
दव लागो तन भीतरे, तुम मिलियाँ सुख पाय ॥ ३५ ॥
रामदासके विरह की, अंतर लगी पुकार ।
रात दिनां लागी रटे, सतगुरु के उपकार ॥ ३६ ॥
इति ।

अथ मन मृतक को अंग ।

रामदास मन मारिया, मार र कीया स्वार ।
मूवां पीछे भूत हुए, फेर स्वार को स्वार ॥ १ ॥

रामदास मन मारिया, मार र दीया थाल।
घर लागो भमी धुमी, फेर उठेगी झाल ॥ २ ॥
सरप मार अरु मारियो, रामा साम्ढ़ थाय।
पाणु लाग चेतन भयो, उलट उणीको थाय ॥ ३ ॥
मन कूं मृतक जाण कर, मत कीजो विश्वास।
रामदास मन सरप ज्यूं, जब तब करै विनास ॥ ४ ॥
रामदास मन मारियो, मार र काढ़ी खाल।
घायलिया खरगोस ज्यूँ, फेर ऊठियो चाल ॥ ५ ॥
मन कूँ मृतक जाणकर, मत कोइ रहो नचीत।
रामदास कय ऊठ कर, अंतर करै कुपीत ॥ ६ ॥
मन मृतक सो जाणिये, घायल ज्यूं फिरराय।
रामदास दुखिया रहै, हरि सुमिरत दिनजाय ॥ ७ ॥
जन रामा सतगुरु मिल्या, अर्थ बताया एक।
मन मृत्तक हुय लगि रह्यो, आद अंत या टेक ॥ ८ ॥

इति।

अथ सूक्ष्म मारग को अंग।

सो मारग पाया नहीं, साधु पहूंता धाय।
रामदास आगे रह्या, कलह कल्पना माँय ॥ १ ॥
रामदास घर अलग है, जाका थाह न कोय।
अंतर निश्चय किम हुवै, है वाका मग सोय ॥ २ ॥
कोन दिसा सूं आविया, कहो कोन दिस जाय।
रामदास अब भूलग्या, इहाँ पड़े हैं आय ॥ ३ ॥
रामदास उण देस सूं, चाल न आया कोय।
कहु कुण कूं ले बूझिये, मेरे मन की सोय ॥ ४ ॥
रामदास उण देस सूं, जावे सब संसार।
भार सीस पर शीत को, जाकी सुद्ध न सार ॥ ५ ॥
बादल आडा जगतके, सूर थाम बिच नाहिं।
साधु देह संसार में, ब्रह्म पटंतर माहिं ॥ ६ ॥
साधु राम तो एक है, विरला जाणै कोय।
रामा साधू ब्रह्म में, ब्रह्म साधु में होय ॥ ७ ॥
ब्रह्मदेस सूं संतजन, आन धन्यो अवतार।
रामदास उणदेसको, अनुभव कियो विचार ॥ ८ ॥
रामदास यूँ समझ कर, साधू शरण सँमाय।
साँसा दूर प्रसाय कर, अमर देस लेजाय ॥ ९ ॥

धरती अरु असमान बिच, उभय बेलि असराल ।
रामदास सब सोधिया, तंतु चल्या चहुं नाल ॥ १० ॥
सिध साधक जोगी जती, सबही किया बिचार ।
रामदास समझ्यां बिना, घोखो बारंबार ॥ ११ ॥
आसा तृष्णा बेलड़ी, जामण मरण अटूट ।
समझ्या सो तो सिध हुवा, अणसमझ्या गो छूट ॥ १२ ॥
मारग अगम अथाह का, मोपै लख्या न जाय ।
जन रामा सतगुरु मिल्या, पलमें दिया बताय ॥ १३ ॥

इति ।

अथ पीव पहिचान को अंग ।

पड़दामें रहै रामदास, मोसो धणी न आन ।
सकल अंडमें रमरह्या, तायूं करो पिछाण ॥ १ ॥
सब सूं न्यारा रामदास, दुनिया जाणै नाहिं ।
मैं हूं सेवग जासका, सकल अंड ता माहिं ॥ २ ॥
माय बाप जाके नहीं, है अणघड़ अडोल ।
रामा ऐसा सांइ है, रंग रूप नहिं रेख ॥ ३ ॥
सब का करता एक है, परमात्म निजदेव ।
रामदास पहिचाण सज्यो, करो जास की सेव ॥ ४ ॥
रामा एक पिछाणिया, साहींयूं लिवलाय ।
जो दूजा गुण मांनसी, तो यूं जीव बहाय ॥ ५ ॥
सतगुरु के परताप सूं, लीया पीव पिछाण ।
रामदास गुण आपणे, दूजी कहूं न जाण ॥ ६ ॥

इति ।

अथ शब्द को अंग ।

रामदास सतशब्द का, भींतर लागा भेद ।
बाहिर घाव न दीसही, रोम रोम बिच छेद ॥ १ ॥
छेद पड्या सब शब्द का, भेद रह्या सब नाहिं ।
रामदास लागी रही, कारज कलेजा मांहि ॥ २ ॥
लागी शब्द की रामदास, अन्तरमें बिच चोट ।
रोम रोम संचार की, सब घट करो घोर ॥ ३ ॥
घोर लगी सब शब्द की, ब्रह्मंड गिरनी जाय ।
रामदास झणकार है, शब्द रह्यो गुंजाय ॥ ४ ॥

सोरठा।

शब्दसणी सब मार, साराई शरीर में।
रामा भणी न धार, रोम रोम बिच वहगई ॥ १ ॥

साखी।

शब्द बाण सूं मारिया, सबही मनका खोट।
रामदास आकाश में, लगी अखंड इक चोट ॥ ५ ॥
घर अंबर बिच रामदास, एक शब्द गुंजार।
उहाँसे आघी उलटि के, निकसी दशवें द्वार ॥ ६ ॥
शब्द गाज ब्रह्मंड में, जाण भणंकी बीण।
रामदास सुर संभले, महा झीण सूं झीण ॥ ७ ॥
रामदास घायल भया, सत्त शब्द की मार।
आठ पहर घूमत रहे, साँई हंदा यार ॥ ८ ॥
शब्द मार करड़ी घणी, विरला झेले कोय।
रामदास सो झेलसी, विरह विकलता होय ॥ ९ ॥

सोरठा।

रामा शब्द संभाय, सतगुरु वाह्या तक्षमें।
आठ प्रहर घूमाय, घावलग्या सो जाणसी ॥ १ ॥

साखी।

जन रामा सतगुरु मिल्या, शब्द जु वाह्या तीर।
उर अंतर नख सिख बिचै, सारै भिद्या शरीर ॥ १० ॥

इति।

अथ ब्रह्म एकता को अंग।

सगुण जु निर्गुण रामदास, तू एको कर जाण।
एक ब्रह्म सब बीच में, समरथ पद निरवाण ॥ १ ॥
सगुण जु माया रामदास निर्गुण माहिं समाय।
एक ब्रह्म विस्तार है, दूजा कह्या न जाय ॥ २ ॥
पाला गल पाणी हुवा, जीव पलट हुवा ब्रह्म।
निर्गुण सगुण जु एक हुय, रामा छूटा भर्म ॥ ३ ॥
जीव मिलाणा सीव में, पलट हुवा निज ब्रह्म।

एक ब्रह्म सब बीच में, ताका वार न पार।
रामदास तासूं मिल्या, दुबध्या दूर निवार ॥ ५ ॥

इति।

अथ ग्रंथ–गुरु–महिमा।

आये संत सधीर, लिये जगमें अवतारा।
खोले भक्ति भंडार, मिट्याहै तिमिर अंधारा ॥ १ ॥
अमर लोक सूं आय, सिंहथल माहिं विराजे।
तेजपुंज परकास, बजे अनहदके बाजे ॥ २ ॥
सतासंमाधि अगम जहँ आसण, सुखमण सहज समाधी।
आय रामियो चरणाँ लागो, सिख है आदि अनादी ॥ ३ ॥
हरिरामा हरि है अवतारा, अंतर कला कवीरूं।
नामदेवसा दृष्टि देखताँ, सूरा संत सधीरूं ॥ ४ ॥
पत प्रह्लाद चाल सनकादिक, ज्ञान सहित शुकदेवू।
ध्रुवसा ध्यान अटल अनुरागी, गोरख जैसा भेवू ॥ ५ ॥
दादूसा दीदार दुरंस, कोइ दर्शण पावै।
काल जाल सब जाय, भरम अघ दूर गमावै ॥ ६ ॥
दीर्घसा दिगपाल, मेरुसा अविचल कहिये।
सूरजसा परकास, समँदज्यूं थाह न लहिये ॥ ७ ॥
समँद संख्यामें होय, सत्तगुरु असँख कहाये।
गोविंदतें दीरघ, चंदतें शीतल थाये ॥ ८ ॥
ब्रह्म विलासी संत, ब्रह्म का है व्योपारी।
ज्ञान ध्यान गलतान, दीसतां दर्शण भारी ॥ ९ ॥
मुरधरके मँझ माहिं, प्रगट्या सच्चा साँई।
देख्या जगत ढ भेख, और ऐसा कुछ नाँई ॥ १० ॥
ऐसा है कोई संत, सूरवाँ कहियै साटू।
हरिरामा गुरुदेव, मिल्या पूरब पुन आदू ॥ ११ ॥
जो पावै दीदार, दुरस होय चरणा लागै।
भर्म कर्म सब जाय, काल अघ दूरा भागै ॥ १२ ॥
सिख कूं ज्ञान बताय, ब्रह्म के माहिं मिलावै।
ऐसी औषधि लाय, जन्मका रोग मिटावै ॥ १३ ॥
सुणिया था सुरलोक, देवता पायक पूगा।
अधिक ज्योति परकास, अनँत जहँ सूरज ऊगा ॥ १४ ॥

---

१ असंप्रज्ञातसमाधि। २ सहोदरमाई।

मिटिया तिमिर अनेक, तेज परकास्या माँही ।
रामाकूं गुरुदेव मिल्या, एक सचा साँई ॥ १५ ॥
ऐसा है गुरुदेव, हमारे शीश विराजै ।
जेती महिमा होय, गुरां कूं एती छाजै ॥ १६ ॥

साखी ।

गुरुमहिमा सीखे सुणै, आपा लेह विचार ।
भजन करै गुरुदेव को, सो जन उतरै पार ॥ १७ ॥
गुरुकी महिमा रामदास, करता है दिनरात ।
सतगुरुसा दूजा नहीं, सत भाखतहूं बात ॥ १८ ॥

चौपाई ।

सद्गुरु समी नहीं पर-दक्षिणा । सद्गुरु समा प्रेम नहिं चरणा ।
सद्गुरु समा तीर्थ नहिं तिरणा । सद्गुरु समा और नहिं शरणा ॥ १ ॥
सद्गुरु समा धूप नहिं रूपम् । सद्गुरु सम नहिं तत्व अनूपम् ।
सद्गुरु समा पुण्य नहिं दाना । सद्गुरु समा ज्ञान नहिं ध्याना ॥ २ ॥
सद्गुरु समा जोग नहिं जग्गा । सद्गुरु समा और नहिं सग्गा ।
सद्गुरु समी कहत नहिं कहणी । सद्गुरु समी रहत नहिं रहणी ॥ ३ ॥
सद्गुरु समा उडत नहिं गडिता । सद्गुरु समा पढ्या नहिं पंडिता ।
सद्गुरु समा पिता नहिं माता । सद्गुरु सा नहिं तत्व विधाता ॥ ४ ॥
सद्गुरु समा वीर नहिं बन्धू । सद्गुरु समा और नहिं सग्धू ।
सद्गुरु बिना नरक में जावै । सद्गुरु बिन कहु कौन छुडावै ॥ ५ ॥
सद्गुरु बिना कबहु नहिं छूटे । जहँ जावे जहँ जमरो लूटे ।
सद्गुरु बिना बहुत फिर भटके । जहँ जावे जहँ जमरो पटके ॥ ६ ॥
सद्गुरु बिना सर्व कों ध्यावै । गोगा पावू मात सरावै ।
सद्गुरु बिना सर्व कों जाणै । क्षेत्रपाल बहु भूत बखाणै ॥ ७ ॥
सद्गुरु बिना सर्व कों सेवै । धूप रूप सो बहु दिन लेवै ।
सद्गुरु बिना सर्व कों जोवै । करामात ऋधि सिधि कों रोवै ॥ ८ ॥
सद्गुरु बिना एक नहिं गूंझे । अनंत देवकों फिर फिर पूजे ।
सद्गुरु बिना बहु देव बखाणे । हरकी बात हलक्य कर जाणे ॥ ९ ॥
सद्गुरु बिना राम नहिं पावै । रसना कंठ किमु प्रेम मिलावै ।
सद्गुरु बिना हृदय नहिं शूधा । निभ्रनाम बिन कमलजु ऊंधा ॥ १० ॥
सद्गुरु बिना नाभि नहिं आवै । श्वासोच्छ्वास कहो किमु लावै ।
सद्गुरु बिन रसना नहिं बोलै । अन्तर ध्यान कहो किमु खोलै ॥ ११ ॥

सद्गुरु विन अजपा नहिं जाणै । रोम रोम ररं किसविधि माणै ।
सद्गुरु विना पंथ नहिं पावै । कैसे मिलकर जुगजुग जीवै ॥ १२ ॥
सद्गुरु विना पंच नहिं उलटै । काम पंरा कहु किसविधि पलटै ।
सद्गुरु विना अधः नहिं जाणै । ऊर्ध्व कमल कहूं किसविधि माणै॥१३॥
सद्गुरु विना मेरु नहिं छेदै । आकाश कमल कहु किसविधि भेदै ।
सद्गुरु विन अनहद नहिं पावै । त्रिवेणी तट कैसे न्हावै ॥ १४ ॥
सद्गुरु विना त्रिव्य नहिं लागै । ब्रह्मजोति कहु किसविधि जागै ।
सद्गुरु विन दशमा नहिं जाणै । सहज समाधि किसीविधि माणै ॥१५॥

साखी

सद्गुरु विन सुधि ना लहै, कोटिक करो उपाय ।
रामदास सद्गुरु विना, सब जग जमपुर जाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

कोटि कोटि बहु ध्यान दिढावै । कोटि कोटि धुन ध्यान लगावै ।
कोटि कोटि बहु देव अराधै । कोटि कोटि किरिया जो साधै ।
तोहि गुरु गोविंद विन मुक्ति न जावै । सतगुरु विना काल सब खावै ॥१॥
कोटि कोटि तीरथ फिर आवै । कोटि कोटि असनान करावै ।
कोटिक दे पृथ्वी परदक्षिणा। निज्ञ नाम विन प्रेम न चरणा ॥ २ ॥ तो० ।
कोटि कोटि बहु तुलाविसावै । सोना रूपा दान दिरावै ।
और द्रव्य बहुतेरा देवै । सहस्र नाम निशीदिनलेवै ॥ ३ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि जिग होम करावै । कोटिक ब्राह्मण नोति जिमावै ।
कोटिक गउवाँ दान दिरावै । कोटि कोटि बहु हेत लगावै ॥ ४ ॥ तोहि० ।
धर्म करै कन्या परणावै । दत्त दायजो कोटि दिरावै ।
कोटि कोटि कन्या फल लेवै । सर्व शेष कूँ बहु धन देवै ॥ ५ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि व्रत सत्त कमावै । कोटिक तपस्या तप्प करावै ।
कोटिक धरत करै बहुतेरा । पोत पदर लूटावत डेरा ॥ ६ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि ऋधि सिद्धि कमावै । कोटि कोटि भंडार भरावै ।
सदावरत बहुतेरा देवै । कालगुरुकूँ नि... तोहि० ।
कोटिक कहत कहत बहु कहणी । ... ।
रेचक कुंभक जोगजु साजै । ... ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि उड़ता बहु ... ।
कोटिक अगम नि... ॥ तोहि० ।
कोटि करै बारै ...

उदय अस्त लग अदल चलावे । विधि लोक सुरलोकाँ जावे ॥ १० ॥ तोहि० ।
सप्तद्वीप लौं आँण सवाई । एक चक्रवर्ती ठकुराई ।
एको सुक्ख कहीँ नहिं भाया । फिर पाछा गर्भवासा आया ॥ ११ ॥ तोहि० ।
कोटिक ब्रह्मा विष्णू ध्यावे । शिव शक्ती सूं ध्यान लगावे ।
और देव बहुतेरा सेवे । धूप रूप सो निशि दिन खेवे ॥ १२ ॥ तोहि० ।
चवदह भवन काल घर जावे । ब्रह्मा विष्णु महेश डरावे ।
काल डरे अणघड सूं भाई । तासूं संताँ सुरति लगाई ॥ १३ ॥ तोहि० ॥

साखी ।

ता मूरत पर रामदास, वार वार वलिजाय ।
विणज करे ता नामको, जाकूँ काल न खाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

शून्य शिखरमें हाट मंडाया । विणजण कूं व्योपारी आया ।
हरि हीरों की घड़ी लगाई । निज्ञनाम की गूण भराई ॥ १ ॥
पांच पचीस वलधिया लाया । गूण घाल अरु लाद चलाया ।
सतगुरु कहे चेला तुम जावो । काया पाटण विणज हलावो ॥ २ ॥
चेला चलकर लारै आया । दिल भीतर वाजार मंडाया ।
चित्त चोहटै आण उतारी । फिर फिर जावै सव व्योपारी ॥ ३ ॥
ततकी तराजू दिल की डाँडी । उर भीतर हम हाट जो माँडी ।
कड़दा करम परा कर पाखै । तत्त नाम एक हीर जु राखै ॥ ४ ॥
अधः ऊर्ध्वं विच रस्त चलाई । जमडाणी अब न्यारा भाई ।
विणजकरै विणजारो जागै । जम डाणी का जोर न लागै ॥ ५ ॥
हाट मँडाई चोड़े चोहटै । चोर न मुसै लाट नहिं घांटै ।
विणजण कूं जग चलकर आवै । हीरा पारख कोई न पावै ॥ ६ ॥
जोंहरि होय सो पारख पावै । तन मन दे हीरा ले जावै ।
हरि हीरा की नाव चलाई । जगभीतरमें धुरा वंधाई ॥ ७ ॥
धुर वोहरे अब मेल घणेरा । विणज करै अब सुनमें डेरा ।
आपहि धुर आपहि है वोरा । आपहि विणजे आपहि हीरा ॥ ८ ॥
हरि हीरा का मन्या भँडारा । विणज करै है अगम अपारा ।
विणज करै अब सुनमें आया । सतगुरु सेती शीस निवाया ॥ ९ ॥
शून्य शिखर में गुरू विराजे । रात दिनां नित नोवत वाजे ।
शिष सतगुरु एक मिल हुया । विणज करै अब कबू न जूया ॥ १० ॥

साखी ।

सतगुरु समाजु को नहीं, इण जुग ही के माँहिं ।
रामदास सतगुरु विना, दूजा दीसै नाँहिं ॥ १ ॥
सूरत शुद्ध कबीरसी, दादू सा दीदार ।
हरिरामा हरि सारसा, अनँत जोत अधिकार ॥ २ ॥
हरिरामा गुरु सूरवाँ, ज्ञान ध्यान भरपूर ।
चौरासी सूं काढ कर, किया काल जम दूर ॥ ३ ॥
ऐसा साधू नामदे, जैसा है हरिराम ।
रामैं कूँ शरणै लियो, मेल निरंजन राम ॥ ४ ॥
हरिरामा प्रहलादसा, जैसा रामानंद ।
चरण परस चित चेतिया, मनमें भया अनंद ॥ ५ ॥
विष माया सब त्यागकरि, हिरदै ध्यान लगाय ।
रामदास निरभै भया, सतगुरु शरणै आय ॥ ६ ॥
सतगुरु केवल रामदास, सिख्या निकेवल माँय ।
हरिरामा सँत ब्रह्म है, सिखभी निरभै थाय ॥ ७ ॥
घरणा चाकर रामियो, सतगुरु है महाराज ।
च्यार चक्र चवदै भवन, ताहि परै सँतराज ॥ ८ ॥
सतगुरु को मुख देखतां, पाप शरीराँ जाय ।
साधुसंगति सत रामदास, अटल पदी लेजाय ॥ ९ ॥
गुरु गोविंद की महरतें, रामा पड़ी पिछाण ।
सब संतां के ऊपरै, वारूं मेरा प्राण ॥ १० ॥
दरसण दीठां रामियां, भाज जाय सब भर्म ।
ऐसा गुरु हरिरामजी, परस्यां काटै कर्म ॥ ११ ॥
पूरण ब्रह्म विराजिया, गाम सिंहथल माँहिं ।
रामदास जन जाणसी, दूजाँ कूं गम नाँहिं ॥ १२ ॥

इति ।

॥ श्रीरामभक्तेभ्यो नमः ॥

अथ श्रीभक्तमालप्रारंभः ।

साखी ।

मैं अबला हौं रामदास, आँधो अंत अचेत ।
तुम सतगुरु हो दीजा पद, हमकों करो सचेत ॥ १ ॥
रामदास की बीनती तुमसों, अगम अपार ।
भक्तमाल का भेद दो, सतगुरु करौं जुहार ॥ २ ॥

चौपाई ।

सतगुरु मिल्या नामनिज पाया । सत्तशब्दकों निशिदिन ध्याया ॥
हृदय कमल घर लीया वासा । बीज भक्ति मोहि उपजी आसा ॥ १ ॥
नाभिकमल में राम मिलाया । रोम रोम में रंग लगाया ॥
उलटि शब्द पश्चिम दिशि फिरिया । अधःऊर्ध्व प्रेमरस झरिया ॥ २ ॥
मनवा उलटि अगम घर आया । सब सन्तन का दर्शन पाया ॥
सब सँत मेरे शीश विराजै । सत्त शब्द सन्ताँ सुख छाजै ॥ ३ ॥
सब सन्तन कों राम पियारा । भक्तमाल का करों उचारा ॥
रामनाम संपति सुखदाई । सब सन्ताँ मिल साख बताई ॥ ४ ॥
रामनाम ध्यावै कुल माँई । सो बांधव है मेरा भाई ॥
रामनाम कों निशिदिन ध्यावै । आवागमन बहुरि नहि आवै ॥ ५ ॥
रामनाम कों निशिदिन ध्यावै । अटल पद अमरापुर पावै ॥
रामनाम कों निशिदिन ध्यावै । दुःख दारिद्र छि दूरि गमावै ॥ ६ ॥
रामनाम से बहुता तिरिया । अनंतकोटि अनेक उधरिया ॥
रामनाम की सुनिये साखा । अजामेल पुत्र जिन राखा ॥ ७ ॥
रामनाम की कहाँ बडाई । अहिल्याकों जु विमान चढाई ॥
रामनाम का मता अपारा । ढींवर कुटुंब सहेता तारा ॥ ८ ॥
रामनाम गजराज उधारे । सब सन्तन का काज सुधारे ॥
रामनाम से शिला तिराई । पाणी ऊपर पाज बँधाई ॥ ९ ॥
रामनाम केहा गुण गाऊं । जुग जुग भक्ति तुम्हारी पाऊं ॥
रामनाम की महिमा भारी । मो अबला कों तार मुरारी ॥ १० ॥
तीन लोक में राम धियाया । सो सन्त जु मेरे मन भाया ॥
रामदास कों राम पियारा । जो सुमरे सो प्राण हमारा ॥ ११ ॥

साखी ।

हरि की महिमा रामदास, कहिये कहा बनाय ।
अनंतकोटि नर उद्धरे, रामनाम लिव लाय ॥ १ ॥

छंद नीसानी ।

सतगुर स्वामी पी निजनामी निज ही नाम धियायन्दा ।
गनेश गरधा पानों सरचा ऋधि सिद्धि बुद्धि मिलायन्दा ॥ १ ॥
इत अवतारं ब्रह्म विचारं ररंकार सिर आयन्दा ।
पानी पवन र धरनी अंबर चन्द सूर गुन गायन्दा ॥ २ ॥
सब धीं मन्नू बारह पंथू परमहंस परमू ध्यायन्दा ।
छउ धीं जतियों तापों सतियों चेत जानि हरि जीवन्दा ॥ ३ ॥

एको अच्छर मंडे मच्छर ॐकार उपावन्दा।
लखचौरासी है अविनासी पूर्णब्रह्म समावन्दा ॥ ४ ॥
है भी न्यारा प्रियतम प्यारा जाहिर जोगी जाणन्दा।
कोटि अनन्तू मिले निरन्तू रोम रोम रस माणन्दा ॥ ५ ॥
है जुग चारू सन्त अपारू दास दीनता गावन्दा ॥
हम कीड़ी कायर हरि सुख सायर उलटा अभर भरावन्दा ॥ ६ ॥
थाह न पाया ध्याय मिलाया समदाँ बूंद समावन्दा।
रामादासू सतगुरुपासू नमि नमि शीश नमावन्दा ॥ ७ ॥

साखी।

सतगुरु सेती वीनती, मनका मत्सर मेट।
रामदास कों दीजिये, भक्तमाल जश भेट ॥ १ ॥

चौपाई।

प्रथम हि नाम सदाशिव लीया। पार्वती कों निज तत दिया ॥
सो सुनि नाम सुवा ले भागा। उदरहि माहिं राम लिव लागा ॥ १ ॥
बाहिर आइ वसे वन जाई। रामनाम से प्रीति लगाई ॥
वेदव्यास बहु ग्यान उपाया। राम राम कहि उलटि समाया ॥ २ ॥
ब्रह्मा विष्णु रामसे रत्ता। कुबेर जोगी राम सुमरता ॥
शेषनाग गुरुग्यान विचारा। सहस मुखाँ से राम उचारा ॥ ३ ॥
राम रसायन नारद पीया। ऋषि सनकादिक हरिगुण लीया ॥
मारकंड लोमश ऋषि भाई। रामनामसे प्रीति लगाई ॥ ४ ॥
गर्ग ऋषी जु रामसे रत्ता। गौतम कागभुशुंडि सुमरता ॥
जयदेव ऋषि की प्रीति पियारी। उद्धव हरिसे लाई तारी ॥ ५ ॥
पिप्पलाद ऋषि हरि हर ध्याया। ग्यान पाय अग्यान मिटाया ॥
शृंगी ऋषि काम को जीता। काया गढ ले भया वदीता ॥ ६ ॥
करणबंध ऋषि राखी काया। नाद विन्द ले गांठ घुलाया ॥
अगस्त्य ऋषि जुगे जुग जीया। सात समँदका पानी पीया ॥ ७ ॥
भृगुजी ऋषि ब्रह्म को चीन्हा। विष्णुदेवका परचा लीन्हा ॥
सेवा करी श्याम से लागा। काल क्रोध भय अंतर भागा ॥ ८ ॥
नासकेत उद्दालकपूरा। ग्यान मिल्या सुखसागर सूरा ॥
ऋषि समीक भूमंडल गाया। रामनाम को निशिदिन ध्याया ॥ ९ ॥
ऋषि दालभ्य एक धुन धारी। सतशब्द से प्रीति पियारी ॥
मुनि वशिष्ठ समाधी सूरा। निशिदिन रहते हरी हजूरा ॥ १० ॥

नामदेव रामरो राता । निजनामरो कीया नाता ॥
गुरु गांगेय राम गुण गाया । जिन मोंई को भेद बताया ॥ ११ ॥
विश्वामित्र हि ब्रह्म बिचारा । रोम रोम में राम उचारा ॥
बाहूबल बलवन्ता हूवा । मन को जीति सन्ताँ मिल धूवा ॥ १२ ॥
राजा भरत महा पटरानी । दोनां भक्ति निकेवल जानी ॥
महावीर महा तत पाया । केवल होइ मोक्षपद पाया ॥ १३ ॥
केशी कुँवर काम दल पाला । परदेशी सन्ताँ मिल हाला ॥
चोवीस तिर्थंकर राम धियाया । केवल होइ मोक्षपद पाया ॥ १४ ॥
भगवधाम निरंजन मेला । निजनाम सें कीया मेला ॥
काल जाल जम का डर नाहीं । भगवद् मिल्या ताहि घर माहीं ॥१५॥
सरियादे प्रहाद उधरिया । रामनाम ले कछू न डरिया ॥
भीड़ पड़ी सन्ताँ पल आया । हिरण्यकशिपु को मार गुडाया ॥ १६ ॥
सिंह रूप अवतार धारिया । तिलक दिया प्रह्लाद तारिया ॥
कार्तिकस्वामी हनुमत सूरा । सीता लक्ष्मण राम हजूरा ॥ १७ ॥
त्यागा राज भरत बन लीया । राम रसायन निशिदिन पीया ॥
रिपुदन राम राम गुण गाया । मन्दोदरी विभीषण पाया ॥ १८ ॥
तुलसीदास राम का प्यारा । आठों पहर मगन मतवारा ॥
भूत मिल्या हरि भेद बताया । हनूमान हरि चरणाँ लाया ॥ १९ ॥
राजा जनक राम का प्यासा । खट दिलीप प्रेम परकासा ॥
परीक्षित प्रेम पियाला पीया । जन्मेजय निजतत ले जीया ॥ २० ॥
पारायण सुनिके पद पाया । आवा गमन बहुरि नहि आया ॥
रुक्मांगद पुँडरीक उधरिया । राजा शिवी सत्य से तिरिया ॥ २१ ॥
गूँड राज गोविन्द गुण गाया । सुखसागर में सहज समाया ॥
मोहमर्द निरमोही राजा । दीठा जाय अगम का छाजा ॥ २२ ॥
परजादीप परम तत पाया । हाकम सन्ताँ चरण लगाया ॥
कटिया करम रामको गाया । दिन पैंतीसाँ मोक्ष मिलाया ॥ २३ ॥
मोरध्वज का मता करारा । त्यागी देह राम का प्यारा ॥
सदावर्त दीया सुख पाया । सन्तन को बहु शीश नवाया ॥ २४ ॥
प्रेम भक्ति सूँ प्रीति लगाई । बैकुंठाँ चढ़ि नौबत बाई ॥
जन अमरीष रामगुण गाया । चरणामृत लेकर सुख पाया ॥ २५ ॥
दुरवासा ऋषि शापन आए । उलटा दुःख उसीको धाए ॥
तपति लगी तनमें बहुभारी । साहिब सेती अरज गुदारी ॥ २६ ॥
हरिजन हरि को बहुत पियारा । भक्तकाज धरिया अवतारा ॥
उलटा ऋषी लगाए पाए । सन्तन का कारज सुधराए ॥ २७ ॥

द्विज कन्या दिल माहीं दरस्या । उलटी मिली अगम घर परस्या ॥
राजा हरिचंद सती कहाया । सत्त न हान्या हाट विकाया ॥ २८ ॥
बलि जिग माहीं जाग रचाया । बावनरूप छलन को आया ॥
बलि नहि छलिया आप छलाया । राज पयालाँ निश्चै पाया ॥ २९ ॥
पांडव पाँच राम का प्यारा । कुन्ताँ माता अगम अपारा ॥
पांडव जग में जाग रचाया । चार कोट का ऋषी बुलाया ॥ ३० ॥
जाग जीमिया शंख न बोला । स्वामी काहिन अन्तर खोला ॥
स्वामी भेद सन्तका दीया । पांडव जाय बाल गुण लीया ॥ ३१ ॥
बालमीकि की शोभा सारी । कीन्हो जाग सँपूरण भारी ॥
दूजा बालमीकि इक हूआ । रामनाम कहि निरभै हूआ ॥ ३२ ॥
शतकोटी रामायण कीन्ही । स्वर्ग मृत्यु पातालाँ दीन्ही ॥
निश्चै नाम एक की आसा । रामनाम कह ब्रह्म विलासा ॥ ३३ ॥
द्रौपदि प्रेम पियाला पीया । चीर वधार परम सुख लीया ॥
विदुर जु भेव भक्ति का पाया । नाम निकेवल निशिदिन ध्याया ॥ ३४ ॥
वथवै इन्दा शाक बनाया । साहिब को परसाद कराया ॥
साहिब साधू प्रीति पियारी । कैरव द्वार गए अहँकारी ॥ ३५ ॥
सूरदास सन्ताँ सुखदाई । रामनाम से प्रीति लगाई ॥
फालू फीर राम का प्यारा । रोम रोम में लीया झारा ॥ ३६ ॥
सँत हरिदास सुरति उलटाई । देवहुति भूमि सातवीं पाई ॥
ध्रुवजी ध्यान धणीसे लाया । अटल पदी अमरापुर पाया ॥ ३७ ॥
भक्त वंश में सन्त जु सूरा । वैकुँठा मिलिया जन पूरा ॥
रतनदास राम सों रत्ता । रोम रोम में लागा तत्ता ॥ ३८ ॥
नरसीदास राम का प्यासा । प्रेम भक्ति पाई परकासा ॥
साँई के सँत हुआ हजूरी । कर माहेरो आशा पूरी ॥ ३९ ॥
तिलोकचँद की भक्ति करारी । लेखण स्याही आप मुरारी ॥
सुदामा का दारिद हरिया । रामनाम ऐसा गुण करिया ॥ ४० ॥
प्रेम भीलणी भक्ति पियारी । बोर पायकर शिपा बधारी ॥
सरिता नीर निरमला कीया । शबरी रघुवर टीका दीया ॥ ४१ ॥
सर जहँ ऋषी सत्तगुरु पाया । ऋषि मिल हरि दर्शन को आया ॥
शबरी भक्ति भली पण कीन्ही । सब ऋषियां मिल माँहे लीन्ही ॥ ४२ ॥
ईश्वर बाप गधा कूं कीया । पिता पुत्र खोला में लीया ॥
नेमनाथ नारायण ध्याया । भेदी भेद ब्रह्म का पाया ॥ ४३ ॥
आदिनाथ मिलिया अविनासी । केवल हुआ एक सुखरासी ॥
गनिका गुरु सूया को पाया । सत्तशब्द को निशिदिन ध्याया ॥ ४४ ॥

रंका बंका राम पियासा । नामा छींपा हरि का दासा ॥
देवल फेर रु दूध पिलाया । श्वान रूप हुइ भोजन पाया ॥ ४५
परचा पूगा परज पतीनी । दशधा भक्ति नामदे कीनी ॥
दत्त दरश दिल भीतर पाया । गुरु चोवींसूं ले गुण गाया ॥ ४
निश्चय एक नाम की आसा । रामनाम कह ब्रह्म विलासा ॥
विष्णुस्वामी माधवाचारा । सत्त शब्द ले किया पसारा ॥ ४७ ॥
रामानुज निम्बारक भाई । कलियुग माहीं भक्ति हलाई ॥
राघवानन्द राम का प्यारा । रोम रोम में लीया हारा ॥ ४८ ॥
रामानन्द मुख राम उचारा । निर्गुण भक्ती किया प्रचारा ॥
चार संप्रदा बावन द्वारा । हूआ शिष उजियागर सारा ॥ ४९ ॥
भावानन्द अनँतानँद दासा । रामनाम से लाई आसा ॥
नरहरिनन्द निकेवल लीया । स्वामि गॅालवे हरि रस पीया ॥ ५० ॥
धैने सुरसरै सुरति लगाई । रामनाम मीठो रे भाई ॥
सन्तन के मुख बीज बुहाया । खेती माहिं नाज निपजाया ॥ ५१ ॥
दास कँबीर मगन मत धारा । सहज समाधि बणी इक धारा ॥
सब सन्ताँ में चकवे हूआ । ब्रह्म विलास कबू नहि जूआ ॥ ५२ ॥
हुइ विणजारा बालद लाया । सदावर्त दे सन्त सराया ॥
कमाल कमाली हरि गुण गाया । सुखसागर में सहज समाया ॥ ५३ ॥
कबीर कमाल जमाल जमल्ला । शेख फरीद सुमरिया अल्ला ॥
श्रीसहस्रास्य गुरू गम पाई । बहत्तर शिष मिल पद्धति लाई ॥ ५४ ॥
सेन सुरा योगानँद भाई । आय मिल्या सुखसागर माँई ॥
सीता पीपै प्रेम पियारा । रामनाम रटिया इक धारा ॥ ५५ ॥
गेले माँहि किया सिंह चेला । रामनाम से बांध्या भेला ॥
झाँपापात समँद में लीन्ही । छापां आय परगटी कीन्ही ॥ ५६ ॥
राम राम रैदास उचरिया । रोम रोम में नीझर झरिया ॥
काढि जनेऊ विप्र जिमाया । झालण स्वामी गुराँ बोलाया ॥ ५७ ॥
पद्मावती प्रेम रस पागी । सब सँग छाँडि राम लिव लागी ॥
शिष्य तणां चरणामृत दीया । साहिब सहजाँ अमृत कीया ॥ ५८ ॥
अमृत उलटि मिल्या घट माहीं । जन रैदास सतगुरु पाहीं ॥
कुल मारग को काने लाग्या । मीरा चली गुरां की आज्ञा ॥ ५९ ॥
रतना करमा मीरा बाई । लाडी प्रीति राम से लाई ॥
पूरी प्रेम पियाला पीया । सतगुरु से मिल निज तत लीया ॥ ६० ॥
धंनाजी मन कों थिर करि राखा । रामनाम भजिया गुण नाथा ॥
धर्मदास ध्यान करि ध्याया । अनहद नाद अखंडित वाया ॥ ६१ ॥

टीलमदास लगावै तत्ता । लाड्डदास राम से रत्ता ॥
ज्ञानी ज्ञान चीन्हिया निर्गुण । माया दूर करी सब सर्गुण ॥ ६२ ॥
गेबीराम गैब से मिलिया । सब सन्ताँ सुखदाई मिलिया ॥
गोविन्दराम राम गुण गाया । केवलदास निकेवल पाया ॥ ६३ ॥
अल्हैदास अगम की आसा । भक्ति पदीमें कीन्हा वासा ॥
कोल्ह गैंस कुलशेखर सारा । मुकुन्ददास मिल्या तत तारा ॥ ६४ ॥
मुरलीदास मलूका बेई । थान मिले सुखसागर तेई ॥
चँदरै चित चेतन करि जाण्या । सतरै रोम रोम रस माण्या ॥ ६५ ॥
मुक्त भीड़ पीया रस बंकी । चवड़े चपट मँड्या चित चोकी ॥
चित से चित चेतन करि ध्याया । आतम में परमातम पाया ॥ ६६ ॥
हीरदास हरि का हित कारी । सत्यशब्द से प्रीति पियारी ॥
कान्हरदास काम कों त्यागा । रामनाम से निशिदिन लागा ॥ ६७ ॥
मगनीराम मगन में रहणा । आठ पहर नित राम सुमरणा ॥
जंगीराम जुक्ति करि जाना । ब्रह्म चीन्ह निज तत्व पिछाना ॥ ६८ ॥
बालकदास ब्रह्म व्यौपारी । उलटे आइ लगाई यारी ॥
केशवदास काम कुण काजी । राम रव भजिया हुइ राजी ॥ ६९ ॥
हरचँददास चरणा चित लाया । सतगुरु सेती प्रेम मिलाया ॥
चेतनदास चेत जुग जीया । आतम राम रसायन पीया ॥ ७० ॥
मोहनदास मानगढ मारा । रोम रोम में राम पुकारा ॥
मानादास महा रस पीया । उलटे आइ अगम सुख लीया ॥ ७१ ॥
ध्रुव मुरारि मिल्या तन माँए । तिरवेणी चढ़ि ध्यान लगाए ॥
संत शिवदास श्यामसे सच्चा । सत्त शब्दसे निशिदिन रचा ॥ ७२ ॥
बाणारसी राम सों लागा । उलटा मिल्या अगम घर आगा ॥
दईदास दिल माहीं दरसा । रोम रोम में अमृत बरसा ॥ ७३ ॥
जन पयहारी परिपक हूआ । ब्रह्म विलास कबहु नहि जूआ ॥
कृष्णदास राम गुण गाया । वे गलते का महन्त कहाया ॥ ७४ ॥
अगर कील्ह हुआ उजियागर । अनुभवयानि मिल्या सुखसागर ॥
चन्दर नाभै हरि गुण गाया । भक्तमाल कर सन्त सराया ॥ ७५ ॥
सम्मन सेऊ प्रेम पियारा । राम राम रटिया इक धारा ॥
पादमदास जातिका मेणा । सतगुरु सेती मिलिया सेणा ॥ ७६ ॥
झाला भर गेहूं का लाया । सन्तन को परसाद कराया ॥
फीता मिल्या राम से राजी । रोम रोम में झालर बाजी ॥ ७७ ॥
तापे तपस्या करी करारी । लोधिये जाय लगाई यारी ॥
मानक गुरू नाम निज पाया । चार कोंट में पन्थ हलाया ॥ ७८ ॥

ईश्वरदास रामका प्यारा । हरि गुण कथिया अगम अपारा ॥
आसोदास अगम की आसा । कनक दंडवत की बहुदासा ॥ ७९ ॥
परमानँद आनँद गुरु भाई । रामनाम से प्रीति लगाई ॥
धरि अवतार बूढ़ण गुरु आया । दादू कौं निज नाम सुनाया ॥ ८० ॥
दादूदास राम का प्यारा । धार पन्थ ले किया पसारा ॥
बावन शिष्य गुरु उजियागर । अनुभव बानि मिले सुखसागर ॥ ८१ ॥
दासगरीब गुरू घर आया । भेदी भेद ब्रह्म का पाया ॥
रज्जब पिया राम रस भारी । सतगुरु सेती प्रीति पियारी ॥ ८२ ॥
प्रीति लगाय प्रेम रस पीया । नाम निकेवल निशिदिन लीया ॥
सुन्दरदास मिल्या गुरु माँय । नाम निकेवल निशिदिन ध्याय ॥ ८३ ॥
मुक्ति पन्थ का पाया मारग । दादूराम मिल्या गुरु तारग ॥
पीये प्रेम पियाला पीया । गोरख जोगी दर्शन दीया ॥ ८४ ॥
जो गोरख जोगी तुम आदू । उरभीतर में है गुरु दादू ॥
लालदास लागा गुरु घाटी । कीन्ही दूर मर्म की टाटी ॥ ८५ ॥
मान्हूराम निकेवल लीया । जन गोपाल जानि जग जीया ॥
दासप्रयाग परम पद पाया । जैमलदास निते नित ध्याया ॥ ८६ ॥
बड़ सी टीलमदास फकीरा । सन्तदास मिलिया सुखसीरा ॥
बखना बार्जीदा हरिदासा । सदनै राम भज्या इक सासा ॥ ८७ ॥
शोभाराम रामगुण गाया । हरिव्यासी हरि माहिं समाया ॥
परशुराम राम मतवारा । सब सन्ताँ से मिलिया प्यारा ॥ ८८ ॥
ततवेता निज तत्व पिछाना । घमडीराम राम कूं जाना ॥
बीरम त्यागी तन मन त्याग्या । राम राम भजिया गुरु आज्ञा ॥ ८९ ॥
हरदासी हरि से हित लाया । रामनाम कों निशिदिन ध्याया ॥
खोजी खोज पकड़िया सैंठा । सब सन्ताँ माहीं मिलि बैठा ॥ ९० ॥
केवल कूबा ब्रह्म विलासी । उलटा अलख मिल्या अविनासी ॥
खेमदास की आशा पूरी । निशिदिन राखा राम हजूरी ॥ ९१ ॥
शंकर स्वामी सुमरण कीया । अजपाजाप रामरस पीया ॥
गोपीचन्द भरतरी पूरा । अनहद अखंड बजाया तूरा ॥ ९२ ॥
गोरखनाथ मछन्दर जोगी । रग रग भेद लिया रस भोगी ॥
कोटि निमाणूं राजाहुआ । गाया राम अगम घर बूझा ॥ ९३ ॥
हरीदास पूरा गुरु पाया । नाम निरंजन पंथ कहाया ॥
बारह शिष्य मिले सुखमाँई । पाढू माता चेली काई ॥ ९४ ॥
द्वादश पन्थ सन्त बड भागी । छाप निरंजन माया त्यागी ॥
अंजन त्यागि निरंजन ध्याए । तातैं निरँजन पन्थ कहाए ॥ ९५ ॥

जगजीवन तुरसी अरु सेवा। रामरसायन पीया मेवा॥
भुवन मेव भक्तीका पाया। खाँडे खेरतणे लोह वाया॥ ९६॥
राजा जसू जुक्तिकरि जाना। ब्रह्म चीन्ह निज तत्त्व पिछाना॥
जगतसिंह की प्रीति पियारी। राव पलटि चरणाँ मति धारी॥ ९७॥
देवे पंडे प्रीति लगाई। परथर मूरति मूँछ अणाई॥
गूदड़ रूप होय हरि आया। सन्तदास सँत दरशण पाया॥ ९८॥
किरपा करी नाम निज दीया। सास उसास एक ध्वनि लीया॥
सन्तदास मिलिया सुख माँई। तिरबेनी चढ़ि ध्यान लगाई॥ ९९॥
अनुभव शब्द सन्त बहु बोल्या। भक्ति पन्थका पड़दा खोल्या॥
गाँव दांतड़े का सँत वासी। चारों कोंट भक्ति परकासी॥ १००॥
बालकदास रामका प्यारा। प्रेम परम तत किया पसारा॥
गिरधरदास रु खेमकुमारी। परमानन्द लगाई यारी॥ १०१॥
जाहर जोगी जगमें जीता। शूरवीर सँत भया विदीता॥
दरीयासा दिल माँही दरसा। उलटा मिल्या अगम घर परसा॥ १०२॥
सहज समाधी सन्त कहाया। प्रेम पियाला भरि भरि पाया॥
किसनदास कामकों मेट्या। उलटा चढ़्या अगम घर भेट्या॥ १०३॥
नाद बिन्द में सन्त जु सूरा। दशमद्वार निज परसत नूरा॥
सुखरामा सतशब्द सँभाया। मनकों ले खुरसाण चढ़ाया॥ १०४॥
कर्म काटि सब काने कीया। दीठा जाय अगम का दीया॥
नानकदास नाम निज पाया। श्वासोच्छ्वास नितो नित ध्याया॥१०५॥
पूरणदास प्रेमरस पीया। सतगुरु संग मिल जुग जुग जीया॥
मोहनदास मिल्या सुख माँई। तिरबेनी चढ़ि ध्यान लगाई॥ १०६॥
सेवादास मिल्या सुख माँई। वैकुंठाँ चढ़ि नौबत बाई॥
सदाराम शून्यका वासी। परम ज्योति सहजाँ परकासी॥ १०७॥
घमडीराम घमड में रत्ता। रोम रोम में लागा तत्ता॥
चरणदास चरणाँ चित लाया। सतगुरु सेती प्रेम मिलाया॥ १०८॥
जैरामा जन मिलिया आर्हीं। काल जाल जमका डर नाहीं॥
खेतादास खरा हुइ लागा। उलटा मिल्या अगम घर आगा॥ १०९॥
हेमदास हरिका हित कारी। सन्त शब्दसे प्रीति पियारी॥
हरीदास सन्त जु बडभागी। उलटी सुरति निरन्तर लागी॥ ११०॥
साँवलदास मिल्या सुखमांई। पारब्रह्म परमानँद पाई॥
दास पँचायन परिपक हूआ। हदकों त्यागि बेहदकों छूआ॥ १११॥
टीलमदास रामका प्यारा। रोम रोम बिच लीया झारा॥
पच्छिम दिसा मुसाफिर आए। जैमलदास भणत बतलाए॥ ११२॥

तासेती जैमल जल पाया । जब बालक कौं संग बुलाया ॥
सुण रे बालक बात हमारी । तोकौं द्यागूँ गुंज हजारी ॥ ११३ ॥
गोठीमें गुरुज्ञान सुणाया । योग सहित निज नाम बताया ॥
जैमलदास जानि जुग जीया । आलम राम रसायन पीया ॥ ११४ ॥
पँचमाहीके महन्त कहाये । सब सन्तन में सहज समाये ॥
ब्रह्मध्यान सुणियो सुधि पाई । एको नाम सत्य है भाई ॥ ११५ ॥
जबतें रसना राम धियाया । कंठकमल में प्रेम मिलाया ॥
हृदयकमल घमकार सुणीजे । चाली सुरति सतगुरु कीजे ॥ ११६ ॥
जैमलदास सतगुरु पाया । अब मनवा मेरा पतियाया ॥
हरिरामा हरि का हितकारी । सहज समाधि बनी अति भारी ॥ ११७ ॥
ब्रह्म बिलासी हरिजन सूरा । शिष शाखा मिल हुआ पूरा ॥
सत्य शब्द ले किया पसारा । सप्तद्वीप नव खंड बिस्तारा ॥ ११८ ॥
निज नाम की नाव चलाई । तारक मंत्र भक्ति अति भाई ॥
चाँपाँ माता चित करि पीया । उलटे आइ अगम सुख लीया ॥ ११९ ॥
रोम रोम सहजाँ लिव लागी । दास विहारि मिले बडभागी ॥
रुखियाँबाई रामपियारी । अनहद अखंड लगाई तारी ॥ १२० ॥
दासनरायण अमी धियाया । आदूराम रामगुण गाया ॥
लक्ष्मणदास राम लिव लागी । ज्ञान विचार भए वैरागी ॥ १२१ ॥
दईदास गुरुज्ञान समाया । मनकों ले गुरुचरण चढाया ॥
सब सिक्खाँ संपति सुखदाई । सतगुरु सेती प्रीति लगाई ॥ १२२ ॥
गाम सींहथल सतगुरु मिलिया । रामदासका अन्तर मिलिया ॥
सतगुरु ब्रह्म एक है साधो । रामनाम निशिदिन आराधो ॥ १२३ ॥
रामदास सन्तां शरणाई । भक्तमाल ले शीश चढाई ॥
भक्तमाल भगवद् मन भाई । अनँत कोटि मिलिया इन माँई ॥ १२४ ॥

साखी ।

रामदास रंग से मिल्या, सुन्दर सुख के माहिं ।
सद्गुरु है हरिरामजी, (चाँपा) माता सहज समाहिं ॥ १ ॥
सहज मिल्या गुरु घाटमें, सुखसागरकी तीर ।
सब सन्तनमें मिल रह्या, चुगा नाम निज हीर ॥ २ ॥

छन्द अर्धभुजंगी ।

हँसे हीर पाया नितो सहज ध्याया ।
गदो कंठ लागी चली धुन आगी ॥ १ ॥
हदे जाय हिलिया मनो देव मिलिया ।
लगी प्रीति प्यारी चलै गंग भारी ॥ २ ॥

नाभी द्वार आया सतोपद पाया।
रोमा लिव्व लागा सोहं हंस आगा ॥ ३ ॥
रवं रंग राता मनो मन्न माता।
पूर्व फेर आया पताले लगाया ॥ ४ ॥
उलटि मन्न आगा अगम देश लागा।
वँकी रस्स पीया जुगे जुग्ग जीया ॥ ५ ॥
तीनूं गढ्ढ जीता चोथे मद्ममीता।
चँदे सूर मेला इके गेह मेला ॥ ६ ॥
पँचूं एक घाटी मिल्या ज्ञान थाटी।
पँचूं घेर आया मुक्ति द्वार पाया ॥ ७ ॥
अक्षय तूर वाजे गगन अंबु गाजे।
वणी प्रेम वरपा मिल्या आदि पुरुपा ॥ ८ ॥
मिले अविनासी टली काल पासी।
अलक्षैक पाया टली काल छाया ॥ ९ ॥
रमे सन्त सारा चलै सहस्र धारा।
पिया नीर मीठा अगम सुक्ख दीठा ॥ १० ॥
लिया पीउ फेरा किया सहज डेरा।
लगी प्रीति प्यारी सुपुम् सहज यारी ॥ ११ ॥
ब्रह्म भेव पाया अटल मढ्ढ छाया।
हुआ जीव जोगी लिया रस्स भोगी ॥ १२ ॥
पँखाँ विघ हंसा उडे मिल्ल अंसा।
विना चँचु मोती चुगे ओत पोती ॥ १३ ॥
विना पेड तरवर विना पात छाया।
विना चंचु सूवे अगम फल्ल खाया ॥ १४ ॥
विना पाज सरवर विना नीर भरिया।
विना मेघ वर्षा अखंड इन्द झरिया ॥ १५ ॥
विना वाग वाड़ी फुल्या वन्न सारा।
विना घाट नदियाँ पिवै द्वार भारा ॥ १६ ॥
विना दोप देवा करी जाय सेवा।
विना नींव देवल पुज्या एक देवा ॥ १७ ॥
विना तेल वाती जगै महल दीया।
विना हाथ वाजा अखंड लाग रहिया ॥ १८ ॥
विना नारि पुरुपा मिल्या गेहवासा।
विना भोग सेजाँ बँधी जाय आसा ॥ १९ ॥

[illegible] । [illegible] ॥
देव दुनी सब दरशण आये । नमन करै बहु शीस निचाये ॥ २३
च्यार कोंट को हासल आवै । सतगुरु आगे आण चढावै ॥
सँत का राज अदल गढ़ मांहीं । परजा सुखी सरब सुख पाहीं ॥२
चेतन चोकीदार दिराया । नाहर चोर सब पकड़ मँगाया ॥
तख्त बैस अरु हुकम हलावै । सिंह बकरी सब संग चरावै ॥२
रोमरोममें राम दुहाई । संत करै निर्भय पतसाई ॥
सुरत सुंदरी सझ सिणगारा । चाली महल पीव बहु प्यारा ॥२
सुखमण सेझ पिया संग खेलै । पलक एक पीव नहिं मेलै ॥
पूरण वर पाया अविनासी । पांच पचीसों करत खवासी ॥ २७
सुरत शब्द शून्य में लोटै । ऋद्धि सिद्धि दोउँ पाँव पलोटै ॥
राजपाट पाया पट राणी । वरमिलिया है सारंग पाणी ॥ २८
जाकै रूप रंग नहिं रेखा । गृह नहिं त्याग नहीं कोइ भेखा ॥
ना कोइ पिता मात नहिं जाया । ना ऊ किस की कूखन आया ॥२
देखा एक शून्यमें रूँखा । पेड न डाल न लील न सूखा ॥
फल नहिं फूल पान नहिं पाती । आपो आपहि अमर अजाती ॥३
जीव न जिंद न करम न काया । नाँ कोइ मान मोह नहिं माया
धर अंबर नहिं तेज न तारा । मेघ न बरषा इंद्र न वारा ॥ ३१
पवन न पाणी चंद न सूरा । बाज न बाजे ना कोइ तूरा ॥
एको ब्रह्म और नहिं कोंई । ररंकार सो सत है सांई ॥ ३२ ॥
ररंकार देवन का देवा । जिनका लहै और नहिं भेवा ॥
ररंकार है प्राण अधारा । जाकूं लखै संत जन प्यारा ॥ ३३ ॥
ररंकार सत शब्द हमारा । अनंत कोटि भज उतरे पारा ॥
ररंकार गुरुदेव बताया । रामनाम हम निशिदिन ध्याया ॥ ३४
हरिरामदास है गुरू हमारा । ज्ञान ध्यान बहु अगम अपारा ॥
ब्रह्म जिज्ञास ग्रंथ इम भारवूं । उरमें गुरू सीस संत राखूं ॥ ३५
रामदास सतगुरु का चेरा । सतहै साहिब सिरपर मेरा ॥
रामदास संतनका दासा । जुग जुग राम तुम्हारी आसा ॥ ३६

साखी ।

रामदास की वीनती, सांभलिये गुरदेव ।
और कछू माँगूनहीं, जुग जुग तुम्हरी सेव ॥ १ ॥
रामदासकी वीनती, सांभलिये गुरु पाळ ।
रामनाम सुमपइये, मेटो विषय जंजाळ ॥ २ ॥

इति ।

राम ही जप्प अरु तप्प तीरथ सबै । राम ही राम बिन और नाहीं ॥
सत ही द्वीप नव खंड में राम है । राम ही देश परदेश रमता ।
हद बेहद में एक ही राम है । राम ही रहत परगट्ट गुप्ता ॥
राम ही तेज अरु पुंज सो देखता । राम आकार निरकार न्यारा ।
राम ही दृष्टि अरु मुष्ट सो राम है । राम ही देस अदेस प्यारा ॥
राम ही जल जीवादि अरु पवन है । राम ही चंद्र अरु सूर तारा ।
राम ही केतु अरु राहु साक्षासती । राम ही राम सो सत धारा ॥
राम ही मात अरु तात बांधव सबै । राम ही नारि अरु पुरुष होई ।
राम ही राम तिहुँ लोक में रम रहा । राम बिन और दूजा न कोई ॥
राम ही स्वर्ग पाताल भूलोकमें । राम ही धरणि अरु राम गगना ।
रामिया एक ही राम सूं मिल रह्या । राम ही राम कछु नाहिं विघना ॥३॥

(४)

शहर बाजार का खेल आछा मँड्या । आपका आप साथी बुलाया ।
हम्म भी सबै के बीचमें खेलते । गुरांपै जाय सत शब्द लाया ॥
राम रसना कह्या चाल हिरदै गया । पिंड भारी भया पाँच थके ।
दृष्टि कर देखियो मग्न चाले नहीं । जाय अब खेल कुण खाय धके ॥
और ही खेलता राम कूँ रटत है । थके सो थके हम पार बैठे ।
सुरत सो उलटि सुन सिखर में संचरी । गुरू के घाट में जाय पैठे ॥
संत ही बुद्धि सूं सोझ सोझी करै । एक ही पेड सूं ध्यान लावै ।
सुरत उलटाय अरु अगम ऊँचा चढ्या । रामिया राम नीसाण बावै ॥४॥

इति ।

अथ हरिजस लिख्यते ।

राग बिलावल ।

पद १

जाग जाग रे जोगिया, क्यों नहिं नगर जगावै ।
आठ प्रहर जागत रह्यो, सुन शहर बसावै ॥ टेक ।
मुख सेती सुमरण किया, कंठ में चल आया ।
गद गद लहरां सुषम की, सूता जीव जगाया ॥ १ ॥
हिरदै में हरि आविया, चेतन तन सारा ।
बुद्धि कमल परकासिया, जग सेती न्यारा ॥ २ ॥
नाभि कमलमें संत जन, सहजाँ चल आया ।
[illegible] ॥ ३ ॥

रेखता।

(१)

गुरू परताप तें राम हम पाविया। गुरू परताप तें भर्म भागा।
गुरू परताप तें काल दूरै गया। गुरू परताप तें रटण लागा॥
गुरू परताप तें कंठ परकासिया। गुरू परताप तें जीव जागा।
गुरू परताप तें चाल हिरदै गया। गुरू परताप तें ध्यान लागा॥
गुरू परताप तें नाभिमें संचर्या। गुरू परताप अजपाजु होई।
गुरू परताप तें उलट ऊँचा चढ्या। गुरू परताप तें अगम जोई॥
गुरू परताप तें वंक नाली वहै। गुरू परताप तें मेरु आया।
गुरू परताप आकासमें रम रह्या। गुरू परताप ब्रह्मांड छाया॥
गुरू परताप तें तीन धारा मिली। गुरू परताप असनान होई।
गुरू परताप तें गंग जमुना वहै। गुरू परताप सब कर्म खोई॥
गुरू परताप तें जोति सूं मिलगया। गुरू परताप जम हाथ जोड़ै।
गुरू परताप रिधि सिद्धि दासी भई। गुरू परताप चढज्ञान घोड़ै॥
गुरू परताप तें अखंड नोवत वजै। गुरू परताप तिहुं लोक जीता।
गुरू परताप तें राज निर्भै भया। गुरू परताप सबमें वदीता॥
गुरू परताप तें जगत चरणाँ पड़ै। गुरू परताप सुर असुर वंदै।
गुरू परताप की संत महिमा करै। गुरू परताप सब पात खंदै॥
गुरू परताप की कहा महिमा कहूँ। गुरू परताप तें ब्रह्म हूवा।
गुरू परताप तें रामिया राम मिल। गुरू परताप तें नाहिं जूवा॥ १॥

(२)

प्रथम मुख द्वार हम सार सुमरण किया। आठ ही प्रहर हरि नाम ध्याया।
दूसरै कंठ में प्रेम परकासिया। गला में गदगदी स्वाद आया॥
तीसरै हृदामें जाय वासा किया। मधहीमध मिल हीण गाया।
वाज मुरली सुणी जोर नीकाँ गुणी। संतकूं वहुत इतवार आया॥
चतुर्थें नाभिमें शब्द परकासिया। भँवर गुँजार होय एक वाजा।
छेद पाताल अरु उलट पश्चिम दिसा। देखिया गैवका अगम छाजा॥
उलँघिया मेरु आकाशमें घर किया। सहज वरपा वणी एक धारा।
इला अरु पिंगला सुषम गंगा चलै। पीवता वस नखसिकल सारा॥
गगन अंबू गजै अनँत वाजा वजे। धिन्न अव धिन्न सँत भागतेरा।
सद्गुरु महरतें दास रामा कहै। जन्म अरु मरण भव सिट्याफेरा॥ २॥

(३)

राम ही आदि अरु अंत मध राम है। राम ही धरै अरु माहिं वारै।
रोम ही रोममें राम ही रम रह्या। राम ही राम मिल मुक्ति द्वारै॥

पद ४

मनरा तीरथ न्हायले, क्या भटकणसूं काम ।
अठसठ तीरथ सब किया, एक कहा मुख राम ॥ टेक ।
मन माहीं मथुरा बसै, दिलहि द्वारका जान ।
काया काशी न्हायले, आठों पहर सिनान ॥ १ ॥
थारे सोले सहेलड़ी, मिलकर न्हावण जाय ।
तिरवेणीके घाटमें, नित्य स्नान कराय ॥ २ ॥
पाँचों पायर पहरके, चढ़े पचीसूं लार ।
नोबत बाजे गैबकी, मारलियो अहंकार ॥ ३ ॥
हद छाँडी बेहद गया, अगम रह्या लिव लाय ।
जीव सीध मेला भया, सुरमें रह्या समाय ॥ ४ ॥
दसवें देवल परसिया, जागी अंदर ज्योति ।
रामदास जहाँ रमरह्या, पाप पुण्य नहिं छोति ॥ ५ ॥

पद ५

चालो मन उणदेस में । जहाँ संतां का वास ।
जहाँ पहुंच्याँ निरभय हुवे । लगे न जमकी त्रास ॥ टेक ।
पूरब दिशिसूं चालिया । कंठ किया परकास ।
उर भीतर वासा लिया । मगन भया निजदास ॥ १ ॥
अधः कमल परकासिया । खुली बंक की बाट ।
बंकनाल हुइ चालिया । चस्या पछिमके घाट ॥ २ ॥
मेरुदंड उलंघिया । ऊर्ध्व कमल परकास ।
चँदसूर मेला भया । गगन किया जाय वास ॥ ३ ॥
पाँच पचीसों एक हुय । मिल्या त्रिकुटी माँय ।
अनहद बाजा धुर रह्या । हंस मिल्या जहँ जाय ॥ ४ ॥
हंस मिल्या परहंसमें । लागी शून्य समाधि ।
रामदास निर्भय भया । मिल्या पूर्व घर आदि ॥ ५ ॥

पद ६

चलो संतों जहां जाइये । गुरु गोविंदके पास ।
दर्शनसूं सब दुख मिटे । हिरदे भक्ति प्रकास ॥ टेक
श्रवणाँ सुणिया सतगुरू । मनमें उठ्या हुलास ।
सुणत समथ पैंडे चल्या । अति दर्शन की प्यास ॥ १ ॥
दर्शनसूं दुविधा मिटै । नैणा बँध्या सनेह ।
रोम रोम आनँद भया । दूधाँ वूठा मेह ॥ २ ॥

स्वर्ग मृत्यु पाताल में, एको धुन होई ।
तीन लोक चेतन भया, जाग्या सब कोई ॥ ४ ॥
उलट पयाल आकासमें, चढ उलंघे मेरा ।
इला पिंगला सुषमणा, तिरवेणी डेरा ॥ ५ ॥
त्रिकुटी सूं आगे गया, सुन माहिं समाया ।
सुख समाधि सहजाँ लगी, निरभे पद पाया ॥ ६ ॥
मन पवनां पहुँचे नहीं, बुधि जाण न पावै ।
रामदास धिन संतजन, ता घर लिव लावै ॥ ७ ॥

पद २

राम सुमर रे प्राणिया । भूले मत भाई ।
सुमरण विन छूटे नहीं । जम द्वारे जाई ॥ टेक
सब दुनियाँ भरमी फिरे । तीरथ अरु बरता ।
जैसा पाणी ओसका । कोइ काज न सरता ॥ १ ॥
तपसी त्यागी मुनीश्वरा । पढिया अरु पंडिता ।
नाम विना खाली रह्या । सिध उडता अरु गडता ॥ २ ॥
क्या आचार विचार है । क्या साधन सेवा ।
सतगुरु विन पावै नहीं । आतम निज देवा ॥ ३ ॥
जगत भेख एको मता । एकै दिस जावै ।
तत्त नाम जाणै नहीं । फिर गोता खावै ॥ ४ ॥
साधु संगति निशि दिन करै । एक राम धियावै ।
रामदास धिन संतजन । निरभै पद पावै ॥ ५ ॥

रागसोरठ ।

पद ३

मनरे करो गुरां की सेव । उलटि परसो देव ॥ टेक ।
अज्ञानमें मद मोह माता । नामसूं नहिं नेह ।
संतका सत संग विन । होयगा सब खेह ॥ १ ॥
साधु सब ही पंस मेलै, कुपंस मूरख जाय ।
औघट घाटी लूटसी, सबै कूं जम खाय ॥ २ ॥
बेद पाथर भँडी आडी, हाक तीनों देव ।
पारधी जम काळ लूटै, आन करता खेव ॥ ३ ॥
तोड पाथर दाहि करता, दोड माहिर जाय ।
रामिया गुर ज्ञान लाया, उलट सहज समाय ॥ ४ ॥

ब्रह्मा विष्णु शेष अरु शंकर रहे राम लिव लाय रे।
सकल मंड का करता कहिये ज्यों यो संचो पाय रे ॥ १ ॥
गोपीचंद भरथरी संच्यो संच्यो गोरखनाथ रे।
नव नाथों के योही संचय मिल्या निरंजन नाथ रे ॥ २ ॥
चौबीस तिर्थंकराँ योही संचो केवल मिलिया जाय रे।
बहुरि जन्म धरणि नहिं आया सुधर्म जाय समाय रे ॥ ३
सनकादिक अरु सत ऋषीश्वर नवयोगेश्वर पाय रे।
जनक विदेह अरु ध्रुव प्रहलादा रह्या अटलमठ छाय रे ॥ ४
पांडव हरिचंद बली बिभीषण निहचे राज कमाय रे।
शुकदेव व्यास परीक्षत राजा मिल्या मुक्तिमें जाय रे ॥ ५ ॥
राज करंताँ अनेक उधरिया सुणी गुरां की सीख रे।
दुर्वासा ऋषि उलट मिलाया भक्त हेत अंबरीष रे ॥ ६ ॥
वाल्मीकि अरु गनिका शबरी रंका बंका दास रे।
धीवर कुटुंब सहेता ताऱ्या राखलिया हरि पास रे ॥ ७ ॥
नामदेव अरु रामानंदा पीपा धना कबीर रे।
सेना सदना अरु रैदासा मिलिया सुख की सीर रे ॥ ८ ॥
दादू जाय दीनसूं मिलिया सिख साखा बहु लारे रे।
नानग हरीदास ततवेत्ता परसा खोजी पारे रे ॥ ९ ॥
दास मुरारि मलूका ज्ञानी संतदास दरियाव रे।
किसनदास सुखरामा नानग मिल्या ब्रह्म के भाव रे ॥ १० ॥
अनँत कोटि साधू जन पहुँता जाका अंत न पार रे।
केता पतित पारंगत हुवा मिल्या मुक्तिके द्वार रे ॥ ११ ॥
जन हरिराम चरण हम लागा सब संतन का दास रे।
रामदास गुरु गोविंद शरणै पूरी मनकी आस रे ॥ १२ ॥

राग कानड़ो।

पद ९

राम सरीसा और न कोई। जिन सुमऱ्याँ सुख पावै सोई। टेक
राम नामसूं अनेक उधरिया। अनँत कोटि का कारज सरिया ॥ १ ॥
जो हरि सेती लावै प्रीता। राम नाम ताही का मीता ॥ २ ॥
राम नाम जिण ही जिण लीया। तिण तिण वास ब्रह्म में कीया ॥ ३
राम दास इकरामहि ध्याया। परम ज्योति के माहिं समाया ॥ ४ ॥

पद १०

ऐसी जड़ी मोहि सतगुरु दीनी। तन मन अर्प अंतरमें लीनी। टेक
श्रवणाँ सुणत बहुत सुख पाया। निरखत जड़ी नयन खुल आया ॥ १ ॥

परदक्षिणा दंडोत कर । चरण निवाये शीस ।
किरपा कर गुरु देवजी । नाम किया वक्सीस ॥ ३ ॥
मुखसेती सुमरण किया । कंठ जगाया जीव ।
हिरदे हिल मिल होत हैं । नाभि पधारे पीव ॥ ४ ॥
सत पयाल हि छेद कै । उलट पछिम के देश ।
अधःऊर्ध्वं परकासिया । अगम किया परवेस ॥ ५ ॥
अगम देशमें रम रह्या । गगन रह्या गरणाय ।
त्रिवेणीके तख्त पर । हंस विराज्या जाय ॥ ६ ॥
गढ चढिया नौवत धुरी । थप्या ब्रह्म का राज ।
तिहूं लोक कायम किया । मिल्या राममहाराज ॥ ७ ॥
दसवें देवल परसिया । अरस परस दीदार ।
सुरत मिली जाय ब्रह्म सूं । ब्रह्म आप निरकार ॥ ८ ॥
तज आकार निरकार मिल । राम निरंजण राय ।
रामदास केवल मिल्या । सुन्नमें रह्या समाय ॥ ९ ॥

राग सारंग ।

पद ७

संतों संचय करो हरि नामको ।
इण संचयसूं बहुत सुख पावे आदि अंत यो काम को ॥ टेक
दुनिया संचै गर्थ भंडारा सोना रूपा दाम रे ।
संचो रह्यो धूलके माहीं खाय गयो वेकाम रे ॥ १ ॥
जगत भेख मायाके कारण पच मरे दिन रात रे ।
अंतवेर नागा हुय चाले ना कोई संग न साथ रे ॥ २ ॥
दुनियां करे मालकी सेवा दस दिन सरसा थाय रे ।
अंतकाल आडा नहिं आवे जम्म पकड़ लेजाय रे ॥ ३ ॥
सांख्य जोग नवधा अरु तिरगुण स्वर्ग लोक लग जाय रे ।
पावे नहीं ब्रह्म सूं भेटा जन्म धरे धर आय रे ॥ ४ ॥
जोग जग्य जप तप व्रत दाना ये सब फूल कहाय रे ।
फूल देख दुनियाँ लोभाणी अंतकाल कुमलाय रे ॥ ५ ॥
नाम बिना सब संचय झूठा कारज कूड़ होय जाय रे ।
रामदास हक राम रटीजे अमर लोक लेजाय रे ॥ ६ ॥

पद ८

संतो सुखो संचयरो विवेक रे ।
इण संचयसूं अनेक उधरिया नाना पुरुष अलेखरे । टेक

रोम रोममें रम गयो, नाड़ नाड़ निज नाम।
सुंदर सुन्न में पाविया, जहँ अजपा की धाम ॥ ३ ॥
पांचों उलटा एक घर, पश्चिम दिशि की घाट।
सुंदर सहजां सौंपई, तिरवेणीके घाट ॥ ४ ॥
ॐ नहीं अजपा नहीं, नहिं कहण सुनन की बात।
सुंदर मिल्या समाधिमें, कर सतगुरुको साथ ॥ ५ ॥

॥ श्रीः ॥

अथ श्रीदयालुदासजीमहाराजकी फरमाईहुई अनुभवगिरा।

—•—

ब्रह्मस्तुतिः।

नमो राम गुरुदेवजी, जन त्रिकालके वन्द।
विघ्न हरण मंगल करण, रामदास आनन्द ॥ १ ॥

छप्पय छंद।

नमो निरंजन देव सेव किन पार न पायो।
असित अथाह अतोल नमो अनमाप अजायो ॥
एक अखंड अमंड नमो अणभंग अनादम्।
जगमें ज्योति उद्योत नमो निर्भेव सुस्वादम् ॥
नमो निरंजन आपहो कारण करण अपार गत।
रामदास वंदन करै नमो नूर भरपूर तत ॥ १ ॥
नमो राम रमतीत भज्यां आनंद सरूपम्।
करुणामय किरपाल प्रगट तत्काल अनूपम् ॥
संत परम विश्राम राम आधार सदाई।
सदा दयालु निहाल काल व्यापै न कदाई ॥
आप रूप जन जशकरण भगतां विरद वधारणा।
रामदास वंदन करै नमो परम गति वारणा ॥ २ ॥
नमो राम रमतीत प्रथम गुरुदेव दयालम्।
नमो साधु अनादि काल तीनों रिछपालम् ॥
आदि अंत पुनि एक मध्य दुह भक्ति वधावत।
महिमा अमित अथाह पार वरणन किम पावत ॥

संूघत मगन भया मन मेरा । चाखत मिटग्या भरम अँधेरा ॥ २ ॥
पीवत जड़ी हृदयमें ऊगी । चलत लहर नाभी जाय पूगी ॥ ३ ॥
रोम रोममें सर्व वियापी । उलटी जाय अगम घर थापी ॥ ४ ॥
उर अंतर एको धुन लागी । इला पिंगला सुखमण जागी ॥ ५ ॥
मुक्तिद्वारमें प्राण समाया । जन्म मरण दुइ रोग मिटाया ॥ ६ ॥
ब्रह्मादिक सनकादिक जाणै । राम जड़ी शिव शेष वखाणै ॥ ७ ॥
अनंत कोटि संताँ या पाई । रामदास गुरुदेव बताई ॥ ८ ॥

राग विहागड़ो ।

पद ११

गुरु मेरे ऐसी कदर बताई । तातें सुरत शब्द घर आई । टेक
रसना नाम नेम करि लीया । निशि दिन प्रीति लगाई ।
हिरदै माहिं प्रेम परकास्या । आतम की गम पाई ॥ १ ॥
नाभी माहिं नाद परकास्या । सबही वन गूँजाणा ।
पछिम दिसा की बाटी खूली । मेरु दंड हुय जाणा ॥ २ ॥
सहजाँ उलट आदि घर आया । तिरवेणीके तीरा ।
रामदास सुनसागर माहीं । चुगत हंस जहँ हीरा ॥ ३ ॥

पद १२

धिन जाके साधु समागम होई, जाकै विघ्न न व्यापै कोई । टेक
सब तीरथ सन्तनके चरणाँ, सर्घ देवता लारै ।
राम निरंजन राय पधारै, साधू आवत द्वारै ॥ १ ॥
साधू राम एक ही कहिये, जा बिच अंतर नाहीं ।
दर्शन कियां सबै अघ जावै, भक्ति उदै घट माहीं ॥ २ ॥
साधुसंगति सत है जग माहीं, जे कोई शरणै आवै ।
रामदास साधाँ के चरणा, साधू राम मिलावै ॥ ३ ॥

इत्येसकलम् ।

अथ श्रीसुंदर साखी ।

सुंदर सुमरो नाम कूँ, रात दिवस लिव लाय ।
हरिरामदास सतगुरु मिल्या, एक अखंडी ध्याय ॥ १ ॥
रामराम रसणा किया, हिरदै किया प्रकास ।
नाभि कमल अस्थानमें, सुंदर श्वास उश्वास ॥ २ ॥

---

१ समस्त वाणी श्लोकसंख्या ४२८४ ।

अथ गुरुस्तोत्र मंत्र।

छप्पय।

राम संत गुरु साधु आदि परणाम सदाई।
नमस्कार दंडोत प्रेम भक्ताँ सुखदाई॥
मन वच सेवन पूज्य सदा चरणाँको चेरो।
रामस्नेही दास मानज्यो वंदन मेरो॥
संध्या मध्य प्रभातलों सुमरों श्वास निकंदना।
घालवाल शरणागती रामजनाँको वंदना॥ १॥
अष्टअंग दंडोत होत गति आनंद आतम।
पुनि सुपरिक्रमा भाय चाव गुरुगम परमातम॥
शीश नमाय लगाय गुरू पदपंकज परिमल।
बहुत भाँति सस्तुति जोरि जुग तश्वता निरमल॥
अष्टजाम पल पल महीं उदय कार संध्या सिवर।
घालवालके उर बसो श्वास श्वास गुरुपद विवर॥ २॥
हरि सरवर जल भाय मीन शिख क्रीड़ा करहीं।
प्रेम उमंगा लेत हेत दूजा परहरही॥
मघ साँप भ्रम जाल कालसा कीर न खावत।
निर्भय नित्य निगंज सुधा सुमरण रस पावत॥
त्रिविध जलण शीतल करण सुखसागरमें रमरह्या।
रामदास गुरु वंदना घालवाल शरणा लह्या॥ ३॥

---

१ नमस्कारमंत्र—उद्धर मां पापिनं घोरं धर्माचारविवर्जितम्।
नमस्कारेण देवेश संसारार्णवपातकात्॥ १॥

२ दंडवतमंत्र—अपराधसहस्रभाजनं पतितं भीमभवार्णवोदरे।
अगतिं शरणागतं हरे कृपया केवलमात्मसात् कुरु॥ १॥

दंडवत अधिकार—प्रणमेद्दण्डवद्भूमौ भक्तिप्रह्वेण चेतसा।
दशवारं जपेन्मंत्रं ततः स्तोत्रमुदीरयेत्॥ १२॥
(श्रीमद्भागवतस्कं० ६ अ० १९)

चरेद्धोत्तरपर्व स्तुवीत स्तुतिभिः प्रभुम्।
कृत्वा प्रदक्षिणां भूमौ प्रणमेद्दण्डवन्मुदा॥ ४२॥
(श्रीमद्भागवतस्कं० ८ अ० १६)

इस पुंसवन और पयोव्रतके प्रमाणसे स्त्रियोंको भी दंडवतका अधिकार है।

३ प्रदक्षिणमंत्र—यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणपदे पदे॥ १॥

नमो राम कारण करण जुग जुग भक्ति वधार जन।
रामदास वंदन करै दयापाल किरपाल धिन ॥ ३ ॥
सब प्रतिपाल दयालु चराचर पोषण स्वामी।
जल थल जेता जीव पीव रक्षक बहु नामी ॥
अनँत रूप ब्रह्मंड करण कारण दातारा।
रक्षक जीव भूतान स्वामि धिन अगम अपारा ॥
नमस्कार समरथ सदा सबपति सबके ईश तम।
रामदास वंदन करै लहत कहत गति कोन गम ॥ ४ ॥
नमो राम सर्वज्ञ करण कारण कर्तारा।
जगमें ज्योति उद्योत ब्रह्म विस्तार अपारा ॥
नमो अछेद अभेद परम परमातम देवा।
अडिग अनादि अगाध निरंतर नित्य अभेवा ॥
विघ्न हरण मंगल करण चिदानंद व्यापक सकल।
रामदास वंदन करै नमो अजोनी नित अकल ॥ ५ ॥
नमो निरंजन नाथ बात लखणेमें नाँहीं।
शेष रटत पुनि विरंचि पार ताको नहिं पाई ॥
शिव वंदन नित कीन दीन रत पार न पावत।
तीन कालके संत तत्त रत अगम बतावत ॥
कोटि कोटि ब्रह्मांडके भुकमान हुय निमिष अति।
रामदास वंदन करै नमो परम गति अलख मति ॥ ६ ॥
परम परम निजदेव परम परमातम स्वामी।
रहै सकल घट पूर अंतर घट अंतर जामी ॥
नमो परम परमेश सकलकूँ आप उपाये।
चौरासीमें रिझक सकलकूँ चूण चुगाये ॥
बाल तरुण वृद्ध को नहीं बरणाश्रम नहिं माँय।
रामदास वंदन करै नमो अखंडी साय ॥ ७ ॥
नमन नमन तेहि अधर धरण कारज हद माया।
अनंत संत जप मुनिंद पार किनहू नहिं पाया ॥
सबै कहत अप्पार नमो अवगति अनभेदं।
निगम धार आधार ज्योति उद्योति अछेदं ॥
नमो नकुल अकुला अभंग सदा अजोनी अंत जप।
रामदास वंदन करै निरालंब सर्वज्ञ अरूप ॥ ८ ॥

गुप्त भेद परगट करण आतमके विश्रामजी ।
रामदासके मुकुटमणि नमो नमो हरिरामजी ॥ ८ ॥

सिंहथलग्राममहिमावर्णनम् ।

हरि कन्या पुनि जन्म धुर, त अंते कविता खेत ।
देस ताहि पुर वंदना, श्वेत द्वीप साकेत ॥ १ ॥

धाममहिमावर्णनम् ।

मन गज मारण साधु सिंह, इंद्रिय पशू अहार ।
हेमगिरी अस्थान जैन, नवनिधि भक्ति प्रकार ॥ २ ॥
सो प्रथम भिन भिन कही, जन ही के परसाद ।
प्रेमलछन ऊमी जनम, पेरा शंभु दोमाद ॥ ३ ॥

श्रीहरिरामदासजीमहाराजनाममहिमावर्णनम् ।

हरि पधार जिय अघ हन्या हरि गजराज सहाय ।
तार लियो भय सिंधुमें जन्मत मोसर पाय ॥ १ ॥
विघ्न हरण मंगल करण जनकसुतापति नाम ।
जय जय मंगल तासु पद कारलेमो सर सीम ॥ २ ॥
कलीकाल निशि घोरमें हरि हरि कियो प्रकास ।
सत त्रेता द्वापर जहाँ गुरु हरिरामादास ॥ ३ ॥

छप्पय ।

हरि भजत टरत सब फंद द्वंद उप्पाधि विनासत ।
हरि रटत हर न हुय जहर टेर मुख हरि ले निकासत ॥
हरि तत अति उज्जास ज्ञान परकास विज्ञानस ।
हरि सत कल षोडसश असुर सब मेट अज्ञानस ॥
हरिराम स्वामि समर्थ शरण हरण विघ्न अनेक अब ।
जनरामा उछेरंग अँगम निगम साख भाखंत सब ॥ १ ॥

---

१ समुद्र । २ लक्ष्मी । ३ सीता । ४ प्रथमाक्षर (सी) । ५ (थ) । ६ पिंगल अंत (ल) । ७ नाम (सीथल) । ८ हिमाचल । ९ स्थल । १० श्रीहरिरामानन्दजी महाराज । ११ प्रेमलक्षणाभक्ति । १२ उमा=पार्वती । १३ पराभक्ति । १४ जँवाई । १५ हरि । १६ राम । १७ (श्रीहरिरामदासजी महाराज) । १८ नमस्कार । १९ मालिक । २० सूर्य । २१ उच्छ्रित=ऊँचा । २२ आगम=शास्त्र । २३ वेद और शास्त्र यही साक्षी देरहे हैं कि हरि नाम ऊँचा है ।

हरि गुरु संत अनंत कौन वरणत यह शाखा ।
नाम तीन वपु एक जीभ नभ अक्षर भाखा ।
भक्ति विलास प्रकाश दास हेतारथ कारण ।
निर्गुण सहगुण रूप अंध अज्ञान विडारण ॥
शब्द रूप परगट नमो निश्चल सद्गति सिद्ध गुर ।
यह सुस्तोत्र हि मंत्रको दास शिरोमणि वास उर ॥ ४ ॥

इति

धुरमेल ।

हरिरामदास सतगुरु नमो रामनाम परताप सिध ।
भरथखंड उद्योत देस बागड़ थलिजाऊँ ।
सिंहथल शहर सुथान जहाँ नित शीसनमाऊँ ॥
सब संतनको धाम राम भजि भया विख्याता ।
भक्ति मुक्ति दातार ज्ञान अनुभवके शाता ॥
रामदासके प्राणपति अटलवाच भगवान विध ।
हरिरामदास सतगुरु नमो रामनाम परताप सिध ॥ ५ ॥
हरियानंद आनंदघन भक्तिपुंज परगट भये ।
शील साच संतोष दया धीरज गुनवंता ।
प्रेम नेम निज भाव दिव्य दृष्टी बुधिवंता ॥
महाज्ञान सनकादि तत्त्ववेत्ता शिव सागर ।
निरभै नाम प्रताप हंस परमहंस उजागर ॥
भरम भूत अज्ञान निशि काल चोर दूरे गए ।
हरियानंद आनंद घन भक्ति पुंज परगट भए ॥ ६ ॥
अनुभव किरण प्रकाश वहु तरणि उदय ब्रह्म नभ जहाँ ।
भक्तिहि मानसरोत रमे निश्चल मन विरती ।
गुरु आज्ञा अनुसार एक रस निर्भय जुगती ॥
कर्म केतु डर नाहिं जलद माया मिट जाना ।
ज्ञान हृदय चख खुले सब जिय भूल मिटाना ॥
निज सरूप निर्खत भए सिध सरोज फूले यहाँ ।
अनुभव किरण प्रकाश यहु तरणि उदय ब्रह्म नभ जहाँ ॥ ७ ॥
रामदासके मुकुट मणि नमो नमो हरिरामजी ।
प्यार परम आश्रम्म सर्वसूं निरपख न्यारा ।
आनाथ अगम अगाध रामजन रामपियारा ॥
धींका घी ज्यों भया छाछ मायासे न्यारा ।
जग पोहे ज्यों डारि सर्व रस परे पियारा ॥

दोहा ।

नमो तारणा जन समय, परब्रह्म अखिल अनाद ।
यों समाधि मुर्शिद मिले, पूरण अगम अगाद ॥ १ ॥
ज्वाला सुत नभ मध मिले, फेर न सूतर माय ।
यों हरिराम राम तत, उलट पलट नहिँ थाय ॥ २ ॥

अथ उभयगुरुमहिमाअष्टक ।

छंद गीतक ।

नमो नित अवतार हरि जन नमो वार प्रतापयम् ।
सब हरण कल्मष तरण तारण राम मंतर जापयम् ॥
जगजीवतारण दयाधारण दयापाल पधारयम् ।
धिन लोक चवदे माहिं उच्छव भक्ति विरद वधारयम् ॥ १ ॥
जुग सोइ धिन दिन साधुवपुधर समो ज्ञान प्रकाशयम् ।
फुरवस्त अनुभव गस्त आतम त्रिविध ताप विनासयम् ॥
धिन द्वीपजंबू खंडभरतं करण कमज्या भूमयम् ।
उद्योत सिद्धत पंथ हरिपुर मेट माया धूमयम् ॥ २ ॥
तहँ देश मारू मंझ धिन धर गाम जहँ विश्रामयम् ।
धिन सदन हरिजन पतितपावन प्रगट रामसनामयम् ।
धिन वंश अंशज तातमातं सप्त गोत्रजु उधरे ।
जन सफल पावन दरश थावन साधु गंगा अघ हरे ॥ ३ ॥
जन राम निर्मल दर्श उज्वल चरण घाट सरोरयम् ।
शिष हेत भावन उदय कारण मेटि पाप करोरयम् ॥
नित न्हाइ निर्मल साच आशा इष्ट मन वच धारयम् ।
वत धरण नर अरु नारि अंत्यज परश सिद्धत पारयम् ॥ ४ ॥
पड भाग जाग समाज हरिजन काळ जीव पंचायना ।
मिळ अमरपद सिद्ध अगम आनंद राम अमृत पावना ॥
मिळ सर्व तीरथ पुरी सालूं धाम क्षेत्र अनंतयम् ।
सब ग्रंथ अर्थ तत्वसारं मूळमंतर संतयम् ॥ ५ ॥
धिन मोक्षगामी राह मपवर्ग तुळ न तोले आपकम् ।
बच मह्य दोष उचार मुख सुख निस्य महिमादासकम् ॥
छुळसाय सो मन नमो सतगुरु नाम हरिआनंदयम् ।
सुस्थान सिंहथळ प्रणम्य मन वच वारवार सुचंदयम् ॥ ६ ॥
अनपद प्रधारं साधु वारं नमो रामदासयम् ।
मो मुकुट मणि धिन करण कारण चरण शरण निवासयम् ॥

अष्टक।

छंद त्रिभंगी।

अपरम ब्रह्म आपं हणत न कापं मंत्र न जापं मिटतापं।
परमं पद आपं निर्जन तापं मोल न मापं है आपं॥
रूपं नहि तापं लिप्त न छापं आपो आपं अप्पारं।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ १॥
पूरन ब्रह्म आदू सहज समादू भेद उपादू ब्रह्मनादू।
अज्ञान मिटादू छंद हटादू तत्व मिलादू प्रमसादू॥
दिपते जिमि दादू जोग जुगादू कौन बतादू सनकादू।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ २॥
ब्रह्म मुख बाणी सारंग पाणी तह्वत जाणी निरबाणी।
तिरधा बिति जाणी आतम प्राणी घट मध आणी दरसाणी॥
ब्रह्म सुरत समाणी तहँ ठहराणी लिव लगाणी प्रमपारम्।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ ३॥
परमं घर मायं उलट समायं सहज सुनायं थिरतायं।
अचलाचलमायं रतररायं एककछायं उनमायम्॥
तह्वत पद गायं चितवृतिनायं तीन नथायं इकथारं।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ ४॥
अगम अपारू कौन विचारू गाय न पारू गुनथारू।
सहजं ररकारू एक अधारू नमो सुखारू निजसारू॥
अपरम विस्तारू संत मिलारू नाय मकारू ततसारं।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ ५॥
तहँ लिवलायं एक समायं निरँजन रायं सुखगायं।
प्राण प्रचायं चाह मिटायं द्वैत न थायं अखरायम्॥
अधरं घरपायं स्थिरता सायं भय नहि लायं इकतारं
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ ६॥
संतन सब गायं एक बतायं धिन सो ध्यायं पदपायं।
उलट न आयं जुरा न खायं गर्भ न जायं सिद्धकायम्॥
साहिब तुम सायं मिले बधायं धिन धिन थायं विस्तारं।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ ७॥
एकं तज अष्टं मिटे दुखष्टं सोई स्पष्टं सब सष्टं।
अष्टं पुनि इष्टं गावत नष्टं कहे घटतष्टं एकष्टम्॥
वेदं पति दष्टं मुरता चष्टं अंत एकष्टं सिधकारं।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम्॥ ८॥

धिन भूमि जोजन पुर स्थानक साधु चरण सधारयम् ।
धिन राम म्होलो विराजतं नित राम ज्ञान उचारयम् ॥ ७ ॥
धिन दरश कर्ता विघ्न हर्ता दीनदाता आपयम् ।
भय भरम आन उपास खंडण एक आतम जापयम् ॥
परमात्मा परसाय सद्गुरु वार वार प्रणामयम् ।
जिव धालवालं कर निहालं रामदासं रामयम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

राम नाम औपम सदा, तुलै न तोलै आन ।
रामदास पदकंज रज, धालवाल धर ध्यान ॥ १ ॥

अथ श्रीरामदासजीमहाराजमहिमावर्णनम् ।

छुरमेल ।

कलि कवीर पुनि प्रगटे रामदास महाराज धिन ।
भर्म कर्म भव भंज काज कारण जियतारण ।
राम नाम उपदेश भक्ति केवल विस्तारण ॥
काजी पंडित भेष द्वैत पख झगरा मेट्या ।
आतम दृष्टि उद्योत परम परमातम भेट्या ॥
हंस ज्ञान शिवसिद्ध मुख नीर क्षीर निरताय भिन ।
कलि कवीर पुनि प्रगटे रामदास महाराज धिन ॥ १ ॥
मारू धर पावन करी रामदास अवतार नित ।
आन उपाधि कुपंथ भरम अज्ञान मिटाया ।
अनुभव सूर उद्योत नूर आतम दरशाया ॥
धार धरण नर नारि राम भज कारज कीना ।
साँच थाँच उपदेश साधु संगति लिव लीना ॥
धाल धाल वलि वलि समो मन वच क्रम उर ध्यानचित ।
मारू धर पावन करी रामदास अवतार नित ॥ २ ॥
भक्त समो भूमंडमें वलि वलि वारंवार नित ।
समत अठार प्रसिद्ध वर्ष नवको भल आयक ।
शुक्ल पक्ष वैशाख तिथी एकादशि लायक ॥
तादिन उदै उद्योत परस सतगुरु पद पूरा ।
आप आप मिल आय रामभज्र उदै अंकूरा ॥
सद्गुरु मिल सद्गुरु भया धाल वाल धरि ध्यानचित ।
भक्त समो भूमंडमें वलि वलि वारंवार नित ॥ ३ ॥

सबै पात पातं गुरुभ्यो प्रज्ञानं । अनुभ्यो सुनभ्यो यही विद्यमानं ।
इष्टं स सिष्टं प्रतिष्टं प्रकासं । सुपष्टं सुदिष्टं सुमिष्टं अभ्यासं ॥
तुसष्टं कसष्टं नमस्ते अधारं । तिरष्टं हरष्टं मनष्टं हमारं ।
सुचष्टं गुरष्टं यही मंत्र गायं । अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ७ ॥
मंत्रादि अंत्रादि सासा सदायं । जंत्रादि तंत्रादि ग्रंथादि गायं ।
रकारं मकारं गुरू दर्स मत्वं । अनादं जुगादं शिखाँ शिक्षतत्वं ॥
अनुसारं ससारं अपारं त्रिकालं । इडं खंड मंडं अमंडं विचालं ।
इमस्तं शिवस्तं गुरुदेव मायं । अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

कहा अनुज अस्तुति करै, तुम प्रभु अगम अगाद ।
आदि अंत भवतारणा, कारण करणा साद ॥ १ ॥
अष्ट छंद आनंद पढ, दूर होय त्रय ताप ।
यहि विधि गावत ग्रंथ सब, सतगुरु समरथ आप ॥ २ ॥

इति अष्टक ।

अथ साधुको अंग ।

प्रथम साधु मुख रामरत, साच वचन गुरु ज्ञान ।
रामदास मन वच करम, परमातम लिव ध्यान ॥ १ ॥
ज्ञान गरीबी धारणा, मन सबसे निरदोष ।
शील सत्य संतोषता, सरधा सुमरण मोष ॥ २ ॥
साध साधना शब्दकी, उर अंतर मुख एक ।
हितकारी सबका सजन, रामा ज्ञान विवेक ॥ ३ ॥
कहै रहै इकरस दशा, आदि मध्य अँत एक ।
रामा गुरुधर्म आसरै, राम नाम निज टेक ॥ ४ ॥
दया भाव छिम्या समँद, गहरा अगम अथाह ।
दुर्जनता लू की वजण, उष्ण कदे नहि थाह ॥ ५ ॥
दादुर पर करि है कहा, आप हि शीतल होय ।
कठिण बाण दुर्जन वचन, रामा भिदै न कोय ॥ ६ ॥
धाडै काटै झोंकदै, चंदन तजै न बास ।
साधु कसोटी जन सहै, हीरा घणकी त्रास ॥ ७ ॥
रामा बानी चढत है, कनक अग्निके माय ।
साधु कसोटी ज्ञान मन, कर्म मैल जल जाय ॥ ८ ॥
ब्रह्म अग्नि जनकै उदय, जलै वासना मूर ।
रामा साधक भजनका, अष्ट नष्ट मल दूर ॥ ९ ॥

दोहा।

एहहि माहिं सुदिष्ठता, करुनासागर राम।
अबके मेरी मानज्यो, इन जिय सह्यो विराम ॥ १ ॥
छीन छीन छीनत भए, लीव लीन अघत्रास।
अरज करूं हितचित सदा, सतगुरु रामादास ॥ २ ॥

अथअष्टक।

छंदभुजंगी।

मस्ते नमस्ते सदासुखस्वामी। नमस्ते नमस्ते अहो अंतर्यामी।
मस्ते दयालं कृपालं च देवा। नमस्ते भगत्तं समुक्तं स भेवा ॥
मस्ते पराधर्म शब्दं अतीतं। नमस्ते पँचू तीन मनमोह जीतं।
मस्ते रामायं सदायं उधारं। मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ १ ॥
णम्यं च देवादि देवाधिदेवं। अष्टअंग दंडोत उद्योत सेवं।
ंजन निकंजन जीते संत सारे। त्रिकालं कृपालं भगत विरद्धारे ॥
ुगे जुग्गमायं सहायं सुदाता। नमस्ते दयालं कृपालं विख्याता।
भचिंत्यं अमित्तं नमस्ते सपारं। मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ २ ॥
मनःशील मोलं विहंगंसुद्धारं। रतेराम रमतीत भवसिंधुपारं।
भद्रोहं अछोहं अनामं अकामं। समाधं सुसाधं अगाधं प्रणामं ॥
चतुर्पंथिमेकं तजे दसदोषा। निराकार निर्लेप नहिं कालजोषा।
अभय धाम विश्राम आनंद पारं। मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ ३ ॥
जिवं सारतत्वं नमस्ते अपारं। धीरं गँभीरं सधीरं समारं।
अडोलं अपोलं नहीं मान माया। रूपं न धुपं न कंपं न काया ॥
अघंडं अमंडं प्रचंडं अपारं। निराकार निर्धार सर्वंग सारं।
तहाँ जीव सीयं अनेकं गतारं। मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ ४ ॥
(आनं न सेयं अहो देव देयं। पर्यो पायपायं अहो रामरायं।
ममो नाथनाथं भयो साधसाथं। कहा गाय गातं रघोजीपजातं।)
भो प्रभो पावय परमं दयालं। फरंते अहं तहं मेरी सँभालं ॥
विकारं हमारं मिटारं मुरारं। अहो देव आनंद आनंद कारं।
सदा चित्त चाहू करो क्यों न सहायं। भवंतं सु सिष्यं कहा मुख गायं।
भलायं सुलायं सर्वे स्वपन आयं। अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ५ ॥
हमें राम इच्छा करो मम आयं। सरीवं निपाजं सदा सुखसदायं।
मेरी लाज लाजं तुमें महाराजं। आनो पाय रायं सरायं महाराजं ॥
करो जीव रिच्छा सु इच्छा कृपालं। ब्रह्मादि इंद्रादि प्रभादि स्यालं।
मनु इंद्र चंद्र फणीन्द्र पतायं। अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ६ ॥

रामभक्ति परगट करण, जुग जुग माहीं संत ।
संतों महिमा रामदास, भाखा श्री भगवंत ॥ २ ॥

श्रीभगवानवचन ।

मैं साधूँ संतां महीं, संत हमारी देह ।
जे मोकूं सुमि करै, संतांके गुण देह ॥ ३ ॥
दाखी जिग पांडव कथा, छिलका विदुर द्वार ।
व्यास वचन साखी सदा, जाणै सब संसार ॥ ४ ॥
वाल्मीकि पंच ग्रासमें, तुन्यो न जिग असमेद ।
भाव भीलसे हम लिया, संतां माहीं भेद ॥ ५ ॥
पत्र पुष्प फल आदि दे, अन जल भाव विचार ।
साधु समर्पण मम करै, मान लेहु निरधार ॥ ६ ॥
भाव भोग सम भोग नाहिं, संतां के आधीन ।
प्राण सनेही रामजन, भक्ती परगट कीन ॥ ७ ॥
मम स्वरूप निर्धे करण, आदि अंत निजधाम ।
सो संतां में देखियो, परगट साखी राम ॥ ८ ॥
लक्ष्मी आदि वैकुंठ दे, भक्त समी नहि कोय ।
निज निवास निज निधि इहां, रामा परगट जोय ॥ ९ ॥
भक्ती ज्ञान वैराग्य युत, परगट मेरो वास ।
मेरो मग मेरो दरश, परसै रामादास ॥ १० ॥
साधु शब्द मेरी गिरा, अनुभव ग्रंथ अपार ।
जो श्रवणाँ नीकाँ करै, जाय संतके द्वार ॥ ११ ॥
भक्ताँ नाकी नाक मम, भक्ताँ साखी साख ।
आंख नाक आनन वदन, सीस शिरोमणि राख ॥ १२ ॥
हाथ पाँव नख शिख हृदय, अष्टअंग मन बुद्धि ।
सो धरणै जनु संगता, रामा परगट शुद्धि ॥ १३ ॥
भक्त कहै सोई करूं, यह मम टेक निधान ।
कुण प्यारो जय विजयसो, रामा धान्यो प्रान ॥ १४ ॥
मम पद मेरी ईशता, तजी भक्तके काज ।
वाराह नरसिंह मीन हुइ, हयग्रीव कुन साज ॥ १५ ॥
लाज प्रतिज्ञा प्राण मम, बोल बाँह आधार ।
रामा परगट देखलो, जुग जुग जन विस्तार ॥ १६ ॥
शरम सहूं आज्ञा वहूं, रखवालो नित नेम ।
निरबंधण बंधणमई, बँध्यो भावना प्रेम ॥ १७ ॥

जिम था तिम सहजाँ भया, मँद गुण मिट्या विकार।
साधु सनेही रामका, रामा धिन दीदार ॥ १० ॥
निर्मल नयन वायक विमल, अनुभव गिरा उचार।
रामा जनकी पारखा, निर्पख निरणै सार ॥ ११ ॥
हंस दशा एको मता, उन्मत्ता अणराग।
वैर विरोध किणसे नहीं, रामा अगम अथाग ॥ १२ ॥
हरष शोक भय भंजना, शत्रू मित्र समीप।
रामा दश दोषां रहित, हरिजन लखण महीप ॥ १३ ॥
पाहर दशा मिलाप विधि, आतम ब्रह्म इकताय।
रामा सेवक साधुका, पूज्य परमपद पाय ॥ १४ ॥
रामा स्वामी भक्तका, स्वामी अगम अपार।
तन स्वामी स्वामी धणी, देखो तत्त्व विचार ॥ १५ ॥
स्वामी समर्थ एक है, वा रत स्वामी होय।
पुत्रजु पिता सरूप है, रामा पद्धति सोय ॥ १६ ॥
वंश घंश भगवद् भक्त, रामा छाना नाहिं।
आतम परमातम मिले, साधु परमपद माहिं ॥ १७ ॥
साधु अंग हरि रंग है, परमारथ परकाज।
रामा सलिता सिद्ध तरु, जीव उधारण ज्याज ॥ १८ ॥
मेह वूठा तूठा हरी, छाना नाहीं कोय।
रामा साखां सायदां, प्रगट पुकारे लोय ॥ १९ ॥
साधू तुतिया नीर सम, उपला रेख असाद।
जल माहीं कोरा रह्या, रामा जड़ता आद ॥ २० ॥
साधूका दिल मोंम सम, काठी हृदय असाधु।
रामा सोना होय कर, पारस मिल्यो न साधु ॥ २१ ॥
काम क्रोध माया मगज, कदे न उपजे अंग।
रामा मर्मी रामका, साधू मता अभंग ॥ २२ ॥

सोरठा।

देखा धिन जन धाऊ, धालयालु शरणागती।
रामदास महाराज, भल आये जग तारणा ॥ १ ॥

इति।

अथ साधुमहिमाकोअंग।

भक्तपक्ष विरं रामजी, जन जिन कहता कोय।
संतां हित अवतार धर, भगवद्गीता जोय ॥ १ ॥

जनका भाव पधारिके, पीछे मोला होय।
रामा भगवत् धर्ममें, वैरी कहिये सोय ॥ ३५ ॥
हास्य कराये भक्तकी, मेरी नाकी घात।
मस्तक छेदण रामदास, आनदेवकी जात ॥ ३६ ॥
गुरु आज्ञा लोपै दुष्ट, हाथ हमारा लेह।
नुगुरो हुइ जनसे थिडे, रामा पंगुल तेह ॥ ३७ ॥
मेरा पग चाहत अयहय, दासां मांहि विछेप।
रामा भोजन साधुके, हरे स पेट दुखेप ॥ ३८ ॥
वाद करे गुरुदेवसे, जाणीतल मन मोद।
रामा हिरदे घातकी, लह्यो न उत्तम बोद ॥ ३९ ॥
आन मंत्र भूतां यजे, मूक हमारे सोय।
मम मारण सम जाणिये, साधू वेमुख होय ॥ ४० ॥
देश कहा परदेशमें, चाहत घर कुशलात।
मेरो घर है रामजन, सदा हमारे साथ ॥ ४१ ॥
घडे पुरुषके पुत्रकूं, लाड लडावे कोय।
वैठा सूता रोटियां, दोनूं पख सुख होय ॥ ४२ ॥
राम जनाँके दासकी, मान लेउ अरदास।
या लोकाँ परलोकमें, ब्रह्मानंद विलास ॥ ४३ ॥
मोसूं बाँधे प्रीतड़ी, राम जनाँके संग।
मेरो प्यारो होय जद, रामा भक्तां रंग ॥ ४४ ॥
ब्रह्मंड निधि दाता हरी, कमजा कर कोइ लेत।
केवलपद दाता अवश्य, रामा संताँ हेत ॥ ४५ ॥
अंश वंश परगट करण, जहँ अवतार धरंत।
रामा नित अवतार जन, महिमा कोटि अनंत ॥ ४६ ॥
कहा पारसका मोल है, कहा साधुकी जात।
लोहा जिमि कंचन करै, हरिजन ज्ञान विख्यात ॥ ४७ ॥
कामधेनु चिंतामणी, कहा सुरतरुका मोल।
रामा गुण परगट करै, साधू शब्द अतोल ॥ ४८ ॥
हरिजनकूं हीणो गिणै, मेरे हीणो सोय।
कहा ब्राह्मण क्षत्री वैश्य, कुलको चटै न कोय ॥ ४९ ॥
रामा धिन माता पिता, पुत्र भया ते साध।
रामभजन करता रह्या, सत्त गोत मिट व्याध ॥ ५० ॥

चावै तो भक्तूं, जाचक बलिके द्वार।
भयो मलूकके, रामा धिन करतार ॥ १८ ॥
द्दा नाख्या अवश्य, पांडव जिगके माहिं।
लज्जा द्रौपदी, आई तातें ताहिं ॥ १९ ॥
भयोक बालदी, दास खास जनहेत।
पिलायो नारि हुय, रामा नरसी नेत ॥ २० ॥
घट माहीं रामजी, जैमलके जुध भीर।
चढे धायो अवश्य, रामा अपणी पीर ॥ २१ ॥
कासी सारी करी, विपति सही धर रूप।
माधोदासके, आप मिलावण चूंप ॥ २२ ॥
ो सूलो ना गिन्यो, लावण पुरस्यो खीच।
मांकूं कीनी प्रगट, राम जनाके वीच ॥ २३ ॥
ऑं हित केता चरित, महिमा अनँत अपार।
द यह साखी सदा, परसापरस वुद्धार ॥ २४ ॥
मज्जना यक्ता जहाँ, श्रोता लक्ष्मी रूप।
ामा संशय भक्तके, वक्ता आप अनूप ॥ २५ ॥
ाढो राखे जहाँ रहूँ, मेल्हे जाऊं जेथ।
तिकमानू सो घर वडा, भक्ताँ विना न केथ ॥ २६ ॥
ाय प्रतिपालक मैं सदा, सबही मेरा जीव।
भक्ताँ द्रोही द्रोह मम, मेटूं पालण सीव ॥ २७ ॥
मेरो वैरी जगतमें, निंदक सम नहिं कोय।
जड़ा मूल खोऊं अवश्य, रामा मारूं जोय ॥ २८ ॥
प्राण घातकी जगतमें, भक्त द्रोह दुख दाय।
कहै भगवत छोडूं नहीं, तीन लोकके मांय ॥ २९ ॥
बंचे न किनके आसरे, शिव कमला अज ठोर।
रामा रक्षा कुण करे, सब पातक को मोर ॥ ३० ॥
दुरवासाकूं पूछिके, कीज्यो कोई ह्लेश।
राख्यो द्विजवर दुखित को, मेट्यो मनाँ अंदेश ॥ ३१ ॥
जनद्रोह जनसे मिटै, हमसे मिटै न कोय।
हूं चाकर भक्ताँ तणो, महिमा प्रगट सोय ॥ ३२ ॥
धरणी दासी भक्तकी, सबकूं कीनी चाय।
च्यार पदारथ मुक्तिचत, रामा संताँ दाय ॥ ३३ ॥
साधु सन्त मेंटे दुख, सो मेटे सुखधाय।
रामा इतकत इणही, चख फोड़नको पाप ॥ ३४ ॥

साधू दर्शण देखतां, मन परसण हुय जाय।
अमी दृष्टि सतगुरु कृपा, राम बताया मांय ॥ १४ ॥
सूर उदय रजनी मिटे, साधु हरे अज्ञान।
रामा शशि बरषै अमी, शीतल ध्यान विज्ञान ॥ १५ ॥
सर्व पदारथ सर्व सिद्धि, दर्शण प्यार मिलाप।
रामा महातम अगम है, परसे आपोआप ॥ १६ ॥
रामा लाया लोहसी, आतम उरै अंकूर।
जन्म सफल जीवन सफल, नितप्रति साधु हजूर ॥ १७ ॥

इति।

वक्ताजिज्ञासुप्रतिवचन सुखगामीआख्यान।

रामा जेज न कीजिये, मिलतां हरि के संत।
ज्ञान उदय अघ दूरि हुय, आज मिले भगवंत ॥ १ ॥
शब्द ब्रह्म परब्रह्मका, खोले भक्ति भँडार।
रामदास ता भक्तिके, हरिजन बडा उदार ॥ २ ॥
मनरे दासा वंदगी, करिये चित्त लगाय।
यह मोसर दिन पाहुणा, राम कृपातें पाय ॥ ३ ॥
श्वास श्वास छीजत अवश्य, दुष्कर काल करूर।
रामा यातें ऊवरे, समरथ साधु हजूर ॥ ४ ॥
क्षणभंगुरको ठाट है, अल्प आयु कलि काल।
रामा जेज न कीजिये, मिलतां साधु सुकाल ॥ ५ ॥
ज्ञान सीख मन धारिके, दर्शण कीजे साध।
रामा भाव वधारिये, यह है धर्म अगाध ॥ ६ ॥
अड़सठ तीर्थ शिरोमणी, गंगा निर्मल नीर।
सो चाहत जनके चरण, शवरी पद रज खीर ॥ ७ ॥
तुले न तोलै धर्म कोउ, दर्शण साधु मिलाप।
ऊणत जन्माजन्मकी, मेटण त्रिविधहि ताप ॥ ८ ॥
जोग जज्ञ तप दान पुनि, अर्चन वंदन सोय।
रामा तुलै न फल कोउ, राम साधु मिल होय ॥ ९ ॥
राम मिल्या संतां महीं, संतां विना न राम।
आदि अंत मध्य देखलो, रामा जन परणाम ॥ १० ॥

सोरठा।

चालचाल धिन सोय, कोड़ां लाहा जन्मका।
साधु मिल्या सुख होय, अमिट भाव रहज्यो सदा ॥ १ ॥

इति।

सोरठा ।

धिन जननी जग माहिं, हरिजन जिनके पुत्र होय ।
आन विषै दुख दाहि, राम विमुख गंडशूरकी ॥ ५१ ॥
कूख सपूती सोय, सूर सती साधू भए ।
पक्ष उजाले दोय, रामा वंश भलाइयाँ ॥ ५२ ॥

इति ।

अथ साधुदर्शन–मिलाप–माहात्म्यकोअंग ।

दर्शण च्यार प्रकार जन, कहत मुनीश्वर वेद ।
रामा गुरु प्रसादते, जीव उधारण भेद ॥ १ ॥
श्रवण चक्षु दर्शण जनाँ, परसण ज्ञान विचार ।
शब्द दर्श परगट भया, लह्या आप ततसार ॥ २ ॥
प्रथम श्रवण सुण साधुका, दर्शण कीजे जाय ।
रामा महात्म्य अगम है, भक्ति मुक्ति पद पाय ॥ ३ ॥
जन चितवन फल सहस्र हुय, गमन करत लख होय ।
रामा पद अश्वमेध यज्ञ, फले मनोरथ सोय ॥ ४ ॥
विघ्न हरे आनंद करे, रामा दर्शण साद ।
चल ताहीं सुख ऊपजे, फले मनोरथ आद ॥ ५ ॥
आधि व्याधि विक्षिपता, देव चतुर्दश लाग ।
सो सहाय मारग महीं, भक्ती दृढ अनुराग ॥ ६ ॥
धरणि गगन पाणी पवन, चंद सूर पख होय ।
लगन रामजन मिलनकी, उदै पदारथ सोय ॥ ७ ॥
जम चोकी भाजत अवश्य, पंथ पारषद साथ ।
साधू दर्शण जातरा, सहायक त्रिभुवन नाथ ॥ ८ ॥
विघ्नहरण मंगलकरण, आनंद उदय अनंत ।
रामा धिन दिन धिन घड़ी, साधु दर्श भगवंत ॥ ९ ॥
साष्टांग डंडोत करि, देखत शीश नमाय ।
राम राम महाराज मुख, रामा विघ्न विलाय ॥ १० ॥
जन्म करम पातक सकल, हरा गया तत्काल ।
रामा जोरत हाथ जुग, वंदन राम कृपाल ॥ ११ ॥
जमदंड दूरे होय है, अष्टभंग डंडोत ।
चौरासी फेरा मिटै, परिक्रमा फल होत ॥ १२ ॥
दर्शण परसण रामजन, अनंत कोटि संत ज्ञान ।
रामा महातम मानका, शब्द ब्रह्म भाख्यान ॥ १३ ॥

जल माहीं प्रतिबिंब चँद, द्रवे अमी अखंड।
रामा ब्रह्मंड साधु वपु, पूरण ब्रह्म अमंड ॥ १७ ॥
परम पदारथ संत है, भाव दिसावर आद।
रामा महँगा भाव है, कारण भाव प्रसाद ॥ १८ ॥
राम दिसावर साधु है, साधुभावके माँय।
रामा परगट देखलो, साक्षात दरसाय ॥ १९ ॥
लाखां पैसा भावमें, वस्तु देशांतर जाय।
रामदास इक भाव विन, रोवै मूल ठगाय ॥ २० ॥

हाथ पाँव नहिं वस्तु कै, नाहिन किणसूं नेह।
भाव विकावत रामदास, लाखां कोसां तेह ॥ २१ ॥
वस्तु आपणे चाहती, जाको वूझे भाव।
रामा जाय बजारमें, वूझे नहिं सब भाव ॥ २२ ॥

रामा शब्दां भावमें, ब्रह्मानंद गलतान।
राम सिष्यांकी पारखा, दरशण परसण ध्यान ॥ २३ ॥
साधु मेह किनके घरे, राम क्रिपा तहँ जाय।
रामदास आनंद उदय, लीजे भाव वधाय ॥ २४ ॥

तहँ सुगंध जहँ भ्रमर है, मीन नीर अस्थान।
रामा भक्ती भाव है, जहाँ साधु प्रधान ॥ २५ ॥
समर सिंह सूरा जहाँ, वणिक देस व्यवहार।
रामजनाँ विचरे अवस, भाव भक्ति जिण द्वार ॥ २६ ॥
भूख तृषा देखे नहीं, जात पाँति धन धाम।
रामा साँची भावना, संत जहाँ विश्राम ॥ २७ ॥
रामा भोजन भावको, लगे रामके भोग।
भाव विना अमृत गरल, हरिजन जाणे रोग ॥ २८ ॥
व्यंजन चार प्रकारके, छप्पनभोग विलास।
रामा एकण भावमें, जाणे हरिके दास ॥ २९ ॥
रूखा सूखा लूखा फका, भोजन भाव प्रसाद।
रामा महिमा विस्तरी, बोर केळ फल आदि ॥ ३० ॥
गर्व अहार समर्थ करे, भाव जिमावे संत।
रामा तृप्ता होय उर, नमो नमो भगवंत ॥ ३१ ॥
दारिद पयरत्ना सायदू, भाव रामा नहिं कोय।
आसण वासण भावका, ता पीऊ पय होय ॥ ३२ ॥
धान पात हरिजन भखत, रामा आछा भाव।
सुरत देव निवाज लियो, परधम आरत चाव ॥ ३३ ॥

अथ भक्तिभावकोअंग।

रामा भक्ती अंग यह, बरतै ज्ञान विचार।
मन क्रम वच इक धारणा, असिट भाव इकतार॥ १॥
आर्जवता संतोपता, कदे न मन अभिमान।
श्रवण कथा रुचि राम रति, पूजा साधु विधान॥ २॥
साधु वैण सांचा हृदे, कदे न पलटै मन्न।
करै कीर्तन एक रस, राम भजन हरिजन्न॥ ३॥
चरणसेव पूजन जना, वंदन दासा नित्त।
सखा समर्पन भावना, रामा साचे चित्त॥ ४॥
भलाँ पधारे रामजन, आनंद अगम अपार।
आज भयो पावन भवन, रामा भाव वधार॥ ५॥
रामा भाव वधावना, पलकाँ प्राण अवार।
आज भयो वैकुंठ घर, चरण रामजन धार॥ ६॥
पदरज जीव उधार मम, मन मंजन शुधि होय।
चार पदारथ मुक्तिचत, अब संशय नहिं कोय॥ ७॥
आज पधारे रामजी, अमर पुरी पवास।
रामा भाजे राम जन, हरै कठिण जम त्रास॥ ८॥
भूत प्रेत छल छिद्रता, डाकण स्यारी जोय।
मूठ मंत्र भाजे भरम, नवग्रह रहै न कोय॥ ९॥
लाग जाग सारी मिटै, खेड़ा राक्षस दूर।
आज भए पावन परम, साध चरण धिन धूर॥ १०॥
अगड़ बगड़ धिन सोहना, पंथ संत महाराज।
भला विराजे रामजन, आनंद ब्रह्म समाज॥ ११॥
विष्णु ब्रह्मा शिव संत सब, आप सतगुरु संग।
रामा केवल भक्तका, प्राप्ती ज्ञान अभंग॥ १२॥
भक्त भाव कारण सफल, परमपदारथ साद।
रामा भक्ती भाव दृढ, धरम परायण आद॥ १३॥
भाव विना भक्ती नहीं, भक्ति विना नहिं भाव।
रामा किरणाँ सूर मिल, दृगमध्ये दरसाव॥ १४॥
रामा भक्ती भाव मिल, यह सद्गतिके मूल।
रामभजन तत मूल है, मेटण संशय सूल॥ १५॥
रामा भक्ती अंग सब, प्रबल भावतें होय।
राम दिसावर साधुमें, साखी प्रगट जोय॥ १६॥

सता दिखावे विष्णुकी, आणधरे अवतार।
रामविना माने नहीं, हरिजनका मत सार ॥ १० ॥
परगट साखी देखलो, खुदवे टेक कबीर।
रामा रत्ता एकसूं, दूरे झड़या जंझीर ॥ ११ ॥
वालमीकि इक आसरे, परगट परचो होय।
शंख पंचानन पूरियो, हरिजन समो न कोय ॥ १२ ॥
देह धरो केती करो, अंतर गत कहि देत।
संत न मानै राम विन, झूंठ सिधाई नेत ॥ १३ ॥
उडै गडै जल पर चलै, लघु दीरघ हुइ जाय।
मानै नाहीं रामजन, रामा झूठ उपाय ॥ १४ ॥
क्रोड़ पिंड परगट करै, क्रोड़ाँ भुजा अनेक।
रामा हरिजन रामविन, मानै नाहीं एक ॥ १५ ॥
काल काल की जंपना, काल काल वतमान।
रामा एकण रामविन, सबही फोकट ज्ञान ॥ १६ ॥
शक्ती माया मंडही, नाना रूप अनेक।
हरि जन रता अरूपसूं, रामा कारण एक ॥ १७ ॥
राम टेक छांडे नहीं, आदि अंत इक ध्यान।
रामा चवकै देखलो, सूराँ कैसा प्रान ॥ १८ ॥
सती न प्यारा लूगड़ा, दाता गिणै न धन्न।
राम धारणै रामदास, संता कीनो मन्न ॥ १९ ॥
जीव दियो इक राम कूं, राम प्राण पति एक।
तिरो मरो भावे गिरो, रामा डर नहिं नेक ॥ २० ॥
स्वरग नर्क संशय नहीं, जे नर रत्ता राम।
मुक्ति न चंछै रामदास, क्या करणीसे काम ॥ २१ ॥
करणी एको राम है, राम विना शुन सोय।
रामा केवल टेक इक, यामें आनंद होय ॥ २२ ॥
धरिया दिक गांवे लग्या, अपणी अपणी टेक।
जाति पांति कुळ परसतां, रामा करमां रेक ॥ २३ ॥
जोनि धरै गुण विस्तरे, आकृत जीव सभाव।
रामा हरिजन क्यों तजे, राम भजनको डाव ॥ २४ ॥
त्रिय गुण कंठ टीयां रहै, राजस अज निगमेक।
प्रतिपालक सात्विक विष्णु, रामा अपणी टेक ॥ २५ ॥
पखुपानल सिंधु ना तजे, अग्नी चुगे चकोर।
रामा ईश्वर गाजियां, प्रगट पांखे मोर ॥ २६ ॥

गोप ग्वाल भावन भवन, अवध पुरी तरि सोय।
राम दरस नौका भए, पातक रह्यो न कोय ॥ ३४ ॥
राम रूप हरिजन प्रगट, भाव भक्ति आराध।
जुग जुग माहीं देखलो, रामा तारण साध ॥ ३५ ॥
मन वच क्रम सरधा लियाँ, वणै सजनके हेत।
रामा साची भावना, जन्म सफल कर लेत ॥ ३६ ॥
दृष्टि पदारथ बुद्धि लों, उत्तम ब्रह्मंड माहिं।
रामा अरपै भावसूं, सेवग संशय नाहिं ॥ ३७ ॥
निगम पुराण शास्तर कहै, अनुक्रम भाव समेत।
जैसी विधि चित चाहना, जन्म सफल करलेत ॥ ३८ ॥

सोरठा।

भक्ती भाव अपार। धिन जन सेवग साधुका ॥
सहजाँ भवसिंधु पार। चालवाल संशय नहीं ॥ ३९ ॥

इति।

अथटेककोअंग।

टेक एक साराँ सिरै, राम थंभ शिव शेष।
रामा सता अनेक है, ररंकार रत एप ॥ १ ॥
ब्रह्मंड चवदे लोक सब, रामा एक अधार।
पनँग टेक अविचल सदा, जपै एक ररँकार ॥ २ ॥
राम जना परतीत दृढ़, खरो भरोसो एक।
राम विना मानै नहीं, पचि पचि मरो अनेक ॥ ३ ॥
रामा आदि अनादिमें, निरपख निर्भै एक।
राम सुमर अम्मर भया, जुग जुग संत अनेक ॥ ४ ॥
नमो नमो प्रह्लादकी, अविचल टेक सदाहि।
राम कहत रामै मिल्या, रामा वंदौं ताहि ॥ ५ ॥
हिरण्यकशिपु पच पच मरा, कमजा खोई अंध।
अंत टेक साची रही, भक्त टेक परबंध ॥ ६ ॥
रामा हरिजन अगम गति, राम नाम सब टेक।
एकै मांहि अनेक है, एक विना शुन देक ॥ ७ ॥
खंड करूं आकाशका, पछिम उगाऊं सूर।
राम विना मानूं नहीं, हरिजन उदै अंकूर ॥ ८ ॥
रामा कला अनेक करि, कोटि रचे ब्रह्मंड।
रामविना मानै नहीं, हरि जन टेक अखंड ॥ ९ ॥

दुलभ दुलभ नर देह लेह सुमरण रट रामं ।
क्षणिक क्षणिक क्षण भंग जगत अधिपति सब कामं ॥
भगवत् पायक गाय ध्याय दुतिया मध भाखे ।
एकादश प्राकृत काव्य हरि निर्णय दाखे ॥
गुरु प्रसाद सब जन कहै दुलभ देह परकर बवै ।
जन रामा बीताँ अवधि फेर न आसी को कवै ॥ २ ॥

तरु सैं तूटा फूल डार धुर लगै न कोई ।
कागद अंक सकेल पुनि सकेला नहि होई ॥
सती साझ सिणगार तेल तिरिया इक वारा ।
ओला जल गल मिल्या फेर होवै नहिं सारा ॥
मोह वासना नीर मंझि नर देह कदे नहि गालिये ।
जन रामा हरि प्रेम विच गल्या त भव दुख टालिये ॥ ३ ॥

धरण जीव घट मरण राव राजा पतसाई ।
वृत्रासुर हिरण्याक्ष जोध बलि गया विलाई ॥
दशकंधर मुर अंध हिरणकश्यपु चकचूरा ।
षटचक्कवै पट होय वाणासुर मरगे सूरा ॥
छपन कोटि क्षोहणि अठार अवतार धरण सोभी गए ।
जन रामा चवदै भवन अवनि अवधि कहो कुण रहे ॥ ४ ॥

भजो भजोरे राम तजो जगकी चतुराई ।
सजो सजोरे साज काच तन जात विलाई ॥
गया मिलै नहिं बहुरि मुकर भंजन नहिं संदत ।
फोड़ जलन सिल प्रक्षा कहै सोई मति मंदत ॥
जाता निश्चै जाय सब रहता हरि संगी सदा ।
चेत चिंतामणि उरमही तां पाया आतम मुदा ॥ ५ ॥

रहता सतगुरु शब्द एक सरबंग सदाई ।
नमो राम रमतीत गया नहिं भया कदाई ॥
एकै रस अनादि साधु तासूं लिवलायक ।
राम शब्द आराध परम पूरण पद पायक ॥
ज्ञान सूर भरपूर घट तम अज्ञान अघ मेट है ।
जन रामा जीवन सफल सांचा साहिब भेट है ॥ ६ ॥

जन्म सफल कर आज राज मिनखातनु पायो ।
वांछित ब्रह्मा इंद्र करम भोमस कुण नायो ॥
अलभ्य परम अस्थान ज्ञान केवल गति न्यारी ।
योग यज्ञ धर्मंत्र भरमगी बुद्धि हमारी ॥

अनड़ टेक आकाश थिर, जलचर जलके माँय।
थलचर थलमें रहत है, रामा अपणे भाय ॥ २७ ॥
कुरंग मरत है नाद रस, तजै न अपणी टेक।
साधु टेक कैसे तजै, रामा पतिव्रत एक ॥ २८ ॥
देह गेह घर तजत है, कामक्रोधके हेत।
जगसे आया ज्ञानि जन, राम पियाके नेत ॥ २९ ॥
लोभ मोहकी धारमें, झूलत मैंमत होय।
रामा हरिजल झूलता, हरिजन संकै न कोय ॥ ३० ॥
जीव भूत फसणी सहै, श्वासा लेत निधान।
राम टेक जन श्वास है, रामा जीवन प्रान ॥ ३१ ॥
राम टेक जुग जुग अमर, परगट भक्त निसाण।
भक्त विछल विरद विस्तऱ्यो, भगवद वचन प्रमाण ॥ ३२ ॥
राम निभाज्यो टेक इक, यह मेरी अरदास।
जीवत तजै न रामदास, मूवां हरिके पास ॥ ३३ ॥
टेक निभावो रामजी, तन जावो सोवार।
रामदास हरि गुरु कृपा, यह मत जनका सार ॥ ३४ ॥
रामदास अरदास यह, यह सतगुरु वरदान।
मन वच क्रम इक धारणा, राम टेक पख प्रान ॥ ३५ ॥
रामा भवके दुःख को, संशय नहीं लगार।
राम टेक मेरी रखो, आदि अंत इकतार ॥ ३६ ॥
जैसी धारी धारणा, ऐसी अंत निधान।
राम टेक निभज्यो सदा, रामदास गुरु ज्ञान ॥ ३७ ॥

सोरठा।

श्री गुरु समरथ आप, एक भरोसो आसरो।
राम मंत्र जप जाप, धालचाल एकै मही ॥ ३८ ॥

इति।

अथचेतावणीकोअंग ।

छप्पय ।

क्षणिक वीत नरदेह तिनक तूटत फहा धारा।
ज्यों तुपार आदित्य क्षुभित प्रतिबिंब बुहारा ॥
लकरी अग्नि प्रभाव तेल जरताँ बुझ वाती।
सलिता नीरस तीर जात सासा दिन राती ॥
अभ्र छांह सुख सैन फहा यों जग देखत जाहि सब।
जन रामा मोसर दुलभ हरि भज लेवै लाय अब ॥ १ ॥

वायस आहार निहार साँप घर मंदिर माया ।
बैठक गति चमगाद स्थूल अजगरसी काया ॥
कुल बुहार मकरी प्रबंध किण कारण नर तनु धर्‍यो ।
जन रामा किरकट अवधि नाहिं न हरि मुख उच्चर्‍यो ॥ १३ ॥
औसर मौसर जाय जाय जग सगै रसोई ।
कुटुंब मान मनुहार सजन बंधू भृत सोई ॥
कुघट कुपंथ कुप्यार प्यार ता और निभावत ।
राज काज हमगीर लाज मैं वड मैं ध्यावत ॥
आरंभ अनेक उद्यम अशेष मिनखातनु हिम्मत प्रबल ।
जन रामा धृक् जासु बुधि हरि गुरु जन दरसण निर्बल ॥ १४ ॥

इति ।

अथकालचेतावणीकोअंग ।

पुरुष कहत घर मुझह धरणि कह मुझह समावत ।
उलट पलट व्यवहार भेद कोऊ नहिं पावत ॥
चढे अघ के अश्व सेल राजस प्रभुताई ।
अहं साज सम्माज परत भ्रम कूपमें जाई ॥
इंद्र आदि भूपति कहा असुर नाग धर वपुजिता ।
जनरामा संथया कवन विन विचार खावत खता ॥ १ ॥
मरद गरद कर भया अजूं होयणकी वारी ।
महल मंदिर धन धाम रूप युवती सुत नारी ॥
राज वाजि गज कोट सहर सवका वैनायक ।
सुभट सचिव तप तेज गमन गति सुरज जायक ॥
पलन दलन माया महा हाहाज काल सब खाय है ।
जन रामा स्थिर प्रीति कर रहता राम सहाय है ॥ २ ॥
घारै विपरी देह नेह करियाँ क्या होई ।
आसी रहसी नाहिं चिंता करज्यो मत कोई ॥
कहवा सतगुरु संत नाम नातो इक साचो ।
खरा चम्प गुरु संग रंग मननाके राचो ॥
यह झूठो पड़ पंच रचै किणतै सम्बन्ध कीजिये ।
जन रामा सार्‍यां धकां आदि मित्र कर लीजिये ॥ ३ ॥
दिनकर्‍यां मर्‍यांलगु पक हरिजन है तेरा ।
बाप मात गुरु भ्रात पुत्र युवती उरझेरा ॥
मोह बांर मन माह तनु हत अजचर जेता ।
वो धापण दुविचार हार लागा चपेता ॥

नाग लोक तप देव कहा सब वांछित नरदेह धर ।
जन रामा खंड भरतमें चोथो पद मिल सोइ कर ॥ ७ ॥
खरची खावण ठोर और अस्थान अथिर इत ।
कमज्या करण सुखेत हेत नरदेह चेत चित ॥
केवल शब्द अराध साधु सब याकूं गावत ।
निर्भय मिले सुथान बहुरि भय दुख नहिं पावत ॥
या सुखमें मत भूल नर मंडप मंड केता भया ।
जन रामा मेरी मही अंत देख किण दिस गया ॥ ८ ॥
कहाँ वे भोग सँभोग कहाँ मंदिर वे माया ।
हीर चीर सिणगार प्रीत युवती रस छाया ॥
चंद वदन तन कुँदन लजत कंदर्प चख सोहै ।
कहाँ वे रूप किशोर कंज सुत अंत सको है ॥
नव खंड डंड तप स्वर्ग गति इच्छा चक्र वरतत जगत ।
मन प्रकार सुख शक्र लख जन रामा हरि विन अगत ॥ ९ ॥
कहुंक ढरे मैदान चुणत कहुँ कली चढावत ।
कहुंक सुन पैवास कहुं जग नगर वसावत ॥
किसी और मन धीर गीरवो किनको करिये ।
सब जाता संसार राम भज पार उतरिये ॥
चेत हेत हरिनाम तूं झूंठो मोह निवारिये ।
जन रामा मन समझ कर साधु वचन उर धारिये ॥ १० ॥
चेत चेत रे चेत नेति नित ऐसे गावे ।
देव एक आधार पलक वीसर नहिं जावे ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश धारणा एक धरावे ।
सदा ध्यान सम्माधि आदि अनादि समावे ॥
सो औसर अवही मिल्यो चढ विमाण कढ पारवद ।
जन रामा गाफिल नरां जोंण चोरासी पारवद ॥ ११ ॥
इन पुर तें दोय माग इच्छा हुय सहओं जाना ।
एक महा अस्थान एक जम हाथ विकाना ॥
उर विशाल जन साध राम पैंयड़ा भर लीजे ।
निरभै नित आनंद अगम घर आसण कीजे ॥
पर उपकारी संत विन जीवन पंथ गुढावना ।
जन रामा आदू कपत कर सदा दिन पाहुना ॥ १२ ॥
एकर ध्यान सिपाल रासभा उपर जानो ।
हरि वेमुख मतिमंध काल भख उनही मानो ॥

अथ हरिजस।

राग भैरव।

पद १

श्रीगुरु रामदास नित दर्शन ऊठत उदय प्रभाते हो।
अष्ट अंग दंडोत सदा ही त्रिविधि ताप मिटाते हो। टेर
गुरुधर्म भाव परिक्रमा दीजे चौरासी मिट फेरा हो।
दर्शन स्पर्शन मुक्ति प्रामी जन्मजन्मका चेरा हो॥ १॥
भूरि भाग्य सिख राम सभामें आनंद उदय सदाई हो।
त्रिविधि पूजन करिये सतगुरु श्रद्धा भाव बडाई हो॥ २॥
येही नेम प्रेम उर मेरे चरण शरण जिव रहज्यो हो।
घालवाल पर परसन होकर भक्तिदान मोहि दीज्यो हो॥ ३॥

पद २

रामदास गुरु चरणा माहीं रहज्यो चित्त हमारा हो।
यह वरदान जन्मभर चाहूं परचे प्राण अधारा हो॥ टेर
गुरु सेवा मोसर वड भागी धिनधिन आज्ञा माहीं हो।
आये साधु धरम द्वारा सिध भाग्य वडे ओलखाहीं हो॥ १॥
चलता तीर्थ अपवर्ग हरिजन रामकृपाते परसे हो।
जिग अश्वमेधा फल इक पांवडे वडभागी उर दरसे हो॥ २॥
भाव वधावा साधु उछाहा जावे लावे द्वारे हो।
घालवाल उधरण यह नाको गुरुमुख ज्ञान विचारे हो॥ ३॥

पद ३

रातगई परभात भयो है जागो जागण हारा हो।
सतगुरु ज्ञान दृष्टि दिखलावे राम उद्योत अपारा हो॥ टेर
सार असार पदारथ भासे ब्रह्म शक्ति उर माहीं हो।
उत्तम सुमिरण सास उसासा कालतणा डर नाहीं हो॥ १॥
अघ अज्ञान भूत भ्रम भागे शंका डाकण दूरे हो।
ममता नींद मोह मद सुपनो दोऊ दुखांकूं चूरे हो॥ २॥
वीजक दोय अक्षर उर सांचा जीव आद पितु पावे हो।
जन रामा अब जेज न कीजे सतगुरु ज्ञान जगावे हो॥ ३॥

पद ४

चोथे भाग रहत जब रजनी राम सनेही जागे हो।
सतगुरु स्वरूप ध्यान उर धरिये राम भजन में लागे हो। टेर

पञ्च नाम नौका सधर भान पवन जन लेतिरे ।
जन रामा दाता दयालु यह प्रकार कारज करै ॥ ४ ॥
जाप जाप दिन जाप ताहि लेखें अब लायो ।
गाय गाय इक राम पकुरि मौगर नहिं पायो ॥
साय साय गुरु ज्ञान लाय एकण मन धारण ।
ध्याय ध्याय अब ध्याय आप लागा ओधारण ॥
कटक काल दुष्कर महा हरिजन पुरनष्ट छूट है ।
जन रामा पासे गयां सहीन जमरो लूट है ॥ ५ ॥
लूट मंडी मैदान गूटग्या फेर ओधारा ।
अतिरथी महारथी सरब कालानल चारा ॥
फेर घाधा फेर राय कई घायनकी धारी ।
नर सुर असुरह नाग कहा पुरुष रु नारी ॥
सुख विलास रंजन मना भोग भोगायण सब गये ।
जन रामा उर हरि कर फो फो अनमत फो रवे ॥ ६ ॥
खेत खेत नर खेत कहा तेरी ठकुराई ।
ज्यों सीतलहूं पात्र पुराहूं लेत गिलाई ॥
नरपुर देख्यां धार आप दुसरावै महीका ।
धिरप पाट पर भोल रोर अप्त धीत सदीका ॥
कहां मीढी चलचौंह अब भोग आय लागी निकट ।
रामा नाम सम्हारयें के ढीपा लेगी झपट ॥ ७ ॥
निरार गई पोशंड क्रितोंग्दु तदन विलायक ।
पूरव ज्ञान गनु [illegible] पद रूप सहायक ॥
अब [illegible] नाम [illegible] है ।
[illegible] है ॥
[illegible] है ।
जन रामा [illegible] है ॥ ८ ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] है ।
जन रामा [illegible] है ॥ ९ ॥
[illegible]

निशा भूत जमका दूत मिटी राम माया।
निशंक है प्रभात भयो राम नाम गाया ॥ २ ॥
आन चोर जोर भाग भरम जलद नाहीं।
कमल संवल उदयकार दरस परस माहीं ॥ ३ ॥
भजन काज कीजे आज जनम दरद जावे।
परिपूरण परम तत्व रामदास गावे ॥ ४ ॥

पद ८

प्रकट निकट राम संत घटस भरम भागो।
नयन ज्योति रवि उद्योत चरण शरण लागो। टेर
दरश परश सरस नूर सूर साधु सांई।
कमल उदित मुदित प्रज्ञा खुलत प्रेम यांई ॥ १ ॥
सुगंधि भाव चित्त चाव अरथ आनंद पायो।
सिकल विकल मेट मनकी अकल आप गायो ॥ २ ॥
शब्द रब्द होय परचै सुरत सरचे दरसै।
अमर अजर अखर पीव जीव शीव परसै ॥ ३ ॥
कर कल्यान प्रान दान अचल ज्ञान गुरता।
रामदास यह विश्राम ताप मेट मुरता ॥ ४ ॥

पद ९

राखिये महाराज राज शरण राम तेरी।
कली काल जिव विहाल सार अबै मेरी ॥ टेर
मन असाध पंच व्याध करत है घणेरी।
भर्म जाल कर्म काल ठगांमें वसेरी ॥ १ ॥
काम क्रोध लह न बोध चुगल एक चेरी।
मोह द्वार अंधकार जड़ता जंझेरी ॥ २ ॥
बस्यो वास काल ग्रास सास लेत वेरी।
द्याल फरियाद राम साध इच्छा आप केरी ॥ ३ ॥

पद १०

दीन हूं जी दीनबंधु दीन को नहेरो।
महरवान विरदजान प्राण मेट घेरो ॥ टेर
यह पुकार निराधार दरद मेट मेरो।
जन्म जन्म हार मार तार अबै तेरो ॥ १ ॥
विषम घाट भव विराट वेग ही निवेरो।
बुडो जात मैं अनाथ नाथ हाथ तेरो ॥ २ ॥

कारज येही रामसनेही गर्भ का कौल सुधारै हो ।
या जगमें केता दिन रहणा मोह अज्ञान मिटारै हो ॥ १ ॥
स्वप्ने सुक्ख जगत सब रचना भूल भरम नहिं परिये हो ।
राम संत गुरु रीझै तेरा सोई कारज करिये हो ॥ २ ॥
मन वैराग लाग गुरुचरना काया माया झूठी हो ।
लेखे हरि अरपण अब करियै मनसा फेर अपूठी हो ॥ ३ ॥
जन्म सफल सोई वडभागी रामनाम लिव लावै हो ।
घालवाल सतगुरुके शरणै साचा हरिजस गावै हो ॥ ४ ॥

पद ५

आवो मिलो मिल राम सनेही सतगुरु दरसण जाइये हो ।
उदै अंकूर भक्ति उर उपजै राम अमीरस पाइये हो । टेर
जामण मरण क्षेप क्षेय मेटै कल्मष जीव मिटाइये हो ।
गंगा अठसठ तीर्थ यात्रा गुरूधाम परसाइये हो ॥ १ ॥
उधरण घाट सतगुरू आज्ञा हरि जल ज्ञान झुलाइये हो ।
प्रेम प्रवाह गलै मन जब ही भरम अज्ञान नसाइये हो ॥ २ ॥
अनत कोटि जनको नित न्हावण परा परायण एही हो ।
घालवाल मौसर वड भागी साचे भाव सनेही हो ॥ ३ ॥

पद ६

मौसर मिनखा देह मिल्यो है मत कोई गाफिल रहज्यो रे ।
छूटा श्वास बहुरि नहिं आवै राम राम भज लीज्यो रे ॥
जानत है शिर मोत खड़ी है चलणो सांझ सवेरो रे ।
पांच पचीसूं चढे जोरावर लूटत है जिव डेरो रे ॥ १ ॥
नर नारायण शहर मिल्यो है जामें सूँज अपारा रे ।
राम कृपाकर तोहि बसायो यामें काज तुह्मारा रे ॥ २ ॥
जन्म जन्म का खाता चूकै हुय मन रामसनेही रे ।
रामदास सतगुरुके शरणै जन्म सफल कर लेही रे ॥ ३ ॥

राग चरचरी ।

पद ७

जाग रे वडभागि जीव साधु सूर ऊगो ।
ज्ञान पंखि सुरत श्रवण शब्द आदि पूगो ॥ टेर
संत पंथ चलत वृंद मोक्ष द्वार खूलो ।
जगत अगत मेट स्वप्न स्वप्न दूर भूलो ॥ १ ॥

राग काफी ।

पद १४

म्हांरे रामजना घर आया हो ।
बलिजाऊं देख दरस सुख पाया हो ॥ टेक
अनंत उछाह भयो मन आनंद परम पदारथ पाया हो ॥ १ ॥
हिरदो चौक पुराऊं सजनी चित चंदन चरचाया हो ॥ २ ॥
भाव माट केसर रस घोरी महिमा सुगंधि सुहाया हो ॥ ३ ॥
सूंघो प्रीति रीति हरिजनकी ज्ञान गुलाल सुवाया हो ॥ ४ ॥
पिचकारी विरह प्रेम नीर भर नैंन उमंग झड़लाया हो ॥ ५ ॥
आज बसंत संत बिन दरसण सखियाँ मंगल गाया हो ॥ ६ ॥
द्यालबाल बलि जाऊं वेलां हरिजन राम मिलाया हो ॥ ७ ॥

राग कल्याण ।

पद १५

सनेहिया तुम आवो आवो राज महाराज ॥ टेर
निरधारां आधार गुसाँई चरण शरणकी लाज ॥ १ ॥
जन्म जन्मकी प्रीति पुरातन क्यों भूलत हो आज ॥ २ ॥
दीजै दरश दयानिधि माधव मेरे है सिध काज ॥ ३ ॥
द्यालबाल पर कृपा कीजै राम गरीबनिवाज ॥ ४ ॥

पद १६

रामइया शरणैकी प्रतिपाल । टेर
अबलग करी सोई अब कीजै अपने घरकी चाल ॥ १ ॥
जो सूरज परकासै नाहीं रात न कंज विशाल ॥ २ ॥
शशि नहिं अमी द्रवै जो माधव तो निपजै केम रसाल ॥ ३ ॥
विरह कमोदनि जीवन सोई सब लालों सिर लाल ॥ ४ ॥
द्यालबालके समरथ स्वामी रामदास किरपाल ॥ ५ ॥

कामिनी सोरठ ।

पद १७

विरहनि कूं दरशन दीजे, साहिब अपनी करलीजे । टेर
मैं राम पिया बलिहारी, प्रभु मेटो तपत हमारी ।
टुक दया दृष्टि भर देखो, जीवानैं तारन लेखो ॥ १ ॥
जिय जन्म जन्मको झूरे, आशावंत आशा पूरे ।
हरि आदू विरद विचारो, अब पलकां पलक पधारो ॥ २ ॥

बारबार क्यौं विसार बालबाल चेरो ।
रामदास गुरु निवास मेट जन्म फेरो ॥ ३ ॥

पद ११

जुक्ति मुक्ति भक्ति दान शक्ति ब्रह्म दीजे ।
श्रीदयाल गुरु निहाल आज कृपा कीजे ॥ टेर
साधु संग मनूं रंग उमंग प्रेम धारा ।
भाव चाव जन उछाव गाव पीव प्यारा ॥ १ ॥
कुबुद्धि दुबिधा भय अज्ञान मेट माथो जिवका ।
शील सांच उर संतोष नाम दीजै शिवका ॥ २ ॥
मन मनोज मोह रोज जनम ना सतायो ।
दबक सबक डाकनीके भय तैं दौर आयो ॥ ३ ॥
अभय राम जिव विश्राम रामदास सांई ।
बालबाल रिच्छपाल कठिन काल मांई ॥ ४ ॥

रागकालेरो ।

पद १२

सइयाँ म्हारी सतगुरु दरशण जासाँ ए । टेर
मन वैरी की एक न मानूं निज मन भाव वधासाँ ए ॥ १ ॥
सो दिन उदै जनम होय लेखै सनमुख शीस निवासाँ ए ॥ २ ॥
अष्ट अंग दंडोत वंदना परिक्रमा तिर जासाँ ए ॥ ३ ॥
पाय प्रसाद व्याध मिट तीनूं आनंद मंगल गासाँ ए ॥ ४ ॥
श्रीगुरुचरण परस होय निर्मल पातक दूर मिटासाँ ए ॥ ५ ॥
निद्रा वारी है बटपारी तिनसूं युद्ध करासाँ ए ॥ ६ ॥
श्रद्धा दीजो सतगुरु म्हारा करुणा विरद जगासाँ ए ॥ ७ ॥
सुमरण परचेकी अभिलाषा प्रेम नेम वर पासाँ ए ॥ ८ ॥
बालबाल गुरु रामदास धिन आदि अंत निभजासाँ ए ॥ ९ ॥

पद १३

सजनी म्हारी रामसभा बलिहारी ए । टेर
रामसनेही परचै हरिजन चरणकमल बलिहारी ए ॥ १ ॥
तन मन धन निछरावल करसाँ अठसिधि नवनिधि सारी ए ॥ २ ॥
रचना ब्रह्मंड सजूँ सँजीवन अरपूँ वार हजारी ए ॥ ३ ॥
सतगुरुसें मैं ऊरण नाहीं जिण दिया रामधन भारी ए ॥ ४ ॥
बालबाल नित लेऊं बलैया निभज्यो टेक हमारी ए ॥ ५ ॥

राग काफी ।

पद १४

म्हांरै रामजना घर आया हो ।
बलिजाऊं देख दरस सुख पाया हो ॥ टेक
अनंत उछाह भयो मन आनंद परम पदारथ पाया हो ॥ १ ॥
हिरदो चौक पुराऊं सजनी चित चंदन चरचाया हो ॥ २ ॥
भाव माट केसर रस घोरी महिमा सुगंधि सुहाया हो ॥ ३ ॥
सूंधो प्रीति रीति हरिजनकी ज्ञान गुलाल सुवाया हो ॥ ४ ॥
पिचकारी विरह प्रेम नीर भर नैंन उमंग झड़लाया हो ॥ ५ ॥
आज बसंत संत धिन दरसण सखियाँ मंगल गाया हो ॥ ६ ॥
धालबाल बलि जाऊं वेलां हरिजन राम मिलाया हो ॥ ७ ॥

राग कल्याण ।

पद १५

सनेहिया तुम आवो आवो राज महाराज ॥ टेर
निरधारां आधार गुसाँई चरण शरणकी लाज ॥ १ ॥
जन्म जन्मकी प्रीति पुरातन क्यों भूलत हो आज ॥ २ ॥
दीजै दरश दयानिधि माधव मेरे है सिध काज ॥ ३ ॥
धालबाल पर कृपा कीजे राम गरीबनिवाज ॥ ४ ॥

पद १६

रामइया शरणैकी प्रतिपाल । टेर
अबलग करी सोई अब कीजे अपने घरकी चाल ॥ १ ॥
जो सूरज परकासै नाहीं रात न कंज विशाल ॥ २ ॥
शशि नहिं अमी द्रवै जो माधव तो निपजै केम रसाल ॥ ३ ॥
विरह कमोदनि जीवन सोई सब लालों सिर लाल ॥ ४ ॥
धालबालके समरथ स्वामी रामदास किरपाल ॥ ५ ॥

कामिनी सोरठ ।

पद १७

विरहनि कूं दरशन दीजे, साहिब अपनी करलीजे । टेर
मैं राम पिया बलिहारी, प्रभु मेटो तपत हमारी ।
टुक दया दृष्टि भर देखो, जीवानें तारन लेखो ॥ १ ॥
जिय जन्म जन्मको झूरे, आशावंत आशा पूरे ।
हरि आदू बिरद विचारो, अब पलकां पलक पधारो ॥ २ ॥

मोहि श्वास कल्प सम जावे, कब प्रीतम दरश दिखावे।
जन घालबाल बलि जावै, कब राम पिया घर आवै ॥ ३ ॥

पद १८

पूरबली प्रीति विचारो, पिया अब क्यूं मोहि विसारो। टेर
धिन प्राण पुरुषोतम प्यारा, सब आपहि किया पसारा।
कायासा महल बणाया, जिव माया मोह लुभाया ॥ १ ॥
धिन आदू सुरत संभारी, सो आयो शरण तुह्मारी।
नित सहायक विर्दो बारू, यों भक्तवछलता सारू ॥ २ ॥
जिव निर्बल बल अब कांई, सब राम समर्थ शरणाई।
अब आप आज्ञा सोइ कीजे, जन घालबाल जिव जीजे ॥ ३ ॥

पद १९

म्हारो बालो सदा सनेही, धिन प्रीति पुरबली एही। टेर
जिव जन्म धऱ्या नहिं भूलूं, एक सहायक शरणै झूलूं।
धिन यो ठंभन जग माहीं, एक हरि बिन दूजा नाहीं ॥ १ ॥
एक चंद कमोद पियासी, जब देख्यां मन परकासी।
तन मन पियाजी सांचा, बलिजाऊं मनसा वाचा ॥ २ ॥
अब घनहर प्रीतम आवो, विरह चातक टेक निभावो।
संतां धिन सतगुरु गायो, जन घालबाल मन भायो ॥ ३ ॥

पद २०

पिया क्यों नहिं अबै पधारो, घर आदू रीति विचारो। टेर
है अबलाके बल साँई, धृक्क जीव विना देह काँई।
हो अबलाँ प्राण अधारा, बलिजाऊं प्रेम प्रियारा ॥ १ ॥
प्रथुरोमें सुधा मन भावे, इक नीर विना मर जावे।
धिन हरिजन दर्शण तेरा, याहीमें जीवन मेरा ॥ २ ॥
विरहनि मन वच क्रम प्यासी, पिया जीवन जीव जियासी।
तुम घालबालके स्वामी, अब आवो अंतरयामी ॥ ३ ॥

राग देश।

पद २१

बलिजाऊं सिंहथल सहर सुथान।
हरियानंद आनंद के करता अनुभव प्रगट्यो भान। टेर
मान सरोज नगर सोइ दीयो मेटी निशा अज्ञान ॥ १ ॥

---

1 मछली।

सर्व पदारथ दरसन लागा आतम पायो ज्ञान ॥ २ ॥
भर्म उलू कोचर मिट अविद्या निशिचर पंखी हान ॥ ३ ॥
शिष चकवा दिल आनंद उपज्यो प्रेमी कंज विकसान ॥ ४ ॥
विमुख कमोदनि सोई अमूझ्यो वकता चख दरसान ॥ ५ ॥
वालवाल गुरु तरणि एक रस विरदां भक्तिप्रवान ॥ ६ ॥

पद २२

म्हांने प्यारो लागेछे जी मुरधर आज ।
रामभक्ति निज परगट कीन्ही रामदास महाराज ॥ टेर
चार वरणकूं ज्ञान वतायो पावनपतित जहाज ॥ १ ॥
वडभागी जाने ओ मौसर मंडली संत समाज ॥ २ ॥
दरशन परसन रामसनेही गुरु धर्म भाव सकाज ॥ ३ ॥
अनुभव छोलां उरमें प्रगटे आनंद करता साज ॥ ४ ॥
आन देवकी लाग मिटाई अदल बंधाई पाज ॥ ५ ॥
रसद वस्तु सुख संपति सारी रौरव काल न दाज ॥ ६ ॥
सदा सुभिक्ष देश में नवनिधि रामरायके राज ॥ ७ ॥
सतगुरु चरण शरण धर साचो वालवालकी लाज ॥ ८ ॥

मंगल २३

हम परदेसी लोक एक दिन उठ चलैं ।
कहियो रामहि राम वहुरि कवही मिलैं ॥ टेक
वासो वसियो आय प्रभाते पंथ परै ।
गोलूं गोलूं संग क्रमाक्रम ही अरै ॥ १ ॥
डेरा है मैदान सरायां वीच रे ।
जागत रहियो वीर धाड़ वहु मीच रे ॥ २ ॥
राव रंक सुलतान खौसिया भूपती ।
काल महा वलवान सास अति सोखती ॥ ३ ॥
सूरवीर केतान गया सब लोग रे ।
वारो वार विहाय सुपन को जोग रे ॥ ४ ॥
आया एक ही एक एक ही जावणा ।
किणसूं हर्ष न शोक यही मन लावणां ॥ ५ ॥
रामा राम पुकार सत्तगुरुसंग रे ।
निर्भय रसिया संत ज्ञान अणभंग रे ॥ ६ ॥

इति ।

मोहि श्वास कल्प सम जावै, कब प्रीतम दरश दिखावै।
जन घालबाल बलि जावै, कब राम पिया घर आवै ॥ ३ ॥

पद १८

पूरबली प्रीति विचारो, पिया अब क्यूं मोहि विसारो। टेर
धिन प्राण पुरुषोतम प्यारा, सब आपहि किया पसारा।
कायासा महल बणाया, जिव माया मोह लुभाया ॥ १ ॥
धिन आदू सुरत संभारी, सो आयो शरण तुह्मारी।
नित सहायक बिदों वारूं, यों भक्तवछलता सारू ॥ २ ॥
जिव निर्बल बल अब कांई, सब राम समर्थ शरणाई।
अब आप आशा सोइ कीजे, जन घालबाल जिव जीजे ॥ ३ ॥

पद १९

म्हारो वालो सदा सनेही, धिन प्रीति पूरबली एही। टेर
जिव जन्म धऱ्या नहिं भूलूं, एक सहायक शरणै झूलूं।
धिन यो ठंभन जग माहीं, एक हरि बिन दूजा नाहीं ॥ १ ॥
एक चंद कमोद पियासी, जब देख्यां मन परकासी।
तन मन पियाजी सांचा, बलिजाऊं मनसा वाचा ॥ २ ॥
अब धनहर प्रीतम आयो, बिरह चातक टेक निभायो।
संतां धिन सतगुरु गायो, जन घालबाल मन भायो ॥ ३ ॥

पद २०

पिया क्यों नहिं अबै पधारो, धर आदू रीति विचारो। टेर
हैं अबलाके बल साँई, धृक् जीव बिना देह काँई।
हो अबलाँ प्राण अधारा, बलिजाऊं प्रेम प्रियारा ॥ १ ॥
प्रथुरोमें सुधा मन भावे, इक नीर बिना मर जावे।
धिन हरिजन दर्शण तेरा, याहीमें जीवन मेरा ॥ २ ॥
बिरहनि मन बच क्रम प्यासी, पिया जीवन जीव जियासी।
तुम घालबालके स्वामी, अब आवो अंतरयामी ॥ ३ ॥

राग देश।

पद २१

बलिजाऊं सिंहथल सहर सुथान।
हरियानंद आनंद के करता अनुभव प्रगट्यो भान। टेर
मान सरोज नगर सोइ टीयो मेटी निशा अज्ञान ॥ १ ॥

---

१ मछली।



Sri Dayalu Dasji Maharaj

[illegible]

॥ श्रीः ॥

ॐ राँ रामाय नमः ॥

अथ श्रीदयालुदासजी महाराज विरचित सटीक करुणासागरग्रंथप्रारंभः ।

दोहा.

राम गरीबनिवाज को, मोहि बडो विश्वास ॥
जग जामी पालण जगत, सब की पूरै आस ॥ १ ॥

अथटीकाप्रारंभः ।

करुणासागर ग्रंथ की, टीका तरणी नाम ॥
बाल स्वप्न आज्ञा दई, रची सु चोकसराम ॥ १ ॥

श्रीराममहाराज गरीबों के आश्रय दाता, जगत् को उत्पन्न तथा पालन करनेवाले और सब की आशा को पूरी करनेवाले हैं इनका मुझे बडा भरोसा है

शरणाई पंजेर विजय, ऐसा समरथ सामँ ॥
दीनबंधु आनंदता, परमेश्वर परणाम ॥ २ ॥

प्रभु ऐसे सामर्थ्यवान् हैं कि शरणागत प्राणियों को विजय देते हैं और दीनोंके बंधु और आनंद की खान हैं ऐसे परमात्मा को प्रणाम करता हूं ॥ २ ॥

हूं वंदों जाकूं सदा, सब की सुणे पुकार ॥
ब्रह्मा कीट पर्यन्त लों, भयभंजन भरतार ॥ ३ ॥

मैं जिन स्वामी को सदा भजता हूं वे ब्रह्मा से लेकर तुच्छ कीटों तक की पुकार सुनते हैं और उनके भयों को नष्ट करनेवाले हैं ॥ ३ ॥

निर्बल दुखित अराधियो, प्रगट्यो तहँ परमेस ॥
वृद्ध तरुणा भेद नहिं, कहा ध्रुव बालक वेस ॥ ४ ॥

परमात्मा जिनके यहां छोटे बडे (जवान व बुढे) का कोई भेद नहीं उनको तो किसी निर्बल और दुःखित ने जहां आराधा कि वहीं प्रगट हो यथा ध्रुव बालक ॥ ४ ॥

---

१ मनि मानक महँगे किये, सुँगे तृण जल नाज ।
तुलसी तब मैं जानियो, राम गरीबनिवाज ॥ १ ॥

२ लिया । ३ शरीर, अस्थिरोम्न ढांचा, प्राणी । ४ स्वामी । ५ अवस्था ।
६ बरस=अवस्था ।

वक्तव्य ।

एकसमय पहाड़ की गुफा में विराजे हुए श्रीदयालुदासजी महाराज भजन कर रहेथे । उससमय देवताओंसे जिद्द कर महाराज कों छलनेके लिये एक देवांगना सर्गसे उतरी और हाव भाव कटाक्ष से मोहित करने को अनेक यत्न किये परंतु सारे निष्फल हुए । उसने कहा कि मैं देवताओं से जिद्द करके आई हूं एकबेर नेत्र भरकर मुझे देखलो लें। पर आप नही माने । तब देवांगनानें कुपित होकर शाप दिया कि आप असह्य नेत्रों की वेदना से पीडित होवो । यों कह पीछी चली गई । और उसीक्षण आप के नेत्रों में व्यथा शुरु होगई । तो इस कदर हुई कि आप उसे सह नहिं सके । अनेक उपचार किये गये किसीसे कुछ भी नहिं हुआ और दृष्टिभी नष्ट होगई । तब तो अत्यंत दुःखित होकर जिसके अक्षर अक्षर में करुणारस भरा है उस "करुणासागरग्रन्थ" की रचना कर भगवत् को सुनाया । तब तो श्रीराममहाराजने ऐसी आप की करुणा सुनी कि उसीक्षण आप के नेत्र खुलगये और नेत्रों की सारी व्यथा मिटगई । बडा भारी परचा हुआ । वह भक्तिप्रधान यही करुणासागर ग्रंथ है जिसका पाठ करनेसे त्रयतापादि अनेक बाधाएँ दूर होजाती हैं । और आबालवृद्ध राम-स्नेह धर्मावलंबी साधु सद्गृहस्थ जिसका नित्यप्रति पाठ करते हैं । अर्थज्ञान सहित पाठ करनेका शास्त्रों में अधिक माहात्म्य लिखाहै । इस लिये सर्व साधारण के लाभार्थ करुणासागर की तरणी नामक टीका सेवा में सुस-ज्जित कीगई है पाठकवृन्द अवगाहन करें ।

इस के निर्माण में रतलामनिवासी श्रीमान् आत्मारामजी महोदय व रामविलासजी महोदयने पूर्णरीति से सहायता दी है जिसका आभारीहूं ।

विनीत--

चतुर्भुजदास वैद्य.

॥ श्रीः ॥

ॐ रां रामाय नमः ॥

अथ श्रीदयालुदासजी महाराज विरचित सटीक करुणासागरग्रंथप्रारंभः ।

दोहा.

राम गरीबनिवाज को, मोहि बडो विश्वास ॥
जग जामी पालण जगत, सब की पूरे आस ॥ १ ॥

अथटीकाप्रारंभः ।

करुणासागर ग्रंथ की, टीका तरणी नाम ॥
दास सब आशा दई, रची सु चोकसराम ॥ १ ॥

श्रीराममहाराज गरीबों के आश्रय दाता, जगत् को उत्पन्न तथा पालन करनेवाले और सब की आशा को पूरी करनेवाले हैं इनका मुझे बडा भरोसा है ॥१॥

शरणाई पंजर विजय, ऐसा समरथ सामें ॥
दीनबंधु आनंदता, परमेश्वर परणाम ॥ २ ॥

प्रभु ऐसे सामर्थ्यवान् हैं कि शरणागत प्राणियों को विजय देते हैं और गरीबोंके बंधु और आनंद की खान हैं ऐसे परमात्मा को प्रणाम करता हूं ॥ २ ॥

हूं वंदों जाकूं सदा, सब की सुणे पुकार ॥
अजों कीट पर्यन्त लों, भयभंजन भरतार ॥ ३ ॥

मैं जिन स्वामी को सदा भजता हूं वे ब्रह्मा से लेकर तुच्छ कीटों तक सबकी पुकार सुनते हैं और उनके भयों को नष्ट करनेवाले हैं ॥ ३ ॥

निर्बल दुखित अराधियो, प्रगट्यो तहँ परमेस ॥
वृद्धा तरुणा भेद नहिं, कहा ध्रुव बालक वेर्स ॥ ४ ॥

परमात्मा जिनके यहां छोटे बडे (जवान व बुढे) का कोई भेद नहीं है। उनको तो किसी निर्बल और दुःखित ने जहां आराधा कि वहीं प्रगट होगये यथा ध्रुव बालक ॥ ४ ॥

---

१ मणि माणक महँगे किये, सूँगे तृण जल नाज ।
तुलसी तब मैं जानियो, राम गरीबनिवाज ॥ १ ॥

२ पिता । ३ शरीर, अस्थियोंका ढांचा, प्राणी । ४ स्वामी । ५ अज=ब्रह्मा । ६ वयस=अवस्था ।

छंद सारसी ।

ध्रुव बन सिधान्यो वचन मान्यो ध्यान धान्यो एक ए ।
तजि पान नीरू महाधीरू परा पीरू पेखे ए ।
सब ब्रह्म मंजूं उर समंजू सुरत रंजू ताम ए ।
ऐसा गोविंदू कृपासिंधू दीनबंधू राम ए ॥ जी दीनबंधू० ॥ १ ॥
खुले कपाटू विकट घाटू पवन वाटू थक्क ए ।
डुले विराटू शोक काटू भक्त ठाटू शक्क ए ।
षट मास माँई मिले साँई अचल पाई धाम ए ।
ऐसा गोविंदू० ॥ २ ॥

(ध्रुवजी की कथा)

ध्रुवजी माता सुरुचि के ताना देने से पांच वर्ष की अवस्थामें ही बनमें जाकर केवल परम पितामह परमात्मा का ध्यान करने लगे । जिस महाधीर वीर ने सूखे पत्र तथा जल तक परित्याग कर सब से परे दयालु परमेश्वर का दर्शन करने के वास्ते सब ब्रह्मांड जिस ब्रह्म में है ऐसा हृदयकमलमें विराजमान जो ब्रह्म उसमें सुरत लगादी । तदनंतर हृदयकपाट खुलने से अवघट है घाट जिनका ऐसा जो पवन वाट वह थक गया और विराट डुलने लगा । तब भगवान् ने विचारा कि भक्तों का समूह सशंकित होरहा है तिनका शोक मैं दूर करूं ऐसा विचार कर तत्क्षण छठे महीनेमें ही भगवान् ने आकर दर्शन दिये । तब तो ध्रुवजी दर्शन पाकर ३६ हजार वर्ष नीतियुक्त राज्य कर जिनकी कृपासे अचल धाम (ध्रुवपद) को प्राप्त हुए । ऐसे परब्रह्म दयासागर दीनबंधु वे राममहाराज हैं ॥ २ ॥

(भक्तमाल)

प्रह्लाद गायो असुरदाह्यो बहु रिसायो मार ए ।
सर्पां खवायो विष्य पायो गिरि गुरायो जार ए ।
हाथी चुवायो सिंधु ब्रुहायो जहँ जिवायो नाम ए ।
ऐसा गोविंदू० ॥ ३ ॥
कोपे करालू अंध जालू बंध चालू बोल ए ।
सबमें गोपालू है दयालू मारडालू कोल ए ।

---

१ पान=पत्र । २ पर । ३ पेखना=देखना । ४ माँझ=मध्य । ५ तामय=तन्मय । ६ शक=आशंका ।

थंभे विचालू तत्तकालू विरद पालू आमं ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ ४ ॥
नक्खां विदारे उदर फारे असुर मारे आप ए।
भक्तीयधारे संत सारे दुःख हारे कापे ए।
केतान तारे यों उधारे सर्वधारे काम ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ ५ ॥

(प्रल्हादजी की कथा)

भक्त प्रह्लादने "नहिं छांडूं बाबा राम नाम" गाया तब असुर हिरण्यकशिपु सुनकर जला और बहुत रिसाया, प्रह्लाद को मारने के वास्ते सर्पों से डसाया, जहर पाया, पहाड़ से गुड़ाया, अग्निमें जलाया, और उनपर हाथी कुदाया, समुद्रमें बहाया, पर जहां तहां उसी नाम ने प्रह्लादजीको जिवाया। तब वह अंधा जाली हिरण्यकशिपु अत्यंत कुपित होकर बोला कि इस बालकको बांधलो। तब प्रह्लादजीने कहा कि–दयालु गोपाल परमात्मा सबमें व्यापक हैं। उस समय उसने प्रतिज्ञा की कि तुझे अभी मारे डालता हूं तब तत्काल थंभे के बीचमें से विरदवहारू (भक्तका बाना वधारणे वाले) नृसिंह भगवान् प्रगट होकर असुर (हिरण्यकशिपु) के उदरको नखोंसे चीर फाड़के उसे मार दिया। जब इस प्रकार भक्ति को धार संतों के काम सारे तब तो हे प्रभो! मेरे दुःख को भी काटो। क्योंकि आपने कितने ही को तारे और कितने ही को यों उधारे ये सब आप ही के काम हैं ॥ ५ ॥

सवैया।

आरतपाल कृपाल जो राम जहीं सुमिरे तेहिको तहँ ठाढ़े।
नाम प्रताप महा महिमा अकरे किय खोटेउ छोटेउ बाढ़े॥
सेवक एक तें एक अनेक भये तुलसी तिहुँ ताप न डाढ़े।
प्रेम बदौं प्रहलादहि को जिन पाहन ते परमेश्वर काढ़े॥ १॥ (भक्तमाल)

देखो अदप पंगू गिरि उलंघू मनी मंगू तिय ए।
कलवान रंकनू किये नकनू दीन अकनू तर ए।
"इक गिद्ध मानू किये साधू दीय धानू धाम ए।"
ऐसा गोविंदू० ॥ ६ ॥

---

१ थंभे। २ [illegible] । ३ [illegible] है।

छंद सारसी ।

ध्रुव वन सिधाऱ्यो वचन मान्यो ध्यान धाऱ्यो एक ए ।
तजि पाने नीरू महाधीरू परा पीरू पेखे ए ।
सब ब्रह्म मंजूं उर समंजू सुरत रंजू ताम ए ।
ऐसा गोविंदू कृपासिंधू दीनबंधू राम ए ॥ जी दीनबंधू० ॥ १ ॥
खुले कपाटू विकट घाटू पवन घाटू थक ए ।
डुले विराटू शोक काटू भक ठाटू शक ए ।
षट मास माँई मिले साँई अचल पाई धाम ए ।
ऐसा गोविंदू० ॥ २ ॥

(ध्रुवजी की कथा)

ध्रुवजी माता सुरुचि के ताना देने से पांच वर्ष की अवस्थामें ही वनमें जाकर केवल परम पितामह परमात्मा का ध्यान करने लगे । जिस महाधीर बीर ने सूखे पत्र तथा जल तक परित्याग कर सब से परे दयालु परमेश्वर का दर्शन करने के वास्ते सब ब्रह्मांड जिस ब्रह्म में है ऐसा हृदयकमलमें विराजमान जो ब्रह्म उसमें सुरत लगादी । तदनंतर हृदयकपाट खुलने से अवघट है घाट जिनका ऐसा जो पवन वाट वह थक गया और विराट डुलने लगा । तब भगवान् ने विचारा कि भक्तों का समूह सशंकित होरहा है तिनका शोक मैं दूर करूं ऐसा विचार कर तत्क्षण छठे महीनेमें ही भगवान् ने आकर दर्शन दिये । तब तो ध्रुवजी दर्शन पाकर ३६ हजार वर्ष नीतियुक्त राज्य कर जिनकी कृपासे अचल धाम (ध्रुवपद) को प्राप्त हुए । ऐसे परब्रह्म दयासागर दीनबंधु वे राममहाराज हैं ॥ २ ॥

(भक्तमाल)

प्रह्लाद गायो असुरदाह्यो बहु रिसायो मार ए ।
सर्पो खवायो विष्प पायो गिरि गुरायो जार ए ।
हाथी चुवायो सिंधु बुड़ायो जहँ जियायो नाम ए ।
ऐसा गोविंदू० ॥ ३ ॥
कोपे करालू अंध जालू बंध वालू बोल ए ।
सबमें गोपालू है दयालू मारडालू कोल ए ।

---

१ पान=पत्र । २ पर । ३ पेखना=देखना । ४ माँझ=मध्य । ५ तामय=तन्मय । ६ शक=आशंका ।

थंभे विचालू तत्तकालू विरद पालू आमं प।
ऐसा गोविंदू० ॥ ४ ॥
नक्खां विदारे उदर फारे असुर मारे आप प।
भक्तीवधारे संत सारे दुःख झारे कापं प।
केतान तारे यों उबारे सर्वथारे काम प।
ऐसा गोविंदू० ॥ ५ ॥

(प्रल्हादजी की कथा)

भक्त प्रह्लादने "नहिं छांडूं बाबा राम नाम" गाया तब असुर हिरण्यकशिपु सुनकर जला और बहुत रिसाया, प्रह्लाद को मारने के वास्ते सर्पों से सुवाया, जहर पाया, पहाड़ से गुड़ाया, अग्निमें जलाया, और उनपर हाथी छुडाया, समुद्रमें बहाया, पर जहां तहां उसी नाम ने प्रह्लादजीको जिवाया। तब वह अंधा जाली हिरण्यकशिपु अत्यंत कुपित होकर बोला कि इस बालकको बांधलो। तब प्रह्लादजीने कहा कि–दयालु गोपाल परमात्मा सबमें व्यापक हैं। उस समय उसने प्रतिज्ञा की कि तुझे अभी मारे डालता हूं तब तत्काल थंभे के बीचमें से विरदवहारू (भक्तका बाना वधारणे वाले) नृसिंह भगवान् प्रगट होकर असुर (हिरण्यकशिपु) के उदरको नखोंसे चीर फाड़के उसे मार दिया। जब इस प्रकार भक्ति को वधार संतों के काम सारे तब तो हेप्रभो! मेरे दुःख को भी काटो। क्योंकि आपने कितने ही को तारे और कितने ही को यों उबारे ये सब आप ही के काम हैं ॥ ५ ॥

सवैया।

आरतपाल कृपाल जो राम जहीं सुमिरे तेहिको तहँ ठाढ़े।
नाम प्रताप महा महिमा अकरे किय छोटेउ खोटेउ बाढ़े ॥
सेवक एक तें एक अनेक भये तुलसी तिहुँ ताप न डाढ़े।
प्रेम बदौं प्रह्लादहि को जिन पाहन तें परमेश्वर काढ़े ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

देखो अदण पंगू गिरि उलंगू मनी मंगू सिद्ध प।
करनाद रक्कू किये नक्कू दीन अक्कू तद प।
"इक गिद्ध गाधू किये साधू दीध आदू धाम प।"
ऐसा गोविंदू० ॥ ६ ॥

---

१ आगे। २ कटनः=कटना। ३ इस छन्दमें दो कथाएं हैं।

(अरुणजी की कथा)

(१) जिसपर ईश्वर की कृपा होती है उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता है, जैसे सूर्य भगवान् के सारथी अरुण उसकी माता ने जब कि अरुण का अण्डा कच्चा ही था अज्ञान वश पका समझ कर फोड़ दिया उस समय अरुण उसमें से पाँगले निकले । अरुण का विचार हुवा कि क्या मैं भी इस पंगु अवस्थामें कभी पर्वतोंको उल्लंघन कर सकुंगा ? पर ईश्वर की कृपा से वह सूर्य का सारथी हुवा और उसकी मनोकामना सिद्ध होगई और भगवान् ने उसे अक्षयलोक का वास दिया ।

एक समय कश्यपजी ने यज्ञ करने के लिये इंद्रादि देवताओं को आज्ञा दी कि, तुम सब मिलकर यज्ञकाष्ठ लाओ तब सब चले, आज्ञा पाकर अंगुष्ठ प्रमाण साठ हजार बालखिल्य भी चले । वन में जाकर एक लकड़ी उठा कूदते फांदते पीछे आरहेथे इतनेमेंही अकस्मात् रास्तेमें जलसे भरा हुवा एक गऊका खुर आगया उसमें सबके सब साठहजार ही डूबगए, उधर से इंद्र भी आ पहुंचा । बालखिल्यों को तलफते हुए देखकर हंसी की । ओहो इनके लाए हुए काष्ठ से ही यज्ञ पूर्ण होगा । यों कह इंद्र तो चलबना । इधर डूबते हुए बालखिल्यों ने भगवान् से प्रार्थना की तब हरि अवतार धार उस खुर समुद्र से उन्हें बाहर निकाले, तब बालखिल्य इंद्र पर क्रुधित होकर दूसरा इन्द्र बनाने के लिये तपस्या करनें लगे और दूसरा इन्द्र बनाही दिया । यह सुन इंद्र सहित कश्यपजी वहां आए और कहा इन्द्र पर क्षमा प्रदान करो, आपका बनाया हुवा इन्द्र पक्षियों का राजा होगा । बस बालखिल्य प्रसन्न हो तपस्या के बलसे दो अंडे रच कश्यपजी द्वारा पक्षीमाता विनता को दिलवादिये । तब तो इंद्रादि सब प्रसन्न हो वापिस चले आए। कुछ समय बीतने पर अज्ञान वश माताने कच्चा ही अंडा फोड़ डाला तब उसमें से एक पंगला अरुण नाम का बालक निकला और कहने लगा कि माता ! गजब करदिया। अब दूसरे अंडे को तो पूरा पकने देना जिससे तुमको सुख होगा ऐसा कह अरुण तो भगवत् कृपासे सूर्य का सारथी बन पंगु था तो भी गिरि आदिकों को उलंघन करता हुवा अंत में अक्षय लोक को प्राप्त होता भया । तथा हजार वर्ष बीतने पर दूसरे अंडे से पक्षिराज गरुड़जी उत्पन्न हुए जो कि भगवान् के वाहन बने । इति ।

(जटायु की कथा)

(२) मरणोन्मुख जटायु जिसको भगवान् रामचंद्रजी के दर्शन की उत्कट इच्छा थी उसको श्रीभगवान् ने अंतकाल में दर्शन दिया और परम धाम का वासी बनाया ॥ ६ ॥

दोहा ।

गोद शीश धरि पितुसखा, जानि कृपाके धाम ।
झारी धूरि जटायु की, निज जटानसे राम ॥ १ ॥

सवैया ।

दीन मलीन अधीन है अंग विहंग परेउ छिति खिन्न दुखारी ।
"राघव" दीन दयालु कृपालु को देखि दुखी करुणा भइ भारी ।
गीध को गोद में राखि कृपानिधि नैन सरोजन में भरि वारी ।
बारहि बार सुधारत पंख "जटायु" की धूरि जटानसों झारी ॥ १ ॥

दोहा ।

मुये मरत मरि हैं सकल, घरी पहर के बीच ।
लही न काहू आज लों, गीधराज की मीच ॥ १ ॥
रामविरह तन परिहरे, सत्य प्रेम अवधेश ।
तेसहि प्रिय हित तनु तजे, सत्य सखा गृद्धेश ॥ २ ॥ (भक्तमाल)

"शबरी सदाई भक्ति भाई ऋषि नवाई शीस ए" ।
"शिला तिराई नारि थाई नाव माँई बीस ए" ।
"सूवा पढाई पाप दाई गती बाई धाम ए" ।
ऐसा गोविंद॰ ॥ ७ ॥

(बाई शबरी की कथा)

(१) शबरीबाईकी भक्ति सदैव ही भगवान् के मनभाई जिन शबरीबाई को ऋषियों ने मस्तक नवाया ।

"सोइ रघुराज रघुराज पंपा कानन में पूछत फिरत कहो कहाँ मेरी शबरी"

कवित्त ।

आगू चले राम आइ आगू लेन शबरी हू चरण परन धाई मिलन को धाये हैं ।
गिरि दंड ही सो भुज दंड सो उठाय लई फेर के गिरी सो पुनि भुज पसराये हैं ॥
प्रेमदशा कही नहीं जात रघुराज दोउ तनमन वचन की सुधि विसराये हैं ।
भले आप मिले मोहिं भली मिली वेहू यह कहत दुहून के भकारे भरि आये हैं ॥ १ ॥
बेर बेर बेरले सराहैं जनि बेरबेर रसिकविहारी देत बंधु कहँ फेर फेर ।
चाख चाख भाखे यह वाहूते महान मीठो लेहुतो लखण यों बखानत हैं हेर हेर ॥
बेरबेर देवे बेर शबरी सुबेरबेर तोउ रघुवीर बेर बेर तेहिं टेर टेर ।
बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो बेर लावो कहैं बेर बेर ॥ २ ॥
ब्रह्मके उपासी तपरासी बनवासी बर विपुल मुनीशन के आश्रम सिधायो मैं ।
कीन्हे सनमान तिन सहित विधान तऊ काहू ठौर कबहू न पेट भरि खायो मैं ॥
अमृत समान शबरी के इन बेरन में रसिक विहारी मन भायो स्वाद पायो मैं ।
अवध विहाय वन आयो जबतें हों बंधु तबते विचारो सत्य आजही अघायो मैं ॥ ३ ॥

---

१ इस छन्दमें चार कथाएँ हैं ।

(अरुणजी की कथा)

(१) जिसपर ईश्वर की कृपा होती है उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता है, जैसे सूर्य भगवान् के सारथी अरुण उसकी माता ने जब कि अरुण का अण्डा कच्चा ही था अज्ञान वश पका समझ कर फोड़ दिया उस समय अरुण उसमें से पाँगले निकले । अरुण का विचार हुवा कि क्या मैं भी इस पंगु अवस्थामें कभी पर्वतोंको उलंघन कर सकुंगा ? पर ईश्वर की कृपा से वह सूर्य का सारथी हुवा और उसकी मनोकामना सिद्ध होगई और भगवान् ने उसे अक्षयलोक का वास दिया।

एक समय कश्यपजी ने यज्ञ करने के लिये इंद्रादि देवताओं को आज्ञा दी कि, तुम सब मिलकर यज्ञकाष्ठ लाओ तब सब चले, आज्ञा पाकर अंगुष्ठ प्रमाण साठ हजार बालखिल्य भी चले । वन में जाकर एक लकडी उठा कूदते फांदते पीछे आरहेथे इतनेमेंही अकस्मात् रास्तेमें जलसे भरा हुवा एक गऊका खुर आगया उसमें सबके सब साठहजार ही डूबगए, उधर से इंद्र भी आ पहुंचा । बालखिल्यों को तलफते हुए देखकर हंसी की । ओहो इनके लाए हुए काष्ठ से ही यज्ञ पूर्ण होगा । यों कह इंद्र तो चलबना । इधर डूबते हुए बालखिल्यों ने भगवान् से प्रार्थना की तब हरि अवतार धार उस खुर समुद्र से उन्हें बाहर निकाले, तब बालखिल्य इंद्र पर कुपित होकर दूसरा इन्द्र बनाने के लिये तपस्या करने लगे और दूसरा इन्द्र बनाही दिया । यह सुन इंद्र सहित कश्यपजी वहां आए और कहा इन्द्र पर क्षमा प्रदान करो, आपका बनाया हुवा इन्द्र पक्षियों का राजा होगा । बस बालखिल्य प्रसन्न हो तपस्या के बलसे दो अंडे रच कश्यपजी द्वारा पक्षीमाता विनता को दिलवादिये । तब तो इंद्रादि सब प्रसन्न हो वापिस चले आए। कुछ समय बीतने पर अज्ञान वश माताने कच्चा ही अंडा फोड़ डाला तब उसमें से एक पंगला अरुण नाम का बालक निकला और कहने लगा कि माता ! गजब करदिया । अब दूसरे अंडे को तो पूरा पकने देना जिससे तुमको सुख होगा ऐसा कह अरुण तो भगवत् कृपासे सूर्य का सारथी बन पंगू था तो भी गिरि आदिकों को उल्लंघन करता हुवा अंत में अक्षय लोक को प्राप्त होता भया । तथा हजार वर्ष बीतने पर दूसरे अंडे से पक्षिराज गरुड़जी उत्पन्न हुए जो कि भगवान् के वाहन बने । इति ।

(जटायु की कथा)

(२) मरणोन्मुख जटायु जिसको भगवान् रामचंद्रजी के दर्शन की उत्कट इच्छा थी उसको श्रीभगवान् ने अंतकाल में दर्शन दिया और परम धाम का वासी बनाया ॥ ६ ॥

दोहा ।

गोद सीस धरि पितुसखा, जानि कृपाके भाव ।
झारी धूरि जटायु की, निज जटानसे राम ॥ १ ॥

एक गनिका ने सूवे को राम राम पढ़ाना शुरू किया। एक समय रात्रि में पींजरा खुला रहने से सूवे को तो बिल्ली लेगई और वहाँ एक सर्प घुस गया। बेगन गनिका ने अंधेरे में ही पींजरे में हाथ डाल सूवे को पढ़ाना चाहा इतने ही में सांप उसे डसगया। गनिका ने कहा सूवा राम राम कह इस प्रकार कहते कहते सांप के जहर से वह गनिका मरकर नामके प्रताप से सद्गति को प्राप्त होगई। इति।

ईक असुर पर्‌यु शरण लह्यु चिरंजह्यु भाख ए।
ता सुक्ख दह्युँ मोख भह्युँ दोष नह्युँ साख ए।
"भूत फीश फह्युँ" "भालु लह्युँ प्रीति पह्युँ जामें ए"।
ऐसा गोविंद॰ ॥ ८ ॥

(विभीषणजी की कथा)

(१) एक असुर विभीषण ने रावण से भयभीत होकर रामजी की शरण ली। तब भगवान् उसे "चिरंजीवी हो" इस प्रकार कहकर अभयदानरूपी सुख दिया। बाली के दोषों के समान होते हुए भी उसके दोषों को न देखते हुए भगवान् ने अंत में उसे मोक्ष का भागी बना दिया। बाल्मीकि आदि ग्रंथों में ऐसी साक्षी है ॥

कवित्त।

पाऊँगो हमेश अंग बसन उतारे सबै दीन जानि अधिक कृपालु मन भाऊँगो।
भाऊँगो अहेर संग धाऊँगो बताऊँ पंथ दुर्लभ पुनीत नित्य झूँठनको खाऊँगो॥
खाऊँगो प्रसाद दास रामको कहाऊँ भलो रसिकविहारी तजि अनँत न जाऊँगो।
जाऊँगो अवध निज जनम गमाऊँ तहाँ गाऊँगो सु कीरति परमपद पाऊँगो ॥ १ ॥

छंद मत्तगयंद।

पोढन कूं तृण के पथरे अरु ओढ़न को पट है बकलीके।
भोजन याम मिलै कबहू कवहूक भखै फल है कदलीके॥
संपति को परवेश यहैं स महादुख देह विदेहलली के।
तादिन लंक दई जो बिभीषण हाथ नदौं रघुनाथ बलीके ॥ १ ॥
वेद विरुद्ध महामुनि सिद्ध सशोक सुरासुर लोक उजार्‌यो।
और कहाकहुं सीय हरी तबहू करुणानिधि कोप निवार्‌यो॥
सेवक क्षोभ ते छांडि क्षमा तुलसी लख्यो राम सुभाव तुझार्‌यो।
तोलों न दावि दल्यो दशकंधर जोलों बिभीषण लात न मार्‌यो ॥ १ ॥

---

१ इस छन्दमें तीन कथाएँ हैं। २ भी=भय। ३ जांबवंत।

सवैया।

प्रभु चाहत हैं निह केवल भक्ति न चाहत रूप कुलै बल हैं।
रसरूमणी चलि भीलिनको निज मातु समान मिलै कल हैं॥
रघुनन्दन भाव सु भूख भरे फल खाय अघाय पिये जल हैं।
शबरी के सुप्रेम पगे भल ये फल हैं कि चहूं फल के फल हैं॥ १॥

दोहा।

प्रेम पगे चखि चार फल, कौशल्या के लाल।
भक्तन की कबरीमणी, शबरी करी कृपाल॥ १॥
अधिक बढावत आपते, जन महिमा रघुवीर।
शबरी पद रज परसिकै, शुद्ध भयो सरनीर॥ २॥ (भक्तमाल)

(अहिल्याजी की कथा)

(२) जो अहिल्या शापवशात् शिला होगई थी वह भगवच्चरणरज के प्रभाव से तिरकर उत्तम तपोमूर्ति सी होकर पतिलोक को प्राप्त हुई।

(३) केवट ने एक नौका से ही अपने बीसों ही कुटुम्बियों का उद्धार कर लिया।

छन्द।

पद कमल धोइ चढाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम! राउरि आन दशरथ शपथ सब सांची कहौं॥
बरु तीर मारहिं लखन पै जब लगि न पांव पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पार उतारिहौं॥ १॥

कवित्त।

प्रभु रुख पाइकै बुलाइ बालक घरनि, वंदि कै चरण चहुंदिशि बैठे घेरि घेरि।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानी गंगाजू को, धोय पायँ पियत पुनीत वारि फेरिफेरि॥
तुलसी सराहैं ताको भाग सानुराग सुर, बरषि सुमन जय जय कहैं टेरि टेरि।
विबुध सनेहसानी बानी असयानी सुनि, हँसे राघो जानकी लखन तन हेरिहेरि॥१॥

दोहा।

पद पखारि जल पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारकरि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयउ लै पार॥ १॥ (भक्तमाल)

(गणिका की कथा)

(४) पापरूप गनिकाने सूवेको पढाया तिससे वह भी गति को प्राप्त होगई॥ ७॥

(मच्छावतार की कथा)

(२) इसी प्रकार किसी कल्प में मच्छावतार धारण कर राजा सत्यव्रत को उपदेश दे वेदों को ला ब्रह्माजी को सौंपे ॥ ९ ॥

(श्रीमद्भागवतस्कंध ८ अध्याय २४)

वरदान पाए शिव रिझाए भस्म भाए विंकरू।
महा कष्ट पाए ऊठ धाए दीन थाए शंकरू।
शिवा सवाए आप आए हत्यो ताए छामें ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १० ॥

(महादेवजी और भस्मासुरकी कथा)

भस्मासुर नामक असुर ने महादेवजी को रिझा कर मनभावता विकराल वरदान प्राप्त किया। बाद में शंकर उस भस्मासुर से महाकष्ट पाकर दीन हो उठ भागे तब भगवान् आप आकर पार्वतीका रूप बना उसे छल तत्क्षण उस दुष्ट को मारडाला।

शकुनीके पुत्र वृकासुर उपनाम भस्मासुरने नारदजी के कहने से शरीर को अग्निमें होम आशुतोष महादेवको प्रसन्न कर क्रूर वरदान मांगा कि जिसके शिरपर हाथ धरूं वही भस्म होजाय। भोलेनाथने कह दिया तथास्तु। तब तो उस दुष्टने शिव ही पर हाथ फेरना चाहा। वरकी परीक्षा होजाय और पार्वती भी हाथ लग जाय। अब तो भगे कैलासपति वह भी लगा पीछे। इस तरह से शंकरको दुखित देख भगवान् पार्वतीका रूप धारण कर बोले प्यारे ठहर! कहां जारहा है! मैं तो कबसे तेरी इंतजारीमें खड़ी हूं। वह मोहित हो हाथ ऊंचा कर नाचने लगा। हाथ शिरपर आते ही वह मुआ मिला फलतमा उसके भस्म होने से महादेव प्रसन्न हुए। प्रभु ने कहा हे भोलेशंभो! ऐसा वरदान दुष्टों को मत दिया करो। इति।

क्रीडा समंदू गज्ज थंदू ग्राह फंदू रष्ष ए।
करष्यो गयंदू दुख निंदू संदू मंदू राष ए।
हरो फदंदू हरि हरंदू मेटि दंदू भ्रामं ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ ११ ॥

---

१ विकराल—भयानक। २ पार्वती। ३ जिस—जल। ४ समुद्र। ५ जिंद—शरीर। ६ मध्य। ७ दुःख।

मातको मोह न द्रोह कुमातको तातको सोच न गात दहेको।
राजको लोभ न प्रानको क्षोभ न बंधु बिछोह न औधि रहेको॥
नेक न जीवमें आवत केशव सोच न लंकमें सीय रहेको।
ता रन भूमिमें राम कहै मोहिं सोच बिभीषण भूप कहेको॥ २॥
(भक्तमाल)

(हनुमानजी की कथा)

(२) हनुमानजी को प्रभु ने निज का दास बनाया। भक्तवत्सल श्रीरामचंद्र स्वामी ने निज मुख से फरमाया कि हे हनुमान्! तू मेरा सच्चा पायक है।

"तू म्हारो खरोरे सिपाई रे हनुमंता तू म्हारो खरो रे सिपाई"
"गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई। बार बार प्रभु निज मुख गाई"

सोरठा।

सेइय श्रीहनुमान, भुक्ति मुक्ति हरिभक्ति प्रद॥
जनरक्षक भगवान, वीर धीर करुणायतन॥ १॥ (भक्तमाल)

(जाँबवन्तजी की कथा)

(३) जांबवानजी भालू थे परन्तु उनकी भगवान् में सच्ची प्रीति पाई गई।

दोहा।

बलि बाँधत प्रभु बाढेउ, सो तनु बरणि न जाइ।
उभय घरीमें दीन्ह मैं, सात प्रदक्षिण धाइ॥ १॥ (भक्तमाल)

"दुखी असाम्रू वेद छिन्नू बहु रुदन्नू अज्ज प"।
हा हा विपन्नू हुय प्रसन्नू धारि तन्नू कज्जे प।
"मच्छा हग्रीवूँ भक्ति सीवूँ निगम कीवूँ ठाम प"।
येसा गोविंदू० ॥ ९॥

(हयग्रीवावतार की कथा)

(१) दुष्ट शंखासुर ब्रह्माजी से वेद छीनकर लेगया। जब ब्रह्माजी ने हाहाकार कर बहुत रुदन किया तब भक्तिके सीम विष्णुनारायण प्रसन्न हो उनके कार्य के वास्ते हयग्रीव अवतार धारण कर वेदों को पीछा ला ब्रह्माजी के सुपुर्द किये।

---

१ इस छन्दमें दो कथाएँ हैं। २ असन=भोजन। ३ विष्णु। ४ काज=कार्य। ५ हयग्रीव।

गज पर सिंह जैसे सिंह हू पै सारदूल सारदूल हू पै जैसे सरभ उदार है।
सुरभ पै जैसे नरसिंह भाखे रघुराज पापन पै तैसे हरिनामको उचार है ॥ १ ॥

दोहा।

शक्ति जिती हरिनाम में, पापदहन की होय।
तेती पातक पातकी, करि न सकत जग कोय ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

लाखा गृहाय जालदाय पांडुमाय राख ए।
द्रोही खपाय समर साय विजैताय भाख ए ॥
दोषण मिटाय पुराण गाय सखा साय भामें ए।
ऐसा गोविंदु० ॥ १३ ॥

(पांडवों की कथा)

दुर्योधन ने पांडवों को लाखागृह के अंदर जलादेने में बड़ी कोशिश की, परंतु जिन श्रीकृष्ण ने माता सहित पांडवों की रक्षा की और समर में स्वयं सहायक हो शत्रुओं को खपाकर विजय करवाई, और कुंड गोलक आदि दोषण मिटा जिन पांडवों की कीर्ति पुराणों में विख्यात की। देखो जिन कृष्ण महाराज की कृपालुता कि अर्जुन सखा तो था ही, परंतु इसके सिवाय आपने अर्जुन को अपनी बहन सुभद्रा परणाकर अपना बहनोई भी बना लिया। धन्य है प्रभु धन्य है आपकी दयालुता को।

(भक्तमाल)

सभ्भा मँझारी दुष्ट ख्वारी कर उघारी काज ए।
हा हा पुकारी पांडु नारी लाज म्हारी आज ए।
अम्बर वधारी प्रीति पारी कष्ट टारी वाम ए।
ऐसा गोविंदु० ॥ १४ ॥

(द्रौपदीजी की कथा)

सभा के बीच दुष्ट दुःशासन ने द्रौपदी को बेइज्जती के साथ उघाड़ी करना चाहा, उस समय आर्त नाद से द्रौपदी ने पुकारा (अर्जी स्वीकारो स्नेही सांवरिया करुणासिंधु मुरारी) हे प्रभो! मेरी लाज आज की ही है अर्थात् आज लाज चली जायगी। तब आर्तहरण दीनदयालु ने प्रीति पालने के लिये वस्त्र वधार कर द्रौपदी का कष्ट टाला।

---

१ बहिनोई। २ वस्त्र।

(गजेन्द्र की कथा)

जब गजेंद्रने क्रीडार्थ समुद्रमें प्रवेश किया तब ही ग्राहने फंदा रचकर गजेंद्र को अंदर खींचा। शरीर डूब गया। केवल शूंडमें ही सचाई रही। उस समय गजेंद्र ने ररररर ऐसा पुकारा। पुकार सुनते ही हरि अवतार धारण कर उसके कष्ट को हर लिया और गजग्राह के परस्पर का क्लेश मिटाकर दोनों को परम धाम दिया।

कवित्त।

पोढे निज भौन में सुथान में कृपानिधान एवे गज दीन बानि परी आन कान में।
कढत ही अचान कमला हू न पाए जान एक पानि चक्र उपधान एक पान में॥
ताही अवसान तजे तारक पयान में स दौरिबे अपान प्रेर्यो चक्र कौं अगानमें।
ग्राह गज तान में न कीनी ढील आन में हुंकारभो सुथान में रुकार भो विमानमें॥१॥

दोहा।

हरे चरें तापहि बरे, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत जग, परमारथ रघुनाथ॥१॥
बडे दीनको दुख सुनत, देत दया उर आन।
हरि हाथी सूं कब हुती, कहु रहीम पहिचान॥२॥ (भक्तमाल)

द्विज भयो घेलू अजामेलू कामकेलू धाम प।
जमदूत खेलू काल बेलू कंठ मेलू ग्रामे प।
सुत हेत हेलू नामलेलू फर उचेलू साम प।
ऐसा गोविंदू०॥१२॥

(अजामिल की कथा)

एक अजामिल नामक ब्राह्मण वेश्या के साथ काम क्रीड़ा में बड़ा विह्वल होगया था। जब अंत के समय में जमदूतों ने आकर अपना खेल खेला ही। तब कंठ के मिलते हुए ग्राम से अर्थात् दबे कंठ से पुत्रके बाहने हे राम नारायण! ऐसा नाम लेकर हेला किया तब राम महाराजने उसको जमदूतों से बचाकर परमधाम दिया।

कवित्त।

चंदन पै भुंग जैसे मूंग पै विहंग जैसे विपुल विहंग पै ज्यों बाज ओरवार है।
बाजपै ज्यों मारजार मारजार पै ज्यों स्वान स्वान पै तेंदुआ त्यों गज मतवार है॥

---

१ विह्वल। २ वेला=समय। ३ ग्रास। ४ पुकारना। ५ जगाया।

कबै आप गयेथे बिसाहन बजार बीच कबै बोलि जुलाहा बनाये दर पटसे ।
नंदजी की कामरी न काहू बसुदेवजू की तीन हाथ पटुका लपेटे रहे कट से ॥
मोहन भनत यामें रावरी बडाई कहा राखलीनी आन बान ऐसे नटखट से ।
गोपिनके लीने तब चीर चोरि चोरि अब जोरि जोरि देन लागे द्रौपदीके पटसे ॥ ५ ॥

दोहा ।

आहि तीनि कहि द्रौपदी ऊँच उठायो हाथ ।
तुलसी कियो इग्यारहों बसन बेष यदुनाथ ॥ २ ॥
कहा करै बैरी प्रबल जो सहाय रघुबीर ।
दश हजार गज बल हघ्यो घट्यो न दशगज चीर ॥ ३ ॥ (भक्तमाल)

ईक द्विज्ज दीनू रोरंभीनू प्रीति कीनू कान प ।
मन वांछ लीनू पुर नवीनू अभय दीनू दान प ।
"धिन सुरतदेवूं भक्तिभेवूं सिद्ध सेवूं काम प" ।
ऐसा गोविंदू० ॥ १५ ॥

(सुदामाजी की कथा)

(१) एक सुदामा नामक दीन दरिद्र ब्राह्मण ने श्रीकृष्णचंद्र महाराज से प्रीति कर मनवांछित वस्तु पाई और जिन दयालु ने अपने मित्र के लिये सुदामा नामक नवीन पुरी देकर अभय दान दिया ।

कवित्त ।

[illegible] है कान्ह भारी जात द्वारकाजू पै बसन समान देखि [illegible] ।
एकही [illegible] छोर छोर फटि रही ओढिये निशा कों [illegible] प्रात [illegible] ॥
[illegible] ऐसी [illegible] भयतंदजू पै [illegible] है नारि [illegible] समझाइये ।
देह पर [illegible] हाथ [illegible] उरहाय भाँति मित न [illegible] ॥ १ ॥

सवैया ।

हे करतार [illegible] कहूं नाहिं [illegible] ।
और [illegible] मित्रके [illegible] ॥
[illegible] है [illegible] कछु और न [illegible] ।
[illegible] ॥ १ ॥
"[illegible]"

---

१ [illegible] । २ [illegible] ।

कवित्त ।

कोई ना सगैया कोई बात ना कहैया कोई गति ना पुछैया ओरहू को ना तकैया है ।
यादि मे सहैया हाय दैया न गोसैंया कोई मुखको देखैया नहीं सीखको दिवैया है ॥
द्रौपदी विचारै रघुराज आज जाती लाज सब है खरैया पै न टेर को सुनैया है ।
विपति हरैया मेरी पतिको रखैया एक द्वारिका बसैया बलभद्रजीको भैया है ॥ १ ॥

सवैया ।

एकहि आश भरोस है एकहि एकहि है बल विक्रम मेरे ।
एकहि जोग संजोग है एकहि और कुरोग कुजोग घनेरे ॥
प्राण को नास को सोच कछू नहिं एकहि सोच लगै हिय हेरे ।
संकट में रघुराज दयानिधि आये नहीं हरि द्रौपदि टेरे ॥ १ ॥

कैधों पुकार गई उतलों नहिं कैधों विचाऱ्यो नहीं निज दासी ।
सेवक की सरनाई तजी किधौं की करुनाई वे ह्वैगे निरासी ॥
हाय हरी तुम कैसे भये निठुराइ कहा यह पाइ है खासी ।
द्वारका वासि सुनो रघुराज न लागति लाज जो होयगि हांसी ॥ २ ॥

कवित्त ।

गिरिगई गदाई गदा धौं गिरिधारीजू की कैधौं कौनो जंगमें सरंग कहूं लै गयो ।
कुंठित भयो है सत्र भोथरा कै चक्रभयो कैधौं गरुडासनको गरुडहू ख्वैगयो ॥
एरे दई कैसी भई दया धौं बिसारी दई मेरी ना पुकार गई नाथ काहू च्वैगयो ।
रघुराज कैधौं आज द्वारिका विलासीजूको विरद बखान हाय हांसी हेत ह्वैगयो ॥ २ ॥

दोहा ।

अस बिचारि मन में बिलखि, दोऊँ हाथ उठाय ।
कृष्णा कृष्ण पुकारती, कहाँ गये हरि हाय ॥ १ ॥

कवित्त ।

जानतीहूं जियमें जरूर मशहूर यह कुरु कुल संतति विशेष वधि जावैगी ।
परम प्रचंड चक्र चपल चलाइ जीति दैहो सब राजि धर्मराज की कहावैगी ॥
ऐहो दोरि द्वारिका वे द्वारिका विलासी वेगि रघुराज पांडुपुत्र कीर्ति छिति छावैगी ।
फेरि पछितैहो मोहि बहुत बुलैहो जदुराज लाज गए पुनि लाज नाहिं आवैगी ॥ ३ ॥
"जायगी लाज तुम्हारी रे नाथ मेरो क्या विगरैगो" ।

कवित्त ।

दुर्जन दुशासन दुकूल गह्यो दीनबंधु दीन ह्वैकै द्रुपददुलारी यों पुकारी है ।
छांडे पुरुषारथको ठाढे पति पारथ से भीम महा भीम ग्रीवा नीचे करिडारी है ॥
अम्बर क्यों अम्बर अपार कियो बंशीधर भीषम कर्ण द्रोण शोभा यों निहारी है ।
सारी मध्य नारी है कि नारी मध्य सारी है कि सारी है कि नारी है कि सारीही की नारीहै॥४॥

सिसिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हैं जिनके अधीन एते उदित मसाला हैं
तान तुक ताला हैं विनोदके रसाला हैं सुबाला हैं दुसाला औ विसाला चित्रसाला हैं ॥६

"मंदिर देख डरे हो सुदामा मंदिर देख डरे हो"

कवित्त।

याहीते जनमभरि गयो नहिं श्यामजू पै पंडाइनि मेरो कह्यो वाक्य नहिं माने हो।
जाहु जाहु ले रही न मानती अनाज खाय ऐंडी मैंडी बातें मैंतो गोविंदकी जाने हो॥
द्रौपदीको चीर दिये गोपिन के छीन लिये ग्राह तें बचायो गज रंगभूमि भाने हो।
ब्राह्मणी समेत कहूं खेत तें उपाऱ्यो घर यात हूं बचायो वाको कह्यों मैं न माने हो॥७
रह्यो याहि ठांउ मेरो गांउ नांउ मेरेही को, दीन्हों को निकार मेरे निकट बसैयाको।
हाय कोई आइ इते पापी क्षितिराइ लूटि लीनो मेरो धाम लाय तापी है मड़ैयाको॥
विरचि निकेत इते साहिबी समेत बस्यो कहाँ गइ ह्वैहै कैसे पाऊं मैं लुगैयाको।
कौन फरियाद सुने कौन मेरी याद करे कैसे गोहराऊं दूर द्वारका कन्हैयाको॥ ८॥
चौंतरा उजारि काहू चामीकर[1] धाम कीनों छानतो छवाय डारी छाई चित्रसारीजू।
जो हौं होतो घर तोपै काहेको बनन देतो होनहार ऐसी खोटी दशाही हमारीजू॥
हौंतो होतो काहल हलाहल दिखाय करि जाहल उठाइ देतो देह मुख गारीजू।
लोभकी सवारी दुख भूखकी दलनहारी भैया बनवारी काहू सोऊ मार डारीजू॥ ९॥
आलिन के यूथ ज्यों ज्यों आदर से बोले आय त्यों त्यों डर पाय पग आगेको न देत है
पंडित न ज्योतिषि न वैद्य वा न कौतुकी हूं रानी जो बुलावति है कहो कौन हेत है॥
द्वारिका के राजाते मिलेतें घर छीनोगयो रानी कहा छीनेगी फल्यो न मेरो खेत है।
मोसो कहा नातो तुम जाइ कहो बातें मोहिं भूलि न सुहातो कोऊ ऐसे परलेत है॥ १०॥

दोहा।

भौन द्वारते निकसिके, आई तिय पिय पास।
फैल रह्यो दशहू दिशन, कोटिन चंद्र प्रकास॥ २॥ (भक्तमाल)

(श्रुतदेवजी की कथा)

(२) भक्ति के मर्म को जाननेवाला धन्य है श्रुतदेव कि जिसने भगवत-सेवा कर अपना मनोरथ सिद्ध किया।

(भक्तमाल)

विदुर सदाई प्रेमभाई भक्तिभाई शुद्ध प।
छिलका खवाई याद लुगाई प्रसन्नताई वहप।
राजा भुँजाई तजी साँई यहाँ न लाई दाम प।
ऐसा गोविंद॰॥ १६॥

---

1 चामीकर=सुवर्ण.

कवित्त ।

प्यारीको बिलोकत ललोहैं कंज लोयनसों प्यारी पान दैन करकमल उठायो है ।
चितवहिं चारों ओर औचक ही आन परे चाह चख द्वार पैं सुदामा जहँ ठायो है ॥
भूलिगयो खान पान भूलिगयो प्यारी नारी उठ्यो परयंकते अनंद अधिकायो है ।
मेरो मीत आयो अरी मेरो मीत आयो अरी मेरो मीत आयो ऐसे गाय मुख धायो है ॥ २ ॥

सवैया ।

कैसे बिहाल बिवाइनसों पग कंटक जाल गड़े पुनि जोये ।
हाय महादुख पायो सखा तुम आये इतै न किते दिन खोये ॥
देखि सुदामा कि दीन दशा करुणा करिकै करुणानिधि रोये ।
पानि परातको हाथ छुयो नहिं नैननके जलते पग धोये ॥ २ ॥

कवित्त ।

ब्रजमें यशोदामैया मंदिर में माखन औ मिश्री मही मोहन त्यों मोदक मलाई है ।
खायो मैं अनेक बार तैसे मथुरामें आय व्यंजन अनेक मोहि जननी जिवाँई है ॥
तैसे द्वारिकामें यदुवंशिन के गेह गेह सहित सनेह पायो भोजन में लाई है ।
रघुराज आजलों त्रिलोकीहूमें मीत ऐसी राउरके चाउरते पाई ना मिठाई है ॥ ३ ॥
"नरलोक नागलोक नगलोक नाकलोक थोक थोक कांपे हरि देखि मुसकातही ।
हालो परेउ हालन में आलो लोकपालन में चालो परेउ चक्रिन में चिउरा चबातही ॥"
बिदा करि दीनो द्विज प्रगट न कीनो कछु भेटि भुज चल्यो मन में बिषाद भायो है ।
याही तें उदास प्रभु पास न रहन पायो याही तें सुखी हों मोहि कछु न दिवायो है ॥
एक दुख भारी मेरी ब्राह्मणी है खटसारी ताहू को तो उतर मैं सरस बनायो है ।
मैं जु निधी पाई ही सो राह में छिनाई काहू मो बिन हमारो सब कुटुंब बुलायो है ॥ ४ ॥

दोहा ।

यहि बिधि दुजवर मन गुनत, हरषत लटपट पाय ।
चलत चलत झटपट निपट, गयउ ग्राम निज काय ॥ १ ॥

कवित्त ।

कौनके हैं मंदिर मनोहर बिराजमान कैधों मघवा न ल्यायो औने अमरावती ।
कैधों अवनी तलतें अति अकुलाय भोगी लाये भोगवती अवनी पे छबि छावती ॥
मदन सदन कैधों मायाको बदन कैधों रघुराज कैधों हैं धनेस अलकावती ।
आनंद बिबस भयो मोहि भ्रम मारग को किधौं आयो फेरि मैं ही पुरकि द्वारावती ॥ ५ ॥
(गुलगुली गिलमें गलीचा हैं गुनीजन हैं चांदनी हैं चिक हैं चिरागनकी माला हैं ।
कहै पदमाकर हैं गजक गिजाहू सजी सय्या हैं सुरा हैं और सुराही हैं सुप्याला हैं ॥

---

१ सुरा=सुगन्ध.

भीषम सप्रंत्तू अडिग मत्तू गही अत्तू राख ए।
आयुधं हत्तू भक्तपत्तू दर्शवत्तू पाश ए।
भेले मुकत्तू रामरत्तू गोपगत्तू गाम ए।
ऐसा गोविन्दू० ॥ १७ ॥

(भीष्म पितामह की कथा)

जो भीष्मजी ने दृढ अचल प्रतिज्ञा की थी वह अंत में रखली। उनकी प्रतिज्ञा सत्य रखने को भक्तपति भगवान ने शस्त्र हाथ में धारण कर समीप जा दर्शन दिया। और रामरतभक्त जिस गोप्यगति (मुक्ति) में प्राप्त होवे तिस मुक्ति में भीष्मजी को भेजे।

पद।

जो मैं सुरसुरि सुवन कहाऊँ तो प्रण सभा मध्य अस गाऊँ ॥
कौरव पांडव बीच दुहूं दल हरि पूजन अस ठाऊँ ॥ १ ॥
शोणित कणन न्हवाय नाथ कौं रण रज बसन उढाऊँ ॥
पांडव सेन मारि गोबिंद अंग चंदन कोप चढाऊँ ॥ २ ॥
विविधि बरन को विपुल विकासित विशिख माल पहिराऊँ ॥
सनमुख शत्रु संघारि सहसन कीरति सुरभि सुँघाऊँ ॥ ३ ॥
तबहि त्रिविक्रम को तुरंत तहँ विक्रम दीप दिखाऊँ ॥
पारथ सखा समीप जायके प्राण निवेद लगाऊँ ॥ ४ ॥
सकल जगत तें खैंचि प्रीति की बीरी आजु खवाऊँ ॥
विजय बात चलवाय समर महँ जय दक्षिणा दिवाऊँ ॥ ५ ॥
रथसों रथ मिलाय माधव को ध्वंज चामरहिं चलाऊँ ॥
नख सिख निरखत रूप अनूपम नैन निरांजन लाऊँ ॥ ६ ॥
बार बार ध्वनि दंड प्रत्यंचा धनुषहि बाज बजाऊँ ॥
रथ मंडल करि दे परदक्षिण उर आनंद उपजाऊँ ॥ ७ ॥
जदुबर कर सों आज अवशि मैं चक्र प्रसादहि पाऊँ ॥
अर्जुन सर पंजर जंजर ह्वै गिरि सनमुख शिर नाऊँ ॥ ८ ॥
यहि विधि रण प्रभुको करि पूजन त्रिभुवन में जस छाऊँ ॥
श्रीरघुराज कृपा हरि की लहि बरबस हरिपुर जाऊँ ॥ ९ ॥

पद।

जदुपति फिरि फिरि हाथ पसारी।
बार बार अर्जुनहि डोलावत माखत मदन उचारी ॥

१ शस्त्र। २ आयुध=शस्त्र।

(विदुरजी की कथा)

विदुरजी सदैव प्रेम में मग्न होकर शुद्ध भक्ति किया करते थे। उनकी स्त्री विदुरानीजी ने भगवान को केलों के छिलकों का भोजन करवाया, तब प्रसन्न हो विदुरजी की स्त्री के तांई वाह लगाई अर्थात् धन्य है तू इस प्रकार आपने प्रसन्नता दी। आहा हा जिन प्रभु ने राजा दुर्योधन के यहां छप्पन प्रकार के अमूल्य पकवानों को छोड़ा और विदुर के घर छदाम की कोड़ी भी न लगाकर छिलकों का भोजन किया।

दोहा।

अहह! भइउँ मैं बावरी, रही न तनु सुधि नेक।
ऐसी सुधि भूली कि नहिं, छिलका सार विवेक ॥ १ ॥
कह्यो विदुर सों तब हरी, ये छप्पन पकवान।
मिष्ट मोहि लागत नहीं, वे छिलका न समान ॥ २ ॥
ततवेत्ता तिहुँलोक में, भोजन किये अपार।
कै शबरी कै विदुर घर, रुच पाये दोय बार ॥ ३ ॥

कवित्त।

ठानी मिझमानी जब दुर्योधन माधव की बाजी गजराज निजराने को बने रहे।
पालक पिछोने रचे मोति मनिमाल खचे चौकन में चंदरी वितान हू तने रहे ॥
नारी छत्रधारिन की गारी तहां गायवे कूं आई दर्शकाज नृप चाहत घने रहे।
छोड़ पाक घीके प्रभु राजी शाक हीके जीके विदुर घरनीके नीके नेहमें सने रहे ॥ १ ॥
आपनी विभूति को दिखावे वूलो दोर शोर गाजे और बाजे सहसाजे गजबाजी कों।
गुलके गलीचे बिछे अतर सुगंधि सिचे शालिग बगीचे बनवाये जो मिजाजी कों ॥
चारि विधि पाक रचि नोंते कृष्णचन्द्रजू कों तौपै दुर्योधन की देखि दगाबाजी कों।
प्यारी तजि ताजी तर विदुर पधारे घर भूरि भये राजी यदुराज भखि भाजी कों ॥ २ ॥

दोहा।

भावंदे की लात भलि, अण भावत को नेह।
कोने काम कमाळिया, फागण वूठो मेह ॥ ४ ॥
मान सहित मरिबो भलो, जो विष देत बुलाय।
अहमद अमी न पीजिये, आदर बिना अघाय ॥ ५ ॥
दादू आदर भाव का, मीठा लागै मोठ।
बिन आदर व्यंजन बुरा, जीमण वाला ठोठ ॥ ६ ॥ (भक्तमाल)

ताहि समुझायवेकूं कहिंदे सुल्यो है पट धूत्र मत वास की प्रतिज्ञा उर आनी है।
पटको यो अभिप्राय मडे लोग झूठ बोलै ताको संग छोडि देवो नीतिकी निशानी है॥
(भक्तमाल)

आँवा न झाल्‌ अस्सराल्‌ बीच वाल्‌ मिन्न प।
राख्या दयाल्‌ "मृग्गबाल्‌ अरी काल्‌ हप्र प"।
"खेचर कराल्‌ समर जाल्‌ रखे बाल्‌ जाम प"।
ऐसा गोविंद्‌० ॥ १८ ॥

(सिरियादे की कथा)

(१) आंवेके बीचमें मिन्नीके बच्चोंको जिस दयालुने रखलिये कराल
उन को बिलकुल न लगने दी।

दैत्य हिरण्यकशिपुके नगरमें रामनाममें टेक वाली सिरियादे नामक एक कु
की स्त्री रहती थी उसके खिडके हुए नावडे में मंजारी ने बच्चे देदिये, और यह
अज्ञात, धोके में अग्नि लगादी तब तो अग्नि की ज्वाला से बिल्लीका तडफडाट व
का बिलबिलाट देख आँवे के चौतरफ रामनाम की कार लगादी इस वार्ता को प्रह
दजी देख रहे थे आँवा के ठंडे होवे हुए देखते हैं तो बच्चे खेल कर रहे
बस प्रहलादजी को वही रंग लग गया। और वह सिरियादे विश्वासु रामभक्तों
अग्रगण्य हुई। इति।

(मृगबाल की कथा)

(२) मृग के बच्चो को बचाने के लिये शत्रुरूपी काल को जिन परमात्मा
नाश कर दिया।

छोटे छोटे मृगबालकोंपर एक व्याध ने बडी घात विचारी एक तरफ तो फाँ
बिछादी दूजी तरफ श्वान झुकादिये तीसरी बाजू अग्नि लगादी चोथी दिशमें
धनुष पर बाण चढाके बैठ गया। इस समय में उन अनाथ बच्चों के हीनदय
प्रभु के सिवाय कौन रक्षक हैं बालकों की विनय सुनते ही जगत्पिता ने अग्नि से
फांसी जलादी और वर्षा से अग्नि बुझा दी इधर सर्प के डसने से व्याध मरगया
ते हुए व्याध की मुट्ठी खुलने से बाण छूटा उस से कुत्ते हतोराम, बस मृग
निर्भय होगये। वाह वाह धन्य है कैसी भगवत् ने रक्षा की है। इति।

(टीटोडी की कथा)

(३) महाभारत के कराल समर जाल में टीटोडी की "विटिटि किटीवी
टिवी टिभ" ऐसी पुकार सुन तत्क्षण गजघंट डार उस के बच्चों को जिस जगत्पित
। इति।

तीन कथाएँ हैं।

धा मरि गये किधौं जीवत हो बोलहु आंख उघारी ।
कहत रहे अस वचन सभामहँ मैं गांडीवहि धारी ॥
दंड द्वैक महँ कौरव दल को करिहौं अवसि सँहारी ।
सो प्रण की सुधि भूलि गये अब कत दीन्हो धनु डारी ॥
उठहु उठहु अब चेत करहु तन तेरी बहु बडवारी ।
आजु पांडव कुलकी मरजादा लगी तोहि महँ सारी ॥
धर्म भूप तव बल चढ़ि आयो दै दुंदुभि प्रचारी ।
होत शिथिल अब तोहि समर महँ को करिहैं रखवारी ॥
कादर सरिस शिथिल निरखत तोहि बिलखत बुद्धि हमारी ।
कैसे के अस विक्रम महँ जग कीरति चली तिहारी ॥
सखा साँच हमसों तुम भाखहु भलके मनहि बिचारी ।
किधौं बिजै अभिलाख अहै कछु किधौं मानि लिय हारी ॥
जामें जीत होइगी तुम्हरी सोइ मति करन हमारी ।
श्रीरघुराज तोहि सम मेरे कौन मीत हितकारी ॥

पद ।

धावत आवत सन्मुख हरिको भीषम निरख परम सुख पाग्यो ।
तजिगो विशिख बंध कर दीन्हो, अनिमिष सुषमा निरखन लाग्यो ॥
दोउ कर जोरि हुलस करि बोल्यो मुख, धन्य धरा मँह मोहि करदीनो ।
निज जन जानि दयानिधि निज प्रन टारि मोर प्रण पूरण कीनो ॥
आवहु आवहु अब न रुको कहुँ मारहु चक्र अवसि मोहि काहीं ।
विठे सातसे संवत जग में अस अवसर हौं पावों नाहीं ॥
समर मरण अस पुनि तव सन्मुख पुनि तव चक्रहितें जो पाऊं ।
तो सुर असुर चराचर देखत हौं बैकुंठ निसान बजाऊं ॥

श्लोक ।

एह्येहि देवेश जगन्निवास नमोऽस्तु ते शार्ङ्गगदासिपाणे ।
प्रसह्य मां पातय लोकनाथ रथादुदभाद्भुतशौर्य संख्ये ॥ १ ॥
स्वनिगममपहाय मत्प्रतिज्ञामृतमधिकर्तुमवप्लुतो रथस्थः ।
धृतरथचरणोऽभ्ययाच्चलद्गुर्हरिरिव हंतुमिभं गतोत्तरीयः ॥ २ ॥

कवित्त ।

करीही प्रतिज्ञा अघप्रेरक प्रतोद बिना छोरहुं पुडं न युद्ध आदि की कहानी है ।
वादि को बिसार चक्र स्यंदन को धारि चले भीषम पै ताहीबार दसा अकुलानी है ॥

जुग जुग योही आसरो, तुम रक्षक महाराज।
तारण विरद अनादि तव, यह मेरो अब काज ॥ ४ ॥

जुग जुग में यह एक आपका ही आश्रय है। हे महाराज! आप रक्षक हैं। भक्तजनों को तारणा यह एक आपका अनादि विरद है तो अब मेरा यह कार्य है क्यों ढील करते हैं।

छंद सारसी।

फांज मेरो तुमे चेरो मेटि हेरो दरद ए।
फरि है न हेरो शरण केरो सदा तेरो विरद ए।
"नामा न घेरो सदैन फेरो गउ उबेरो साज ए।"
भक्ती वधारू विरद धारू संत सारू काज ए ॥ जी संत० ॥ १ ॥

मेरा कार्य है और मैं आपका दास हूं। नेत्रों के दरद करके जो मैं कायल होगया हूं सो इस दरद को मिटाओ। प्रभो! मेरा हेरा (पीछा) मत करो अर्थात् मेरी करणी मत देखो (मति देखो करणी हमारी राज लेखो विरद मुरारी) सिवाय आपके मेरे दूसरा किसका शरण है। मेरे तो सदैव आपही का विरद (वाना) है।

(नामदेवजी की कथा)

नामदेवजी को नहीं घुमाया किन्तु मंदिर को फेर दिया और उनके लिये गऊ को उबारा इत्यादि आपने भक्त की विजय करवाई, क्योंकि आप भक्ति के बधारनेवाले हो। विरद की वार (सहायता) करनेवाले हो और संतों के काम सारनेवाले हो। (भक्तमाल)

जमुना गैहीरू झड़ जँजीरू झाल खीरू ना जले।
वालद वहीरू धर शरीरू नीर नीरू हरि मिले।
निर्भय कवीरू ब्रह्मधीरू शब्दसीरू गाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ २ ॥

(कबीर साहबकी कथा)

जिन कबीर साहब के गहरी जमुनाजी के बीच में जंजीरें झड़गईं, तथा

---

१ जीव जीव के आसरे, जीव करत है राज।
तुलसी रघुवर आसरे, क्यों बिगड़ेगो काज ॥ १ ॥

२ इसछन्दमें दो कथाएँ हैं। ३ हेर=कायल। ४ घर। ५ गहरी। ६ शब्दसी-र=वाणी।

आरत्ति हरणू अभय करणू नमो शरणू सत्त प।
ऐसा अकरणू अतिरतिरणू वेद वरणू नित्त प।
हम व्याधि जरणू धरा धरणू वचन फुरणू काम प।
ऐसा गोविंदू० ॥ १९ ॥
नमो नमामी अँतर्यामी सर्व स्वामी सृष्टि प।
वंदौं सदाई सुखदाई चित्त आई इष्ट प।
अनाथनाथाँ सदा साथाँ तोहि हाथाँ हाम प।
ऐसा गोविंदू० ॥ २० ॥

हे आर्तिहर! हे निर्भय करनेवाले!! हे सत्य शरण!!! आपको नमस्कार हो। आप अकर्ता हैं। और अधम उधार हैं। ऐसा आपका नित्य वेद वर्णन करते हैं। हे धराधर! मैं व्याधि से जलरहा हूं। तिस व्याधि के निवृत्तिरूपी कार्य में आपका वचन सत्य हो। हे अंतर्यामी! हे सर्वसृष्टि के स्वामी! आपको बारंबार नमस्कार हो। मैं सदैव आपकी वंदना करता हूं। आप सुखदायक हैं। मेरे चित्तमें यही प्रिय है। हे अनाथों के नाथ! सदैव आप मेरे साथ हैं मेरी उमंग आपके हाथ है।

दोहा।

जैसे सूतर पूतली, चित्रकार चित्राम।
मैं अनाथ ऐसे सदा, तुम इच्छा सोइ राम ॥ १ ॥

जैसे कठपुतली डोरी के आधीन है, जैसे चित्र चित्रकार के आधीन है तैसे सदैव मैं अनाथ आपके आधीन हूं। हे रामजी! जैसी आपकी इच्छा हो वही करें।

खलखायक साहिक जना, दीनबंधु देवाधि।
बालबाल शरणागती, तुमसे पति हम व्याधि ॥ २ ॥

हे खलभक्षक! हे जनरक्षक दीनबंधु!! देवाधिदेव!!! यह बालबाल आपके शरणागत है। आप जैसे तो पति और मैं व्याधिग्रसित मला यह कैसे हो सकता है।

सहायक विश्वाबीस हरि, गायक वेद पुरान।
लायक पायक शरण सुख, यह तव नीति निधान ॥ ३ ॥

वेद पुरान गाते हैं कि लायक जो पायक कहिये सेवक है उसकी बीसही बिश्वा पूर्णरीति से हरी सहायता करनेवाले हैं। शरणागत को सुख देना यह आपकी नीति है। क्यों कि सब के आप आश्रय हैं।

---

१ फुर=सत्य। २ हंस।

सतगुरु हमकों यों कह्या, सुमरण करे सहाय ॥ १४ ॥
कबीर प्रेम विना धीरज नहीं, विरह विना वैराग।
नाम विना पावे नहीं, मन मनसा को थाग ॥ १५ ॥
कबीर सोसी बिन सुमरण नहीं, भय विन भजन न कोय।
पारस बिच पड़दा रह्या, लोह न कंचन होय ॥ १६ ॥
कबीर कठिनाई खरी, सुमरंता हरि नाम।
शूली ऊपर नट विद्या, गिरूं तो नाहीं ठाम ॥ १७ ॥

चरण।

"जे कोई चाहे परमधाम को, सुणज्यो शब्द हमारा।
दोय अंछरसे करो दोस्ती, तब उतरो भव पारा ॥"
"ररंकार से सुरत विलंबी, कोटिक सुन्य दिखाई।
या विन शब्द विशेष बतावे, ताकी मूंडूं माई" ॥
"कह कबीर सुणो हो साधो, प्रगट कहूं बजाई।
रामनाम सो सार शब्द है, और कथन सब बाई" ॥
"रामनाम सब कोई भाखे, ता बिच बहुत विधाना।
भज रमतीत राम सरबंगी, बेहद ब्रह्म समाना" ॥
"घरिघरि भेख ज्ञान महँ आसी, धरसी छाप हमारी।
सत गुरु सम हुइ हुइ परमोधे, कहा पुरुष कहा नारी ॥
घर घर ज्ञान ध्यान घण होसी, घटघट वादविवादू।
कण कूं छाड भखेगा कूकस, विरला बीज अराधू ॥"
"राम नाम सतबीज शब्द है, याकूं पूठ न दीजो।
जे कोई बाद बकै बहुतेरा, समझबूझ चुपरीजो ॥
बेईमान बहुतेरा होसी, राजा पंडित ज्ञानी।
आगत सोसी जन्म विगोसी, सब परजा अभिमानी ॥
वीत राग विरला जन होसी, दर्शन परसन कारी।
सार शब्द कूं पेल चलैगा, कलिजुग भेख विकारी ॥
विन दरसां परसां विन बहुता, होसी ब्रह्म गियानी।
बीज विनां बहु ज्ञान कथैगा, धोखे की नीसानी ॥
परजा पख पूतन की करसी, सारपखी जन कोई।
तज जग भाव निरंतर वासा, समझ मिलेगा सोई ॥
कर्दम उपासी करम विलासी, सो जासी जम द्वारा।
हम करता भज करता हूवा, और न को उपकारा ॥
राम कहेगा सो निभैगा, उलटि रहे जो गाढा।
धकाधूम बहुतेरा हैगा, रामभजन के आड़ा ॥"

खीरों की झाल में नहिं जले, तथा उन कबीर साहब के लिए आपने शरीर को धारण कर बालद वहीर (विदा) करदी, वह कबीर साहब अंतमें नीरमें नीर मिलै ऐसे हरि में मिलगए। ब्रह्ममें स्थिर ऐसे जो निर्भय कबीर ताकी जो शब्द सीर (बाणी) वह आजपर्यंत गर्जना कर रही है।

साखी।

कबीर राम नाम के पटंतरै, देवा कूं कुछ नाहिं।
क्या ले गुरु संतोषिये, हौंस रही मन माहिं ॥ १ ॥
कबीर राम नाम छाडूं नहीं, सद्गुरु सीख दईह।
अविनाशी कूं याद करि, आतम अमर भईह ॥ २ ॥
कबीर सत्यनाम तिहुँलोक में, रामनाम ततसार।
सो विचार हिरदै धर्या, शोभा अनंत अपार ॥ ३ ॥
कहै कबीरा मैं कथा, ब्रह्मा विष्णु महेश।
राम नाम निज मंत्र है, सबका यह उपदेश ॥ ४ ॥
कबीर कहताहूं कह जातहूं, सुणता है सब कोय।
राम कहे भल होयगा, नहिंतर भला न होय ॥ ५ ॥
कबीर आपण राम कह, औरां राम कहाय।
जा मुख राम न संचरे, ता मुख लोह जडाय ॥ ६ ॥
कबीर लुट सके तो लूटि ले, राम नाम की लूट।
पीछे ही पछिताहिगो, जब तन जासी छूट ॥ ७ ॥
कबीर सुपने ही बरडायके, जे मुख कहै जो राम।
वाके पग की पानही, मेरे तन को चाम ॥ ८ ॥
कबीर आंखडियां झांई पडी, पंथ निहार निहार।
जीभडियां छाला पडया, राम पुकार पुकार ॥ ९ ॥
कबीर आंख्यां प्रेमक सौंइयां, जण कह दुखडियांह।
रामसनेही कारणे, रो रो रातडियांह ॥ १० ॥
कबीर हम तुम पें ढूंढत फिरूं, काहे मिलो न राम।
हिरदा भीतर तूं बसे, सकल तुम्हारा काम ॥ ११ ॥
कबीर सुमरण मारग सहज का, सद्गुरु दिया बताय।
सास सास संभारतां, इक दिन मिलसी आय ॥ १२ ॥
कबीर सुमरण सार है, और सकल जंजाल।
आदि अंत सब सोधिया, दूजा दीसे काल ॥ १३ ॥
कबीर ज्ञान कथे कथि मरे, काहे करे उपाय।

करि यज्ञ राजू ऋषि समाजू वेद गाजू गाव ए।
नहिं शंख बाजू पांडुकाजू संतराजू आव ए।
ले पंच कौजू भई धाजू भ्रम्म भाजू राज ए।
भक्ती बधारू० ॥ ४ ॥

(वाल्मीकजी की कथा)

गर्जना के साथ वेदोंको गानेवाले अर्थात् सामग ऋषिसमाजने राजसूय यज्ञ करवाया तो भी यज्ञ पूर्ति का शंख नहीं बजा, तब तो पांडवों के कार्य सिद्धि के वास्ते संतराज (वाल्मीकि) आते भये, जिनके पांच ग्रास लेते ही शंख की बड़ी आवाज होने से राजा युधिष्ठिर का भ्रम दूर होगया।

"शंख नहीं बाज्यो ताको कारण यही है भूप
आयो ना अनन्य दास एक वो हमारो है।"

कवित्त।

चाकर तिहारो द्वारे भवन तिहारो रोज, नगर निवासी है तिहारो चिरकालको।
यथा लाभ तोषी तन रोषित न काहू पै है, अदोषित अनाथ भक्त त्यागे जगजालको॥
साधुन को झूट खात खातभे विमल बुद्धि, नेही नहीं देह गेह बालक हू बालको।
जाति को श्वपच महिपाल वाल्मीक नाम, मोहि प्राणप्यारो तुम्हें कारक निहालको॥ १॥

दोहा

विप्र द्वादश कोटिको, सबको मान्यो मान।
शंख बजायो शरकरै, कोइ न कान्यो कान ॥ १ ॥

(भक्तमाल)

प्रतिमा बुलाई साँच पाई गंग आई भवन ए।
तन में दिखाई नोगुणाई जर्द साई सबन ए।
रैदास साई देह धाई जीम जाई भ्राज ए।
भक्ती बधारू० ॥ ५ ॥

(रैदासजी की कथा)

जब रैदासजी ने प्रतिमा को अपने पास बुलाली तब ब्राह्मणों को सांच पाया। तथा जिन रैदासजी के भवन में गंगा आई, और जब रैदासजी ने नवगुणाई (यज्ञोपवीत) अपने शरीर में दिखाई तब तो पीतांबर पहन पहन जितने ब्राह्मण आये थे वे तमामही नमन करने लगे, तथा भोजन के

१ गर्जना। २ संतराज=वाल्मीकजी। ३ कवा=ग्रास। ४ यज्ञोपवीत।

"सहस बात की एक बात है, आदि रु अंत विचारी।
भज रमतीत राम भव पारा, कहा पुरुष कहा नारी॥"

साखी।

कबीर जाके हिरदे हरि नहीं, सिख साखा की भूख।
से नर ऊभा सूखसी, ज्यों दाहे दाधा रूंख॥ १९॥
कबीर बात बनाय रु जग ठग्या, मन पर बोध्या नाहिं।
वाको स्वारथ लेगया, फिर चौरासी माहिं॥ २०॥
कबीर कहते सो करते नहीं, मुंह के बडे लवार।
काला मुंहडा होयगा, सांई के दरबार॥ २१॥
कबीर कथनी मीठी खांडसी, करनी विषकी लोय।
कथनी कथ करनी करे, सब विष अमृत होय॥ २२॥
कबीर करनी की किरकी नहीं, कथनी कथे अपार।
या वार्ता क्यों पाइये, साहिब को दीदार॥ २३॥
कबीर करणी बिन कथनी कथे, अज्ञानी दिन रात।
कूकर ज्यों भोंकत फिरे, सुनी सुनाई बात॥ २४॥
कबीर एकोहं आपुहिं भयो, द्वितिया दीन्हों कॉट।
एकोहं कासों कहै, महापुरुष की टॉट॥ २५॥ इति।

कोपे दुर्वासा अहं ख्वांसा हतूं दासा राज प।
सुदर्श जासा प्राण प्रासा कंप व्यासा भाज प।
सुरलेच पासा भई हासा जन निवासा वाज प।
भक्ती वधारु०॥ ३॥

(दुर्वासाजी की कथा)

बडे अहंकारी ऋषि दुर्वासा कुपित हो बोले कि मैं इस दास अंबरीष राजा को मारडालूंगा, तब जिन का दास अंबरीष है उन्हीं भगवान का सुदर्शन चक्र मुनि के प्राण का ग्राहक हुवा। जब तो व्यास (दुर्वासा) कंपायमान हो भागने लगे और उनकी तीनों देवताओं के पास बडी हांसी हुई, तब पीछा भक्त अंबरीष के निवासस्थान में ही आ वाजे अर्थात् जहां भक्त का निवास स्थान था वहां ही आकर विराजे। (भक्तमाल)

---

१ पाठान्तर टवर्ग के स्थान में चवर्गका चतुर्थाक्षर है। २ ख्वाहिश=इच्छा ३ सुदर्शन चक्र। ४ तीन।

(चौहान भुवनजी की कथा)

(१) चौहान भुवनजी काठ की तलवार रखते थे। जब राजाजी ने परीक्षा ली तब परीक्षा के समय में म्यान के निकलते ही जिनकी तलवार बीजलसार के समान हो गई इस प्रकार प्रभु ने भक्त की प्रतिज्ञा रखी।

(अरिल्ल)

"भई तलायाँ गोठ, जुरे जहँ चक्कवै।
परचो निज है आजु, खाय द्वै लक्खवै॥
परमेश्वर पति राखि बात नहिं कहनकी।
बिजुरी ज्यों तरवार चमंकी भुवन की"॥ (भक्तमाल)

(हरिभक्त ब्राह्मण की कथा)

(२) एक हरिभक्त ब्राह्मण से दुष्टों ने मार्ग में दगा किया। ब्राह्मण तो भगवत् कृपा से उसी जगह जी गया और दुष्टों के शरीर की खाख होगई।
(भक्तमाल)

(घाटम जी की कथा)

(३) घाटम भक्त के वास्ते राममहाराजने अश्व के अंग का रंग पलटा दिया। (भक्तमाल)

(जैमलजी की कथा)

(४) जैमलजी के वास्ते स्वयं आप भगवान् फौज के संग राजाके घोड़े पर चढ़ कर समर (युद्ध) को उलंघन करते भये अर्थात् शत्रुओं को भगाकर जैमलजी की जीत करवादी। (भक्तमाल)

नृप दुष्ट खक्खी गरल दक्खी इष्ट पक्खी सो लए।
धिन प्रेम छक्की राम रक्खी निर्भै थकी बोल ए।
मीरां सरक्खी गोपि अक्खी जगत नक्खी लाज ए।
भक्ती बधारू० ॥ ९ ॥

(मीरांबाई की कथा)

दुष्ट राणे ने मश्करी[1] के साथ विषको चरणामृत कहलाकर भिजवाया तब इष्ट का है पक्ष जिनके ऐसी मीरांबाई ने उस विष को चरणामृत समझकर ले लिया धन्य है, प्रेम में छकी निर्भयथकी मीरांबाई बोलती भई कि मेरे राम रक्षक हैं।

---

1 मजाकी।

समयमें रैदासजी के प्रभाव से जिन ब्राह्मणों की देह रैदास साई होकर अर्थात् रैदास का ही सरूप बनकर बैठ बैठकर भोजन करगये।

(भक्तमाल)

पीपा समर्त् अगम गत् भक्त चरित् नेक प।
इच्छा फिरत् सोइ सत्त् आप रत् एक प।
मृगराज कांमी शिष्य स्वामी मुक्तिगामी जाज प।
भक्ती पधारू० ॥ ६ ॥

(पीपाजी की कथा)

अगम है गति जिनकी एसे समर्थ पीपाजी के अनेक चरित्र हैं। भक्त पीपाजी की जो इच्छा फुरती वही सत्य हो जाती और आप निज सरूप में रत रहते थे। देखो उत्तम कामनावाला मृगराज (सिंह) जिन स्वामी पीपाजी का शिष्य हुवा, तथा मुक्ति जानेवालों के लिये तो यह साक्षात् जहाज रूप थे।

(भक्तमाल)

गायौं चराई भातखाई रामराई रम्य प।
खेती निपाई पाय माई बिना धाई रम्य प।
धन्यो धनाई प्रभूताई जना गाई आज प।
भक्ती पधारू० ॥ ७ ॥

(धनाभक्त की कथा)

जिन धनाभक्तके लिये रामराय ने भातका भोजन कर प्रसन्न हो गौवें चराकर मेल किया, तथा जिनके लिए स्वामीने बिना ही बोई हुई उनके पाव में खेती निपजादी, उन धनेजी की धन्यता व प्रभुता भक्तोंकरके गाई हुई आज दिन संसार में देखो शोभित हो रही है। (भक्तमाल)

सैतर जङ्गम् सार मग् जन प्रवग् याप प।
"कर मोग लग् लिये जग् तुष भग् पाप प"।
"सिर अभ्र भग्" "चढे लग् एमर लग् पांज प।"
भक्ती पधारू० ॥ ८ ॥

---

१ [illegible] है, [illegible]।
[illegible] ॥ १ ॥

१ [illegible]। ३ [illegible]। ४ [illegible]। ५ [illegible]। ६ [illegible]।

---

१ [illegible] है।

(दादू दयाल की कथा)

महात्मा दादूजी के सन्मुख हाथी छोड़ने पर परचा होने से पातशाह चरणों में पड़कर दास होता भया । "दादू दर्शन जो कोइ जावे तो साठे मोहर एक भरावे" इस लेख पत्र के (कोई शब्द) के स्थान में (नहीं शब्द) होगया । जब इस प्रकार लेख फिरने से हजारों पुरुष दर्शन के लिए गए तब तो पातशाह को पूरा ही साँच आगया । ऐसे दादू दयाल कृपालु होकर अनंत जीवों के जाल को तोड़ते भए ।

सं० १६०१ को गुजरात अहमदाबाद में आपने जन्म लिया । ईश्वरस्वरूप महात्माओं के कुल का कोई कारण नहीं होता । ईश्वरने भी तो यहाँतक हद करदी कि मच्छ कच्छ वराह शरीर भी धारे । परंतु दादूजी महाराज ने तो उत्तम ब्राह्मणकुलमें ही शरीर धारण किया । परम दयालु परमात्मा ने वृद्धरूप धारणकर सिरफ ग्यारह वर्ष की अवस्था में दादूजी को दर्शन पान प्रसाद दे अंतर्धान हुए तबतो ऐसी अद्भुत अनोखी झांकी को देख आपका मन मुग्ध होगया । उस दर्शन की चाट में विह्वल हो पद गाने लगे । (आव सलोना मोहि देखन देरे पल पल मैं बलिहारी तेरे) आपने पंजाबी भाषामें एक पद बहुतही अच्छा विरहका वर्णन किया है ।

पद ।

आवरे सजणां आव सिरपर धरि पाँव ।
जानी मैंडा जिंद असाडे ।
तू रावें दा राव वे सजणां आव ॥
इत्थाँ उत्थाँ जित्थाँ कित्थाँ हौं जीवाँ तो नाल वे ।
मीयाँ मैंडा आव असाडे ।
तू लालों सिर लाल वे सजणाँ आव ॥
तन भी डेवाँ मन भी डेवाँ डेवाँ प्यंड पराण वे ।
सचा साँई मिलि इत्थाई ।
जिन्दा कराँ कुरवाण वे सजणाँ आव ॥
तूं पाकों सिर पाक वे सजणाँ तू खूबों सिर खूब ।
दादू भावे सजणा आवे ।
तू मीठा महबूब वे सजणाँ आव ॥ इति ।

इत्यादि विरह वाणी का वर्णन करतेहुए खाना पीना सब छोड़ उस सांवली सूरत के लिये तड़फने लगे, उससमय प्रेमाधीन प्रभु ने उनकी अत्यंत आर्तता देख अपना वही सलोना रूप दिखा और आकाश वाणी से कहा कि हे दादू ! तू यह स्थान छोड़ दे, कारण इस स्थान कूं ज्यों ज्यों देखता है त्यों त्यों तेरे विरहसमुद्र उल्टता है । अब तू

कहते हैं कि मीरांबाई गोपीके समान थी जभी तो उसने जगत लाज को छोडदी ।

(मीरांबाई की सासू ने कहा कुलदेवी को शीस नवाओ)

सवैया ।

पल काटो सही इन नैनन के गिरधारि बिना पल अन्त निहारे ।
जीभ कटै न भजे नँदनंदन बुद्धि कटै हरि नाम बिसारे ॥
मीराँ कहै जरि जाहु हियो पदकंज बिना पल अंतर धारे ।
सीस बिना ब्रजराज नवै वह सीसहिं काटि कुवां किन डारे ॥ १ ॥

दोहा ।

मीरां सुत जनम्यो नहीं, सिख्ख न मूंड्यो कोय ।
नाम रहैगा नाम से, सुणो सयाने लोय ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

हुंडी माहेरो करि घणेरो सुतन केरो व्याव प ।
सभ्भा मँझारी भूप नारी लियाँ झारी आय प ।
नरसी सवारी माल धारी नीर प्यारी पा जए ।
भक्ती पधारू० ॥ १० ॥

(नरसीजी की कथा)

प्रभुने नरसीजीके लिए हुंडी सिकारी, तथा उन की दोहिती के विवाह में जिन राममहाराज ने घणा (बहुत) कर माहेरा भरा, तथा स्वयं भगवान् राजा की प्यारी राणी बनकर जल की झारी ले सभा के बीच में आकर कहने लगे कि, हे नरसी ! सदाकाल से यह माला तुम्हारी ही है लो पहिनो ऐसे कह जल पा गए ।

दोहा ।

नरसिंहि दीन्ही रीझिके, माला नंदकुमार ।
राखि लियो अपनी शरण, विमुखनि मुख दे छार ॥ (भक्तमाल)

हाथी घुमाए पत्थो पाए असुर धाए शास प ।
पाती फिराए दरश धाए साँच आए जास प ।
दादू दयालू हुय कृपालू जीप जालू भाज प ।
भक्ती पधारू० ॥ ११ ॥

(बोडाणा रामदासजी की कथा)

(१) भक्त रामदासजी के लिये आप तुले तो नथ की वाली तोल में आपसे सवाई हुई, इस प्रकार दासकी प्रीति भगवान् को अच्छी लगी।

(भक्तमाल)

(ग्वाल भक्त की कथा)

(२) भक्त ग्वाल के लिए जिन रामजी महाराज ने चुराई हुई भैंसें पीछी मंगाई व्याज रूप घृत में भैंसें की वेम (संतान) आई और छाछ के बदले वह भैंसें हाँस नाम का गहणा लाई।

एक संतसेवी ग्वाल भक्त था, वह एक समय सामग्री लेने को ग्राम में चला गया पीछे से चोरों ने भैंसें चुरा ली। माता के पूछने पर डरते हुए ग्वाल भक्त ने बना-वटी उत्तर देदिया कि घृत के बदले अर्थात् दूध दही छाछ आदि सब कुछ तुम्हारा, हमतो जितना घृत होगा उतना ले लेंगे। इस शर्त पर एक ब्राह्मण को भैंसे देदी है। माता ने जाना कि पुत्र का कहना सच्चा ही होगा। कई वर्ष होगये। घी कौन लाके दे, अब देखो ईश्वर भक्तों के लिये क्या करता है। जो भैंसे चुरा लेगये थे उन चोरों के ये रिवाज थी कि दिवाली के दिन अपनी अपनी भैंसे को चांदी की हांसली आदि अच्छे अच्छे गहणे पहनाय रात को चराकों से भिड़काते। रीति अनुसार ग्वाल भक्त वाली भैंसे भी भिड़काई गई तो एक वार यह ऐसी भिड़की कि, अपने वेम तथा दो च्यार और भैंसेको संग लेकर अपना रूणा (खूंटा) याद कर भिड़कती भिड़कती ग्वाल भक्त के घर पर ही पहुँच गई। भक्त दोड़ के माता से कहने लगा कि भैंसें आगई है। व्याज रूप घृत में अपनी वेम लेती आई है। और छाछ की एवज में चांदी की हाँस ले आई है। धन्य है प्रभु धन्य है घर बैठे ग्वाल भक्त को निहाल कर दिया। इति।

(जसूस्वामीकी कथा)

(३) जसू स्वामी के लिए बलदों के ठाणपर पहिले बलदों के जैसे ही दूसरे बलद (बैल) बना दिए ऐसे रामराज निवाजे।

(भक्तमाल)

जग नृप्प धादू कौन साधू मिट मर्जादू काद ए।
जन कह्यो आदू राम साधू इच्छा तादू छाड ए।
कुण देश माया झूठ काया राम राया राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १३ ॥

(श्रीरामदासजी महाराज की कथा)

प्रजा और राजा के परस्पर विवाद हुवा अखीर में वल्लभ संप्रदाय के गुसां-

सांभर चला जा वहां भजन कर मेरी आज्ञा है। तब तो दादू दयाल भगवद् आज्ञा से अहमदाबाद छोड सांभर आय विराजे और भजन करने लगे। यहां पर अनेक परचे हुए उन परचों का परिचय दादूजी महाराज की परची में हैं। फिर बखनाजी की प्रार्थना से आप नराना ग्राम में पधार गए। गरीबदासजी अधिकारी शिष्य हुए यह आपके औरस पुत्र थे। सं० १६३२ में इन का जन्म हुवा था। और दासजी, तथा सुंदरदासजी, मोहनदासजी, जनगोपालजी, रज्जबजी, बखनोजी, साहुसेनजी, बाजींदजी और काजीमहम्मद आदि बडे बडे पहुंचे हुए शिष्य हुए जिनकी बाणी बहुत ही सार-गर्भित और वैराग्योत्पादक है। आजकल इस पंथके तुल्य सिवाय कबीर और नानक पंथ के दूसरा वृहत् कोई पंथ नहीं है। सांभर के निकट नराना में सं० १६६० को शरीर छोड आप परम धाम पधारे।

साखी।

आपा मेटै हरि भजै, तन मन तजै विकार।
सब ही सूं निर्वैरता, दादू यो मत सार ॥ १ ॥
एक राम के नाम बिन, जिवकी जरनि न जाय।
दादू केते पचि मरे, करि करि बहुत उपाय ॥ २ ॥
राम नाम गुरु शब्द से, रे मन पेल भरम्म।
निह करमी से मन मिल्या, दादू काढ करम्म ॥ ३ ॥
दादू देख दयालु को, सकल रहा भरपूर।
रोम रोम में रमि रहा, तू जनि जाने दूर ॥ ४ ॥
जब मन लागे रामसों, तब अनत काहे को जाय।
दादू पाणी लूण ज्यूं, ऐसे रहै समाय ॥ ५ ॥
घीव दूधमें रमि रहा, व्यापक सबही ठौर।
दादू बक्ता बहुत है, मथि काढे ते और ॥ ६ ॥
केते पारिख पचि मुये, किमत कही न आइ।
दादू सब हैरान हैं, गूंगे को गुड़ खाइ ॥ ७ ॥

बोली[1] सवाई तुले ताई प्रीति भाई दास प।
"भैंसाँ मँगाई और थाई व्याज माँई छाँस प।"
"चलदाँ जिसाई जसु धाँई राम राई न्वाज प।"
भक्ती बधारू० ॥ १२ ॥

---

१ नाक में पहरने की।

---

1 इसछन्दमें तीन कथाएँ हैं।

रामराय सदैव प्रति संतों के सहायक है। अथवा संतों की सहायता करनी यह रामरायकी सदा प्रतिज्ञा है। वह समर्थ सदैव रक्षा में ही हैं। उन दयालके छोड़ किसके पास मागें। अर्थात् जिसके पास जावें उसके भी तो राम रक्षक है। जिनके राम रक्षक हैं उनका क्या तीन लोक में नाश हो सकता है। उसके लिए सब प्राणी मा जाये भाई हैं।

साखी।

पूठे समर्थ सतगुरु, आगे राम सहाय।
अनंतकोटि संत सीस पर, रामा विघ्न न काय॥ १॥
अंबर दूसे भूत कमावे, कह्या वचन गुरु देव।
रामदास सांसो तजो, कर संतनकी सेव॥ २॥
रिधि सिधि दासी रामदास, चरण रही लपटाय।
आवे जावे सहज में, रहो राम लिवलाय॥ ३॥

कहा देश वेश् रम प्रदेश् है परमेश् संग ए।
दुष्टी विचेसू करि अंनेसू खोंस लेसू कंग ए।
सोई मरेसू जन निर्भैसू सुखावेसू आज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १७॥

देश प्रदेश विदेश कहां ही रहो, परमेश्वर संग में है। रामदासजी महाराज के वास्ते एक दुष्ट धाड़वी ने बुरी नजर से देखा कि कहाँ चले गये इन को रास्तेके वीच ही खोस लेऊंगा, अथवा इनके कंग कहिये आभूषण उनको खोस लेऊंगा, अथवा इनको खोस कं कहिये मस्तक काट लेऊंगा, वे मेरे हाथ से बच नहीं सकते हैं। इसप्रकार विचार करता हुआ वह दुष्ट तीन ही दिनमें एक स्त्री के हाथ से मारा गया। रामदासजी महाराज निर्भय हो सुखपूर्वक पीछे स्थान को पधार जाते भए।

साखी।

काहूके तो राजबल, काहू के बल देव।
रामदास के रामबल, एक तुम्हारी सेव॥ इति।

कहा घाट वाटू सुख्ख ठाटू मुज वेराटू राम ए।
गुरु रामदासू चरित्त गासू नित निवासू नाम ए।
लज्जा सदासू आदि आसू कली कासू राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १८॥

---

१ बुरा भाव। २ वाट=रस्ता।

ईंजी के सिखाने से हठ के साथ राजा विजयसिंहजी ने हुक्म दिया कि यह कौन साधू है जिसने मर्यादा मिटादी ? देश से निकाल दो । तब रामदासजी महाराज ने कहा कि हम आदू राम साधू हैं । यदि राजा की इच्छा है तो देश छोड दें । देश किस का है काया माया झूठ है सारे रामराय का राज्य है ।

इच्छा पुरारी शीश धारी है मुरारी साथ ए ।
राखो जहाँरी सीव थारी मैं न म्हारी नाथ ए ।
कुण बलाकारी गर्वेहारी अकल वारी गाज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ १४ ॥

जिन मुरारी की इच्छा को पुरारी (महादेव) ने मस्तक पर धारण करी है वही हमारे साथ में है जहाँ तक तुम्हारी सीँव है यह रक्खो । उन ईश्वर की सीँव में मैं और म्हारी नहीं बनती है । उन गर्व अहारी राममहाराज के समान कौन बलवान और अकलवान है, वही सर्वत्र गरजना कर रहे हैं ।

तपस्या ठकुराई छीन थाई मिट दुहाई देश ए ।
चाकर दुजाई पाप माई सुँद्ध आई वेसे ए ।
करुणा बढाई पुनि बुलाई जन सहाई आज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ १५ ॥

रामदासजी महाराज के अनादर करने से जिसकी तपसा और ठकुराई क्षीण होगई, देश में दुहाई मिट गई, चाकर बदल गए । ऐसा होने से जब राजा विजयसिंहजीकूं पापमय अवस्था याद आई अर्थात् अपराध का समय याद आया तब तो पीछा पधारने के लिये पहले पत्र दिया परंतु नहीं पधारे । बाद में करुणा बढाकर मुसद्दियोंको भेजकर फिर पधारने के लिये प्रार्थना कीगई, तब जन सहायक श्रीरामदासजी महाराज पीछा खेड़ापे पधारे ।

संताँ सहाई राम राई सदा भाई प्रत्त ए ।
समरथ सदाई रख्या भाई कोन ताई द्रुत्तं ए ।
सुरलोक माई गँज न जाई प्राणि भाई माज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ १६ ॥

---

१ महादेव । २ नारायण । ३ गर्व के हरणे वाले । ४ सुधि=याद । ५ वयस=अवस्था । ६ सदैव प्रति=हमेशा, पत=प्रतिज्ञा । ७ द्रुत=दयार्द्र; जल्दी ।

(गोस्वामी तुलसीदासजी की कथा)

कर्म बडे हैं कि हरि बडे हैं इस में मेरे को आश्चर्य आता है। इस विवाद में साधुओंके बचन तो यों प्रमाण देते हैं, कि हरि तो लेख को भी अलेख कर देते हैं जैसे गोस्वामी तुलसीदासजीके वास्ते नारीरूप पलट कर नरतनु हो गया ऐसे अकरण करण दयालु हैं। धन्य है आप अपने जनको सुख देते हैं।

कवित्त।

वेदन की सार काव्य भेदन की सार चारु, चातुरी चमतकार सार रस सानी में।
प्रेम की पढावनी बढावनी विरति ज्ञान, अन्तमें चढावनी श्रीराम रजधानी में॥
भानी भालके कुअंक हाल रंक राज दानी, कहै रसरंगमणी मोदता मिलानी में।
पाई है न प्रानी राम भक्ति सुखखानी मति, जो न रति मानी बसी तुलसी की बानीमें॥१॥
व्यासने पुराण गायो कपिल सुझायो सांख्य, गौतमने गायो न्याय तर्क जहाँ ताँई के।
जैमिनि करमकांड योग को पतंजलिने, साण्डिलहू भक्ति भने साधन सुधाँई के॥
शंकर वेदान्त भाखें मध्वाचार्य द्वैत चाखें, ऐसे रसरंग मत बाद सब ठाँई के।
रामाकार काव्य कऱ्यो जग भक्तिभाव भऱ्यो, राम प्रेम पाले पऱ्यो तुलसी गोसाँई के॥२॥

श्लोक।

श्रीप्राचेतसरूपिणे सुकवये कोदण्डभृद्व्यापिने।
भाषाकाव्यविधायिने स्वजनताआब्धौपविष्मंधिने॥
श्रीरामामृतवर्षिणे जनकजाप्रेष्ठानुगाम्भये।
तस्मै श्रीगुरवे नमोऽस्तु तुलसीदासाय गोस्वामिने॥ १॥
(रामायणमाहात्म्य)

जुग जुग पालत जन पक्षो, साचा फरण सवाल।
सो निर्बल या जगतमें, जाके बल गोपाल॥ ६॥

"(परित्राणाय साधूनां") ऐसा जो आपका बचन है उसको सत्य करने के वास्ते जुग जुग में भक्तजनों की पक्ष पालते हैं। इस जगत में जिसके गोपाल का बल है सो क्या निर्बल है?

राम सदा सुख रंजना, भय भंजन भरतार।
करुणामय कारणकरण, धारक धारण धार॥ ७॥

हे रामस्नेहीजन! आप सदा सुखरूप हैं चित्त के रंजन कर्ता हैं और भव-भय के भंजन कर्ता हैं, तथा जगत को भरण पोषण कर आप ही तारते हैं और आपही जगत् के कारण जो पृथिव्यादि पंचमहाभूत तिन के करनेवाले हैं। हे प्रभो! आप करुणामय हैं तभी तो धारण जो गजेंद्र तिसके वार कहिये समय

श्रीदयालजी महाराज फरमाते हैं कि रामजी के विराट रूप होने से क्या घाट क्या वाट! मेरे लिए तो सब सुख का ठाट है। मैं तो गुरु रामदासजी महाराज के चरित गाऊंगा, क्योंकि मेरे तो नित्य उनके नामका ही निवास है। सदैव से आपही के हाथ मेरी लाज है। और आदि अनादि से राज ही की आशा है तो फिर कली कैसा अर्थात् कलियुग मेरा करही क्या सकता है।

सोरठा।

श्री गुरु समर्थ आप, एक भरोसो आसरो।
राममंत्र जप जाप, दयालदाल एके नहीं ॥ १ ॥

दोहा।

सदाकाल समर्थ धणी, रक्षक राम दयाल।
कठिन कली कारण कृपा, हरिबिन कौन सँभाल ॥ १ ॥

मेरे तो वे दयालु राम महाराज सदैवकाल के समर्थ धणी हैं और वही रक्षक हैं। इस कठिन कलिकाल में विना ही कारण कृपा करनेवाले हरि के विना दूसरा कौन संभाल करनेवाला है।

दोहा।

नमो नमामी नाथ तू, निर्धारां आधार।
लज्जा राखण रामजी, आनँद अगम अपार ॥ २ ॥

हे नाथ! आप के अर्थ नमस्कार हो! नमस्कार हो!! आप निराधारों के आधार हैं। हे रामजी! आप लाज को रखनेवाले हैं। आप आनंदस्वरूप हैं। अगम हैं और अपार हैं।

प्रसन्न जना अपवर्ग सुख, शरणे प्रति पालंत।
दयालदाल शरणागती, क्यों नहिँ अरि जालंत ॥ ३ ॥

शरणागत की प्रतिपाल करने में ही भक्तों की प्रसन्नता है और वही उनके लिए मोक्ष सुख है, तो दयालदाल आप के शरणागत है इस शरणागत के व्याधिरूप शत्रु को क्यों नहीं जलाते हैं?॥

कर्म बडा कि हरि बडा, यह अचरज मोहिँ आय।
हरि तो लेख अलेख है, साधु वचन यों जाय ॥ ४ ॥
नारि पलट नर तनु भयो, जन तुरसी के हेत।
अकरण करण दयालु धिन, अपना को सुख देत ॥ ५ ॥

---

१ मोक्ष। २ कई महात्मागण यह कथा जन तुरसीजीकी बतलाते हैं।

तबका कर दिया। प्रातःकाल संगवाले हेरू इकट्ठे हुए। पूछनेपर उन लोगों से आपने कहा कि, बस अपना सीर आजसे टलगया है। अब मेरा सीर तुम से नहीं है किन्तु ईश्वर से है। यों कह उस जंगल में वहीं भजन करने लगे। बारह वर्ष व्यतीत होनेपर आकाशवाणी हुई कि जायल के महंत वैष्णव मोहनदासजी उज्जैन अंगपात घाट पर निवास करते हैं उनको गुरु करो जाओ। तब उज्जैन आए भगवदाज्ञानुसार मोहनदासजी के शिष्य हुए। गुरुने मैदानी माधोदासजी आपका नाम रखा। कई दिन वहां निवास कर पीछे आए। बीकानेर से पश्चिम सात कोस कोड़मदेसर तालाबपर क्षेत्रपाल भैरव के पास ही धूनी लगाकर बैठ गए। रात्री में भैरव ने कहा ए साधु! यहां से हट कर दूर बैठ जा। आपने चद्दर बिछा जगती हुई धूनी उसमें उठा भैरव से कहा, यह थोड़ी मेरी खड़ाऊ तो वहां तक पहुँचा दे। जब भैरव उठाने लगा तो भैरव का हाथ खड़ाऊ से दब गया तब तो लगा चिल्लाने और बोला कसूर माफ करो, मैं आपका दास हूँ, मुझे बचा के आप का शिष्य बनालो। ऐसी विनय सुन आपने दया कर उसको सुखी किया और शिष्य बनाकर खेमदास नाम रखा। उसका मलीन खाना पीना सब छुड़वा दिया। अब तो भैरव तन मन से सेवा करने लगा। यों करते कई दिन चले गये तब तो माधोदासजी की सिद्धाई देखने के लिये दसहजार साधुओंकी जमात रात्रि में आई और बोले, गुरुभाई माधोदास! सूर्योदय होते ही अतीतों के लिये भोजन तुम्हारे यहां ही होगा। यों कह जहाँ तहाँ आसन डेरे लगादिए। अर्धरात्रि के समय भैरव गुरुमहाराजकी आज्ञासे मुलतान सहर में बनिये के यहां सीरे का कड़ाव रंधा हुवा पका था उठा लाया। भगवद्भोग लगाकर महात्माओं को भोजन कराना शुरू किया। तीन दिन तक लगेतार संत भोजन करते रहे परंतु कड़ाव तो नहीं खूटा, तब तो माधोदासजी से माफी मांग संतोंने अपना अपना रस्ता लिया। तब माधोदास जी महाराज ने कहा भैरव! मैं प्रसन्न हुवा कुछ मांग। भैरव ने कहा मेरे को तो मेरे ही खान पान की चाहना आरही है। [illegible] मिलजाय। आपकी टहल करने को एक चेला ला दूंगा। महाराज ने कहा तेरा प्रारब्ध ही मंद है, मैं क्या करूं! तू जाने। भैरव तुरंत मुलतान गया। जिस सेठ का कड़ाव लाया था उसीके लड़के को उठलाया। महाराज का टहलवा कर दिया। कई दिन के बाद यात्रा के लिए मुलतान से सेठ कोड़मदेसर आया, देखता है तो कड़ाव पर अपना और पिताका नाम खुदा हुवा है। इतने में लड़के की तरफ देखता है तो [illegible] मालूम होता है। चकित होके बोला मामला क्या है? तब भैरव ने कहा [illegible] लड़का तुम्हारा ही है। माधोदासजी महाराज की सेवा के लिए मैं [illegible]
[illegible] सुन वह सेठ अपना अहो भाग्य समझ खुशी खुशी के साथ उस लड़के [illegible] के चढ़ाकर पीछा चलागया। माधोदासजी महाराज ने शिष्य बना उसका [illegible] रखा। महाराज के धाम पधारनेपर सुंदरदासजी गद्दीपर हुए। महाराज के अनेक परचे हुए हैं।

(कामध्वजजीकी कथा)

भगवान के पारषद हनुमानजीने आकर भक्त कामध्वजके मृतक शरीरको जलाया। शरणागतको जीतेजी सुख दिया और अंतमें उसका अच्छा हलवा चलावा किया। इस प्रकार भगवानने भक्त की महिमा बढाई। (भक्तमाल)

हरि पुर से आये जना, पाय गये परसाद।
लालाचारज प्रसिद्ध जग, चकित रहे असाद॥ १५॥

(लालाचार्यजीकी कथा)

वैकुंठ से हरिजन आकर लालाचार्य के यहां प्रसाद पा गये। इस प्रकार लालाचार्यकी आपने जगत में प्रसिद्धि करवाई। इस वार्ता को देखकर दुष्ट तो हक्के बक्के से रहगए। (भक्तमाल)

करमांबाई के सदन, भाव मई परसाद।
नाम लुगाई प्रगट जग, अकरण करण अगाद॥ १६॥

(करमांबाईकी कथा)

करमांबाई के घर में जिन भगवानने भावमय प्रसादका भोग लगाया। करमांबाई जाति की जाटणी एक साधारण स्त्री थी परंतु उनका नाम जगत में प्रगट कर दिया। ऐसे वे भगवान अकरण करण में गंभीर हैं।

"नहिं विद्या कुल जाति अचारा।
रामहिं केवल प्रेम पियारा॥"
"धावल ओढ खीचडो धलके।
अपणा दे कपड़ा ओढ़ाय॥" (भक्तमाल)

कहलों बरणूँ संत जश, गति अगाध परमेश।
मो बल यो ही आसरो निर्भय गुरु उपदेश॥ १७॥

संतों का यश कहाँ तक वर्णन करूं? क्योंकि परमेश्वर की गति अगाध है। मैं तो गुरु महाराजके उपदेश से निर्भय हूं। मेरे यही बल है और यही आश्रय है।

नवग्रह चौंसठ जोगिणी, बावन बीर पर्जंत।
काल भक्ष सबको करै, हरि शरणै उरपंत॥ १८॥
ताकी दासी तापत्रय, मो घट व्याधि जराय।
ओलराय जानो सबै, यह बिरद केरो जाय॥ १९॥
साजे सदा, भागे अभे अनंत।
बिडारण तारणा, नमस्कार भगवंत॥ २०॥

• मैं धड़।

एक समय माधोदासजी महाराजके दर्शन करने को बीकानेरके राजा कोडमदेसर आए। महाराज को तिजारी चढ रही थी। आपने वह तिजारी गूदडी को भुलाकर दरबार से बात चीत करनी शुरू की। पासमें पड़ी हुई गूदडी थरथर धूज रही है। राजा के पूछनेपर तिजारी का सब वृत्तान्त कह सुनाया तब तो राजाने अपना अहोभाग्य समझा कि मेरे राज्य में ऐसे सिद्ध महात्मा विराजते हैं। यह वृत्तान्त बीकानेर पुरानी ख्यात में लिखा हुवा है।

कोडमदेसर की गद्दी सिंहथल गद्दीकी दादागुरु गद्दी है।　　　　इति।

उर नरहरियानंद के, कर दुर्गा आधीन।
नितका ढोया ईंधणा, अकरण करण नवीन ॥ ११ ॥

(नरहरियानंदजीकी कथा)

भक्त नरहरियानंदजीके लिये आपने दुर्गाको आधीन करदी। बिचारी दुर्गाने नित्य लकडियों की भारी ढोई जिस अकरण ने यह नवीन करण किया।

(भक्तमाल)

चंद्रहास को राखियो, केती कए दयाल।
मात आदि चरणा परी, महिपति भक्त विशाल ॥ १२ ॥

(चंद्रहासजीकी कथा)

जिस दयालु ने कितने ही कष्टों से चंद्रहास को रखलिया। मातादि जोगिणियें भी जिस चंद्रहास राजाके चरणों में पड़ी वह चंद्रहास एक विशाल भक्त होता भया।

श्लोक।

विषमस्मै प्रदातव्यं त्वया मदनशत्रवे।
कार्याकार्यं न कर्तव्यं कर्तव्यं किल मत्प्रियम् ॥ १ ॥　(भक्तमाल)

नंददास के हेत जो, गऊ जिवाई राम।
भये खिसाने विप्र सब, जनके सारे काम ॥ १३ ॥

(नंददासजीकी कथा)

जिन राम महाराज ने नंददासजी के वास्ते गऊ को जिवादी। सब ब्राह्मण जिनके ऊपर नाराज हो गये थे तो भी भगवानने भक्त का काम तो सिद्ध करही दिया।　　(भक्तमाल)

दग्ध देह कमध्वज तणी, किधी धारपत्र आन।
धाय चलायो दारण सुप, उन महिमा भगवान ॥ १४ ॥

---

१ ईंधण=काठ।

सोरठा।

उलटा समझे राम, ओखांणो साचो कर्यो।
शरणागत दुख ताम, यह कारण अबही भयो ॥ १ ॥
आगे अबै न कोय, अजहूँ मैं नाहीं सुन्यो।
यह तो कदे न होय, रांर गमावण रामजी ॥ २ ॥

हे रामजी महाराज! आप समझे तो सही परंतु उलटा समझ गए।

तापै फकीर को दृष्टांत–एक फकीर रास्ते २ जा रहा था उसने चाहा कि अगरचे खुदा चढ़नेके लिए मुझे एक घोड़ा देदे तो कैसा अच्छा हो। ऐसा संकल्प कर आगे को बढ़ा तो क्या आश्चर्य देखता है कि एक राजपूत के चढ़नेको घोड़ी थी उसने बछेरा देदिया। राजपूत जंगल में रास्ते पै खड़ा विचार करता है कि, कोई मजदूर मिलजाय तो बछेरे को उठाले। अकस्मात् फकीरपर निगाह पड़ी और कहा कि फकीर साहब! बछेरे को उठालो, बलात्कार उठा कर चले। अब चलते चलते फकीर साहब विचारते है कि खुदा ने घोड़ा तो दिया पर उलटे समझ गये। मैंने घोड़े पर चढ़ना चाहा था पर उलटा घोड़ा मुझपर चढ़ गया।

इसी प्रकार श्रीघालजी महाराज फरमाते हैं कि, आप मेरी विनय को समझे तो सही पर उलटे समझ गए। मैं तो जन्ममरणरूप व्याधि को मेटना चाहता था परंतु वो तो कहीं रही उलटी नेत्रों की व्याधि आ लगी।

तथा हे प्रभो! चोबे वाला आख्यान आपने सांचा कर दिखाया।

("इक चोबे हुवे छब्बे होने चले तहां होय दुबे द्वै गांठ के खोये") एक चोबे थे उनको यह खबर मिली कि अमुक देश में चोबेको छब्बे कहते हैं। आप घर छब्बे होने को निकले सो चलते चलते एक और ही जगह पहुंचे तो वहां सुना कि चोबे को दुब्बे ही कहते हैं। अब वह चोबा वहां विचार करता है कि मैं अपने देशमें चोबे कहलाता था। छब्बे होने को रवाना हुवा परंतु उलटे यहाँ आकर दो गांठ के खो दुब्बे ही बन बैठा।

इस प्रकार श्रीघालजी महाराज फरमाते हैं कि हे प्रभो! मैं अपने समय को सुखपूर्वक बिता रहा था तब मैंने चाहा कि भगवत् भजन कर जन्म मरणरूपी रोग को मिटादूं ऐसा निश्चय कर प्रयत्न किया तो करते ही नैरोग्यावस्था से रहित हो नेत्रों की पीड़ा से पीड़ित होगया, किन्तु आरोग्य अवस्था को गांठसे गमा दुःखी बन बैठा, सो यह आख्यान सचाही आपने कर दिखाया क्या?। प्रभो! शरणागत को दुःख होना यह कारण तो अब ही हुआ है ऐसा न तो कभी आगे और न अन्यत्र कहीं ऐसा है और न अबतक मैं ने सुना, यह तो कदापि हो कि रामजी महाराज नेत्रों को गमा दें।

१ आख्यान। २ नेत्र, वरूपर, लवाई। ३ यह आर्त वचन हैं।

नवग्रह चौंसठ जोगिनी से लेकर बावन वीर पर्यंत काल सबको भक्षण ता है वह काल भी भगवद्भक्तों से डरता है। तिसकाल की दासी जो ताप: रूपी व्याधि सो मेरे घट को जला रही है, हे जानराय! आप सब जानते कि ये विरद किसका जा रहा है। आप वही पालक है कि जिन्हों ने पहिले व रक्षा की और कर रहे है और करेंगे। हे कर्मों को विडारणे वाले जगत तारणेवाले भगवंत! आपको नमस्कार हो।

व्याध एक मार्‍यो सिरग, व्याले डस्यो तरु छाँय।
तृपा मरत शुक सुनि गिरा, नाम प्रगट उरमाँय ॥ २१ ॥
उभय वार श्रवणा सुणे, उभय वार मुख गाय।
अंतकाल ऐसो भयो, ततछिन भए सहाय ॥ २२ ॥
जमकिंकर बंधे महा, बंध छुडाई ताय।
हरिपुरवासी आयके, लेखे न्याव चुकाय ॥ २३ ॥
एके चेले अघ सबे, एके चेलै नाम।
ऐसी विधि भव तारणा, निर्भय दीधो धाम ॥ २४ ॥

(एक व्याध की कथा)

एक व्याध मृग को मारकर वृक्ष की छाया में आके बैठा। बैठते ही साँप ने उसे स लिया। उस समय प्यासे मरते हुए उस व्याधने एक सुवे की गिरा सुनी, नते ही उसके हृदय में नाम प्रगट आया। दो वार तो नाम को कानों से वण किया और दो वार ही मुख से नाम लिया तो उसका अंतकाल ऐसा आ कि तत्क्षण भगवान् उसके सहायक होगये। जमदूतों ने उसको बड़े धनों से बांध दिया था तो भी भगवत्पारषदों ने आकर उसके बंध छुड़ा दिये ौर हिसाब कर उसका इन्साफ चुकाया। तकड़ीके एक पलड़े में तो उसके ब पाप रक्खे और एक पलड़े मे भगवन्नाम रक्खा तो पापवाला पलड़ा हलका ागया, इस प्रकार भवतारकने उस व्याधको निर्भय धाम दिया।

मेरी विरियां कहा भयो, दीनबंधु दातार।
करहु कृपा अब औरसी, बिगरत कौन बेहार ॥ २५ ॥

हे दीनबंधु दानी! अब मेरे वक्त क्या हो गया। औरोंपर जैसी कृपा करी वैसी कृपा मेरेपर भी करो, अथवा औरसी कहिये खास अंतःकरणसे कृपा रो, क्योंकि यह व्यवहार अब किसका बिगड़ रहा है?।

१ घर्व। २ दूत, नौकर। ३ चेला=पलड़ा। ४ व्यवहार।

यह मैं जानता हूं कि राम महाराज शरणागत के दुःख को मेटणेवाले हैं, गरीब निवाज हैं, विघ्न हरता हैं और सदैव मंगल करता हैं।

दोहा।

भक्तिरस जामें सकल, छंद सारसी जान।
हरि सरवर हंसा जना, मुक्ता नाम निधान ॥ १ ॥
भाव नीर निरमल सदा, परिमल भवसिंधु पार।
रामदास जन रमरह्या, लह्या अखै सुख सार ॥ २ ॥

करुणासागररूपी दिव्य सरोवर में भक्ति के सारे रहस्य समाए हुए हैं, जिसमें छंद सारस है, भक्त हंस है, नाम मोतियों की निधि है, भाव निर्मल जल है, भवसिंधु से पार होना ही मधुर सुगंध है ऐसे सरोवर में जो रामभक्त समुदाय रमण करते हैं वे मोक्ष सुख को प्राप्त होते हैं।

मन कलियो मोह सिंधु में, काल ग्राह अघ तंत।
अब लायक सहायक सदा, नमस्कार भगवंत ॥ ३ ॥

मोहरूपी समुद्रमें कलीजा हुवा जो मनरूपी हाथी तिसको पापरूपी तंतु डालकर कालरूपी ग्राह खेंच रहा है, अब उनकी सहायता करने में आपही समर्थ हैं, हे भगवंत! आपको सदैव नमस्कार हो।

छंद रोमकंदी।

नमो भगवंत सँभारण कारण गत्ति अपार न कोण लही।
भव दुःख विडारण काज सुधारण पार उतारण एक सही ॥
बल बाँह वधारण अघ निवारण जीव जिवारण वप्पु धरो।
भव के दुख टार उधार अँपंपर पार गजेंद्र जेम करो ॥ हरि० ॥ १ ॥

रक्षा करणेवाले हे भगवत! आपको नमस्कार हो, आपकी अपार गती का किसने पार पाया ?।

संसार के दुःखों को दूर करनेवाले, कार्य को सुधारनेवाले, पार उतारनेवाले एक सत्यसरूप आप ही हैं।

हे बाँह के बल को बधारणेवाले! हे पापों को निवारण करनेवाले प्रभो! आप तो केवल जीवों को जिलाने के वास्ते अवतार धारण करते हैं।

हे हरे! संसारके अपार दुःख को टार जिस प्रकार जल में डूबते हुए गजेंद्र का उद्धार किया तैसे ही मेरे को पार करो ॥

---

१ रहस्य।—२ उत्तम गंध। ३ अभय। ४ गति=लीला, माया। ५ अघ=पाप। ६—शरीर। ७ जलमें पड़ा हुवा। ८ जिमि=जैसे।

बोल न जाणूं कोय, अल्प बुद्धि मन वेग तैं।
नहिं जाके हरि होय, यातो मैं जाणूँ सदा ॥ ३ ॥

हे महाराज! अल्पबुद्धि होने से मैं बोलना कोई नहीं जानता केवल मन के वेग से आल बाल कर रहा हूँ। जिसके कोई नहीं उसके हरि होवें हैं यह तो मैं सदैव से जानता हूं, और बस इसीपर मैं निर्भर हूँ।

तव जन शरणै आय, हनूवँश इक डोवरो।
नाभा नाम सहाय, चक्षमा खुल संजय सही ॥ ४ ॥
जन पद पंकज धूर, चख उर मन मंजन कर्‌यो।
राम शब्द भरपूर, ताहि नेत्र ऐसे खुले ॥ ५ ॥
मुरबैला सूझंत, अद्भुत वरण्यो ब्रह्म पद।
हरि शरणे जूझंत, धालधाल यह आसरो ॥ ६ ॥

(नाभाजी की कथा)

हनुवंश का एक नाभा नाम बालक भक्त आपके शरण आया उस नाभे की आपने सहायता की, उसके हृदय के नेत्र खोल उनको सच्चा संजय बना दिया। जिस नाभाजी ने महात्माओं के चरणकमल की धूली से नेत्र, हृदय और मन को मंजन किया और राम शब्द की भरपूर ध्वनि की तो उनके नेत्र ऐसे खुल गए कि तीनकाल (भूत भविष्यत वर्तमान) की वार्ता सूझने लग गई, तब उन ने अद्भुत ब्रह्मपद का वर्णन किया इस प्रकार मैं भी तो हरि शरणै जूझ रहा हूं, क्यों कि यही आसरा धालवाल के है।

"श्री नाभा नभ उदित शशि, भक्तमाल सो जान।
रसिक अनन्य चकोर है, पान करै रस खान ॥" (भक्तमाल)

पावन पतित अनेक, समरथ याही चोज है।
पापी हुलँस विशेष, अबकी वेर उबारिये ॥ ७ ॥

अनेक पापियों को पवित्र करना समर्थवानों के तो एक चोज है और इस बात का पापियों को विशेष हर्ष है तब तो मेरी यह प्रार्थना है कि अब की वेर इस पापी को भी उबार लें।

"भक्तवछल को विरद सुनि, रज्जब दीन्हो रोय।
जब सुनियो पावन पतित, रह्यो नचीतो सोय ॥ १ ॥"

यह जानत महाराज, शरणागत मेटण अैदा।
राम गरीबनिवाज, विघ्नहरण मंगल सदा ॥ ८ ॥

१ लड़का। २ नेत्र। ३ चमत्कारपूर्ण उक्ति। ४ आनंद की उमंग। ५ दुःख, मनकी व्याधि।

जग जाल भेसराल सँभाल छले इन भंख्ख सदा भवसिंधु मही।
नभ नाल तेताल धराल मिले त्रयलोक सुरप्पति विधि सही॥
फद रस्स डंढाल दंढाल उंगालण होय अभै खल खाण नरो।
भवके दुख टार० ॥ ४ ॥

इस काल ने संसाररूपी समुद्र में इस जगत जाल को लगातार सदा सँभाल सँभाल कर छला।

नभचर, जलचर, थलचर, इन सहित तीनलोक, तथा इन्द्र, ब्रह्मा आदि तथा दाढोंवाले, बडे बडे शरीरवाले, तथा मनुष्यों को खानेवाले राक्षस आदि ये सब जिसकाल के अनेक रसवाले ग्रास हो चुके हैं उस काल से हे राम महाराज! आप अभय करो।

जग जंतु जनम्म अनंत कपट्टय महा दुपट्टय हाल हुआ।
जिव अघ्घ करप्पय मृत्यु हरप्पय पूर वरप्पय आयु दुआ॥
अंत नाड़ि तटक्कय प्राण सटक्कय छोडि घटक्कय सीर टरो।
भवके दुख टार० ॥ ५ ॥

प्रथम तो जगत जीवों के जन्म में अनंत कष्ट हैं फिर इस जीव के खोटे हाल होते हैं।

इस जीव को पाप तो अपने तरफ खींचते हैं। मृत्यु अलहदी खुशी मनाती है। और आयुके वर्ष पूरे होनेतक दवा दारू देकर वैद्य न्यारे ही विचारे गरीबों को ठग ठग कर मनमें राजी होते हैं।

जब अंतमें नाड़ी तटकती है, घटकों छोड प्राण सटकते हैं, तब इस प्राणी का सब से सीर टल जाता है, उस समय में उस प्राणी को संसार से पार उतारनेवाले एक आप ही हैं।

इम श्वास दमोदम दुःख हमोहम राम रमोरम जान सवे।
ग्रेह ग्राह गमोगम जीव भमोभम एक तमोतम ओर नवे॥
यह दीन समो शम क्यों न करो किमु राज नमोनम धीर धरो।
भवके दुख टार० ॥ ६ ॥

इस प्रकार श्वास तो दम दम में घट रहा है। दुःख का हमला पर हमला हो रहा है। हे रमतीतरामजी! तिसको आप सब जानते हैं।

---

१ निरंतर। २ भक्षक=काल। ३ नभचर। ४ जलचर। ५ स्थलचर। ६ सुरपति इन्द्र। ७ विधि=ब्रह्मा। ८ रस=स्वाद। ९ डाढोंवाले। १० बडेशरीरवाले। ११ चबाना। १२ अभय। १३ दुष्ट=बुरा। १४ दवा=औषधि। १५ रमतीतराम। १६ ग्रह ग्रह की प्रति। १७ समय। १८ शांति।

महा मत्त मनंगय रत्त अनंगय अंध कुसंगय में मतयूं।
ता पंच प्रसंगय याम भुवंगय काम कमंगय से हत यूं॥
विष अंग तरंगय ग्रीषम अंगय मोह सुरंगय होय गरो।
भवके दुख टार० ॥ २ ॥

महा उनमत्त मनरूपी हाथी कामदेव में रत होकर अंधा हुवा कुसंगति में मस्त होगया।

इसीलिए वह मन पंच प्रसंगोंसे अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध से, स्त्रीरूपी सर्पिणी से, और काम के बाणों से मारा गया।

विषय के आठ अंग हैं वही मानो विष की लहरें जिस मनके अंग में उठ रही हैं, और काम करके तपायमान जो स्त्री का अंग है वही मानो ग्रीष्म ऋतु है, तिस करके तप्त हो रहा है। अब वह मन स्त्रीसंबंधी मोह रंग में रंगीज कर गर रूप होगया है अतएव हे नाथ! अब आप इससें उबारो।

प्रकृत्ति पँचीस तेतीस प्रचंडय मंडं स भंडय पिंडं इता।
हुय थंड विहंडय जीव स डंडय सूर प्रचंडय मग्न मता॥
तत्काल विकराल विहाल स झंपेंण व्याधि गिरोह सैंनाह बुरो।
भवके दुख टार० ॥ ३ ॥

पचीस प्रकृति, अंन्नमयादि पंचकोष, और तीन गुण ये सब मिल कर तेतीस होते हैं इन्हीं से बडा प्रचंड ब्रह्मांड बन गया और यही पिंड में है (पिंडेषु ब्रह्मांडे)

उक्त प्रकृति आदि समूह विचल होकर जीवों को सुखदुःखरूपी दंड देरहा है। तिस समूह में मत्त जो मन है सो प्रचंड शूरवीर है।

इतने ही में उछल कर विकराल व्याधिरूप ग्राह ने तो तत्काल विह्वलही करदिया, इसका बंधन बहुत बुरा है, हे प्रभो! इस दुःख से आप पार करें।

---

१ मन। २ हस्ती। ३ अनंग=कामदेव। ४ बाण। ५ गर=एक प्रकार का बहुत कडुआ और मादक रस जिसका व्यवहार प्राचीन कालमें होताथा। ६ स्त्रीका स्मरण, कीर्तन, परिहास, निरीक्षण, गुह्यभाषण, भोगनेका संकल्प, भोगनेका दृढ निश्चय, और आठवां स्त्रीसंग अर्थात् दृढ निश्चय कीहुई कियाकी सिद्धि। ७ प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, पांचज्ञानेंद्रि पांचकर्मेंद्रि, मन, पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, जीवात्मा। ८ ब्रह्मांड। ९ शरीर। १० समूह। ११ विहंड=विचलना। १२ उछलना। १३ ग्राह। १४ बंधन। १५ अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनंदमय। १६ सत्व रज तम।

छंद छप्पय।

द्वंद्व हरण गोविंद तरण भवसिंधु विश्वंभर।
नमस्कार आधार भूल नहिं परत निशंभर॥
ग्राह दुग्राह अथाह अये शरणागति तेरी।
दीनबंधु आनंद टेर यह सुनिये मेरी॥
निराधार आधार हरि पारवार पावन पतित।
घालबाल शरणागती कैरी सैरी सो मुनि कथित॥ १॥

हरप शोक को हरणेवाले हे गोविंद! हे संसाररूपी समुद्र से तराणेवाले! हे विश्वंभर! आपको नमस्कार हो। हे प्राणों के आधार दिनरात मेरे से आप भुलाए नहीं जाते हो। अथाह दुख ने मेरे को ग्रहण कर लिया है। अब आपकी ही शरण है।

हे दीनबंधु आनंद रूप! मेरी यह टेर सुनिए। हे पतितपावन हे हरे! संसाररूपी समुद्र में निरधारों के एक आपही का आधार है। यह घालबाल आपकी शरणागत है। मुनिलोग कहते हैं कि गजेंद्र की वेला सरगई तो हे प्रभो! क्या मुझ घालबाल की वेला नहीं सरेगी?

दोहा।

नाँहि न दूजो आसरो यह दुख मेटण आप।
दाझत जग माया दुखद तीन लोक त्रय ताप॥ १॥

तीन लोक को दुःख देनेवाले जो तीन ताप इन से माया जगत को जला रही है। सिवाय आप के दूजा कोई आश्रय नहीं है। हे राम! इस दुख को मेटनेवाले आप ही हैं।

छंद रोमकंदी।

त्रयं ताप सँताप दुखाप दुखंकर पाप किंयंकर लार लगा।
जिय छाप कलाप विलाप भयंकर वाफ हुतंकर मृत्यु अगा॥
मन साँप शराप विशेष कायापर मोह मया धर वेश तरे।
मनते सिध सार अधार रमोरम आप विना कुण ताप हरे। जी॥ १॥

तीन ताप के संताप से सब प्राणी दुख को प्राप्त हो रहे हैं। वह तीन ताप

---

१ द्वंद्व=युग्म। २ निशिभर अर्थात् रातदिन। ३ पारावार=समुद्र, आरपार, अपरंपार, अनंत। ४ हस्ती। ५ सिद्धहुई। ६ तीन ताप=दैहिक, दैविक और भौतिक व आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक। ७ इस छंद में उदाहरण सहित तीन तापों का वर्णन है। ८ किंकर=नोकर। ९ अग्नि। १० बजावट। ११ विष्णु नारायण।

शरीररूपी गृहगृह के प्रति गमन करते हुए जीव वारंवार सँसार में भ्रमण कर रहे हैं, सो उन जीवों की रक्षा करनेवाले हे प्रभो ! एक आप ही आप हैं, (न वे) किंतु वे शरीर रक्षा नही कर सकते हैं।

यह दीन का समय है, इस दीन के चित्त को स्थिर क्यों नहीं करते हैं ? इस समय आप किस प्रकार धीरज धारण कर रहे हैं ? आपको नमस्कार हो नमस्कार हो।

परिवार न वारण सार संभारण तारण कारण आय लियो।
आरोह खँगारण धाय धँरारण चक्र चलारण काज कियो॥
धिन आप अपारण सोइ विचारण टेर उचारण एक ररो।
भवके दुख टार० ॥ ७ ॥

परिवार ने जिस गजेंद्र की सार संभार न ली तब उस को तारने के लिए अवतार धारण कर गरुड़पर चढकर चले, फिर पृथ्वी पर दौड़े, तब भी जल्दी न पहुंचने पर चक्र चलाकर गजेंद्र का कार्य सिद्ध किया।

एक र र र इस प्रकार की टेर उच्चारण से ही जिस गजेंद्र का उद्धार कर दिया ऐसे आप को धन्य है, आप अपार हैं, आप का विचार भी अपार है।

गोविंद आनंद नमो चँद वंद पुँरंद सुखंद समंद सदा।
मो मंद मनंद गँमो सिध तद्द लेयंद शेंयंद उँरंद मुँदा॥
हद जिंद निकंद सँकंद सँदोगत्ति अँद समंद दुँरंद हरो।
भव के दुख टार० ॥ ८ ॥

आनंदस्वरूप हे गोविंद ! आपको नमस्कार हो। कैसे हैं आप ? चंद्र तथा इंद्र करके वंदित हैं, और सदा सुखसमुद्र हैं।

आप प्रसन्नता के साथ हृदयकमल में शयन कर रहे हैं, उनकी गम लेने के वास्ते मेरा मन बडा मुग्ध है, उनकी गम तो सिद्ध पुरुष ही लेते हैं।

जो हद के शरीर हैं वे सब नाशवंत हैं। हद के अंदर जितने जीव हैं उनके लिये तो वह (हद) अपार समुद्र है, इसलिये हे मोक्षमूल ! उस अंतिम अवधि रूप हद का हरण करो।

---

१ गजेन्द्र। २ गरुड़। ३ पृथ्वी। ४ पुरंदर=इंद्र। ५ मुग्ध, मूर्ख, खल। ६ मन। ७ गम=खोज। ८ सिद्ध=महात्मापुरुष। ९ लेना। १० शयन करना। ११ उर=हृदय। १२ प्रसन्नता। १३ अवधि। १४ शरीर। १५ नाश। १६ स्कंध=मूल। १७ सद्गति=मोक्ष। १८ अंदर=भीतर। १९ दुरंद=अपार।

आठ प्रकार का ज्वर होना, असाध्य व्याधियों का होना, बाला निकलना, तथा शरीर में गड़गूमड़ होना, गोडे में डहरवा नामक रोग होना, तथा गुजराती आदि कितने ही होनेवाले रोग तथा कफ पित्त वात से होनेवाले रोग, प्रदर-रोग, प्रमेहरोग, और यकृत् (लीवर) प्लीहादि उदररोग, तथा शोषरोग, गठिया वायुसे आदि लगाकर वायु के रोग आदि शिरोरोग, मुखरोग, नेत्ररोग करके जिसके जितने भोग भोगने हैं यह अध्यात्म ताप है । रजोगुण इसकी खानि है । हे परमात्मन्! अब लाज आपही के हाथ है, इसदास का कार्य सिद्ध करें।

घंयोल सियाल उनाल वर्षाकुल वारि वर्षाल खुंधाल सयू।
वनाल विचाल गिराल असाफल ज्वालं मयाल सखाल लयू॥
सुराल विचाल झपट्ट सतोगुण यह अधिदैव से वाल टरे।
मनतें सिध सार० ॥ ४ ॥

बड़ी जोरदार काली पीली आँधीसे, शीतकाल से, उष्णकाल से, बड़े तूफान से, वर्षाकाल से, क्षुधाकाल से वनके मध्यमें पर्वत के मस्तक में खंड प० खंड में बिजली के उत्पात से, नाळ साल से, तथा देवताओं की झपट से, जो ताप है वो अधिदैव ताप है। सतोगुण इस की खानि है। हे प्रभो! ऐसी कृपा करो कि इस ताप से आपका बाल घाल टल जाय।

क्रियमाण मिलान भोगान संचित्तय प्राणि वसान सुथान जका।
तपतीन विधान समान दसंचिय मान अज्ञान गुंज्ञान धका॥
तय भान भचानक हानि करे जिय वालक एक भगवान रखे।
मनतें सिध सार० ॥ ५ ॥

जिन जिन स्थानों में प्राणियों का निवास है वहाँ वहाँ ही तीन तापों के [illegible] अनुसार क्रियमान प्रारब्ध और संचित इन तीन प्रकारके कर्मोंका डर है। अज्ञानी अथवा ज्ञानी दोनों ही इस क्रियमान कर्म करके धकायमान होते हैं [illegible] दूसरे प्रारब्ध और संचित ये अकस्मात् हानि करते हैं । उस समय में [illegible] का बालक एक भगवानने ही रक्खा है अर्थात् भगवान ही उसके कार्य को सिद्ध करते हैं।

१ ऋतु। २ इस छंद में आधिदैव ताप का वर्णन है। ३ शीतकाल। ४ [illegible]। ५ क्षुधाकाल। ६ वन। ७ गिरिशिखर। ८ खंड। ९ [illegible]। १० देवता। ११ इस छंद में संचित, प्रारब्ध, क्रियमाण, इन तीनों कर्मों का वर्णन है। १२ [illegible]। १३ [illegible]। १४ [illegible]।

यह हैं—जैसे अघासुर, धेनुकासुर आदि कंस के किंकरों ने लारे लगकर जिस प्रकार ब्रजवासियों को दुखी किये इस का नाम अधिभूत ताप है और यह तन की है।

कालीदह में निवास करनेवाला जो काली नाग जिस की विषाग्नि से मृत्यु भी अगा कहिये अगाऊ दूर हट रही है इस प्रकारकी छाप जिन ब्रजवासियों के आत्मा में लगने से जो भयंकर विलाप कलाप करना है इसका नाम अध्यात्म ताप है और यह वचन की है।

जिस महाजहरीले काली नागके लिये ब्रजवासियों का मनसे धिक्कार देना है, और विषसे मृतक बालकों के शरीर पर मोह उत्पन्न होना है इसका नाम अधिदैव ताप है और यह मन की है।

उस समय में आपने नटवर वेषधार काली को दमन कर ब्रजवासियों का दुख टाला इसी प्रकार मेरे पर भी दया कर ऐसा वेष धरो जिस से मेराभी दुःख टल जाय।

हे नारायण! हे प्राणों के आधार! मेरे काम को मनसे सिद्ध करो, बिना आपके मेरा कौन ताप हरेगा?

अँतकाल अकाल भूताल स डाकण मूठ स नाखण प्राण लिया।
कुवै खाळ जुंराल खोगाल फसावण मारग आवण मार दिया॥
अधिभूत जंरावण तागस खावण और न आवण जोणि धरे।
मनतें सिध सार० ॥ २ ॥

अकाल मृत्यु होजाना जैसे भूत लगना, डाकन लेलेना, अथवा प्रान के लेने वाली मूठ का चलाना, कुए में गिरजाना, खाल में उतर जाना, ऊंडी खोगाल में फँसजाना, मारग चलते भयसे मरजाना, यह अधिभूत ताप हैं, तमोगुण इसकी खानि है। सो हे प्रभो! ऐसी कृपा करो कि फिर आकर किसी भी प्रकार की योनी को न धारें।

ज्वँर व्याधि असाध्य नारु तन दूखण डैरु सहूकण रोग किता।
कफजादि रजादि कियादि स सूकण धायु गठूगण भोग जिता॥
यह जासु रजोगण दाझ अध्यातम लाज प्रमातम काज करे।
मनतें सिध सार० ॥ ३ ॥

---

१ इस छंद में अधिभूत ताप का वर्णन है। २ गहरी। ३ भय। ४ ताप। ५ खानी। ६ इस छंद में अध्यातम ताप का वर्णन है। ७ ताप। ८ परमात्मा।

जनंमाल धुरंाल दुधाल सिरछत कालमें क्यों न गंवाल
मनतें सिधसार० ॥ ८ ॥

वही दयालु राममहाराज कृपालु होकर जीवों की संभाल करते हैं और काल की कराल झाल में से जीवों को बचाते हैं।

जब यह जीव माता के उदर में कंधे मुख होकर भूखे मरता है तब नाभि के छिद्र है उस नाभि के नाड़ीद्वारा यह जीव रस को भक्षण करता

देखो उन कृपालु की दयालुता जन्म के पहिले ही दूध उत्पन्न करदिया वह राम महाराज इस काल में क्यों नहिं रक्षा करेंगे?

छप्पय।

काल दुकाल सँभाल करे करुणा के सागर।
झाल असंराल त्रिकाल टरे हरि जासु कृपा कर॥
जन्माजन्म अनंत कहा वरणत दुख जीवस।
अब सहायक महाराज राज तारण धिन पीवस॥
राम इंद हरिजन घटा यह वर्षा अब कीजिये।
धालवाल शरणागती अपनो करिके लीजिये॥ १॥

काल में दुकाल में वही संभाल करते हैं जो करुणा के सागर हैं। हरि जिस पर कृपा करते हैं वह प्राणी तीनों ही समय में निरंतर काल की झाळसे टल जाता है। जन्म से मरणपर्यंत जीवों को अनंत दुःख होते हैं उन दुःखों का कहां तक वर्णन करें? सो हे राम महाराज! इस जीव के अब आपही सहायक हैं। राज ही तारनेवाले हैं और राज ही धणी हैं धन्य हैं। हे इन्द्ररूपी राम-महाराज! हरिजनरूपी घटा से अब वह वर्षा करावो कि जिससे करुणा के सागर पूर्ण हो जाय। धालबाल आपका शरणागती है इस शरणागत को आप अपणाय लें।

(एक बेर कहो कृपालु तुलसीदास मेरो)

॥ इति श्रीग्रंथकरुणासागरसंपूर्णम् ॥

इत्यंपूर्णम्.

१ २ प्रथम। ३ दुग्ध। ४ समय। ५ रक्षा। ६ दुष्काळ। ७ असहा॰
८ जन्म से लेके जिंदगी भर। ९ गुरु प्रकरण भक्तमाल परची कवितबद्ध
समरुबाणी श्लोक मेधा २५०००।

उर चांय उपाय भमाय सबै घट छाय अँधाय जलाय दिया।
मुरझाय दिखाय जँमाय तबै शठ ताय बंधाय धकाय लिया॥
कइ खायँ सिराय पचाय जठागनि दाय सहाय सवाय मरै।
मनतें सिधसार० ॥ ६ ॥

जब प्राणी के हृदय में चाह उत्पन्न होती है तब वह उसको बड़ा भटकाती है, जिस चाहरूप अगाध दावाग्नि ने संपूर्ण प्राणियों के घट जला दिए।

चाह से जला हुवा पुरुष पहिले तो कुछ कर सकता नहीं। जब अंतकाल आता है तब वह मूर्ख यमदूतों को देखते ही मुरझाय जाता है, उसको वे यमदूत बाँध धक्का देकर यमलोक ले जाते हैं।

उस यमलोकमें कितनेक प्राणियों को तो खाकर खुटादेते हैं, और कितनोंको जठराग्नि करके पचाय जाते हैं, और कोई दयाकर उन जीवों की सहायता करता है तो वे जीव सवाये मारे जाते हैं।

(ऐसी दशामें श्री गुरुदेवजी सहायक हैं)

गुरु ज्ञान घटा बरसान सदा संग दूरि दँदा उन प्राणि मिटे।
उर आन मिटा हरि ध्यान सदा रंग नूर तदा तनु जाँन हटे॥
उर जाल सेवाल मिटायके उज्वल प्रेम सुखाल अमिट्ट झरै।
मनतें सिधसार० ॥ ७ ॥

जिन्हों ने ज्ञान घटा बरसानेवाले श्रीगुरुदेवजी का सतसंग किया उन प्राणियों के दुःख दूरसे ही मिट गये।

और उस सतसंगति से हृदयमें आन उपासनादि भ्रम मिटकर जिस समय भगवत् ध्यान में निरंतर जिन लोगों के नूर रंगे गये हैं उस समय वे लोग अपने शरीर की सुध बुध भूल गए हैं।

जिन गुरुमहाराज ने सतसंगद्वारा भ्रमरूप जाल मलीनतारूप सेवाल मिटाकर जिनके हृदय उज्वल कर दिए हैं उन हृदयों में से प्रेमरूप सुंदर झरणे निरंतर झरने लग गये हैं।

दयाल कृपाल संभाल करे जिय झाल कराल विचाल रखे।
जठराल उंधाल खुधाल मरे नँभ नाभिनभाल रसाल भखे॥

---

१ चाह। २ अथाह। ३ यमदूत। ४ व्यतीत करना। ५ दया। ६ दुःख। ७ ज्ञान। ८ अमिट=निरंतर। ९ जठर=उदर। १० ऊंधा। ११ क्षुधा। १२ छिद्र, आकाश। १३ नाड़ी। १४ रस।

दास पूरण मालची, धिन किये पूरण काम।
लाज जगकी मेट शंका, लियो मन विसराम।
तो सतनामजी सतनाम, पूरणदास है सतनाम ॥ ५ ॥
दामोदर कर दमन इंद्रिय, पंच वश करलीन।
शील साच संतोष शम दम, दांत पदको चीन।
तो परवीनजी परवीन, हरिरस भजनमें परवीन ॥ ६ ॥
दास नारायण नाम नीको, लियो द्विज अंतवार।
सकल प्रायश्चित भये छिनमें, कियो पेलैपार।
तो वलिहारजी वलिहार, नारायणनामकी वलिहार ॥ ७ ॥
दास मोहन मोह माया, दई सकल निवार।
ध्याय अपणो धणी निश्चय लियो उरमें धार।
तो सिधसारजी सिधसार, सारी वात कर सिधसार ॥ ८ ॥
ध्यान माधवदास धाऱ्यौ, मँडे जाय मैदान।
आकाश ओढण भूमि पोढण दशों दिश वखान।
तो परवानजी परवान, त्याग वैरागमें परवान ॥ ९ ॥
किये नख सिख सर्व सुन्दर, ध्यान सुन्दर धार।
वाद विरोध विकार परिहर, दिये द्वंदरमार।
तो चितचारजी चितचार, निरमल कियो मन चितचार ॥१०॥
चरणदास विचार वाणी, राम चरणां चित्त।
अल्प सुख संसारको, निजनाम साचो वित्त।
तो वड कृत्तजी वडकृत्त, संतांचरणकी वडकृत्त ॥ ११ ॥
नमो जैमलदास स्वामी, वडे धीर गंभीर।
धार जन अंयतार अवनी, मेटणा परपीर।
तो सुखसीरजी सुखसीर अमृत धारकी सुखसीर ॥ १२ ॥
दास ज्यूं कवीर चकवै, लियो निर्गुण नाम।
कियो निरणय नीरक्षीरं, हंस ज्यूं हरिराम।
तो विश्रामजी विश्राम जीवां कारणे विश्राम ॥ १३ ॥
दास विहारी विमलवाणी, जासु शिष हरदेव।
तासु मोतीराम धिन, रघुनाथ सतगुरु सेव।
तो निज भेवजी निजभेव, पायो भक्ति को निजभेव ॥ १४ ॥
हरिराम शिष धिन रामदासजु और नहिं कोइ आज।
निरख सब निरताय निरणय, करण जीवां काज।
तो महाराजजी महाराज मंडमें अयनरे महाराज ॥ १५ ॥

पद राग काफी ।

कोण हरै म्हारी पीर रे इक करुणासागर बिन । टेर ।
॥ कलि में मेरो नाहिं कोई, कोण बंधावै धीर है कोई बीर हमारो ॥ १ ॥
द्रुपदी की टेर सुणी जब श्रवणां, अनंत बधायो चीर रे हरि लाज रखी जब ॥ २ ॥
जल डूबत गजराज उबार्यो, कर गहि काढ्यो तीर रे तार्यो कीर कुटुँब सब ॥ ३ ॥
भारत में भीषम प्रण राख्यो, धाया होय वजीररे अपणेजन के हित ॥ ४ ॥
बलि औ बिभीषण भया चिरंजिव कियो सिथर शरीर रे रघुबीर बिरदपति ॥ ५ ॥
जन पूरण पर फिर कृपा कीजे, समरथ श्याम सधीर रे प्रभु लाज हमारी ॥ ६ ॥

पद

कोण सुणै गोहार रे करुणासागर बिन । टेर ।
अंगुरी दई श्रवण बिन कांई, दीन्हो बिरद बिसार रे गजराज तारकर ॥ १ ॥
बिपरे कहा गुसांई मेरो, लाजेगो बिरद तिहार रे इसे जग दे कर तारी ॥ २ ॥
जन पूरण की सुनो बीनती, मार भावै चाहे ताररे पर्यो शरणागत तेरी ॥ ३ ॥

अथ श्रीपूरणदासजी महाराज के छुटकर शब्द ।

साखी ।

नमस्कार हरिगुरु जना, आदि अंत मध नाम ।
तिनहीको नित करत है, पूरणदास प्रणाम ॥ १ ॥

छंद चित्तइलोल ।

संप्रदा मुख चार माहीं, प्रकट रामानन्द ।
कठिण कलियुग माहिं कीनी, भक्ति पूरणचंद ।
तो सुखकंदजी सुखकंद, सब सुखसारको सुखकंद ॥ १ ॥
नमो अनंतानन्द स्वामी, अनँत हरिगुन गाय ।
संत परचे भया सारा, प्रगट परचो ताय ।
तो गुणरायजी गुणराय, जन जस गावणो गुण राय ॥ २ ॥
दास कर्मचंद करण कारण, किये कर्म सब दूर ।
ताप त्रिविधा मेट तनकी, पंच कर चकचूर ।
तो भरपूरजी भरपूर, भक्ती भावसे भरपूर ॥ ३ ॥
भवनि दुतिये जन दिवाकर, भरम निशि चकचूर ।
अखंड जोत उद्योत अविचल, काल तस्कर दूर ।
तो झलसूरजी झलसूर, मँडमें ऊगिया झलसूर ॥ ४ ॥

मेरी बुधि अति तुच्छ है, वरण न जानों कोइ।
रोटी ओटी कहत शिशु, पितु मा परसन होइ ॥ ४ ॥

छन्द मनहर।

सम्प्रदा प्रथम रामानन्द प्रसिद्ध करी।
साके बारा शिष्य मुख्य अनन्तानन्द जानजू।
कर्मचन्द शिष्य भए ताके देवाकर।
खितीय मालवी पूर्ण तासु दामोदर मानजू॥
नारायण मोहन जासु नमो माधवदास।
तासु सुन्दर चरण जैमल प्रणामजू।
पाट हरिराम ताके रामदास उजागर।
निर्गुण भक्ति करी चाल गुरु ज्ञानजू ॥ १ ॥

दोहा।

पूर्व जन्म की वार्ता श्रीमुख कही सुनाय।
जिहि कारण यहँ अवतरे वरण सुनाऊं ताय ॥ ५ ॥

छन्द भुजंगी।

हुते नागर मेहता जूनागढ़ माहीं। तिन्हे इष्ट धारे दंडी भक्त ताहीं॥
नित्यंप्रत्ति नेमं करै दर्श स्वामी। लही भक्ति ऐसी धरै चित्त धामी॥ १॥
भई एकवारं बहु भीर भारी। तहाँ सन्त गेही मिले वर्ण चारी॥
तबै रामकृष्णं मना आनि भिन्नं। महाराज दंडीप्रति कीन्हो प्रसन्नं॥ २॥
इन्हें दर्श दीजे रखो दूर नाथा। द्विजाँ शूद्र मेला बनै नाहिं बाता॥
सुनी बात ऐसी तबै बोल स्वामी। नहीं भक्ति चीन्ही पड़ी तोहि खामी॥ ३॥
हरी गर्वाशनी तुम्हें नाहिं जानी। धरो जन्म यामें भई एम बानी॥
सुने वाक्य दंडी तबै वीक लागे। क्षमो नाथ चूकं हम हैं अभागे॥ ४॥
हो प्राणप्यारे तज्याँ नाहिं जीऊं। तुम्हें अंश आऊं कृपामृत पीऊं॥
वे है कृपालं कह्यो तुज्झि इच्छा। फलै भाव सत्यं करै राम रिच्छा॥ ५॥
दा दास हेतं धरी देह ऐसी। वाराह नरसिंह हयग्रीव जैसी॥
में तुज्झि हेतं धरूं देह आई। करो सोच नाहीं लेहों मो सिलाई॥ ६॥
ो दास निश्चय भयो मन्न भायो। राधाकृष्ण गावै पदां में लिखायो॥
श्रेष्ठ आशय इद्दं मत्ति भारी। करै जन्म लेखै आगम विचारी॥ ७॥

छन्द गीतक।

ीपुरुषोत्तम ध्यान धर मन धर्म द्वारा जासही।
ान अहमदाबाद जाकी पुत्र स्त्री तहँ वासही॥ १॥

तासु गादी आन ब्राजे, प्रगट दूजेघाल ।
घोल अनुभव गिरा वाणी, व्यास जेम विशाल ।
तो किरपालजी किरपाल जीवां ऊपरै किरपाल ॥ १६ ।
शरण आयां स्याह कीजे, दरश दीजे घाल ।
लाज पूरणदासकी अब, काटिये कर्मजाल ।
तो रिछपालजी रिछपाल अपने जीवकी रिछपाल ॥ १७

॥ इति ॥

जन्मलीला ।

(पृष्ठ ३०)

अथ श्रीअर्जुनदासजी महाराज के छुटकर शब्द

साखी ।

श्रीहरि गुरु हरिराम थिन, रामदास मुझ साम ।
घालपुरुष पूरण प्रती, अर्जुन की परणाम ॥ १ ॥

छप्पय ।

प्रथम करौं परणाम, रामदास गुरु स्वामी ।
दूसर श्री गुरु घाल, अनँत जीवां हंसनामी ॥
तीसर श्री गुरुदेव, ब्रह्म पूरण गुरु पूरा ।
वानी विमल रसाल, भरम कर्म चकचूरा ॥
संध्या मध्य प्रभात रट, जीव परमपद पाय है ।
अर्जुनदासजु रावरे, चरण कमल चितलाय है ॥ २ ॥

अथ पूर्वजन्मप्रारंभः ।

दोहा ।

प्रथम राम गुरु वन्दना, पुनि सब सन्त प्रणाम ।
हुइ प्रसन्न आज्ञा करहु, ग्रन्थ उचारण ताम ॥ १ ॥
मेरे मन उपज्यो हर्ष, टीका करण उचार ।
पूर्ण बुधि दीजे सरस, तो मैं पाऊं पार ॥ २ ॥
ग्रन्थ समुद्रहि रूप है, महान गुरू सोइ पोत ।
मम गुरु केवट खेवसी, सहज पार जब होत ॥ ३ ॥

मेरी बुधि अति तुच्छ है, बरण न जानौं कोइ।
रोटी टोटी कहत शिशु, पितु मा परसन होइ ॥ ४ ॥

छन्द मनहर।

सम्प्रदा प्रथम रामानन्द प्रसिद्ध करी।
साढे बारा शिष्य मुख्य अनन्तानन्द जानजू।
कर्मचन्द शिष्य भए ताके देवाकर।
द्वितीय मालवी पूर्ण तासु दामोदर मानजू॥
नारायण मोहन जासु नमो माधवदास।
तासु सुन्दर चरण जैमल प्रणामजू।
पाट हरिराम ताके रामदास उजागर।
निर्गुण भक्ति करी चाल गुरु ज्ञानजू॥ १॥

दोहा।

पूर्व जन्म की वार्ता श्रीमुख कही सुनाय।
जिहि कारण यहँ अवतरे वरण सुनाऊं ताय॥ ५॥

छन्द भुजंगी।

हुते नागर मेंहता जूनागढ़ माहीं। तिन्है इष्ट धारे दंडी भक्त ताहीं॥
नित्यंप्रत्ति नेमं करें दर्श स्वामी। लही भक्ति ऐसी धरें चित्त धामी॥ १॥
भई एकवारं बहु भीर भारी। तहाँ सन्त गेही मिले वर्ण चारी॥
तबे रामकृष्णं मना आनि भिन्नं। महाराज दंडीप्रति कीन्हो प्रसन्नं॥ २॥
इन्हें दर्श दीजे रखो दूर नाथा। द्विजाँ शूद्र मेला बने नाहिं बाता॥
सुनी बात ऐसी तबे बोल स्वामी। नहीं भक्ति चीन्ही पढ़ी तोहि बामी॥ ३॥
हरी गर्वहानी तुम्हें नाहिं जानी। धरो जन्म यामें भई एम बानी॥
सुने वाक्य दंडी तबे धीक लागे। क्षमो नाथ चूकं हम हैं अभागे॥ ४॥
अहो प्राणप्यारे तज्याँ नाहिं जीऊं। तुम्हें भेट आऊं कृपामृत पीऊं॥
तबे है कृपालं कह्यो तुज्झि इच्छा। फलै भाव सत्यं करै राम रिच्छा॥ ५॥
सदा दास हेतं धरी देह ऐसी। वाराह नरसिंह हयग्रीव जैसी॥
हमें तुज्झि हेतं धरूं देह आई। करो सोच नाहीं लेहों मो मिलाई॥ ६॥
हुगो दास निश्चय भयो मन भायो। राधाकृष्ण गावे पदां में छिपायो॥
सदा श्रेष्ठ आश्रय हढं भक्ति भारी। करें जन्म लेवें आगम विचारी॥ ७॥

छन्द गीतक।

श्रीपुरुषोत्तम ध्यान धर मन धर्म द्वारा आगदी।
दुकान अहमदाबाद जाकी शुभ

अच्युतगोत्र सुखी वाता मांग उत्तर ना दयं ।
जल पान भोजन पत्र सयकरि सन्त सेवा सुक्षलयं ॥ २ ॥
कइकाल वीतौं कह्यो स्वामी तजो इह पुर विप्र ही ।
तव मांगि आज्ञा वास कीन्हो वडोदे शुभ लग्न ही ॥ ३ ॥
अति प्रेमयुक्त कर्त कीर्त्तन रासलीला महँ छके ।
पुनि गिरा गद्‌गद् पुलक सब तनु नयन जलभर अकवके ॥ ४
इक दिवस वापी मांखियां मध दर्श मनमोहन दए ।
सब जान परिचय सन्त पूर्ण राजपूज्य सु जन भए ॥ ५ ॥
धन धाम तन मन पुत्र सुन्दरि सकल हरि चरणन धरे ।
हरिभक्ति सरसी दुतिय नरसी गुर्जर धर पावन करे ॥ ६ ॥

दोहा ।

ता सुत हरिशंकर भए, सखा जु परमानन्द ।
भक्ति अनन्यहि मिल करी, आदि अन्त सुख कन्द ॥ ६ ॥
सँवत् सत्रहसे गुणन्तरे, दशौं भाद्र वदि जान ।
रामकृष्ण तनु त्याग करि, मथधर प्रगटे आन ॥ ७ ॥
माता सुन्दर कूख भल, धाल लियो अवतार ।
रामदास पितु पाय धिन, जीवां करण उधार ॥ ८ ॥

छन्द पद्धरी ।

वय वाल गई पौगंड आय । धुर जन्म आपनी सुरत्ति लाय ॥
गुरु रामदासप्रति विनय कीन । निज ज्ञान गुंह्य वकसो जुगीन ॥ १ ॥
फिर जन्म मरणसे रहित होय । साधन अवहि मैं करों सोय ॥
हुर प्रसन कह्यो गुरुदेव एम । विन पूछे दाख्यां गुंह्य केम ॥ २ ॥
यह मंत्र अगम जानत महेस । सो सती प्रती नाहिन कहेस ॥
हम प्रेम समझि तेरो विशेक । कहुँ रामनाम इढ़ धार टेक ॥ ३ ॥
रट रसन प्रथम मन पवन साध । सुख देखहु ताको अति अगाध ॥
चित धार गुफा वैठे एकन्त । मन हर्ष पाइके परम तन्त ॥ ४ ॥

दोहा ।

प्रथम रसन मैं स्वाद ले, द्वितिये कंठ हुलास ।
तृतिये हिरदे फुरक तनु, चतुर्थ नाभि प्रकास ॥ ९ ॥
स्मरण जु चार प्रकार सिध, नाभि थके ममकार ।
सुरति पवन मन मेलकर, चले रकार अगार ॥ १० ॥

चौपाई।

पूरबसे पाताल सिधाया। पछिम घाट हुइ मेरु चढ़ाया॥
आकाशां सुख रह्या लुभाई। सुरति शब्द मिल केलि कराई॥ १॥
मच्छी सात समँद तजि दीया। ब्रह्म वृक्ष चढ़ि सो रस पीया॥
वृक्ष अदृष्ट दृष्टि नहिं आई। मूल न डाल न पात न छाई॥ २॥
मुक्ती फल लागे अद्भूता। चाख्या तिके अमर अवधूता॥
माया के गुण रहे जु लारे। सुरति शब्द गत दशमें द्वारे॥ ३॥
इड़ा पिंगला सुषुमन मेला। त्रिकुटी सन्त करे नित केला।
ररंकार ध्वनि शून्य समानी। पंच तीन चत सप्त धकानी॥ ४॥
महमाया ज्योती प्रकृत्तं। सुन आतम इच्छा परसंतं॥
भाव अभाव निकेवल हूआ। जोगी जन्म मर्ण से जूआ॥ ५॥
मिली बूंद सायर के माहीं। लौंन पूतली गत मिलताहीं।
हद बेहद द्वे भेद न रहिया। अवर्ण ताहि वर्ण किमि कहिया॥ ६॥

दोहा।

सद्गुरु अविरल वचन सुनि, उर धरि सो विधि कीन्ह।
घट बिच औघट प्रकट हुइ, त्वं तत्तजि असि चीन्ह॥ ११॥

छन्द पद्धरी।

इक दिवस गुफा मध विराजमान। सुर पठइ अप्सरा छलन जान॥
तिन हाव भाव अति करे आय। नहिं दृष्टि खोल देखी जु ताय॥ १॥
फिर भेंट धरी बहु मिष्ट चीज। नहिं सन्त वस्तु उन हाथ लीज॥
इमि अडिग मत्ति देखे दयाल। कर नमस्कार चाली सकाल॥ २॥
जन भयो ज्ञान केवल प्रकास। पर आप और के जन्म तास॥
सूझत सब करकी रेख तेम। गुरु पास उचारे वचन एम॥ ३॥
वहँ वृथा पड़ी धुर आथ सोइ। यहँ सदावरत करि सुफल होइ॥
श्रीस्वामी उचरे सुनो दास। तुम सूझत कैसे सो प्रकास॥ ४॥
श्रीराम भजन अरु कृपा आप। तो काहे कीजै दुख सन्ताप॥
जिन दियो जन्म सो कर सँभाल। कण कीड़ी कुंजर मणहि आल॥ ५॥
विश्वास नाहिं तिन दुख अपार। सुनि वचन धाल मन समझिधार॥
सो प्रसिद्ध भई केदिवस पाइ। गुर्जरधर पावन करी जाइ॥ ६॥

दोहा।

सम्वत् अठारहसे प्रसिध, वर्ष तँयास्यो मान।
मिंगसर वदी त्रयोदशी, रामत करी निधान॥ १२॥

छन्द पद्धरी।

पूरण सुत राखे राम धाम। तन व्याधि भई नहिं संग स्वाम॥
गुरु सहर बड़ोदे पहुँच जाय। यहाँ द्विज पति पत्नी पद सुनाय॥ १॥
सो रामकृष्ण के शब्द जानि। आगूं इह उचरे आप बानि॥
इक दिवस शिष्य तन कष्ट जान। चिन्ता कर सुमरे परम मान॥ २॥
जब दंडी दीन्हो दर्श आइ। क्यों सोचत हरिशंकर सुखाइ॥
सुनि वचन भयो आनँद अपार। सब शिष्यांप्रति कहि दुख निवार॥
तिहि दिवस प्रसिद्धी भई एह। सो हम वरणी जो सुनी तेह॥
हम हैं अति बालक बुद्धिहीन। गुरु चरित अमित कुन लहहि चीन॥

सोरठा।

विराजे दीनदयाल, गुर्जरधर पावन करन।
पाछी सुरति सँभाल, फागण शुदि पूनम सरस॥ १॥

दोहा।

जो अधिकी ओछी बनी, इह कहुँ अक्षर मात।
अर्जुनदास गुलाम तव क्षमा करहु तुम तात॥ १३॥

इति पूर्वजन्म।

विरक्तशाखाप्रवर्तक-

श्रीपरसरामजीमहाराजका गुरुशिष्यसंवाद।

साखी।

नितप्रति गुरु वंदन करूं, पूरण ब्रह्म प्रणंत।
परसराम कर वंदना, आदि अन्त मध संत॥ १॥
परसराम शुध आतमा, प्रश्न करै गुरु पास।
भवसागर क्योंकर तिरूं, किम छूटै जमत्रास॥ १॥
जन्म मरण वेदन कटै, चौरासी मिटजाय।
शिख पूछै सतगुरु प्रती, सो मम भेद बताय॥ २॥
नर्क कुंड में ना पड़ूं, जीतूं मन जोधार।
ऐसो मुझ उपदेश दो, सतगुरु कर उपकार॥ ३॥
मुक्ति होय इन जीवकी, अवगुण मिटै अनंत।
एसी युक्ति बताइयें, सतगुरु संत महंत॥ ४॥

चौपाई।

पूरबसे पाताल सिधाया। पछिम घाट हुइ मेरु चढ़ाया॥
आकाशां सुख रहा लुभाई। सुरति शब्द मिल केलि कराई॥ १॥
मच्छी सात समँद तजि दीया। ब्रह्म वृक्ष चढ़ि सो रस पीया॥
वृक्ष भइए दृष्टि नहिं आई। मूल न डाल न पात न छाई॥ २॥
मुक्ती फल लागे अद्भूता। चाख्या तिके अमर अवधूता॥
माया के गुण रहे जु लारे। सुरति शब्द गत दशमें द्वारे॥ ३॥
इड़ा पिंगला सुषुमन मेला। त्रिकुटी सन्त करे नित केला।
ररंकार ध्वनि शून्य समानी। पंच तीन चत सत्त थकानी॥ ४॥
महमाया ज्योती प्रकटंतं। सुन आतम इच्छा परसंतं॥
भाव अभाव निकेवल हूआ। जोगी जन्म मर्ण से जूआ॥ ५॥
मिली बूंद सायर के माहीं। लोन पूतली गत मिलताहीं।
हद बेहद्द है भेद न रहिया। अवर्ण ताहि वर्ण किमि कहिया॥ ६॥

दोहा।

सद्गुरु अविरल वचन सुनि, उर धरि सो विधि कीन्ह।
घट बिच औघट प्रकट हुइ, त्यं तत्तजि असि चीन्ह॥ ११॥

छन्द पद्धरी।

इक दिवस गुफा मध विराजमान। सुर पठइ अप्सरा छलन जान॥
तिन हाव भाव अति करे आय। नहिं दृष्टि खोल देखी जु ताय॥ १॥
फिर भेंट धरी बहु सिष्ट चीज। नहिं सन्त वस्तु उन हाथ लीज॥
इमि अडिग भक्ति देखे दयाल। कर नमस्कार चाली सकाल॥ २॥
जन भयो ज्ञान केवल प्रकास। पर आप और के जन्म तास॥
सूझत सब करकी रेख तेम। गुरु पास उचारे वचन एम॥ ३॥
वहँ वृथा पड़ी धुर आय सोइ। यहँ सदावरत करि सुफल होइ॥
श्रीस्वामी उचरे सुनो दास। तुम सूझत कैसे सो प्रकास॥ ४॥
श्रीराम भजन अरु कृपा आप। तो काहे कीजै दुख सन्ताप॥
जिन दियो जन्म सो कर सँभाल। कण कीड़ी कुंजर मणहि आल॥ ५॥
विश्वास नाहिं तिन दुख अपार। सुनि वचन चाल मन समझिधार॥
सो प्रसिद्ध भई केदिवस पाइ। गुर्जरधर पावन करी जाइ॥ ६॥

दोहा।

सम्वत् अठारहसे प्रसिध, वर्ष तैंयास्यो मान।
मिंगसर वदी त्रयोदशी, रामत करी निधान॥ १२॥

छन्द पद्धरी ।

पूरण सुत राखे राम धाम । तन व्याधि भई नहिं संग साम ॥
गुरु सहर बड़ोदे पहुँच जाय । वहाँ द्विज पति पत्नी पद सुनाय ॥ १ ॥
सो रामकृष्ण के शब्द जानि । आगूं झड़ उचरे आप बानि ॥
इक दिवस शिष्य तन कष्ट जान । चिन्ता कर सुमरे परम भान ॥ २ ॥
जब दंडी दीन्हो दर्श आइ । क्यों सोचत हरिशंकर सुखाइ ॥
सुनि वचन भयो आनँद अपार । सब शिष्यांप्रति कहि दुख निवार ॥
तिहि दिवस प्रसिद्धी भई एह । सो हम बरणी जो सुनी तेह ॥
हम हैं अति बालक बुद्धिहीन । गुरु चरित अमित कुन लहहि चीन ॥

सोरठा ।

विराजे दीनदयाल, गुर्जरधर पावन करन ।
पाछी सुरति सँभाल, फागण शुदि पूनम सरस ॥ १ ॥

दोहा ।

जो अधिकी ओछी बनी, क्षड कहुँ अक्षर मात ।
अर्जुनदास गुलाम तव क्षमा करहु तुम तात ॥ १३ ॥

इति पूर्वजन्म ।

विरक्तशाखाप्रवर्तक–

श्रीपरसरामजीमहाराजका गुरुशिष्यसंवाद ।

साखी ।

नितप्रति गुरु बंदन करूं, पूरण ब्रह्म प्रणंत ।
परसराम कर बंदना, आदि अन्त मध संत ॥ १ ॥
परसराम शुध आतमा, प्रश्न करे गुरु पास ।
भवसागर क्योंकर तिरूं, किम छूटे जमत्रास ॥ १ ॥
जन्म मरण वेदन कटे, चौरासी मिटजाय ।
शिष्य पूछे सतगुरु प्रती, सो मन भेद बताय ॥ २ ॥
नर्क कुंड में ना पड़ूं, जीतूं मन ओंपार ।
ऐसो मुझ उपदेश दो, सतगुरु कर उपकार ॥ ३ ॥
मुक्ति होय इन जीवकी, अवगुण मिटे अनंत ।
एसी युक्ति बताइये, सतगुरु संत महंत ॥ ४ ॥

श्रीगुरुवचन ।

परसराम सतगुरु कहै, सुन शिष ज्ञान विचार ।
कारज चाहे जीवको तो, कहूं सो हिरदे धार ॥ ५ ॥
प्रथम शास्त्र सुन साधुका, वेद पुराण विचार ।
सतसंगति नित कीजिये, कुलकी काण निवार ॥ ६ ॥
पूरा सतगुरु परखकर, ताकी शरण संभाय ।
राम नाम उर दृढ धर, आनदेव छिटकाय ॥ ७ ॥
रामराम गुरु जापजप, करसो कर कछु धर्म ।
उत्तम करतब आदरो, छोडो नीचा कर्म ॥ ८ ॥
झूठ कपट निन्दा तजो, काम क्रोध अहंकार ।
दुरमति दुविधा परहरो, तृष्णा तामस टार ॥ ९ ॥
राग दोष तज मछरता, कलह कलपना त्याग ।
संकलप विकलप मेट कर, साचे मारग लाग ॥ १० ॥
मान बडाई ईरषा, तजो दंभ पाखंड ।
सुमरो सिरजन हारको, जाकी मांडी मंड ॥ ११ ॥
दुनियां घडिया देवता, परहर ताकी पूज ।
अणघड देव अराधिये, मेटो मनकी दूज ॥ १२ ॥
प्रतिपालण पोषण भरण, सबमें करे प्रकास ।
निशिदिन ताको ध्याइये, ज्यों छूटे जम त्रास ॥ १३ ॥
राम नाम नौका करो, सतगुरु खेवण हार ।
विरदभाण कर भावको, यें भव जल हुय पार ॥ १४ ॥
राम राम अम्मर जडी, सतगुरु वैद सुजाण ।
जन्म मरण वेदन कटै, पावे पद निर्वाण ॥ १५ ॥
जगसे चित उलटाय कर, हरि चरणां लपटाय ।
लख चौरासी जोनिमें, जन्म न धारो जाय ॥ १६ ॥
मनसा वाचा कर्मना, रटो रैण दिन राम ।
नर्क कुंडमें ना परो, पावो मुक्ति मुकाम ॥ १७ ॥
पाँचो इन्द्री पालकर, पंच विषय रस मेट ।
या विधि मनकों जीतकर, पिव परमानंद भेट ॥ १८ ॥

इति ।

छन्द पद्धरी ।

पूरण सुत राखे राम धाम । तन व्याधि भई नहिं संग स्वाम ॥
गुरु सहर बड़ोदे पहुँच जाय । वहाँ द्विज पति पत्नी पद सुनाय ॥ १ ॥
सो रामकृष्ण के शब्द जानि । आगूं झड़ उचरे आप बानि ॥
इक दिवस शिष्य तन कष्ट जान । चिन्ता कर सुमरे परम भान ॥ २ ॥
जब दंडी दीन्हो दर्श आइ । क्यों सोचत हरिशंकर सुखाइ ॥
सुनि वचन भयो आनँद अपार । सब शिष्यांप्रति कहि दुख निवार ॥
तिहि दिवस प्रसिद्धी भई एह । सो हम बरणी जो सुनी तेह ॥
हम हैं अति बालक बुद्धिहीन । गुरु चरित अमित कुन लहहि चीन ॥

सोरठा ।

विराजे दीनदयाल, गुर्जरधर पावन करन ।
पाछी सुरति सँभाल, फागण शुदि पूनम सरस ॥ १ ॥

दोहा ।

जो अधिकी ओछी बनी, झड़ कहुँ अक्षर मात ।
अर्जुनदास गुलाम तब क्षमा करहु तुम तात ॥ १३ ॥

इति पूर्वजन्म ।

विरक्तशाखाप्रवर्तक—

श्रीपरसरामजीमहाराजका गुरुशिष्यसंवाद ।

साखी ।

नितप्रति गुरु वंदन करूं, पूरण ब्रह्म प्रणंत ।
परसराम कर वंदना, आदि अन्त मध संत ॥ १ ॥
परसराम शुध आतमा, प्रश्न करे गुरु पास ।
भवसागर क्योंकर तिरूं, किम छूटै जमत्रास ॥ १ ॥
जन्म मरण वेदन कटै, चौरासी मिटजाय ।
शिख पूछे सतगुरु प्रती, सो मम भेद बताय ॥ २ ॥
नर्क कुंड में ना पड़ूं, जीतूं मन जोधार ।
ऐसो मुझ उपदेश दो, सतगुरु कर उपकार ॥ ३ ॥
मुक्ति होय इन जीवकी, अवगुण मिटै अनंत ।
ऐसी युक्ति बताइये, सतगुरु संत महंत ॥ ४ ॥
४०

अथ तृतीय परिच्छेदः।

रामरक्षा।

ॐ अखंडं मंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १ ॥

आत्मगुरुभ्यो नमः। परमात्मगुरुभ्यो नमः। आदि गुरुदेव अन्त गुरुदेव शरण गुरुदेव के चरणारविन्द पादुका नमोस्तु ते हरन्वे सर्व व्याधि सकल सन्ताप दुःख दारिद्र रोगपीड़ा कलह कल्पना सकल विघ्न खंड खंडा।

ॐ तस्मै श्रीरामरक्षा ररंकारवाणी। अनुभव तत्व निर्भय मुनि जाणी ॥ बांधिया मूल देखिया स्थूल गगन गर्जन्त धुनि ध्यान लागा रहित तीनू गुणां शील सन्तोषमें रामरक्षा हिये आकार जागा ॥ पंच तत्व पचीस प्रकृति पंच भूतात्मा पंचवाई। समदृष्टि साम घर आणि प्राण अपान उदान व्यान समान अनहद शब्द मिल खबर पाई। उलटिया सूर ग्रह डंक छेदन किया पोखिया चन्द्र तहाँ कला सारी अग्नि प्रगट भई जरा वेदन टरी डाकिनी शाकिनी घेर मारी ॥ धरणि अम्बर विचे पन्थ वहता रहे प्रेत अरु भूत दानव संहारा। वज्रकी कोटडी वज्रका कुंडले वज्रका खड्ले काल मारा ॥ गरुड़ पक्षी उड्या नाग नागिनी डस्या विष की लहर निद्रा न झाँपे। पिंड निर्मल भया पींजरे पढ़त सुवा रोग मथवाय पीड़ा न व्यापे ॥ रोम रोम ररंकार उचरन्त वाणी श्रवण सुणत कर चित्त मेला। झिलमिले ज्योति झण-कार झणकत रहे नाद विन्दे मिल्या रंग रेला ॥ शून्यके नेहरे शून्य सजवा रहे आपसे आप मिल आप लागा। शरीरसे शरीर मिल शरीर निरखत रहे जीवसे जीव मिल ब्रह्म जागा ॥ नैनसे नैन मिल नैन निरखत रहे मुखसे मुख मिल बोल बोला। श्रवणसे श्रवण मिल नाद सजता रहे शब्दसे शब्द मिल शब्द खोला ॥ निरतसे निरत मिल निरत लागी रहे सुरतसे सुरत मिल सुरत आवे ॥ ध्यान से ध्यान मिल दम सजतारहे रंगसे रंग मिल रंग गावे। ज्ञानसे ज्ञान मिल ध्यानसे ध्यान मिल जाप अजपा जपे सोहं दम जाय सो आय लेवे। चित्तसे चित्त मिल चित्त चेतन भया उन्मनी दृष्टिमें भाव देवे ॥ द्वारसे द्वार मिल शीशसे शीश मिल देह विदेह मिल मेर

अथ परमहंसावतंस श्रीसेवगरामजी महाराजका झूलणा छंद ।

नर जाग जगावत सत्तगुरू, अब सोय रह्या फँसे सझिये रे, ।
शठ आग गृहे माहिं काहिं जरे, चल साधु संगत्ति में रझिये रे॥
नित लागरहो निजनाम सेती, संग विषयनका तझिये रे।
तेरा भाग वडा भगवंत भजो, कहै सेवगराम समझिये रे॥ १॥
नर नाम निजाक्षण छांड दिया, कण फूकस कूटयां न पायगा रे।
फिर सांइकी सेव विसार धरी, सेवे संवल हाथ क्या आयगा रे॥
मुख अमी अचम्मन नाहिं किया, नीर ओसहु नाहिं अघायगा रे।
कहै सेवगराम समझ्झ विना, नर वार वीतां पछितायगा रे॥ २॥
इन देखि दया मोहि आवतु है, नर मार मुगद्दर खायगा रे।
यहां किये है कर्म न शंक मानी, वहां जाव कछु नहिं आयगा रे॥
हक पूछे हिसाव हजूर माहीं, जब लेखा दिया नहिं जायगा रे।
कहै सेवगराम साह्व चोरभया, नरजम्मके हाथ विकायगा रे॥ ३॥
देखो देखो दुनियनकी दोस्ति रे, मोहि देख अचंभा हि आतहै रे।
कछु सार असार विचार नहीं, शठ छाँड अमी विष खातहै रे॥
नित भोगत भोग अघाय नहीं, फिर वेहि दिना वेहि रातहै रे।
सुन सेवगराम हैरान भया, कछु वात कही नहीं आतहै रे॥ ४॥
धिक धिक जनों छंदा जीवियां है, सोइ आतम राम विसार सोया।
मन तन इन्द्री सुख चित्त दिया, दिन रैन विषय रस माहिं भोया॥
शठ मोह माया माहिं राचि रह्या, देख नैन नारी छंदे रूप मोहा।
कहै सेवगराम समझ्झ विना, नरतन रतन्न अमोल खोया॥ ५॥
कोऊ जात न पांति कुटुम्ब तेरा, घर धाम धन्या रहि जायगा रे।
अरु मात न तात न भ्रात संगी, सब सुत्त दारा न्यारा थायगा रे॥
जब जम्म जोरावर आय घेरे, तब आडा कोऊ नहिं आयगा रे।
कहै सेवगराम संभार सांई, येतो जीव अकेलाहि जायगा रे॥ ६॥
यहु रूप जोवन्न तो थिर नहीं, दिन चारकि वार वजायगा रे।
इक रंग पतंग सुरंग बन्या सब, देखतही उड जायगा रे॥
तृण ओसका नीर केतीक वेरां, उदे सूर हुवा शुष जायगा रे।
कहै सेवगराम संभार साँई, एसे जिंद तेरी चल जायगा रे॥ ७॥
नर करणा होय सो करलेवो, यहु मोसर जाण न दीजिये रे।
तुम सांझ करत्त सवेर करो, दिन माहिं करो जाम कीजिये रे॥
महुरत्त करत घटीजु करो, पलछिन्न माहीं करलीजिये रे।
कहै सेवग कीयां न ढील वनै, पतो सास उसासहि छीजिये रे॥ ८॥

इति द्वितीय परिच्छेदः ।

धातु गंभीर विष रोग हरजाहिंगे पित्त परिवार गन सूर पीर।
कफ तनु काम भद व्याम भाषो फिरै उद्दरया नहरवा ज्वर जाहिं तीर॥
वाय तनु तप बेलाज एकाम्बरो पथ गव गूंथ गोदान फोड़ी।
दास हरिराम कहि यात पंगी थणी तरा कै नाम बेहनु तोड़ी॥ २॥

राम रिछक नवखंड सत प्रांणी डर नाहीं।
राम रिछक तिर्हुंलोक भवन नचरै सुख थाहीं॥
राम रिछक तनुमांहि गेह क्या धनमें धारे।
राम रिछक तिर्हुंलोक कहो कुण जन को मारे॥
राम रिछक छल छिद्र भूत डाकण डर नाहीं।
राम रिछक परताप तेजरो तनुतें जाहीं॥
राम रिछक तें काल दूरि सेती कर जोड़े।
राम रिछक तिर्हुंलोक चवन कुण पूठा मोड़े॥
राम रिछक नवदेव साधुका रक्षक होई।
राम रिछक तेतीस साधुको वन्दे सोई॥
राम रिछक ऋधि सिद्धि साधु के चरणाँ दासी।
राम रिछक परताप पड़ै नहिं जम की पासी॥
राम रिछक गुरुदेव सन्त सो शीश विराजे।
राम रिछक परताप अगम जहँ बाजा बाजे॥
राम रिछक परतापसे सन्त सुमरि निर्भय भया।
रामदास रट राम को अगम देश बाधा गया॥ १॥
राम रिछक परताप काल दूरे ही भागे।
राम रिछक परताप जम्मका दूत न लागे॥
राम रिछक परताप जक्ष जोगण डर नाहीं।
राम रिछक परताप संत निर्भय जग माहीं॥
राम रिछक परताप मूठ छल छिद्र न लागे।
राम रिछक परताप विघ्न दूरे ही भागै॥
राम रिछक परताप भैरवा भूत नसावे।
राम रिछक परताप वीर वेताल न आवे॥
राम रिछक परताप ताव तनु व्यापे नाहीं।
राम रिछक परताप रोग दुख दूर नसाहीं॥
राम रिछक परताप नवग्रह निकट न आवे।
राम रिछक परताप इन्द्र पूजा ले धावे॥

भेवा। तिहुँ लोकमें घोर अंधार सब मिट गया श्वेत ही स्फटिकमणि हीर वेधा ॥ उघरे नैन उचरे वैन चन्द्र अरु सूर राखिया थीर थीरं। हनुमत हुँकार मचती रहै यों सोखिया पकड़ बावन वीरं ॥ गंग उलटी चले भानु पश्चिम मिले निकसिया बिम्ब प्रकाश कीया। आत्म माहिं दीदार देखत रहै यों अजर अमर हुइ आप जीया ॥ खुणखणी दणझणी नादरी नाद नादं सुषुम्ना का छके स्वाद स्वादं। चाचरी भूचरी खेचरी अगोचरी उन्मनी पंच मुद्रा साधन्ते सिद्धा योगेन्द्रा डरे डूंगरे जले थले घाटे अवघटे तसी श्रीरामरक्षा करे बाघ बाघणीका क्रोध जाला। चौंसठ योगिनी का काटकुटका करों खेचरा भूचरा क्षेत्रपाला ॥ नवग्रह दूत पाखंड टारों, दुहाई फिरती रहै अलख निरंजन निराकार की, चक्र फिरिवो करै वाटमें घाटमें पंथमें घोरमें शोरमें देश विदेशमें राज का तेजमें सांकड़े पैसताँ तसे श्रीरामरक्षा करै। जागताँ सोवताँ खेलताँ मालताँ सन्तका शीश पर हस्त फिरिवो करै ॥ चक्र लीयाँ रहै आप रक्षा करै गुरुका जाप ले गुरु सेवा। चन्द अरु सूर घर एक रहिवो करै जीतिया संग्राम देवाधि देवा ॥ फेर सूधा किया उलट अमृत पिया विष का जहर सब दूर भागा। कमल दल कमल दल ज्योति ज्वाला जगे भँवर गुंजार आकाश लागा ॥ रमत सार सोखन्त रुधिर बिन्दु रोम नाड़ी गरजन्त गगन बाजन्त वेणु शंख शब्द ध्वनि त्रिकुटि दास रामानन्द ब्रह्म चीन्हन्ते ब्रह्मज्ञानी। रामरक्षा भणन्ते उद्धरे प्रानी ॥ लागिया विचार पारंगता पन्थे घोरे राजद्वारे संग्रामे संकटे सन्ध्याकाले मध्याह्ने श्रीरामरक्षा उचरन्ते उद्धरे प्रानी पापे न लिपन्ते पुण्ये न हारन्ते जे जपन्ते जनार्दनं मोक्ष मुक्ति फल पावन्ते ॥

रेखता।

नाम परतापते कालकंटक टले नाम परतापते कर्म खोया।
नाम परताप डर डाकणी ना डसै नाम परताप मन मैल धोया ॥
नाम परतापते ताप त्रिविधा गई नाम परताप ग्रह नाहिं ग्रासै।
नाम परताप भव भर्म भागा सबै नाम परताप दुख दूर नासै ॥
नाम परताप जल जोगिनी चंडिका भैरवा भूत छल छिद्र नाहीं।
नाम परतापते विघ्न व्यापै नहीं नाम परताप तिहु लोक माहीं ॥
नाम परताप की सन्त महिमा करै विष्णु शिव शेष ब्रह्मादि सारा।
दास हरिराम कहै नाम परतापते जगत जल माहिं जन होइ पारा ॥ १ ॥
नाम निज औषधी भव व्यथा कर्मको शब्द का ध्यान इमान धारै।
साधु सधीर को विघ्न व्यापै नहीं प्रेमका पच दे कुपच गारै ॥

एक रस एक प्रतिपाल समर्थ धर्णी पणी रास्तूति परणाम ज्ञाहुं।
गर्भ संभाल कृपालु पसी करी काढ़ ततकाल धिन धंदि ताहूं॥
जाठरा अग्निमें मग्न आनंद करण हरण अनेक दुःख पाप थापं।
छाजनं भोजनं अनंत सुख जिण दिया जीया ता शरण सुर मेंट तापं॥
नमस्तं नमस्ते भज ध सुख रामजी जयति अनूप जन भूप देवा।
अगम गति अगन गति अगम आनंद अति सत्यदी दास नित करूं सेवा॥
जाण धिनराय कहा गाय सुख आपणे तरण महाराज तोहि लाज सामी।
परम परलोक अहिलोक जानत नहीं करण सहाय इण लोक नामी॥
अपत कहा सिफत कहा कौन गुण उचरण शरण अनेक अनेक तेरे।
कोटि अनेक अनेक है यह गुन्हा करण प्रति पाल माइंत मेरे॥
अधर धिन सधर मम तात पूरण ब्रह्म च्यार पद अर्थ संभाल देवा।
भक्ति मय मुक्ति वैकुंठ रग रोम रम राम भज राम भज राम कहवा॥
राम महाराज की गोद चरणारविन्द तीन भय कालमें संत सारा।
जन रामा नमो शरण जाकी सदा राम रिच्छा सोह विरद धारा॥२॥

रक्षायत्तीसी।

दोहा।

राम इष्ट आधार बल, राम आस विश्वास।
राम भरोसे रम रहा, निर्भय रामादास॥ १॥
राम तेज नटखट्ट में, मुड़े न हरिका दास।
चरण कमल छाडे नहीं, रहै सच गुरु पास॥ २॥
कहा दोखी सोखी कहा, कहा देश परदेश।
रामदासके रामजी, रक्षक सदा हमेश॥ ३॥
शस्त्र अस्त्र छल छिद्र जो, मूठ मंत्र रिपु घात।
व्याल सिंह दामनिदमक, रक्षा राम सु नाथ॥ ४॥
भवन गवन परवत वनी, अवघट घाट अनेक।
रामदासके रामजी, आस पास बल एक॥ ५॥
कूप खाड ज्वाला अग्नि, निशा चोर भय धाड़।
रामदासके रामजी, अंध धुंध मँदवाड़॥ ६॥
समय काल पावक मलय, शीत उष्ण सुर ताप।
रामदासके रामजी, रक्षक आपो आप॥ ७॥

राम रिछक परताप चोकियाँ चारों जीता।
राम रिछक परताप जगतमें भया वदीता॥
राम रिछक परताप चढ्या गढ ऊपर जाई।
राम रिछक परताप नोवताँ निर्भय वाई॥
राम रिछक परतापतें सुन सागर में रमरया।
रामा राम प्रतापतें काल विघ्न दूरे गया॥ २॥

राम ररकार तें निजर लागे नहीं अघ मोचन करै अनँत केरा।
राम ररकार तें ताप व्यापै नहीं जम्मका दूत तहाँ दे न घेरा॥
राम ररकार तें अघ दूरां डरे राम ररकार तें काल थरके।
राम ररकार तें डक डाकण डरे राम ररकार तें प्रेत सरके॥
जंत्र अरु मंत्र लोह लाठ लागे नहीं राहु अरु केतु शनि रहत दूरा।
डर डफर तंतार संचार व्यापे नहीं पनग नव नाथ कहै संत पूरा॥
असुर सुर नमि चलै शेष धिन धिन कहै शंभु अरु विष्णु कहै सुजन मेरा।
सप्त पाताल उच्छाह उच्छव करै नमो ररकार परताप तेरा॥
भजन परताप भय काल सबका मिट्या सुमर ररकारकी शरण आया।
जन रामा किया आपसा सहजमें अहो अपार अपार गाया॥ १॥
शरण गुरुदेव की राम रिच्छक सदा विघ्न भव काल जंजाल दूरा।
स्वर्ग पाताल आकाश मृत्यु लोकमें सद्गुरु वाल निर्भयसनूरा॥
देश परदेश घट घाट वट वाटमें रिछक रमतीत सबमें दयाला।
भोर कहा संझ पुल मंझ आनंद कर हरण अनेक अघ मघ माला॥
असुर सुर पक्षि जलजीव चर थचर सब नवग्रह आदि सहायक सदाई।
एक सँवला जहाँ अनत सँवला सदा अदा जम चोट विघ्न न कदाई॥
चौदह लोक पर लोक निर्भय रमव राम रमतीत वल निर्भय तादू।
जहाँ विचरत तहाँ मगन उद्योत अति रामजन अगम घर अगम तादू॥
नाटकी चेटकी जंत्र मंत्रादि सब तंत्रको जोर कोउ नाहिं लागे।
डाकीणी साकिणी प्रेत छल छिद्र अनँत राम परताप तें दूर भागे॥
राम परताप वल राम सुख संपदा राम अखूट भंडार मेरे।
राम आचार विचार किरिया सबै राम पुनि पाठ गरथाँन हेरे॥
राम मुख धणी समर्थ शरणा सबल तात अरु मात कुल वंश सारा।
राम पोषण भरण राम प्रतिपाल नित सत्य ही शब्द मेरो आधारा॥
राम संजीवनं प्राण जीवन सदा आस छिनवास रग रोम रिच्छा।
दम दम कदम पल पल कारण करण आदिसे अंत लेवे परिच्छा॥

राम आसरो राम पख, दूजा बल नहिं कोइ ।
पावन पतित दयालुजी, ता शरणे सुख होइ ॥ २५ ॥
शरणागत प्रतिपालना, पावन पतित किताब ।
रामदास विश्वास यह, करणी दिश हैरान ॥ २६ ॥
आथी पोथी रामजी, उद्यम राम रमाय ।
राम दिशावर देश मम, रामाज्ञा सो पाय ॥ २७ ॥
रामाज्ञा आवत सोई, रामाज्ञा सो दास ।
राम भावना प्रसिद्धता, भवेत रामादास ॥ २८ ॥
ज्ञान भक्ति वैराग्य सिधि, क्रिया जोग गुण आद ।
राम सता आसकिता, वाणी विमल अगाद ॥ २९ ॥
मस्तक पर गुरु देवजी, हृदै विराजे राम ।
रामदास दोनूं पखां, सबविधि पूरण काम ॥ ३० ॥
श्वास श्वास दम दम विचै, रक्षक राम दयाल ।
रामा राम उचारतां, कदे न व्यापै काल ॥ ३१ ॥
रक्षा बतीसी रामकी, जानत हरि गुरु दास ।
रामस्नेही रामदास, आनंद अगम विलास ॥ ३२ ॥

अथ आरती ।

१

ऐसी आरती घट ही में कीजे, राम रसायन निशिदिन पीजे । टेर ।
घट ही में देवल घट ही में देवा । घट ही में सहज करे मन सेवा ॥ १ ॥
घट ही में पांच पचीसों पंडा । घट ही में जागे जोति अखंडा ॥ २ ॥
घट ही में पाती फूल चढावै । घट ही में आतम देव मनावे ॥ ३ ॥
घट ही में शंख शब्द घन तूरा । घट ही में प्रेम परस निज नूरा ॥ ४ ॥
घट ही में गावै हरिका दासा । घट ही में पावै पद परकासा ॥ ५ ॥
जन हरिराम राम घट माहीं । बिन खोज्यां कोइ पावै नाहीं ॥ ६ ॥

२

आरती करौं गुरु हरिराम देवा । ब्रह्म विलास अगम घर मेवा । टेर ।
आप संत ब्रह्म व्यापारी । राम नाम विणजे बहु भारी ॥ १ ॥
ज्ञान ध्यान अनुभव अनुरागी । रोम रोम में झालर वागी ॥ २ ॥
इड़ा पिंगला सुषमण भोगी । अटल अमर अनुभव पद जोगी ॥ ३ ॥
संतोष साच सत धारी । सता समाधि शून्य से यारी ॥ ४ ॥
• रानियो शरण तुम्हारी । पल पल ऊपर प्राण अंवारी ॥ ५ ॥

राहु केतु सूरजसुतन, अवनिपुत्र ग्रह घात।
बिगरी में सखरी करण, तिधरी मेटण ताव॥ ८॥
तात मात हित प्रसनता, रामदासके राम।
समर्थ प्रतिपालक सदा, खान पान आराम॥ ९॥
चिंता दीन दयालुको, मो मन सदा आनंद।
आयो सो प्रति पालसी, रामदास गोविंद॥ १०॥
विघ्न विदारण रामजी, आनंद करण अनेक।
रामदास मन वच करम, तारण कारण एक॥ ११॥
दिवस मास जोगिनि दशा, गज अंतर कृत सोहि।
नखत जोग वाहण असम, राम इच्छा सुख मोहि॥ १२॥
लगन दुघड़ियो शुभ अशुभ, राम वार व्रतमान।
दिशाशूल सन्मुख चन्द्र, कहा साँवण पर श्वान॥ १३॥
ऊठत बैठत जागताँ, सोवत स्वप्ने माहिं।
राम धणी प्रेरक सदा, रामदास डर नाहिं॥ १४॥
मंडप मंड अधार इक, घट विच आतम राम।
प्रगट पिंड रक्षा करण, रामदास विश्राम॥ १५॥
सब व्यापक पूरण कला, नमस्कार भगवंत।
राम इच्छा विचरत जहाँ, रामरायके संत॥ १६॥
दशौंदिशा आनंद अगम, चिदानंद भगवान।
रामदासके रामजी, चितवन जीवन प्रान॥ १७॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जो, वा सुर नर अरु नाग।
राम रक्षा सर्वत्र सुदृढ, रामदास बडभाग॥ १८॥
आधि व्याधि मेटण सकल, अकल अखंडी देव।
रामदास ता आसरे, सुर विरंचि कर सेव॥ १९॥
सेव देव मूरति धणी, हरि आचार विचार।
मंत्र जाप पूजा परम, नित्यनियम गुण सार॥ २०॥
तीरथ व्रत एकादशी, रामदासके राम।
राम पंथ संस्थान निज, क्षेत्र धाम परणाम॥ २१॥
राम धारणा राम मुख, राम हमारे ध्यान।
राम संप्रदा वैष्णव, पूरण ब्रह्म ज्ञान॥ २२॥
तिलक छाप माला मंत्र, नर नारायण भेप।
मंदिर शालग्राम ग्रह, पूजा परम विशेष॥ २३॥
राम बोलाऊ साथ मम, सदा संगि सुखरास।
सज्जन बंधु बेली कुटुँब, राम रक्ष धन पास॥ २४॥

ॐनमः श्रीमद्धरियानन्देभ्यः ।

पूज्यपादाचार्य श्री १०८ श्री हरिरामदासजी महाराज की परची प्रारंभः ।

दोहा ।

वन्दि राम गुरुदेव को, परम भेव दरसाय ।
धार्यो वपु निज जगत हित, सो मम सदा सहाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

वन्दों आदि पुरुष परमेसं । कियो ताहि नरतनु बकसीसं ॥
वन्दों पर्म धर्म गुरुदेवं । जिन दीन्हो निज भक्ति सुभेवं ॥ १ ॥
अनँत कोटि वन्दों हरिजनको । ताते करो शुद्ध मनतनको ॥
श्रीमुख भगवत कहत अनूपं । हरिगुरु सन्त एक ही रूपं ॥ २ ॥

दोहा ।

मति उपजावन परम गुरु, उर प्रेरक निज सार ।
नाम सहित परनालिका, वरणों करि निरधार ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

रामानन्द वन्दि दास वन्दन अनन्तानन्द
वन्दों कर्मचन्द देवाकर सुखकन्दकों ।
पूरण ही मालवी जू दामोदरदास वन्दों
नारायण रु मोहन वन्दों तजि द्वंद्वकों ॥
वन्दों जन माधौदास सुन्दर चरणदास
जैमल हरिराम वन्दि वन्दों ता नन्दकों ।
वन्दों हरिदेव मोतीराम रघुनाथ वन्दि
वन्दों गुरुदेव गंग वारू मम जिन्दकों ॥ १ ॥

छन्दइन्दव ।

जैमलदास नमो जगतारण, दास नमो हरिराम दयालं ।
जासु के शिष्य नरायणदासहि, पूज्य विहारिय प्रग्गट चालं ॥
ज्ञान प्रकाश उजास भयो उर, बुद्धि लही हरिदेव विशालं ।
तासुके मौतियराम भए जन, ताहि कृपा रघुनाथ कृपालं ॥१॥

छन्द भुजंगी ।

अहं बोध हीनं प्रज्ञा हीन प्रानी । कृपा है सुनाथं दयालं बखानी ॥
कृपा है नयनं सुदासं सुभेवं । सबै काज सिद्धं करूं सन्त सेवं ॥ १ ॥

३

ऐसी आरती करूं गुरु देवा । तन मन वचन सहज करि सेवा । टेर ।
प्रगटे इसा परम गुरु स्वामी । आदि अंत होते निज नामी ॥ १ ॥
ज्ञान ध्यान ऐसे गुणधीरा । सहज समाधि सदा सुप सीरा ॥ २ ॥
सेवग संत शरण जो आवै । ज्यूं मलियागर भुवंग मिलावै ॥ ३ ॥
सतगुरु करम काटि निरवाला । मलियागर मेटै पँग ज्वाला ॥ ४ ॥
चंदन करै हरिदेव सदाई । सतगुरु चरनकमल चितलाई ॥ ५ ॥

४

निज मनभाव आरती सारी । श्रीगुरुरामदास बलिहारी । टेर ।
सतगुरु ज्ञान ध्यान की मूरति । सतगुरु समी और नहिं सूरति ॥ १ ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव सतगुरु माँई । अनंत कोटि जन परचे साँई ॥ २ ॥
दीनदयालु जीवां के तारग । सतगुरु मोक्ष मुक्ति के मारग ॥ ३ ॥
वारंवार करों परणामा । परम धाम आनंद विश्रामा ॥ ४ ॥
अष्ट विधान आरती षोड्स । बालपालके मस्तक मोड्स ॥ ५ ॥

५

आरती करूं गुरुदेव निरंजन । सगुण रूप धरे जिन अंजन । टेर ।
धर अवतार केता जिव तारे । आयां शरण सबे अघ जारे ॥ १ ॥
काल जंजाल जरा डर नाहीं । निरमै निजानंदपद माहीं ॥ २ ॥
जय जय जय जैमलके नंदन । हरिरामा रामा धिन वंदन ॥ ३ ॥
बालपाल सतगुरु परणामा । पूरणदास लिया विसरामा ॥ ४ ॥

६

ऐसी आरती करो मन ध्यानी । पलक न विसरो सारंगपानी । टेर ।
पांच पचीस का करो विचारा । तामें आतम राम पियारा ॥ १ ॥
प्रेम को तेल सुरत की बाती । ब्रह्म की ज्योत जगे दिनराती ॥ २ ॥
आरती गुरु गोविंदजू की करिये । कहे कबीर भव सागर तिरिये ॥ ३ ॥

७

आरती करौं पति देव मुरारी । चंवर ढुरै बलिजाउं तुम्हारी । टेक ।
चहुं दिश आरती चहुं दिश पूजा । चहुं दिश राम मेरे और न दूजा ॥ १ ॥
आरती कीजे प्रीति लगाई । जन्म जन्म के पातक जाई ॥ २ ॥
आरती कीजे ऐसेहि तैसे । ध्रुव प्रल्हाद करी शुक जैसे ॥ ३ ॥
आनंद आरती आतम पूजा । नामदेव भणे मेरे देव न दूजा ॥ ४ ॥

इति आरती ।

छन्द मनहर।

एकसमें गाम रामसर पधारत भए
　　जहाँ मिले हरिके सनेही पद गाए हैं।
सुनिके शब्द आप कह्यो वे पुरुष कहाँ
　　जब वह जन स्वामी जैमल बताए हैं॥
सो तो विराजमान दुलचासर गाम माहिं
　　महिमा की वेर वेर बहुत सराए हैं।
आवत तैं तवै संग हैके उदराम ही के,
　　ऐसे ही सुनत धाए जेज न लगाए हैं॥ १॥

कुंडलिया।

स्वामी जैमल धिन सदन जहाँ पहुंते जाइ।
पुर दुलचासर भूमिका सतपुरी सम ताइ॥
सत पुरी सम ताइ पुरी परसत फल एका।
हरि गुरु सन्त मिलंत होहिं जिग पैंड अनेका॥
श्रीमुखसे भगवत माहात्म्य कह्यो भागवत गाइ।
स्वामी जैमल धिन सदन जहाँ पहुंते जाइ॥ १॥

दोहा।

दे पुनि पंच प्रदक्षिणा, अष्ट अंग परणाम।
स्वामी जैमलदासके परसे पद हरिराम॥ १॥

कुंडलिया।

गोरख के पद भर्थहरि पारस के पद नेम।
परसे जैमलदास पद शिष हरिराम सु एम॥
शिष हरिराम सु एम प्रेम अरु नेम प्रकाशय।
ग्यान ध्यान वैराग्य आइ मिलिए सब आशय॥
भक्ति मुक्ति तव भावना जोग जुक्ति उन जेम।
गोरखके पद भर्थहरि पारस के पद नेम॥ १॥

दोहा।

यों पदपंकज परस करि, हस्त जोर करि जास।
मन तन की सब वारता, प्रश्न करी गुरु पास॥ १॥

छप्पय।

धन्य धन्य मम भाग आज प्रभुपाग दरस्सं।
धन्य धन्य मम भाग मिले वैराग्य पुरस्सं॥

कृपा है जनं रामदासं विहारी। मनू होय आनन्द सन्तं तिहारी।
कृपा है हरीदेव देवं तुम्हारी। महा धी प्रकाशं करीजै हमारी ॥ २ ॥
कृपा है सु मोती जु रामं कृपालं। समर्पो जिको भेद रीझे दयालं ॥
कृपा है रघूनाथ कीजै निहालं। जनू देव दीजै सुवाणी विशालं ॥ ३ ॥
कृपा है सु धू प्रह्लादं कवीरं। विराजो हृदै कोटि नन्तं सवीरं ॥
कहौं ग्रन्थ स्वामी कृपादृष्टि कीजै। गुरू रामगंगा इसो भेव दीजै ॥ ४ ॥

सोरठा।

लिखी पत्रिका दोइ, धरी जु आगे पाटके।
जो तुम आयसु होइ, तो गुण गाऊं रावरो ॥ १ ॥
जब करि कृपा दयालु, पर्ची मनवांछित दई।
जानि आपनो बाल, आज्ञा कीन्ही मोहिकों ॥ २ ॥

दोहा।

शुध है अन्तःकरण जू, मन बुधि चित अहँकार।
वरणौं सुयश दयालुको, उपजै हर्ष अपार ॥ १ ॥
वरण न जानत मूढ़ अति, मति जैराम मलीन।
उर प्रेरक हुइ कहत है, सतगुरु गंग प्रवीन ॥ २ ॥

चौपाई।

श्रीहरिराम निरंजन श्यामं। प्रगटे आइ सिंहस्थल ग्रामं ॥
निर्गुण निजानन्द निरकारं। पूरण ब्रह्म सन्त अवतारं ॥ १ ॥
हरि अवतार चार परकारं। जानत वेद सन्त संसारं ॥
जिमि वपु धर्‍यो कृष्ण रघुनाथं। सुर नर सवजन करण सनाथं ॥ २ ॥
अज विनती इल भार उतारण। मेटण अधरम असुर सँहारण ॥
इमि अज्ञान हरण अंधारं। प्रगट भए गुरुवाल मुरारं ॥ ३ ॥
अनुभव कला आदि अवतारं। जा प्रताप वरणूं विस्तारं ॥
परची सहित कथा करि प्रीतं। प्रापत ज्ञान विज्ञान अद्वैतं ॥ ४ ॥
प्रथम भक्ति ऐसी जन धारी। नाम महातम ग्रन्थ विचारी ॥
सुमरण कीन्हो श्वास उश्वासं। जब उर माहीं लह्यो प्रकासं ॥ ५ ॥
तव सबही तें भए उदासी। जानी जगज्जाल जम पासी ॥
यह निश्चय मनमाहिं विचारा। गुरु विन होइ न भव तें पारा ॥ ६ ॥

दोहा।

पूछत फिरत सु जनन्ते, ब्रह्मज्ञान कहु भाप।
महापुरुष जन मिलनकी, अति अन्तर अभिलाष ॥ १ ॥

षट्रगित पाठ पोथका सु सोधका सिधान्तहू ।
लिखो निहारि कै सबै अगम भेद पन्थहू ॥
मिले भलेख मित मोहि आज प्रेम भीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ८ ॥

दोहा ।

जोगी षटदरशण सुमग, लिए निगम पच सोध ।
अहो देव स्वामी अगम, कहो सुगम निज बोध ॥ १ ॥

छन्द भुजंगी ।

अहो देव स्वामी कहो बोध आदू । मिले कोटि अनेक जे धाम साधू ॥
अहो देव स्वामी चिदानन्द रूपं । चहूँ वेद को सार भास्यो अनूपं ॥१॥
अहो देव स्वामी तुम्हें भेद सारो । बताबो अबै ब्रह्म मोकों उबारो ॥
अहो देव स्वामी सिलायो सु साँई । बुद्दो जातहूं मैं भवं सिन्धु माँई ॥२॥
अहो देव स्वामी परं ज्योति भासं । दहो दूरि दोषं लहो संग दासं ॥
अहो देव स्वामी अभैदान आपो । दरों दोष पापं तिहूंताप कापो ॥३॥
अहो देव स्वामी निराकार नाथं । अमातं अतातं अभ्रातं अज्ञातं ॥
अहो देव स्वामी अरातं अमातं । अनाथं सनाथं सदातं अपातं ॥ ४ ॥
अहो देव स्वामी अजोनी अमोनी । नमोनी तमोनी रजोनी सतोनी ॥
अहो देव स्वामी नहीं आर पारे । सघर्ष रहे पूर व्याप्यैक सारे ॥ ५ ॥
अहो देव स्वामी त्वमेवं अरूपं । जनं हेत धार्यो तत्व पंच स्वरूपं ॥
अहो देव स्वामी सदा वीतरागं । गिन्यो तीन लोकं सुखं बिष्ट कागं ॥६॥
अहो देव स्वामी न ब्रह्मादि भेवं । अहो देव स्वामी सु देवाधिदेवं ॥
अहो देव स्वामी दयाके सु कन्दं । मया सोइ कीजे हरो मोह फन्दं ॥७॥
अहो देव स्वामी गहो हाथ नाथं । परा भेद दीजे सु कीजे सनाथं ॥
अहो देव स्वामी कृपाभान दीपं । प्रकाशो हृदै सोइ मेरे समीपं ॥८॥
अहो देव स्वामी भवं भीति टारो । अहो देव स्वामी परं प्रीति पारो ॥
अहो देव स्वामी महा मोक्ष रासी । अहो देव स्वामी परेशं प्रकासी ॥९॥
अहो देव स्वामी परानन्द ईशं । करो सोइ साचो सु शब्दं बरीशं ॥
अहो देव स्वामी शरण्यं रखावो । परा प्रेम भक्ती सु नेमं बधावो ॥१०॥
अहो देव स्वामी कहो रीति ऐसी । कही जो अनन्तं सु सन्तं हि तैसी ॥
अहो देव स्वामी अपो आदि सेवा । जिके सेव मोकों मिले ब्रह्म देवा ॥११॥

दोहा ।

अहो देव अस्तुति अगम, हम कछु भेव न जान ।
गावत तव यश वेद सब, निज मुख श्रीभगवान ॥ १ ॥

धन्य धन्य मम भाग प्रेम अरु क्षेम प्रकासं।
धन्य धन्य मम भाग जाग भय भर्म विनासं॥
धन्य आज मम जन्म धिन तातें तुम दर्शन भयो।
जा काज सकल पूछत फिरत सो मनवांछित फल लयो॥ १॥

छन्द नाराच।

करे अभ्यास श्वास मूँदि जोग जासु धारणा।
धरे उपास बहुत ही विलास ब्रह्म कारणा॥
निजं निवास ना लख्यो कृपा सु अब्ब कीजिये।
गुरू अगाध ज्ञान ध्यान भक्तिज्ञान दीजिये॥ जिय भक्ति०॥ १॥
फिरे सु तीर्थ कर्त काज देश देश मज्झिये।
सुधाम ठाम ठाम के सजान भक्त सज्झिये॥
सही स भेद पैं विना नहीं स राम रीझिये।
गुरू अगाध०॥ २॥
करी जु सेव पूज देवकी जु सो अराधना।
कछू जपेय नाम लेय मेय भिन्न साधना॥
अबै तुह्मार संग भो विचारि विर्द लीजिये।
गुरू अगाध०॥ ३॥
जँगम्म शेख सेवरे न भेवरे सु नाम के।
रँगे वरे रजोग के सँगे वरे न श्याम के॥
असार जान पैं तजे न कोइ काज सीजिये।
गुरू अगाध०॥ ४॥
लगाय छार वप्पुके वधाय भार जट्टिये।
अपार संग देखिये विकार कान फट्टिये॥
निराजुकार नाम के आकार में अलूझिये।
गुरू अगाध०॥ ५॥
जती जु जैन व्यास फेर हेर सब्ब ही लहे।
भए उदास पेखिके परं प्रकाश ना कहे॥
सन्यास कान फूँक पैं कहूं न मन्न धीजिये।
गुरू अगाध०॥ ६॥
पढ़े कुरान काजियं भुलान भर्म होइये।
मुलाँ मसीत मान सु वढ़े सकह्ल जोइये॥
नकल्ल देखि यांग दे दखल्ल देय रोजिये।
गुरू अगाध०॥ ७॥

प्रेमाभक्ति विधान।

राम प्रगम सरसात रसन, दरसत चिन्ह सु ऐन।
तरसत हरिके मिलन कों, जल वरसत नित नैन ॥ २ ॥

छन्द त्रिभंगी।

जल वरषे नैना अटपट वैना गद्‌गद शब्दं होत जहीं।
नहिं नींद सु रैना भूख लगैना है लयलीना राम महीं ॥
कबहू थकं कबहु छकं चित्त द्रवंतं प्रेम सदा।
ऐसे उन्मत्तं कहिं स जत्तं शंक अनंतं नाहिं कदा ॥

कुंडलिया।

प्रेमा भक्ती मैं कही शिष्य यही समझाय।
जा उर धारन करतही कर्म सबै कटि जाय ॥
कर्म सबै कटि जाय भर्म भय भूत बिलावै।
जन्म मरण तजि जीव पीव पद ब्रह्म समावै ॥
यही चिन्ह दरसाय सही जन जीवन्मुक्ती।
शिष्य तोहि समझाय कही मैं प्रेमा भक्ती ॥ १ ॥

पराभक्ति विधान।

दोहा।

पराभक्ति अब फिर कहौं, सुनिये चित्त लगाइ।
स्वामी सेवक एक हुइ, रहैं भिन्न दरशाइ ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

यह परा जु भक्ती धर्म सु रक्ती कहौं सु उक्ती संजुक्ती।
अति आतम लुक्ती पति अनुरक्ती निकट निरक्ती यों मुक्ती ॥
मिल एकंमेकं स्वामि विसेकं सेवग लेकं सुक्ख लहै।
पय औ हवि मेकं सो दरसेकं रस पीवेकं भिन्न रहै ॥ १ ॥

दोहा।

परा सु प्रेमा भक्ति की, कही सु मैं तुम प्रीति।
सो प्राप्ती अब होनकी, बहुरि कहौं सब रीति ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी।

सोधि गुरु उतम जास। शब्दादि ब्रह्म ब्रह्महि प्रकास ॥
गुरू ते लहत ज्ञान। सर्वे जु ताहि परब्रह्म जान ॥ १ ॥
चरण लीन। तजि कपट होइ तन मन अधीन ॥
उभय जोर। आज्ञा सु लहत आसीन ओर ॥ २ ॥

योग युक्ति तत ब्रुयनि को, अवनि सन्त धरि छाप।
त्रिभुवनपति तव कारणे, भवन पधारे आप ॥ २ ॥

सोरठा।

यह तन मन अरदास, सतगुरु श्रवणाँ सँभलियै।
करो ज्ञान परकास, ध्यान धारणा सब कहो ॥ १ ॥

दोहा।

यह अस्तुति सुनि सिखन की, भए सु गुरु मस्ताक।
उदित करण ततज्ञान उर, वदत भए पुनि वाक ॥ १ ॥
यही महातम जानियो, धन्य धन्य हरिदास।
तुमरो भाव सु देखकरि, उपज्यो बहुत हुलास ॥ २ ॥

छन्द पद्धरी।

आए सु वस्तु गाहक आज। सब ज्ञान ध्यान लायक समाज ॥
धन धन्य शिष्य सुरता प्रवीन। करि भिन्न भिन्न यह प्रश्न कीन ॥ १ ॥
अब कहौं सकल मैं ज्ञान अंग। जो परापरी भाख्यो प्रसंग ॥
तुम पूछ्यो आदि सु पन्थ मोहि। है आदि पन्थ हरिनाम सोहि ॥ २ ॥
गह रामनाम की परम ओट। जिहि पन्थ मिले जन अनँत कोट ॥
तुम प्रश्न करी शिष कहौं तोय। है सार वेदको ब्रह्म सोय ॥ ३ ॥
दश चार भवन व्यापक नूर। आतमा सु एक उद्धार मूर ॥
गुरुधर्म मिलै भगवान आप। भगजाय भर्म भय दोष ताप ॥ ४ ॥
तुम अभयदान माँग्यो सु दास। सो अभयदान शिवमंत्र जास ॥
तुम मोह मिटण पूछ्यो विधान। मिटि है स मोह अद्वैतज्ञान ॥ ५ ॥
जाच्यो सु शिष्य तुम परा ज्ञान। वह पराज्ञान विज्ञान जान ॥
गुण तीन प्रकृति पाँचों पचीस। मिल एक सदन परब्रह्म ईस ॥ ६ ॥
परकाश ज्योति जहँ तेजपुंज। मिल जीव शीव दलसहस कंज ॥
वो भवन मिल्याँ भव भीति नाहिं। रह सदा एकरस ब्रह्म माहिं ॥ ७ ॥
तैं सत्यशब्द पूछ्यो सु ईस। मैं कहौं मान सत सत सहीस ॥
रघुनाथ सेतु बाँधत सुवार। सो सत्यशब्द तिरिगे पहार ॥ ८ ॥

दोहा।

नाम महात्म्य जु मैं कह्यो, परचा सहित प्रकास।
प्रेमा परा सु भक्ति के, अब लक्षण सुनु दास ॥ १ ॥
परा सु प्रेमा भक्ति पुनि, तुम माँगी शिप सोइ।
है आनन्दहि करण ए, कहौं सँभल मैं तोइ ॥ २ ॥

वे निरभै वासा ब्रह्म विलासा आसा पासा दूरि किए।
उर तिमर जु नासा तेज सु भासा सहस्र प्रभासा सूर किए॥१॥

सोरठा।

नव पट चार सुतंत्र, सुमिरत शेष महेशसो।
रामनाम निज मंत्र, यह गुरु कह्यो जु शिषन पें॥ १॥

छप्पय।

परंपरा को धर्म गुरू उर परम गुनायो।
दे करमें परसाद राम निज मंत्र सुनायो॥
नासा निरतर रु सुरति आन घर एक हुयाते।
जोग जुक्ति की बात कही सब परम कृपाते॥
उर भयो जबहि मंगल परम कर्म भर्म सब कप्पिया।
हरिरामदास कों परमगुरु यह उपदेश जु अप्पिया॥ १॥

दोहा।

जो गिरिजा प्रति शिव कह्यो, मंत्र सजीवन जास।
वह उपदेश जु अप्पियो, श्रीगुरु जैमलदास॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

आपे उपदेसं चित्त गहेसं तन मन पेसं करतामं।
सब मेटि अँदेसं काम कलेसं राम रटेसं हरिरामं॥
गुरु युक्ति कहेसं या विधि लेसं परम परेसं प्रेम पियं।
रसना सुमरेसं पीयूषेसं कंठ प्रवेसं शब्द कियं॥ १॥

दोहा।

कंठ निवासहि करत जू, परम प्रकाशय प्रेम।
जब दयालु उर जानियो, यह जग स्वप्ने जेम॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

जग स्वप्नो जान्यो सुमिरन ठान्यो हिरदे आन्यो अति हेतं।
गुरु वच सत मान्यो मन परचान्यो पीव पिछान्यो निज नेतं॥
उपज्यो वैरागं स्वामि सुयागं अन्तर मागं लिव लागं।
ग्रेहं परत्यागं जग अनुरागं भूषण नागं सम लागं॥ १॥

दोहा।

अंबर गिनें सु अग्नि सम, भवन भाड सम लाग।
यह वैराग्य सु उरन मध, प्रगटे पूरन भाग॥ १॥
कर्मज्या पूरब जन्मकी, निश्चय परम निधान।
सहज उमड महरतें, प्रापति भई सु आन॥ २॥

जा विद्ध कहै गुरु जुक्ति जोग। ता विद्ध करै हरि हित सँयोग॥
सम आसण बैठे सहज मारि। शीषपर द्वै क्षण हस्त धारि॥ ३॥
गुरु मंत्र जबै दै तत्वसार। धारै शिष निश्चय सार धार॥
तब रटै श्वास उच्छ्वासराम। रहु मिलै परमपद ब्रह्म धाम॥ ४॥

दोहा।

कह्यो प्रश्न अस्तुति करि, जो जो तुम जिज्ञासु।
मैं बात सु हरि मिलन की, सो सो कही जु तासु॥ १॥
ऐसे गुरु के वचन सुनि, उरके खुले कपाट।
ज्यों दिनकर के तेजतें, गयो तिमिर सब फाट॥ २॥

शिष्य वचन।

चौपाई।

दया करो गुरुदेव दयालं। मोकों करो तुम्हारो बालं॥
दीजै परम प्रसादी देवं। तन मन करूं तुम्हारी सेवं॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

शिवमंत्र सु भेवं परं परेवं दीजै एवं परसादं।
तुम कह्यो अनेवं बहुत तरेवं यही सिरेवं है आदं॥
लो विरद सु भेवं शरण तमेवं शिष्य करेवं गुरुदेवं।
अब राम रसेवं अन्तर मेवं अमर अमेवं उरदेवं॥ १॥

दोहा।

गुरुके गुण उत्तम कहे, सो गुरु मिले जु आप।
जुक्ति सहित अब दीजिये, रामनाम को जाप॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

दीजै अब जापं मेटि सँतापं राम अमापं उर प्रगटे।
सद्गुरु परतापं सत्य सु थापं आपं छापं पाप हटे॥
राखो निज नेराचरणा केरा जग उरझेरा हरलीजै।
मेरी यह टेरा बेरंबेरा चेरा तेरा करलीजै॥ १॥

दोहा।

देव भए निज दासकों, दीक्षा जैमलदास।
परिक्षित जैसी शुक परम, ऐसी सुनि अरदास॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

ऐसी अरदासा सुनी जु दासा थान उपासा हरत भए।
अत्यानँद रासा परम उजासा राम प्रकासा करत भए॥

जाने सुरराजं एक तराजं भए रंकाजं नरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ४ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, भक्ति दिए निज भेव।
किए सु बहु गुन आपने, लिए जु शरणें एव ॥ ४ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो दीन्हे शरणायं ज्ञान गुनायं भर्म भनायं भवनायं।
हरि कीर्ति सुनायं कहि कथनायं अमृत पायं श्रवनायं ॥
रामं रसनायं मोह मनायं साच मनायं उरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ५ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, अनुभव आप सु इच्छ।
पर कारज पूरन करन, प्रगट भए कलवृच्छ ॥ ५ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो प्रगटे कलवृच्छं आप सु इच्छं पूरन मच्छं परकाजं।
जीयनके रच्छं दुयन सु दच्छं परं सुलच्छं उरराजं ॥
तुम सेवा सच्छं करन सु अच्छं पखे वच्छं सुरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ६ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, अपरमपार अपार।
परा परम परब्रह्मसे, एकमेक दीदार ॥ ६ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो तुम एकंमेकं ब्रह्म विवेकं ज्यों लव नेकं सम गरके।
भिन भिन पेखं ज्ञान करेकं परम जनेकं तुम हरके ॥
जग कहे जबेकं शब्द सुनेकं साच सुलेकं तुरतेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ७ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, लियो जु हाथ सँभाय।
आराम सुगम उपाय यह, कहे तत्त्व निरताय ॥ ७ ॥

छन्द त्रिभंगी।

परम कहाए सुगम उपाए जात समाए जग मगमें।
[illegible] प्रभाव राम रमाए रग रगमें ॥

प्रापत भए सु परम पुनि, सबविधि ज्ञान विज्ञान।
राम रूप हरिराम को, सद्गुरु मिले सुजान ॥ ३ ॥
सद्गुरु निरख सु हरष करि, परख धर्म अस्तूति।
आप कृतारथ जानि शिष, करत भए अस्तूति ॥ ४ ॥
नमो नमस्ते सत्तगुरु, आतम करण उधार।
यहँ परमारथ काज पर, अवनि धरे अवतार ॥ ५ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो आप तनु धरिके जीव उधरिके तुम ईश्वरके अवतारं।
निश्चय मैं परिके गुन उर धरिके हाथ पकरिके भवतारं ॥
सोहं सुमरिके पार उतरिके ह्वै अक्षरके वरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं जय जय जस्तं नमो नमस्तं गुरुदेवं जी० ॥ १ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, वारंवार प्रणाम।
शम दम साधन गम सहित, मम सुमराए नाम ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो रामं सुमराए भर्मं गमाए जुक्ति वताए ततजोगं।
प्रियतम परसाए सुख सरसाए सर्वं नसाए दुखसोगं ॥
मैं चित में चाए जैसे पाए निज दरसाए गुरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ २ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, निजानन्द निरकार।
त्रगुण रखाए नाम निज, तगुण नखाए भार ॥ २ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो त्रगुण नखाए कर्म हकाए एक रुखाए अंगसई।
निजनाम सिखाए राम पकाए अछक छकाए प्रेममई ॥
परब्रह्म दरसाए परंपराए परे वताए गुर देवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ३ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, करण सकल सिध काज।
स्वामी जैमलदासजी, जीवां तिरण जहाज ॥ ३ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो जीव जहाजं दीन निवाजं राम सदाजं थिरराजं।
शोभा शिर ताजं परम पराजं ज्ञान समाजं महाराजं ॥

दोहा ।

जेहि विधि हमने प्रश्न की, तेहि विधि कही सुदेव ।
और सन्देह जु सब रह्यो, सगुरि कहो इक भेव ॥ १ ॥

चौपाई ।

प्रथमहि भक्ति सगुण तुम साधी । सो सब तजी कवन परसादी ॥
निर्गुण भक्ति लही प्रभु कैसे । सो गुरु कहो कृपाकरि जैसे ॥ १ ॥

दोहा ।

शंभू शब्द सु हम सुन्यो, पंथी रूप मिलाप ।
भिन्न भिन्न गुरुदेव अब, कहो कृपा करि आप ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

चौपाई ।

सुनु शिष कहों यथारथ सहते । हम जब साँवतसरमें रहते ॥
वहाँ एक पन्थी जन आए । नाम गृहस्थ मोहि बतलाए ॥ १ ॥
जैतराम जल पावो वाले । ऐसे वचन कहे ततकाले ॥
जब ही जल तुम्बी भर लायो । तब मैं महापुरुष को पायो ॥ २ ॥
महापुरुष बोले पुनि बैना । मोकों पन्थ बताय सु दैना ॥
जब मैं पन्थ बतावन काजा । चल्यो साथमें ले महाराजा ॥ ३ ॥
चलत चलत पन्थनमें संगा । पूछ्यो एक मोहि परसंगा ॥
साधन कहा करो तुम भाई । सो मोहि अवधू कहो सुनाई ॥ ४ ॥
जब मैं कही ताहि विधिसारी । पाठ करूं अरु सेव मुरारी ॥
सेवा पूज करी अबताँई । निश्चय भयो कि तेरे नाँई ॥ ५ ॥
तब मैं पूछत भयो सु भेवं । निश्चय मोहि बतावो देवं ॥
महापुरुष सामीप्य बुलायो । राम राम निज मंत्र सुनायो ॥ ६ ॥
ब्रह्म मिलन की युक्ति बताई । सेवा पूजा सकल छुड़ाई ॥
धारी सुरति मूँदकर नैना । लागी राम भजन लिव लैना ॥ ७ ॥
देखे नैन खोलकर जाना । महापुरुष भे अन्तरधाना ॥
तब मैं भयो उदासी मनमें । चहुँ दिशि देखन लागो वनमें ॥ ८ ॥
पूरब कृत्य छुडायो मेरो । संशय उपजि गयो बहुतेरो ॥
विस्मय भयो सदन चलि आयो । चित चिन्ता अन जल नहिं पायो ॥९॥
रजनी बीति गई जब अरधी । आप देव देखि मोहि दरदी ॥
तब ही भई विष्णु नभ बानी । जब मैं पूछत भयो निदानी ॥ १० ॥

कर जोर सदाए शीश नमाए लागूँ पाए नरदेवं ।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ८ ॥

दोहा ।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, महिमा लहौं न पार ।
त्रिभुवन सुख मैं नाँ चहौं, रहौं चरन चित धार ॥ ८ ॥

सोरठा ।

आदि मध्य अवसान, हुइ प्रसन्न गुरु दीजिये ।
यह माँगूँ वरदान, सेव निरन्तर रावरी ॥ १ ॥
बहुत किए उपकार, तार लिए भव सिन्धुते ।
रामनाम ततसार, बोहित सम मम बगसियो ॥ २ ॥

दोहा ।

यह विनती निज सिखन की, सुनी श्रवन गुरुदेव ।
करि अनुकम्पा कहत भे, सफल सफल तुम सेव ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

कुंडलिया ।

धन्य धन्य शिष धर्म यह, कह्यो निगम लछ जेम ।
दरस्यो मम तव उरन मध, परा परम जन प्रेम ॥
परा परम जन प्रेम नेम नित क्षेम निवासा ।
बहुत बढ़े परताप मान सत वचन सुदासा ॥
निज हरिजन दिनकर धरणि, गुन रहै सो केम ।
धन्य धन्य शिष धर्म यह, कह्यो निगम लछ जेम ॥ १ ॥
यह निज कृपासु वचन सुनि, प्रेम परम परकास ।
जाइपरे गुरुचरनमें, अति करुणा कर दास ॥
अति करुणा कर दास, द्रवति चित रोम हुलासं ।
चले जुगल दृग नीर, सीर सुखरास विलासं ॥
गद गद होइ शरीर सब, शब्द न निकसे जास ।
कहत भए कछु बेर ते, मम तव चरन निवास ॥ २ ॥

शिष्यवचन ।

सोरठा ।

तुमरे शरण निवास, पायो जैमलदासजी ।
हमरे और न आस, स्वामी पदपंकज विना ॥ १ ॥

सोरठा।

विनती बारंबार, करौं स्वामि कर जोरिके।
सद्गुरु रूप तुम्हार, उर में रहो जु अहर्निशि ॥ १ ॥
रामनाम निजनाम, निर्गुण ब्रह्म सनेह जो।
सद्गुरु समपे स्वाम, ज्ञान ध्यान करिके कृपा ॥ २ ॥
राम मिलन बिच रेख, कहूँ न राखी आप मो।
पुनि वैराग्य विवेक, दियो परम गुरुदेवजी ॥ ३ ॥
प्रेमा भक्ति पुनीत, सब विधि कही जु युक्ति से।
परंपरा की प्रीत, सो दरसाई मध्य उर ॥ ४ ॥
दीनबन्धु गुरुदेव बारबार यह वीनवौं।
चरणकमल की सेव, करि अनुकम्पा बगसिये ॥ ५ ॥

कुंडलिया ।

स्याही सप्त समुद्रकी पत्र जु धर्तृ होई।
कलम करत सुरतरुनकी लिखत शारदा सोइ ॥
लिखत शारदा सोइ पार गुन तोहि न पावत।
आप बुद्धि परमान गुरू महिमा शिष गावत ॥
स्वामी लीजे मान अरज ऐसी गुदराई।
पत्र जु धर्तृ होइ समद की करौं जु स्याई ॥ १ ॥

सोरठा।

विनती ऐसी रीति, शिष्य करी गुरुदेवसे।
देखत मे अद्वैत, एक ब्रह्म घट घट महीं ॥ १ ॥

दोहा।

ब्रह्मज्ञानको यों भयो, शिप सतगुरु संवाद।
जिन जिन कों जब जब मिल्यो, आगम आदि अनाद ॥ १ ॥

घनाक्षरी।

भयो जू भगवान सुरज्येष्ठ सम्वाद आदि,
वाशिष्ठ रामचन्द्र अर्जुन कृष्णादि कर।
सप्तऋषि वालमीकि आदि ले सम्वाद भयो,
नारद वसुदेव भयो जैसे प्रह्लाद कर॥
ध्रुव से लगाइ चित्रकेतु मुनि आदि लेके,
सोई यह वरती जो रीति जन परापर।
संशय सब गयो ब्रह्म प्राप्ति जु भई आन,
गुरु शिप मिलाप भयो ज्ञान सम्वाद कर ॥ १ ॥

तुम हो कौन कहाँते आए। मोकों यह उपदेश बताए॥
महापुरुष बोले नभ बानी। विरह व्यथा तेरी मैं जानी॥ ११॥
मैं हौं निजानन्द अविनाशी। पूरण ब्रह्म सकल परकाशी॥
तुम कारन आयो तव पुरमें। जन जाने तू जन सतगुरु में॥ १२॥
तो तारन आयो है चेरा। तू है आदि अन्त जन मेरा॥
मान मान सतवचन हमारा। राम राम रटले ततसारा॥ १३॥
संशय डिगमिग छोड़ दहीजे। ज्ञान ध्यान में चित्त गहीजे॥
ऐसे वचन कहे गोविन्दं। दूरि किए मेरे दुख द्वंदं॥ १४॥
रामनाम जपियो सुख रासं। जब मेरे आयो विश्वासं॥
शिष तैं पूछ्यो राम प्रतापं। इहि विधि मेरे भयो मिलापं॥ १५॥

दोहा।

श्रीसतगुरु के वचन सुनि, उपज्यो अधिक सनेह।
ज्ञान गुह्य सुख मिलन को, मानत भए जु एह॥ १॥

शिष्यवचन।

चौपाई।

हितू नहि सतगुरु तुम जैसा। दीना ज्ञान गुँह्य मोहि ऐसा॥
मैं तैं मेरी सकल नसाई। भक्ति भाव उर मुक्ति बसाई॥ १॥
प्रथम भए दाता हरि एहा। जिनते पाई मानुष देहा॥
अरु तुम दाता भया सु देवं। नाम महातम दीया भेवं॥ २॥
तुम समान सज्जन नहिं कोई। दीन्हा मुहि अक्षर गुरु दोई॥
रामनाम तत्त परम परेसं। परम इष्ट शिव सुमिरत शेसं॥ ३॥
यह उपकार कहाँ लगि गाऊं। प्रियतम तोहि पार नहि पाऊं॥
हितू नही तुमसा गुरु मेरे। तन मन वारौं ऊपर तेरे॥ ४॥
तुम गुरु अरथ कहे निज एकं। तन मन अनरथ मिटे अनेकं॥
जो गुरु तुम मिलते मुहि नाहीं। आती नहीं सुरति उर माहीं॥ ५॥
वेवा सतगुरु सम नहि होते। तो जग संग वृथा तन खोते॥
परम भाग हम दर्शन पायो। होइ प्रसन्न प्रसंग सुनायो॥ ६॥
भाखी परम सुधारस बानी। सतगुरु सबविधि ज्ञान सु जानी॥
धन्य गुरू मोहि दीन्ही धीरा। मेटी आन अज्ञान अधीरा॥ ७॥
तुम गुरु भूमि भानु सम भासे। मम उरके समस्त तम नासे॥
गुन अगमागम लहौं न पारा। विनय करौं मैं बारंबारा॥ ८॥

नर देहन को लाभ लयो है कृपा करी है सतगुरु स्वाम।
धकाधूम बहुता गृह माहीं हुए एकन्त भजाँ हरिनाम॥
राम दम करि धरि ध्यान सुरति सजि विचराँ भूमध ह्वै निष्काम।
गुरुभ्राता ते पन्थ चहत जू ऐसे वचन कहे हरिराम॥ २॥

दोहा।

जगे सु प्रेम प्रकाश उर, मन से भए एकन्त।
राम रटत हरिरामजी, सदन पधारे सन्त॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

सदन पधारे सब सुख सारे लागे प्यारे हरिनामं।
ह्वैबेकों न्यारे कुल व्यवहारे वचन उचारे हरिरामं॥
नहि काम हमारे धंधा सारे मोहि मुरारे उर प्यारं।
गुरु राह बतारे मो दरस्यारे जग उर झारे दिनच्यारं॥ १॥

दोहा।

चार दिनन को जगत सुख, अति दुख को गंभीर।
तातें तजि बन जाब सां, हरि भजसां सुख सीर॥ १॥

चौपाई।

जब बोले तनके संबंधी। याहीं रहो आप निरबंधी॥
हम भी दर्शण कराँ तुम्हारो। तातैं ह्वै कल्याण हमारो॥ १॥
करि अस्तूति कहत मे सारा। अरु विनवै पुनि वारंवारा॥
धंधा तुमको नाहिं भुलावां। अरु कबहु नहिं ध्यान खुलावां॥ २॥
सब रहसां तुम आज्ञा माँई। घरही माहिं भजो तुम साँई॥
ऐसी सुनी वीनती स्वामी। रहे विराज सु अन्तर जामी॥ ३॥

दोहा।

नहीं काम कछु जगत से, राम भजन से प्रीति।
यों जन बैठे भवन में, सकल मोह गण जीति॥ १॥

चौपाई।

॥ नहीं कछू घर बनको। चित्त एक हरि से हरिजनको॥
। मैं दृष्टान्त बतावों। परम्परा इतिहास सुनावों॥ १॥

सवैया।

पुनि यदु भूप रहूगण अलरक राजा चित्रकेतु ही जान।
जब मत सहित भोग से निर्धूत जनक विदेह रहे अस्थान॥

दोहा।

उद्धव दसा जु श्याम जिमि, अन्तर मिले सु आप।
गुरु जैमल हरिराम के, भयो सु मम मिलाप॥ १॥

छन्द मनहर।

निमि के मिलाप भयो जैसे नव योगिन को।
जैसे सनकादि भयो हंस जगदीश को॥
यदु के मिलाप भयो दत्तात्रेय मुनी को जु।
शुक के मिलाप भयो जनक महीश को॥
परिक्षित के ज्यों शुकदेव को मिलाप भयो।
रघु के मिलाप भयो जडभरतीश को॥
ऐसे हरिराम के मिलाप भयो जैमल को।
ज्ञान वैराग्य भक्ति नाम वकशीश को॥ १॥

दोहा।

शिष गुरुदेव मिलाप की, कहाँ कहाँ लगि रीति।
गुनत चढ़ै रँग ज्ञान को, सुनत चढ़ै अति प्रीति॥ १॥

छप्पय धुरमेल।

हरिराम सदन आवत भए करि मिलाप गुरुदेव से।
करि वन्दन करजोर शीश धरिके गुरु आयसु।
हुइ सनाथ उर हर्ष नाथ पद अंग निवायसु॥
करिके बहु अस्तूति धर्म निज उर मध धारं।
शिष सतगुरु के पास विनय करि वारंवारं॥
इमि जुक्ति सहित सब विधि करी भक्तियुक्त तत भेवसे।
हरिरामदास आवत भए करि मिलाप गुरुदेवसे॥ १॥

सोरठा।

दया करी गुरुदेव, जब उर ऐसी विधि बनी।
भक्ति प्रेमरस भेव, जुक्ति सहित सबही कही॥ १॥

सवैया।

पुनि कर नमस्कार परदक्षिण आप सु संग सहित उदराम।
श्रीगुरु तें अति श्रेष्ठ भावसे अष्ट अंग करिके परणाम॥
ले आयसु हरिराम परम जन आवत भए सींहथल गाम।
जब मन युगल जु कियो मनोरथ त्यागि चले सबही धन धाम॥ १॥

सफरादि नीर निधादिवे, पुंडरीक भानु प्रकाशवे।
जिमि बाल मातु निवासले, जिमि पक्षि नेह तरोवरं।
जिमि भृंग पुष्प सुवासले, इमि हंस मानसरोवरं।
पुनि चंद ज्यों जु कमोदिनी, घन मोर चातक स्वातिन्यों।
गुन प्रेम नारद गानसों, सिध प्रीति जेम सिधान्तसों।
प्रह्लाद ज्यों हरि नामसों, अनुराग सन्त एकान्तसों।
हरिराम श्याम सु कारणे, गुरुप्रीति है यहि भाँतसों ॥ १ ॥

दोहा।

तत्त्व वित्त गुरुदेवसे यहि विधि लगी सुप्रीत।
दृष्टि एक कर देखियो, सब घट ब्रह्म अद्वैत ॥ १ ॥

सवैया।

आतम दृष्टि एक करि देखे सृष्टिन से नहिँ वाद विवाद।
सबके जनक सकलके ईश्वर इष्ट राम निजनाम अनाद॥
जनहरिराम सहत गम शम दम अष्ट याम से लेत प्रसाद।
सहज समाधि अडिग मन आसन गोनिष्ठनके दहत उपाद ॥ १ ॥

भक्ती विना अल्प सुख भासै अन्तर ज्ञान प्रकाशै दीप।
ऐसे गृहतें रहत उदासी जैसे पन्थी नीर समीप॥
जिमि अरविन्द लिपै नहि अम्बु जु जैसे समुदर माहीं सीप।
जग परपंच समान सु जान्यो जनहरिराम पंच रस जीप ॥ २ ॥

दोहा।

संयम वालसुमीकि सम, जत मत हनुमत जेम।
वृत्ती जनक विदेह सम, नन्द सुनन्द सु नेम ॥ १ ॥

छन्द गीतक।

परसै सदा सत पुरी गुरुधाम सो पँच गाँइयाँ।
अस्थान हरिपुर सो दिपै ब्रह्म नीर धोत सु न्हाइयाँ॥
नित नेमसे ढिग सासता पद जासता जनसे लिये।
उदन्वान क्रोश समाज सो षट मास साधत यों भये ॥ १ ॥

दोहा।

नियम सहित गुरु दरश नित, करत भये षट मास।
जय स्वामी भाषत भये, वहीँ भजो हरिदास ॥ १ ॥

एक हि ज्ञान ध्यान दृढ कारण निश्चय एक हि ज्ञान निधान।
यों हरिराम भवन के माहीं पीउ लियो उर माहिं पिछान॥ १॥

दोहा।

लव लागी हरि नाम से, अह निशि एक अखंड।
कबहु तूटत नाहिं जू, जैसे कंठ शिखंड॥ १॥

सवैया।

एक एकन्त भवन सु आश्रम जामें आप विराजे जाय।
आठों हि याम अखंडित आतम रामहि राम रहे लिव लाय॥
ज्ञान उद्योत ज्योति दिल दीपक ज्यों ज्यों दिन दिन होत सवाय।
परम सु क्षेम उपज अँग अंग सु प्रेम अछक छक नेम सदाय॥ १॥

दोहा।

धिन हरिराम सु धर्म तुम, परम अछक छक प्रेम।
जावत गुरु संगति करन, सप्त कोश नितनेम॥ १॥

चौपाई।

सप्त कोश नितही चलि जावै। परम पुनीत दर्श गुरु पावै॥
रजनी रजनी वहां रहावै। आज्ञा मांगि यहाँ पुनि आवै॥ १॥
श्री सद्गुरु सें प्रीति जु ऐसी। मानों मीन उदक पुनि जैसी॥
संतनकी गति संतहि जानै। हदके जीव सु कहा बखानै॥ २॥

सोरठा।

नही जानै हदजीव, बेहदकी गति वर्णिवो।
गुरु शिष जीव रु सीव, एक मेक उर मिल रहे॥ १॥

छन्द मोतीदाम।

मिले हरिराम सु बेहद माहिं, कभी भिन आदि सु अंत जु नाहिं।
परब्रह्म देव बसे जन वास, लगी धुनि एक अखंड अकास॥
अमी रस नीर चले जब एम, चिदानन्दरूप छके रस प्रेम।
जगी सुनसागर ब्रह्म सुज्योत, इसो गुरुदेव प्रताप उद्योत॥ १॥

दोहा।

शम दम सहित जु राम रटि, पहुँचे शून्य सु गेह।
संत स्वामि गुरुदेव से, दिन दिन अधिक सनेह॥ १॥

छन्द गीतक।

गजराज रेच तटादले, अनहादि पक्षि अकाशते।

जिमि सावित्री चतुरानन के पार्वती जैसे रिपुकाम ।
पतिघृत सहित करै इमि सेवा जिमि पीपाके सीता वाम ॥ १ ॥

चौपाई ।

करि शिलोञ्छवृत्ति अनलावै । स्वामी को परसाद करावै ॥
स्वामी करै ध्यान दिन रैना । ना काहूसे बोलै बैना ॥ १ ॥
उन्मन रहै अष्टही पहरां । सुरति लगी साँई सुन सहरां ॥
या छवि मोपै वरणि न जाई । जाने हरिजन पहुँता ताई ॥ २ ॥
यों करताँ बीता के वरसां । स्वामी अधिक प्रीति हरिहरसां ॥

अथ परचा ।

एक समय सुर अप्सर ध्याई । स्वामी निकट सु बैठी आई ॥ ३ ॥
स्वामी नयन खोल करि देखी । मायाके मन छल करिवेकी ॥
वायें उलटि थाप सें मारी । स्वामी ध्यान लगाई तारी ॥ ४ ॥
ऐसी बात सुनी नरनारी । सबके भाव ऊपज्यो भारी ॥
आज्ञा लैन बहुत शिष आए । स्वामीजीसे वचन सुनाए ॥ ५ ॥
तुमहो जत मत शुकदे जैसा । पुनि बद्रीनारायण तैसा ॥
अरु कवीर जैसा जन पूरा । शील सधीर अडिग मति सूरा ॥ ६ ॥
ऐसे कहत भये जिज्ञासी । दो आज्ञा स्वामी सुखरासी ॥
स्वामी बात साच फरमाई । जामें कसर न राखी काई ॥ ७ ॥
आज्ञा बहुत कठिन है भाई । जो लेसी सो शीश कटाई ॥
जब साचा सो चरणा लागा । काचा सुनत दूरि डर भागा ॥ ८ ॥
पूरव संस्कार तिन देही । सो जन हूवा रामस्नेही ॥
पुनि स्वामीसे शीश निवाए । अपने अपने भवन सिधाए ॥ ९ ॥
पुनि स्वामी सुमिरण में लागे । आतमराम सदा अनुरागे ॥
चाँपा रमा राम गुण गावै । स्वामीजीको बहुत सरावै ॥ १० ॥
हरिके जन प्रगटे घरमाँई । सबहीकूं सुमरावै साँई ॥
ऐसे वचन कहै अर्धंग्या । स्वामी धिन धिन आप प्रतिग्या ॥ ११ ॥

दोहा ।

गुरु सिलियाँ पहली भया, एक पुत्र जन सार ।
पीछे गिरिजानन्द जिमि, रह्या जत्त मत धार ॥ १ ॥

सवैया ।

पुनि स्वामी के भक्ति अंकुरी नन्द विहारी जैसा नन्द ।
गुन संपन्न बुद्धिके नायक हरिके गायक रूप अनन्द ॥
नाम विहारीदास जासुको खंड परशुके जैसे स्कन्द ।
जिमि कबीरके तनय कमालं अग्नीधर के नाभि नरिन्द ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

चौपाई ।

ज्यों निशि बिसिनी जलमें रहै । बसै कलानिधि नभसो बहै ॥
यों तेरा मन मेरे पासा । दूरि नहीं कबहु निजदासा ॥ १ ॥
अब इतनी खेचल मत करो । ध्यान सदा याहीं तुम धरो ॥
निश्चय कहौं सुनो यह बाचा ; सत्य सत्य मानो शिष साचा ॥ २ ॥
स्वामी वचन शीश परधार्‍यो । दश दिन को नितनेम विचार्‍यो ॥
जब बोले स्वामी पुनि सोही । एक मासतें परसो मोही ॥ ३ ॥
तातें तुमको श्रम नहि होवै । अरु निरताय शब्दसे जोवै ॥
तुमतो रहो नहीं शिष छाना । ब्रह्मदेश में मिलिया माना ॥ ४ ॥
जगमें बहुत जीव चेतावो । घर बैठा हरिके गुन गावो ॥
स्वामी ऐसी आज्ञा कीन्ही । जब सेवक मस्तक धरलीन्ही ॥ ५ ॥

छन्द मनहर ।

जैसी धरी आज्ञा रामानन्द की कबीर शिर
जैसी धरी रज्जबहु दादूजू दयालकी ।
जैसी धरी आज्ञा शिर खेम पुनि रज्जबकी
धरी चतुरदास आज्ञा सन्तदास खालकी ॥
धरी आज्ञा नामदेव द्विजके स्वरूप जूकी
धरी आज्ञा उद्धवहु नन्दजूके बालकी ।
अनुभव प्रकाशी सन्त हाथ जोर ऐसे शिर
धरी आज्ञा हरिराम जैमल कृपालकी ॥ १ ॥

चन्द्रायणा ।

धरि आज्ञा शिर सन्त सु आया भवन कों ।
सथिर किया असमान सहज मन पवन कों ।
आसन किया अडह्न सुरत्ति सुन साँइया ।
परिहां उर सद्गुरु को रूप रामगुन गाइया ॥ १ ॥

दोहा ।

ऐसे जन हरिरामजू, बैठे होय निशंक ।
एक समान सु देखिया, राजा अरु पुनि रंक ॥ १ ॥

सवैया ।

धिन हरिराम स्वामि से हिलमिल निशिदिन भजै एक निजनाम ।
पुनि अर्धांगी चाँपा माता सीता माता जैसे राम ॥

पूरा पुरुष कहूँ नहिँ पाया ढीले ग्यारा गुरुकी जोय ॥
जटा विभूति धरया बहु धाता काज सरया नहिं तातें कोय ॥ १ ॥
पुनि नारानद साम जु आये स्वामी के शिष मिलिये पेन ।
जपतो पंडे देखता जनका तबतें पायो परम सु चैन ॥
रामस्नेहिन से जब रामा बोलत भये सु ऐसे बैन ।
इन दरसनके पका स्वामी सो तुम मोहि बतायो सैन ॥ २ ॥

रामस्नेह वचन ।

चौपाई ।

पुरी सिंहथल माहिं जु स्वामी । आप विराजे अन्तर्यामी ॥
जाकी महिमा कहा बखानों । परम पारब्रह्म हरि के मानों ॥ १ ॥
जब रामा आतुर करि आये । स्वामीजी को दर्शन पाये ॥
स्वामीजीसे करि परणामं । हस्त जोरिके बोले ठामं ॥ २ ॥
करि किरपा दीक्षा मोहि दीजे । स्वामी तुम शरणागत लीजे ॥
स्वामी कह्यो वचन जब ऐसे । तुमसे दीक्षा चले जु कैसे ॥ ३ ॥
तुम तो औघड़ रूप बनेहो । जटाजूट बहु तार तनेहो ॥
रामस्नेही यह नहिं राखे । रामनाम रसनासे भाखे ॥ ४ ॥
इतना कहत हाथ तब जोरे । टामन टूमन सबही तोरे ॥
स्वामी बात हृदय सो चीन्ही । इक सेवक को आज्ञा कीन्ही ॥ ५ ॥
कर चरचा समुझावो सोई । याको साँच मतो जो होई ॥
पुनि सेवक सब धर्म सुनायो । ज्ञानगुदड़ करि साच लखायो ॥ ६ ॥
आय कह्यो स्वामीसे ऐसो । है साचो मत पीपा जैसो ॥
स्वामी बहुरि कसोटी दीन्ही । दीक्षा देन परीक्षा कीन्ही ॥ ७ ॥
जो पीपा जैसो मत साचो । तो कबहू नहिं होवे काचो ॥
स्वामी कह्यो सदन तुम जावो । के दिन गयां बहुरि तुम आवो ॥ ८ ॥
साची टेक होय जो तेरे । राम राम करिके मन घेरे ॥
साधन आन सकल पुनि खोई । तब दीक्षा देसाँ जन तोई ॥ ९ ॥
इतनी सुनि रामा जन बैठा । साचे मते होय चित सैठा ॥
पुनि स्वामी की कसणी सहिया । केते दिवस अन्न नहिं लहिया ॥ १० ॥
आज्ञा देवो नाहीं । तो मैं प्राण तजूँगा याहीं ॥
स्वामी उर दया विचारी । सेवक को देख्यो मत भारी ॥ ११ ॥

चौपाई ।

सो भी भजन करै दिल साचे । रामनाम से निशि दिन राचे ।
दास विहारी परम सु दीपे । सो स्वामी के रहे समीपे ॥ १ ॥

सवैया ।

पुनि स्वामीके जिज्ञासुनकी ताहि हकीकत कहूं तमाम ।
प्रथम सु दास नारायण लक्ष्मण लीन्हो जन्म जैतपुर गाम ॥
द्वारावती चले युग परसन रमते रमते सहज मुकाम ।
सांवै ग्राम पाँचनी नाडी जहाँ आय कीनो विश्राम ॥ १ ॥
तहाँ एक पूरा जन तापे सेवादास जिन्होंका नाम ।
सो वे कहत भये जन सेती याहीं भजन करो तुम राम ॥
त्यो प्रसाद उनको तुम वालाँ किसनदासके जावो ठाम ।
जब सो ग्राम टोंकले ध्याये हरिजन नाहीं पाये धाम ॥ २ ॥
तब सो पुरी सिंहथल आये सहज सभाव वहत सो पन्थ ।
स्वामी को दर्शन जब पायो उपज्यो दिलमें हर्ष अनन्त ॥
आपसमाहिं युगल बतलाये सेवादास जिसा यह सन्त ।
लो आयसु अब विलँब न करनी ताते दरशे परम सु तन्त ॥ ३ ॥

चौपाई ।

आज्ञा लैन उभय जन धारी । पुनि स्वामी से अरज गुजारी ॥
स्वामी बोले परम सुजाना । छोडो सबही आन अज्ञाना ॥ १ ॥
एक राम कूं सुमरो भाई । मन निश्चय करि प्रीति सदाई ॥
जब जिज्ञासु हस्त सु जोरे । स्वामी वचन शीश पर मोरे ॥ २ ॥
तब स्वामीजी भये कृपालं । आज्ञा दीन्ही आप दयालं ॥
ले आज्ञा लक्ष्मण गे दूरी । दास नारायण रहे हजूरी ॥ ३ ॥

दोहा ।

छः के वर्ष दयालुसे, मिले नारायणदास ।
आन भर्म भय सब कटे, प्रगट्यो ब्रह्म विलास ॥ १ ॥

(श्रीरामदासजीमहाराजकीदीक्षावर्णन)

सवैया ।

पुनि स्वामी से रामा मिलिया वर्णौं जिकी वारता होय ।
मुरधर माहिं लियो अवतारा हरिके प्रेरे आये सोय ।

सवैया ।

इनसे आदि शिष्य उद्धारे सुनिये आगे चित्त लगाय ।
आदू भर्माराम जन आदू साधू देईदास सवाय ॥
जो जो पुरुष भया जन पूरा सो सो लागा स्वामी पाय ।
जाके दिलमें राम मिलनकी ताके ऊणत रही न काय ॥ १ ॥

चौपाई ।

गुरुतय प्रगट भये कलि माहीं । तातें ऊणत रही जु नाहीं ॥
आये जीव उधारण स्वामी । धन्य धन्य तुम अन्तर्यामी ॥ १ ॥

छन्द गीतक ।

नर नारि सो नितनेमसे करि प्रेमसे परसे पदं ।
महिमा करै अनुमोदसे ततबोधसे प्रगटै तदं ॥
सतसंग स्वामि सनेहसे सुख लेत सो अति सेघसे ।
पुनि पक्ष धारण दास जो सत भाव सो गुरु वेचसे ॥ १ ॥

सवैया ।

डूंगरदास जातको घीको आय मिल्यो स्वामीसे सोय ।
कहिये जिको गामको ठाकुर स्वामी को निज चाकर होय ॥
और सु प्रेमदास पुनि आदिक पीपावंशी भ्राता दोय ।
सो स्वामीका भया शीक्षा कुल अभिमान भर्म कूं खोय ॥ १ ॥

दोहा ।

ऐसे जीवजु आपका, लीया चरण लगाय ।
जगत जाल बन्धन दह्या, रह्या राम गुण गाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

स्वामीके जगकी नहिँ आसा । सतासमाधि शून्यमें वासा ।
रामनिरंजन अंजन राता । पर उपकार नामका दाता ॥ १ ॥
रहै दयालु सकल निरदावै । ऐसे रामनाम गुण गावै ॥
कठिन समय इक ऐसा आया । कारण अन्न वेचते काया ॥ २ ॥
तिन पुलमें हरिजन इक आयो । स्वामीजीको दर्शन पायो ॥
स्वामी ऐसे वचन उचार्‍यो । चाँपा रमा शीश पर धार्‍यो ॥ ३ ॥
या जन कूं परसाद करावो । पीछे तुम हरिके गुन गावो ॥
तब ताकों परसाद करायो । स्वामी सहित आप नहिँ पायो ॥ ४ ॥

स्वामी साँची प्रीति पिछानी । पीपा जिमि अन्तरमें जानी ॥
करि अनुकम्पा दीक्षा दीन्ही । यों दासन की पारख लीन्ही ॥ १२ ॥

छन्द मोतीदास ।

इसी विधि अप्पिय आयसु देव । निरन्तर जप्पिय अन्तर भेव ॥
छुडाइय जैन शकत्तिय सेव । हरे तम जाल दुगत्तिय देव ॥ १ ॥
भगत्तिय दीघ मुकत्तिय भेव । जुगत्तिय जोग उकत्तिय एव ॥
कुगत्तिय दूरि करे सब कर्म । जुगत्तिय वंधिय ज्ञान सु धर्म ॥ २ ॥
भये गुरुदेव सुदत्तिय साम । दियो जिन सर्व सिद्धान्तिय नाम ॥
बदन्तिय एम अमोलख वैन । प्रभाकर जेम छिदन्तिय रैन ॥ ३ ॥

दोहा ।

रामा मिले दयालु से, नीके चरण निधान ।
पायो पीपादास ज्यों, ब्रह्म जु ज्ञान विधान ॥ १ ॥

छन्दगीतक ।

करि वीनती गुरुदेवसे परणाम पद परसाइया ।
पुनि पंच दीन परिक्रमा अस्तुति ओघ सुनाइया ॥
गुरुआमना धरि शीश जो फिर देश मघधर धाइया ।
नित रामदास विलास यों हरिरामके गुन गाइया ॥ १ ॥

दोहा ।

श्रीसद्गुरु को ध्यान उर, लगन ब्रह्म से लाय ।
ऐडाणे निज नगर पुनि, जहँ पैठे जन जाय ॥ १ ॥

---

१ अन्तर्यामी अन्तरकी, मानलई तहकीक ।
हुइ कृपालु कहने लगे, सब सन्तनकी सीख ॥ १ ॥
२ सन्मुख आसन सहज धरायो । मस्तक कर दे राम कहायो ॥
केवल मंत्र अनादि अनाद । गुरु परताप भजन तत साद ॥ १ ॥
ॐ से परे निजानँद योही । वर्ण सर्व मध अवर्ण सोही ॥
ररंकार अपरम परपारं । भयो मकार मात सिधकारं ॥ २ ॥
अक्षर उभय संयुक्ति सदाई । ॐ महत्तत्व व्यूह इन माँई ॥
(श्रीराम. परची विश्राम ८)

---

1 सहज आसन=स्वाभाविक आसन । पालथी मारना ।
"सम आसन्न बैठे सहज भारि बाँवे पर द्वै क्षण हस्तधारि ।
गुरु मंत्र भने दे तत्वसार, धारे शिष निश्चय सार धार ॥ १ ॥
(श्रीहरि. परची)

भाखत सिफत भाव उर भीजत चाखत महा प्रेम रस नीर।
परमारथ हित पंथ बतावै स्वामी सब तैं तरक फकीर॥ २॥
राजा रंक एक सम जाने जैसे कंकर तैसे हीर।
हरिभक्ती बिन कछु न चाहै ज्यूं पीपा रैदास कबीर॥
बेहद सिले रामके वल्लभ यूं हरिराम धर्मगुरु पीर।
तारण जीव समर्थ अनेकन निर्मलकर ज्यूं गंगानीर॥ ३॥
इल परकाश अर्क ज्यूँ भासत निशिदिन ज्ञान गरक गंभीर।
गारे गर्व सर्व तनमनके मारे पकरि पंच बड मीर॥
राम राम हरिराम बगसिके सबको किये पार भव तीर।
जो मिलिये सो हुये आप सम अभयदान ले रहे न कीर॥ ४॥

दोहा।

बाल बिहारीदास पुनि, रटै प्रीतिकर राम।
दास नराण हजूरमें, रहै अष्टही जाम॥ १॥

चौपाई।

दास बिहारी कूप पधारे। जल कारण इमि मतो विचारे॥
तहाँ एक बोल्यो नर धेकी। हरिजनसे जानी नहिं नेकी॥ १॥

सवैया।

हरिजनसे संयात्रो करिके दुष्ट एक जिन कीनो द्वेष।
हरिजन द्वेष जरे निशिवासर नहीं सुहावे साधू भेष॥
हिरण्यकशिपु राक्षसके जैसी तैसी इनके उरमें टेक।
बाल बाल कूँ नीर बासते वचन कहे कटु मूढ विशेक॥ १॥

चौपाई।

दास बिहारी कछु नहि कहे। दुष्ट वचन हिरदेमें सहे॥
ालबाल यूं धीरज राखी। उज्जय मती कृष्ण जिमि भाखी॥ १॥
ाये पुनि स्वामीके पासा। हस्त जोर करि वचन प्रकासा॥
द बास अब नाहिं घटावे। तातें चलो रहाँ निरबाधे॥ २॥
रि सुमिरनमें विघ्न न होई। ऐसी बुद्धि विचारो कोई॥
ाकमपुर जावनके काजा। बालबाल सह शिष्य समाजा॥ ३॥
ाच ग्राम नापासर आया। ठाकुर सन्मुख आन पधाया॥
ु आदर करिके घर लाया। गुरु चरणांमें शीश नमाया॥ ४॥
ान्ही विनय सहित परसंसा। धिन धिन आज पधारे हंसा॥
ीहिंद बहुत सुख पायो। स्वामीसे करि आप धपायो॥ ५॥

सतवासेनको प्रसंग ।

सवैया ।

सतवासेन जिसो पत साचो ताको सत्य सु कहूं विवेक ।
आप सु सहित त्रिया सुत नारी सो उन मतो विचार्यो एक ॥
नव दिवसनतें भोजन कीन्हो दीन्हो सबै सन्तको देख ।
अर्धो नकुल भयो कंचनको पांडव जिगसे कियो विसेक ॥ १ ॥

चौपाई ।

स्वामी सत्य जु राख्यो ऐसो । सतवासेन विप्रके जैसो ॥
पुनि जन चल्यो माँग करि आज्ञा । स्वामी बहुरि ध्यानमें लाग्या ॥
पन्थ चलत सो पाछो आयो । रोक रुपैयो भेट चढ़ायो ॥
स्वामी बात चित्त की चीन्ही । भीड़ जानिके भेट जु कीन्ही ॥ २ ॥
हमरे भीड़ नहीरे भाई । रामप्रताप आनन्द सदाई ॥
पहिले भेट करत तुम आई । तो प्रसन्न हुय लेते भाई ॥ ३ ॥
अबतो नहिं लेवां हरिप्यारा । मान मान ज्यां वचन हमारा ॥
जब जन विरह करन कूं लागे । लेट गयो स्वामीके आगे ॥ ४ ॥
नीरधार चाली नैननतें । बोल्यो नाहिं गयो बैननतें ॥
धीरज धार वचन तब बोल्यो । स्वामी भेट करी मैं सो ल्यो ॥ ५ ॥
जब देख्यो व्याकुल ता जनको । स्वामी प्रसन्न कियो वा जनको ॥
ऐसे हठतें भेट रखाई । रंका बंका जेम अचाई ॥ ६ ॥

दोहा ।

तीन लोकको सुख तज्यो, औरनकी क्या बात ।
स्वामी दयालु कृपालु के, जिमि कंकर जिमि धात ॥ १ ॥

चौपाई ।

अबतो भेट आयवा लागी । सेवक चेला एकहि सागी ॥
हृदय हर्ष दर्शन कूं आवै । सो स्वामी को भेट चढ़ावै ॥ १

सवैया ।

कोई आन चढ़ावै कंचन कोई आन चढ़ावै नाज ।
कोई पाट पितास्वर चाढै कोई चीर चढ़ावै ताज ॥
कोई आन चढ़ावै करहो कोई आन चढ़ावै बाज ।
ऐसे भेट करै सिख सोई स्वामीके नित रहै समाज ॥ १ ॥
जैसे अवधपुरी के माहीं सोहत सुरन संग रघु बीर ।
आतम यों गुरु घाल संग धरि धीर

अब तुम चरण उसीके लागो । जन सबही जावो करि सागो ॥
जेज करी तो है है ऐसी । होरी माहिं भई है जैसी ॥ २ ॥
वे स्वामी प्रह्लाद समाना । तुम जानो नहिं मूढ अयाना ॥
सुनतां बात सबै मनमानी । यामें फेरफार नहिं जानी ॥ ३ ॥
करणीदान हुकुम जब कीया । सामिल होन ढोलं तब दीया ॥
पाँचों वास एकठा हूवा । सँग लीया जाका सुत मूवा ॥ ४ ॥
जाय लग्या स्वामी के चरणा । कृपासिन्धु कीजे अब करणा ॥
हम तुमको जान्यो नहिं भेवा । तुमतो अलख निरंजन देवा ॥ ५ ॥
हमरो चूक बगासिये स्वामी । अब तुम चलो सदन घणनामी ॥
जो तुम कहो जेम करिदेसां । ज्यों त्यों करिकै सँग में लेसां ॥ ६ ॥
स्वामी कह्यो कछू नहिं चावे । हमकों एक रामरस भावै ॥
सो तो याहीं लोक सयाना । कहा सदन अरु कहा पयाना ॥ ७ ॥
बहुरि करी अरदासा लोगू । स्वामी मेटो सबही सोगू ॥
तुम बिन गाँव भयो भयभीतू । अन्धकार जिमि बिनअदीतू ॥ ८ ॥
चन्द्र बिना रजनी नहिं सोहै । तुम बिन हाल हमारो कोहै ॥
अब तुम और न जानो तातू । जलसे आदि ले छोडी बातू ॥ ९ ॥
आप प्रसन्न सोइ करि लेसाँ । और तुरत कागद लिखदेसाँ ॥
दावो उजर करण नहिं पावे । हरिको खूनी सो दरसावै ॥ १० ॥
सही आपसे वचन उचारो । अब तुम स्वामी भवन पधारो ॥
स्वामी सहज कही जब बानी । अब क्यों इतनी विनती ठानी ॥ ११ ॥

दोहा ।

तब लोकन विनती बहुरि, करी बहुत तजि मान ।
हमतो शिशु मतिमूढ नर, तुम साक्षात सुभान ॥ १ ॥
धूलि उछालै गगनमें, सूर न लागे कोइ ।
वध फूटै शिर पर पड़ै, मूढ सचेते सोइ ॥ २ ॥
देह देह पहिले कहै, शिरमें लागे आय ।
यही मूढ की वारता, तब पीछै करराय ॥ ३ ॥

चौपाई ।

हम तो महामूढ हैं प्रानी । तेरी गती नाथ नहिं जानी ॥
तुम तो हो हरिके अवतारा । स्वामी सबके सिरजन हारा ॥ १ ॥
हरके जाय उलझिगे धारा । कैसे जाने मूढ गवारा ॥
दयासिन्धु कृपा अब कीजै । पुरी सिंहथल वेगि चढीजै ॥ २ ॥

दरशण करण सकल उठ भागा। आय ह स्वामी चरणाँ लागा॥
स्वामी करै रामकी चरचा। जब आवै सबके मन परचा॥ ६॥
सबही रामभजन कूं लागा। हंस किया पलटाया कागा॥
देवीसिंह प्रीति विस्तारी। पुनि सो करी रसोई भारी॥ ७॥
व्यंजन कीन्हे बहुत प्रकारं। अमृत भोजन बने अपारं॥
लाडू पुरी मिठाई मेवा। आप किया सब अर्पण देवा॥ ८॥
देवीसिंह होय आधीना। थाल सेष करि लाहा लीना॥
पुनि ठकुरानी जैताँ बाई। कीन्हो भाव बहुत विधि आई॥ ९॥
स्वामी के इक राम अवाजू। दादू ज्यों सत्संग समाजू॥
दर्शन करि सबही जन हरषे। वचन थाल अमृत सम बरषे॥ १०॥
ऐसे सन्त राम अवतारी। प्रगटे भवनि भक्ति विस्तारी॥
शरणागती जीव जो सोध्या। लागि रही नित पुरी अयोध्या॥ ११॥

दोहा।

देवीसिंह दयालुका, उत्सव किया अपार।
हुयो दास करजोर करि, विनवै बारंबार॥ १॥
साचा हरिजन सूरका, जहँ तहँ आदर होय।
ओत प्रोत हरिसे मिले, जगत न जाने कोय॥ २॥

चौपाई।

द्वेष किया तिनमें दुखपरिया। सुर सुत एक दिवसमें मरिया॥
तनधन क्षीण होन को लागे। साँई कोपे एकण सागे॥ १॥
भक्त द्रोह हरिको नहिं भावे। जो पुनि तीन लोक में जावे॥
छोडे नही सन्त को द्रोही। जाको जड़ामूलसे खोई॥ २॥
जापर जबै रामजी रूठे। ताकी सब संपत्ती लूटे॥
पुनि सो पाँच दिवस के माँई। घर दुर्जन को गयो बिलाई॥ ३॥
रोवै बहुत करै विलपातू। हे प्रभु इसी करी क्यों घातू॥
ऐसो पाप कियो मैं काँई। तातैं मोपर कोपे साँई॥ ४॥

दोहा।

पुत्र मरे अति दुख पर्‍यो, क्षीण भयो धन साज।
घर छिरणाट्यो हुयगयो, कहा मैं कियो अकाज॥ १॥

चौपाई।

जब बोले मानुष पुनि सारे। तुम अपराध न कोई पारे॥
स्वामी को बिन काज सताए। तातैं तुम ऐसे दुख पाए॥ १॥

अरज करी स्वामी से ऐसे। रामानँदसे पीपा जैसे॥
अब प्रभु सदन पधारो मोरे। तन मन धन अर्पन सब तोरे॥ २॥

दोहा।

सुनि अरजी निज शिषन की, करी कृपा गुरुदेव।
चित्त पधारण चिन्तवी, भक्ति बधारण भेव॥ १॥

चन्द्रायणा।

सब शिष शाखा संग पधारे घालजी।
जहँ जहँ धारे पाँव करै तहाँ न्यालजी॥
गाँव गाँव के माहिं होवै जु बधावणा।
परिहां हरिजन हरिको रूप लगै जु सुहावणा॥ १॥
करै रसोई बहुत चढावै भेट जू।
रामत करते सन्त पधारे ठेट जू॥
रामा जन विधि बहुरिजु सन्मुख आयके।
परिहां उर उत्सव करि प्रेम लिया जु बधायके॥ २॥

दोहा।

श्रीगुरुदेव दयालु को, लीन्हा धाम बधाय।
बहुत प्रीति करि बीनती, रामदास लग पाय॥ १॥
आसन बसन बिछायना, हाजर किया जु भाय।
सद्‌शिष रामदास के, आनँद अंग न समाय॥ २॥

छन्द पद्धरी।

इमि करत रामदासहि उछाय। धिन धरे सदन गुरुदेव पाय॥
वैकुंठ सहित मिलिये जु विष्ण। मानों सवेह गोलोक कृष्ण॥ १॥
पल पलहि माहिं वारे सु प्रान। गुरुदेव सुरति निरखै निदान॥
मानों सु आज ऐसो उजास। जिमि शरद पूर्णिमा को सो प्रकाश॥२॥
पुनि करी रसोई अति पुनीत। नाना प्रकार भोजन सु रीत॥
इमि प्रीति सहित पुरसे जु थाल। देवाधिदेव जीमे दयाल॥ ३॥

दोहा।

रहे घाल के दिवसलों, नगर खेड़ापे सोहि।
भक्ति भाव संपति निरखि, अति प्रसन्न हिय होहि॥ १॥

छन्द पद्धरी।

पुनि रामदास बहु करी भेट। सब शिष्यों सहित गुरु चरण छेट॥
तन मन धन संपति आदि नाम। सबके हो मालिक धाम स्वाम॥ १॥

दोहा ।

सुनि सुनि आवै सकल जन, अनुभव शब्द अवाज ।
रहै घाल महाराजके, नित सतसंग समाज ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

सद्गुरु है शरणूँ चितधर चरणूँ जामणमरणूँ भवहरणूँ ।
भवसागर तिरणूँ करजन करणूँ अशरण शरणूँ ऊवरणूँ ॥
उर अंतष्करणूँ ध्यानसु धरणूँ सब वीसरणूँ सुरजालं ।
वसु यश विस्तरणूँ करसव निरणूँ परचा वरणूँ गुरुघालं ॥ १ ॥

दोहा ।

गुना चूक तुम वगसियो, मैं अति मूढ अजान ।
घाल रावरो सुयश तो, वरणै सकल जहान ॥ १ ॥

चौपाई ।

नेतराम मुरली जन दासं । वीकानेर सहरमें वासं ॥
माजन जाति राम का प्यारा । शिष स्वामी के वडे सुचारा ॥ १ ॥
जिन दरशण को मतो उपायो । घरकाँ को नाहीं दरशायो ॥
रात जगावन कीयो व्याजू । चित से लायो साधु समाजू ॥ २ ॥
प्रीती करिके सिंहथल ध्याये । आये रातोरात चलाये ॥
यहँ जू सभा बहुरंगी सारी । स्वामी ध्यान लगाई तारी ॥ ३ ॥
पुनि सो अति दर्शन के प्यासी । जब सो दोनों भये उदासी ॥
विनु दीपक दर्शन किमु होवे । अब अब बहुरि कवन से जोवे ॥ ४ ॥
दिन ऊगालों नहीं घटाओं । नाम मँदिर को लियो उठाओं ॥
ऐसी करुणा देखि दयालू । अन्तरजामी भये कृपालू ॥ ५ ॥
तब सो ऐसो कियो उजासू । मानों कोटि दिनेश्वर भासू ॥
जब दर्शन पायो उन दासू । हिरदै उपज्यो बहुत हुलासू ॥ ६ ॥
अद्भुत चरित देखि तिन येरू । अतिशय भये अचंभे घेरू ॥
स्वामी कौन गती यह कीन्ही । चर्म दृष्टितें जाय न चीन्ही ॥ ७ ॥
हमको दीपक आश न एकू । उदित किये मणि चन्द्र अनेकू ॥
चरणां लपट स्वामिके पासू । करत भये अस्तूति जिशासू ॥ ८ ॥
नमो नमो नित ब्रह्म नमस्ते । एक अखंड आदि मध अस्ते ॥
पूरण ब्रह्म सचिदानन्दा । विश्वरूप ईश्वर जग वन्दा ॥ ९ ॥
ज्यों हरि मुख सुर भुवन दिखायो । हमकों ऐसो चरित दखायो ॥
ज्यों कबीर पंडाकों राखे । सेना करी नामदे लाखे ॥ १० ॥

तब करी यह इच्छा सु आप। सिंहथल को आवन करि मिलाप॥
शुकदेव जेम सद्गुरु अचाह। करि सेवा शिष लीन्हे सु लाह॥ २॥

दोहा।

शिष तो रामा जन जिसा, द्याल जिसा गुरुदेव।
वे अचाह वे चरण रत, मिले सु एक समेव॥

चौपाई।

पुनि आवन की त्यारी कीन्ही। गुरु मूरति शिष हिय धरलीन्ही॥
घणी दूर आये पहुँचावा। मन से पाछो करे न जावा॥ १॥
गुरु हरिराम कह्यो जब ऐसे। जैमल कह्यो आप कूं जैसे॥
अम्बर माहिं बसै जिमि इन्दू। बसै कमोदनि तिमि मध सिन्धू॥ २॥
यूं तुम सदा समीप हमारे। हम तुम तैं कबहू नहि न्यारे॥
अब तुम पीछो करो पयानो। यह शिष सीख हमारी मानो॥ ३॥
तब अस्तूति करे परणामा। फिरे सदन कूं निज शिष रामा॥
स्वामी आये निजपुर धामू। रामत करते सहज मुकामू॥ ४॥

दोहा।

इह विधि मुरधर देश कौं, करि पावन महाराज।
आय विराजे आप यहँ, द्याल महोत्सव साज॥ १॥

चौपाई।

सिंहथलपुरी अयोध्या जैसी। और पुरी नहिं कोऊ ऐसी॥
जन साक्षात विष्णु अवतारा। दर्शन आवै लोक अपारा॥ १॥

छन्द त्रोटक।

कोउ आवत कोश जु एकनतैं, सतसंग दयालु सु पेखनतैं।
कोउ आवत जोजन आधनतैं, गुरु ज्ञान वैराग्य सु साधनतैं॥ १॥
कोउ आवत कोशजु सो सुरतैं, अति होय अचिन्त्य मनो उरतैं।
कोउ आवत सो जन जोजनतैं, सत्संगति स्वामि प्रयोजनतैं॥ २॥
कोउ आवत कोशजु पंचनतैं, शुभवस्तु हृदय गुन संचनतैं।
कोउ आवत जोजन डोढनतैं, गुरुदेव सुसंगति कोडनतैं॥ ३॥
कोउ आवत कोशजु सत्तनतैं, तब द्याल मिटावत तत्तनतैं।
कोउ आवत जोजन दोइनतैं, निज नाथ विलोकन लोयनतैं॥ ४॥
कोउ आवत कोश तिहूँ पटतैं, ररकार सु शब्द मुखाँ रटतैं।
कोउ जोजन सोइ सवा दुरतैं, नित आवत दास जनूं झुरतैं॥ ५॥

यामें संशय नाहिं कदाई। हरिजन राम एक है भाई ॥
गूठे थाल करी प्रति पारू। न्यारो तकें लक्ष्मी धारू ॥ ६ ॥
यों सरूप का शाहिद भागा। सद्गुरु की सेवामें लागा ॥
दर्शन कियां हसी रस आई। भक्ती मुक्ति विभूती पाई ॥ ७ ॥

दोहा।

गायो गुन गोविंद को, पायो द्रव्य अमाप ॥
भायो साच सरूप कों, सद्गुरु राम प्रताप ॥ १ ॥

सोरठा।

पाछुरि करी अरदास, रामदास जन आयके।
पावन करो निवास, सब मन भावन सद्गुरू ॥ १ ॥

छन्द तोमर।

पुनि रामदास जु आय। गुरुदेवसे शिर नाय ॥
अरजी सु कीधजु एह। पगधारिये फिर गेह ॥ १ ॥
परकाज सारन धाल। सब प्रान के रिछपाल ॥
निरधारके आधार। शरणाय के साधार ॥ २ ॥

श्रीगुरुवचन।

सोरठा।

सुनि ऐसी अरदास, जब सद्गुरु बोलत भये।
दासा करियत दास, बार बार कारन कहा ॥ १ ॥

शिष्यवचन।

चौपाई।

करन करावन हम कछु नाहीं। व्यापक आप सकल के माहीं ॥
प्रेरक हो तुमही तन मनके। दयासिंधु बंधू दीनन के ॥ १ ॥
सोई तुम चरणन की सेवा। मैं तो दास तुम्हारो देवा ॥
तुम तो सदा अचल हो स्वामी। पर तन वृद्ध अवस्था जामी ॥ २ ॥
बार बार अवसर कब पावों। तातें या अर्जी गुदरावों ॥
जब स्वामी अर्जी सत मानी। सेवक की अति प्रीति पिछानी ॥ ३ ॥

सोरठा।

करि अनुकम्पा धाल, मरुधर देश पधारिया ॥
करण शरण प्रतिपाल, रीतिजु आदि अनादिकी ॥ १ ॥

यों तुम स्वामी कला अनंतू । वासर कियो रैन को संतू ॥
जब स्वामी बोले जन सेती । हरि कर्ता क्यूं नहिं है पती ॥ ११ ॥
मेरु करै तृण तें हरि सोइ । पुनि तृण बहुरि मेरु तें होइ ॥
साचै मतै रामकों सेवै । तो इच्छा है सो करि देवै ॥ १२ ॥
याको मती अचंभो मानो । अब तुम हरि कों समर्थ जानो ॥
यो चरित्र राखीजो छानै । कोउ जानै को नाहीं जानै ॥ १३ ॥
हमरे काम जगत से नाहीं । मिलिये राम अँतरके माहीं ॥
अब तुम दर्श कियो रे भाई । ऊणत मनमें रहै न काई ॥ १४ ॥
यों कहि ख्याल समेटी माया । शिष वंदन कर शहर सिधाया ॥
स्वामी बहुरि समाधि लगाई । शून्यशहर माहीं इकताई ॥ १५ ॥

दोहा ।

श्रीगुरु हरियानन्दके, परचाँ को नहिं पार ।
सुने सो आसी कहन में, और हु गुप्त अपार ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

जैसे गोपालं संग सु बालं विधि चरितालं दिखरालं ।
है विधि बछ बालं करि ततकालं हृदय कुलालं भ्रम टालं ॥
यों करन निहालं आप चालं अनुभव ख्यालं विस्तारं ।
मेरी बुधि बालं कहाँ कहाँलं परचा ख्यालं नहि पारं ॥ १ ॥

दोहा ।

अगमागम गति ख्याल की, मोपैं लखी न जाय ।
विनती गंगारामसे, सदा रहौ शरणाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

बारठ एक स्वरूपा नामू । जाका भया अडाणा धामू ॥
सो स्वामी के दरशन आया । अति करुणाकर वचन सुनाया ॥ १ ॥
हमसो और अनाथ न कोई । जो कोउ तिहुं लोकमें जोई ॥
ठौर नहीं बैठन कूं काई । अब मैं कहा करूं जनराई ॥ २ ॥
तब स्वामी मन ऐसी धारी । पींपा जैसी परम विचारी ॥
हरिजन सोई पर उपकारी । घट घट आतम राम सँम्हारी ॥ ३ ॥
जापर स्वामी भया कृपालं । तब सो कीयो बहुत निहालं ॥
होइ प्रसन्न दीक्षा दीन्हीं । करुणा सिंधु कृपा इमि कीन्ही ॥ ४ ॥
स्वामी तणी कृपासे सोई । संपति विविधि भांति जू होई ॥
जिनको दारिद गयो जु ऐसे । पुनि सो विप्र सुदामा जैसे ॥ ५ ॥

छन्द मनहर।

हरप हरप मन विधि विधि भाँति भाँति
चीज भोजन बनायो भल चित भावसे।
क्षीरखू मिठाई लाडू सीरो पकवान पूरी
चाँवर शकर मूंग घृत करि चावसे॥
ऐसी विधि बहुत रसाल गुरुदेवजी कूं
सुंदर परोसै प्रीतिभाव के प्रभावसे।
जीमें श्रीहरिराम रामदास जू पोन ढोरै
करै मनुहार मूंगी अधिक उछाह से॥ १॥

दोहा।

यों नव दश दिन जावताँ, आवन कह्यो अवास।
राखलिये अनुमोदसे, हटकरि रामदास॥ १॥

चौपाई।

स्वामी इकदिन वनमें आये। पूरव दिशि परवत नियराये॥
रामदास शिष साथे लागी। पँद्रे वीस ओर वैरागी॥ १॥
गिरि समीप सबको बैठाये। स्वामी हाथ जहाँ सिटियाये॥
पुनि सो अटल वचन फरमायो। सब शिष हु जनके मनभायो॥ २॥
तुमरा लशकर यहां न मावै। अरु शिष बहुत लगेगा पावे॥
तातें यहां करो सुस्थाना। देश विदेशाँ रहै न छाना॥ ३॥
रामदास ऐसो तत जान्यो। सतगुरु वचन अटल करि मान्यो॥
स्वामी कह्यो भूमि जिन स्थानू। वाही ठौर कियो सहनानू॥ ४॥
पुनि स्वामी आसन कों आया। कई दिवसलों यहाँ रहाया॥
भूखे भाय सन्त भगवन्तू। औराँ कारज करण अनन्तू॥ ५॥

दोहा।

रामदास निजदास का, सबही सान्या काज।
बहुत करी प्रतिपालना, चाल गरीबनिवाज॥ १॥

चौपाई।

जब भावन की इच्छा धारी। सब सामग्री करी तयारी॥
रामदास बहु प्रीति बढ़ाई। तन मन धन की भेट चढ़ाई॥ १॥
पहली भेट शिषां जो कीन्ही। सो स्वामी आगे धरदीन्ही॥
स्वामी कह्यो क्यों न तुम राखी। अरज करी आनकर भाखी॥ २॥

छन्द मनहर ।

साची प्रीति जानि एक, समुचै पधारे श्याम
विप्र श्रुति देव अरु, नृप बहुलास के ।
जैसे जू पधारे प्रीति, हेतु भीलनी के राम
जैसे जू पधारे रामा, नन्द पीपादास के ॥
पीपा जू पधारे तहाँ, श्री रंगदास के पुनि
नारद पधारे भूप, भीम सुखरास के ।
श्याम के सनेही जन, भावना के हेतु एम
ऐसे जू पधारे हरि, राम रामदास के ॥ १ ॥

सोरठा ।

समय पधारत नाथ, खेडापा पुरकों जबै ।
आयो सन्मुख भात, साँच वचन सतगुरु कह्यो ॥ १ ॥

दोहा ।

गांव खेडापे जावताँ, सबघातांका ठाट ।
दूध दही घृत मोकला, भरिया रहसी माट ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

पुनि रामदास करिके हुलास । आयासु वधावण परमदास ॥
सब लिये शिष्य शाखा जु साथ । चित द्रवति प्रेम रोमांच गात ॥ १ ॥
बाजन्त ढोल धाजा विशेख । सुर मे प्रसन्न सम्माज देख ॥
पुनि अष्ट अंग करते प्रणाम । यों लगे शिष्य पदपद्म स्वाम ॥ २ ॥
आनी सुगन्धि वस्तू अनूप । मृगमद हरिचन्दन पीतरूप ॥
कुंकुम कपूर सु काशमीर । चोवा गुलाल चन्दन अबीर ॥ ३ ॥
तिलकार्घ्य आरती करे ताम । पद पाट परत पधराय धाम ॥
सिंहासन आसन धर्‍यो आय । अति भाव सहित सेज्या बिछाय ॥ ४ ॥
कर जोरि भये ठाढे सु दास । पुनि करत भये बानी प्रकास ॥
धनि धन्य आज मेरो सु भाग । पायो घर बैठाँ गुरु समाग ॥ ५ ॥

कुंडलिया ।

शिष निज रामादासके बटी बधाई एम ।
दास विदुरके द्वार जो यदुपति आवत जेम ॥
यदुपति आवत जेम तेम पतिवृत हरषाई ।
व्याकुल भई शरीर सुधी बुधि सबै भुलाई ॥
निरखि परम गुरुदेव को छके अछक छक प्रेम ।
शिष निज रामादासके बटी बधाई एम ॥ १ ॥

दोहा।

घोतीसे पावन कियो, धाल सु मरुधर देश।
रामदास के भावसे, दिया भक्ति उपदेश ॥ १ ॥
परच सईके आदिले, इतने भये वदीत।
अब अगली वर्णन करों, हरि गुरु कृपा सप्रीत ॥ २ ॥

चौपाई।

पुनि सो दिवस अष्ट दश जातं। परचा भया जगत विख्यातं ॥
चार पाँच परचे मे लगतं। सो सुनि सुख पावे हरिभक्तं ॥ १ ॥

सवैया।

है चरचा जाकी अति सुन्दर परचा भया मास इक माहिं।
हरि गुरु की अर्चा करि आखूं लखिवेकी मेरी मति काहिं ॥
गावत ब्रह्मज्ञान दरशावे सुनतां परम मोक्ष मिल जाहिं।
जो हिरदै निश्चै गहि राखै सो भवसागर आवै नाहिं ॥ १ ॥

चौपाई।

एक समय सब सिखां विचारी। मेलो करण सूँज विस्तारी ॥
सब जनपें दीन्हे समँचारू। ग्राम ग्राम हरिजनके द्वारू ॥ १ ॥
चैत्र सु मास कृष्णपष सातम्। तिथि ठहराई हरिजन जातम् ॥
मेदो घिरत शर्करा लीन्ही। विविधि भांति सामग्री कीन्ही ॥ २ ॥
अचरज हुवो एक अति भारी। लखि नहि सकै कोउ तनधारी ॥
पंदर दिन मेलाके आगू। हरियानन्द कियो तनुत्यागू ॥ ३ ॥
नारायण आदिक सब दासू। देखत ही जन भये उदासू ॥
ओ मेलो आरंभ्यो ऐसे। स्वामी विना होय अब कैसे ॥ ४ ॥
यों मिलि सकल करी जो करणा। स्वामी सुनी परमपद शरणा ॥
राखन तीस दिवसलौं काया। हरिसे कौल करे यहँ आया ॥ ५ ॥
आय कियो तनमें परवेसू। मेट्यो सबको शोक अँदेसू ॥
ऐसे समरथ सन्त दयालू। करुणामयीकरण प्रतिपालू ॥ ६ ॥

दोहा।

कारज करवा कारणे, शरणायक रिछपाल।
कर वाचा करतार से, आप यहाँ दयाल ॥ १ ॥

चौपाई

सबहि प्रसन्न भये शिष शाखा। पुनि स्वामी पूरी अभिलाषा ॥
सरजीत राम लघु बंधू। ऐसे उर में भयो अनंदू ॥ १ ॥

रामदास कह तन धन तेरा । मैं तो सदा चरण का चेरा ॥
यों सेवा करि लाहा लीया । गुरु कौं बहुत प्रसन्न जु कीया ॥ ३ ॥
बहुत दूर पहुँचावण आए । करि प्रणाम पुनि भवन सिधाए ॥
स्वामी शनैः शनैः मग माहीं । आये फकू गाँव जहाँ ही ॥ ४ ॥
तहँ हरिदास वधावण आये । आय लगे स्वामी के पाये ॥
करि अति प्रीति सदन पधराये । बहु भोजन ले भोग लगाये ॥ ५ ॥
टैल करी अतिश्रद्धा सहितू । सेवग भया भेदसे रहितू ॥
मग वासी चालण नहिं देवै । स्वामी कौं बहुते मिल सेवै ॥ ६ ॥
स्पर्शैं चरण प्रशंसा गावै । रामरूप सबके मन भावै ॥
ये हैं कपिल महामुनि ज्ञानी । इनकी कृपा मोक्ष है प्रानी ॥ ७ ॥

दोहा ।

ऐसे उत्सव चालके, ग्राम ग्राम में होत ।
सबके उपजै भावना, दर्शन करन उद्योत ॥ १ ॥

चौपाई ।

स्वामी जहाँ जहाँ पद्धारे । तहाँ तहाँ महिमा विस्तारे ॥
ये तो सन्त इहाँ के नाँई । अमर लोक से आए साँई ॥ १ ॥
नारायणदास हजूरी संगा । ज्यों नन्दादि श्याम निजअंगा ॥
पुनि हरिदेव जु शोभित ऐसे । दिव्यरूप सनकादिक जैसे ॥ २ ॥
स्वामी अमृत वचन उचारें । जीवन के त्रय ताप विडारें ॥
परमारथको पन्थ बतावे । जिन जिन कौं हरिचरणाँ लावे ॥ ३ ॥

दोहा ।

साधु लच्छ भगवद कहे, ऐसे सन्त दयाल ।
एक भवन की का कहौं, त्रिभुवन करै निहाल ॥ १ ॥

चौपाई ।

रामत करते करत पयाना । सिंहस्थल आये अस्थाना ॥
सुनि स्वामी आयां की बाजा । धाये जन दर्शन के काजा ॥ १ ॥
पूछे समाचार पुनि सारा । स्वामी कहे सकल विस्तारा ॥
जिन जिन ग्राम लिया विश्रामू । तिन तिनका जु बताया नामू ॥ २ ॥
जेता दिन खेड़ापे रहिया । तेता भिन्न भिन्न करि कहिया ॥
जहाँ जहाँ मिलिये हरि प्यारे । तहाँ तहाँ के नाम उचारे ॥ ३ ॥

सबही स्तुती करण कों लागे। मति आधीन होय अनुरागे॥
हम तुमकों जाने नहिं स्वामी। चूक बगसिये अंतरजामी॥ २॥
स्वामी कही चूक नहिं कोई। हरि सुमरो सबही सुख होई॥
जैजैकार करे नर नारी। धिन धिन स्वामी गती तुम्हारी॥ ३॥
पति समर्थ तुमरे बस सांई। ताल तलाव छले छिन मांई।
स्वामीका इमि करत बखाना। करत सबै पालर जलपाना॥ ४॥

दोहा।

नाणा साटै नीरको, नट गयो वचन उचार।
सो मुख महिमा उच्चरे, ऐसे सरजनहार॥ १॥

चौपाई।

पालर अंबु तालते आवे। सब मेलो अतिही सुख पावे॥
स्वामी पाँच दिनालों पोपे। बहु भोजन करिके सन्तोपे॥ १॥
मन बांछित सो हाजर कीया। स्वामी सब कूं आदर दीया॥
जब प्रसन्न हुवे जनसारे। आज्ञा माँगि चले पुनि द्वारे॥ २॥
पन्थ पन्थ माहीं गुन गावे। स्वामि स्वरूप हृदयमें लावे॥
पुनि सब आपसमें बतलावे। स्वामीकी गति लखी न जावे॥ ३॥
ऐसे कहते सकल सिधाए। जेते जन उत्सवमें आए॥
रामदास जब माँगी आज्ञा। लागत जान गुरांकी जाग्या॥ ४॥
स्वामी कह्यो रहो तुम याहीं। इन कारण ठहरे जब नाहीं॥
करि प्रणाम बहुत परकारं। आये मरुधर देश मँझारं॥ ५॥
पुनि स्वामी मन भयो उदासू। अब या नरलोकन के वासू॥
चित्त लग्यो अमरापद माहीं। जहँ जग जाल काल डर नाहीं॥ ६॥
आतुर करै पारपद जोई। नन्द सुनन्द आदि ले सोई॥
स्वामी कह्यो रहो सुस्तावूं। कौल कियो जबही में आवूं॥ ७॥
यों कहि सब वस्तू पहुँचावे। पाछा वेगा वेग बुलावे।
पुनि सो चार पांच दिन माँई। जो जो आनी सो पहुँचाई॥ ८॥
सागी दिवस कौलको आयो। प्रातसमय स्वामी फरमायो॥
परम लोककी सोंज मँगाई। जब निश्चै सबको दरशाई॥ ९॥
आगम तीन पहर पुनि सोई। बात विख्यात जननमें होई॥
श्रीदयालु वैकुंठ पधारे। ऐसे सबही लोक उचारे॥ १०॥
जहँ जहँ पुरुप खबर इू पावे। तहँ तहँके दर्शनकों धावे॥
यों सब हलक चोखलो आयो। बहुरि थाट मेलैको थायो॥ ११॥
धाए और सन्त बहुतेरा। स्वामीके चरणों का चेरा॥
कारण जू ऐसे। हरिकारण आये सुर जैसे॥ १२॥

स्वामी बहुरि दिलासा दीन्ही । करुणा परम सकल पर कीन्ही ।
केती वस्तू पहिले आई । अरु चाही सो फेर मँगाई ॥ २ ॥
उनको समाधान सब कीयो । दे नाणो जु कबल करि लीयो ॥
सब सामान तयार करायो । जो चाहै सो वहाँ धरायो ॥ ३ ॥

दोहा ।

अष्ट सिद्धि नवनिद्धि रिधि, हाजर हुई सु आन ।
श्री स्वामी के भवन मध, सब विधि भरे समान ॥ १ ॥

सवैया ।

धाये सबै महोत्सव ऊपर जहँ जहँ पूगे समंचार ।
भाई भाई रामसनेही सब आये स्वामी के द्वार ॥
रामप्रताप कमी नहिं काई यहाँ धनेश तणा भंडार ।
मावै नहीं लोक पुरमाहीं ऐसो थटियो थाट अपार ॥ १ ॥
उलरो काम कठिन दरशायो साकट पलट्यो बचन गवार ।
प्यासाँ मरै तड़फड़ै सेलो बालक करै बारही बार ॥
द्वेषी लोक हँसी अति ठानै जानै नाहीं नाथ मुरार ।
ओरहु शिष्य चिन्त बहु आनै अब प्रभु कीजै कहा विचार ॥२॥
स्वामी के धीरज मन ऐसी धना जिसी हरिसे इकतार ।
सबकों कहै करो मति आतुर तृषित नहीं राखै करतार ॥
मोकों बडो भरोसो वाको नहिं चूकै अवसर निरधार ।
यों कहि थाल विराजे आश्रम निज शिष को बैठाये बार ॥ ३ ॥
हरी हरी करि खरी प्रीतिसे दोय घरी लगि करी पुकार ।
जब नभ चढी पवन इक बदली जाको बहुत भयो विस्तार ॥
वर्षण लगी सींहथल ऊपर धरणी एक अखंडी धार ।
ठंढी मरत लोक अति धूजे मिटगी प्यास एक छिनवार ॥
तन मन प्राण थाल पर वारै करै सकल मिल जैजैकार ॥ ४ ॥

दोहा ।

जल होवै तहँ थल करै, थल जहँ जल हुय जाय ।
हरि करता क्यों नहिं हुवै, हरि हरिजन के भाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

रामजनोंका कपे निसाना । साकट जब है परे खिसाना ॥
सब पुर माहिं ऊपज्या भाबू । आय लगे स्वामी के पावू ॥ १ ॥

कै तो होय धारणो चोखो। कै वैकुंठ गुयजावै सोखो॥
यों कहि जब वैकुंठ उठायो। द्वार मांह नाहीं अटकायो॥ ४॥
उच्छव करत तहाँ चलि आये। कूंयो कियो आप जिहि ठाये॥
घृत कर्पूर समिधि सब लीन्ही। दाहक्रिया देहकी कीन्ही॥ ५॥
चली सुगन्धि बहुतही सुन्दर। मोहे सुर मुनि सहित पुरंदर॥
बाल वृद्धादिक ले नरनारी। सबके भाव ऊपज्यो भारी॥ ६॥
आनि आनि घृत सींचन लागे। लेत सुधूम कर्म सब भागे॥
जैसे पुरी अवन्ती माहीं। प्रेत सहस दश मोक्ष मिलाहीं॥ ७॥
ऐसे सकल पवित्र हि भये। सहजे जन्म दोष मिटगये॥
जब भस्मी शीतल जू होई। तब निजदास सँभाली सोई॥ ८॥
सावित रहिया श्रीफल गादी। पाँच सात पटल्यां जू लाधी॥
परचा को कोइ पार न पावे। आदि अन्तलौं अगम लखावे॥ ९॥

दोहा।

पार लहै कुण बालको, अपरंपार अनन्त।
चिदानन्द जुगजुग महीं, सदा चिरंजिव सन्त॥ १॥
यह परचे इन लोकके, सुने सु बरणे सोइ।
गंगाराम अब कहत जन, सुरपुर उत्सव होइ॥ २॥

छप्पय।

सँवत अठारह जान वर्ष पुनि शुभ पैंतीसं।
चैत्र शुक्ल सप्तमी मिले परमातम ईसं॥
बार सु शुकर वार ध्यान तद् ब्रह्म सु धार्‍यो।
आप सुछन्द शरीर पंच भूतादि निवार्‍यो॥
शरणाय सीव मेले सकल अनत सु जीव उधारिया।
नरलोक बाल परित्याग तनु परम सु धाम पधारिया॥ १॥

सोरठा।

कर धन तड़ित प्रकाश, पुनि आकाश समाइ है।
ऐसो होय उजास, सन्त मिले परब्रह्म में॥ १॥

छन्द पद्धरी।

ज्योति ज्योति मिल एक होइ। जल लवन पूतरी भिन न कोइ॥
हरीजन ब्रह्म माहिं। भवजलमें आवै बहुरि नाहिं॥ १॥

सोरठा।

नमो नमो हरिराम, परम धाम हरिमें मिले।
संग सदा इक स्याम, आदि मध्य अवसान में॥ १॥

पुनि वैकुंठी आदि तयारी । सामग्री करवाई सारी ॥
बीट्ठू सकल चरण जू चंपै । स्वामीको तन मन धन अर्पै ॥ १३ ॥
पुनि सो एम विलोके नैना । स्वामी एक कह्यो जू वैना ॥
समाचार जीवनको देना । यहँ आवै इतनाही कहना ॥ १४ ॥
एक कहंते उठिया दोई । ले आया निज जनको सोई ॥
ताकूं समंचार कछु कहियो । सो निजदास मान उर लहियो ॥ १५
जीवनदास समुझि यह सैनूं । बदरी पास चले धरि वैनूं ॥
स्वामी कह्यो वचन पुनि त्यूं ही । डूंवो लाध्यो ज्यूं को ज्यूं ही ॥ १६

दोहा ।

स्वामी मेले पहिलही डूंवो कीन्हो ताहिं ।
विखर्‌यो नाहिं जु असलमें, उन समाजके माहिं ॥ १ ॥
ऐसा परचा अनँत है, जाका अन्त न पार ।
गंगाराम इमि बीनवै, वरण्या मति अनुसार ॥ २ ॥

चौपाई ।

शिष डूंवाके हाथ लगायो । लारै समंचार तब आयो ॥
भगवत् ज्योंही कियो पयानो । देखत सबही लोक सयानो ॥ १ ॥
आसण मार विराजे ऐसे । बल बलवीर विराजे जैसे ॥
वैसेहि नैन मूंदि छिबलाई । सुरति ब्रह्म के माहिं समाई ॥ २ ॥
आप स्वच्छंद देह तजि मानू । दशवें द्वार मिलाये प्रानू ॥
सब ही मे अचरजयुत भाऊ । स्वामी की गति लखी न काऊ ॥ ३ ॥
कछु इक लखी जासु के दासू । कबहु न रही तासुके प्यासू ॥
महाप्रसाद नारायण पायो । तबही शब्द तिरकुटी आयो ॥ ४ ॥

दोहा ।

तत्क्षण लेत प्रसाद पुनि, साधु भये शिष सोय ।
गंगाराम दयालु गति, लखी न जावै कोय ॥ १ ॥

चौपाई ।

पुनि वैकुंठ घड्यो जो मोटो । माप्यो जबै बारणो छोटो ।
कोई कहै दूसरो कीजै । यो वैकुंठ नहीं मावीजै ॥ १ ॥
कोई कहै भीतकों तोड़ो । कोई कहै ढहावो मोड़ो ॥
यों संकल्प करै मनमाहीं । बात तोलमें आवै नाहीं ॥ २ ॥
जब बोल्यो बीदो सूथारू । है स्वामीकी गती अपारू ॥
अटकै नहीं साच सब मानो । याको मत अंदेशो आनो ॥ ३

मधुरे बैन श्वास शर घायल, अन्दर विरहनि तीरा।
आदि र अन्त तलब तत सुमिरण, मन वच कर्म सधीरा ॥ ७ ॥
अबके मिलौ परम परमानँद, जीवनप्राण अधारा।
निर्मल करण महा सुखसागर, विरहनि का भरतारा ॥ ८ ॥
ऊणत एक पिया भव भंजन, रंजन राम सनेही।
फीका लग्या सबै रस रसना, प्रेमा भई विदेही ॥ ९ ॥
लघु निद्रा आलस मिट अंगा, पंथी पंथ अघादै।
धाय वधाइ देऊँ मुख साँई, हरिवृत साधन साधै ॥ १० ॥
इकदिन प्रगट अजब अति अचरज, कला अनेक सवाई।
गोला दग्या शब्द गैतूला, श्वास उश्वासा माँई ॥ ११ ॥
ररर रोम थरर थरराटं, नाभिकमल सुलटाणा।
नगर उछाह नारि तरु सरजल, जन्तर तार बजाणा ॥ १२ ॥
चार हजार नाड़ि घरनाभी, ररर शब्द रमाणा।
नख शिख बिचै एक ध्वनि रमता, मनवा पवन मिलाणा ॥ १३ ॥
लेज़ु सधीर भया ध्वनि डंका, गगन नाद घरराणा।
आतम भया साध घर परचा, चरचा राम ठिकाणा ॥ १४ ॥
कै दिन रह्या नाभि घर माहीं, इकदिन करण पयाणा।
मन अरु पवन मिले लिव प्रेमा सुरति शब्द दरसाणा ॥ १५ ॥
भिन भिन भेद लह्या घर निश्चय, आतम तत्त्व प्रकाशा।
छेदृत इला सप्त पातालूँ उलटा पलट तमाशा ॥ १६ ॥
परा समीप शब्द गत रेला, रमिया सप्त पतालूं।
पूरब उलटि पछिम दिशि आया, चढ उरधा वंकनालूं ॥ १७ ॥
अमृतधार वंक झर झरणा, नाद विन्दु इक होई।
शब्द वेग पंखाँ विन उडणा, जाणेगा जन कोई ॥ १८ ॥
लंबा माग अचंभा भारी, श्वास वेग ततकालू।
प्रकट इकीसूं मणिया छेद्या, सुरति शब्द उजवालू ॥ १९ ॥
पंगा चढ्या मेरु की घाटी, सब वैराट उँवाया।
पाँचौं प्राण सुई के नाके, सूधे रस्ते लाया ॥ २० ॥
सब ले उड्या गगनके माहीं, अद्भुत प्रगट अनन्दा।
इन्द्र आदि अष्ट सुर जातक, नमस्कार कह वन्दा ॥ २१ ॥
गूंगा गायक अविरल बोल्या, राग अनेक उचारू।
घोर बाजा तहँ अनता, कहिये कौंन विचारू ॥ २२ ॥
[illegible] लगी झड़ वरषा, नीर विना सर भरिया।
धरणि गगन हुय सरजल, परम पन्थ जन परिया ॥ २३ ॥

कहाँ लगि करौं बखानि, पार न पाऊं आपको।
बुधि मेरी तुछ थानि, सो उरहीमें थकि रही ॥ २ ॥

सवैया।

स्वामी श्रीदयालु की परची पावै पढ़त परम विश्राम।
मन तन दोष ताप मिट जावै सुनतां होय सकल सिध काम॥
करि विचार धारै उर निश्चै सो जन मिलै ब्रह्मके धाम।
शिष जैराम के उर विराजके भाखी गुरु श्रीगंगाराम ॥ १ ॥

सोरठा।

अक्षर घट बध होय, लीज्यो सकल सुधारिकै।
सबै सन्तजन सोय, विनती दास जैरामकी ॥ १ ॥
समत उनीसो जान, सिति अषाढ़ सुदि पंचमी।
वार बृहस्पति मान, परची संपूरण भई ॥ २ ॥

इति श्री परची सम्पूर्णम्।

अथ श्रीदयालुदासजी महाराज कृत ग्रन्थ प्रगटबोध।

दोहा।

प्रगट बोध तारण तरण, रामा राम अनाद।
गुरु प्रसाद सद्गति मिले, प्रगट परायण साद ॥ १ ॥

चरण।

घट विच अघट प्रगट रट रमता, सत्त शब्द सुखदायक।
आगै अबै भया सँत जेता, सिद्ध शिरोमणि चायक ॥ १ ॥
लायक लगन कहै गुरु शिख रत, मति गति मूढ़ विचारं।
काष्ठ मथत प्रगट हुय अग्नी, यों आतम तत निरकारं ॥ २ ॥
सद्गुरु उक्ति युक्ति रस नेता, श्वासोच्छ्वास चलाया।
सुतर दोय रसण मिल आतम, भाव सभाव मिलाया ॥ ३ ॥
तब तात्काल प्रगट दरशाणा, एक अखंडित धारा।
अघ मध उत्तम भया प्रकाशा, कारज करण हमारा ॥ ४ ॥
विरह प्रजल उर नीर सु सोख्या, शब्द प्रगट दरशाना।
धम धमकार टेर सुन मुरली, फुरक फुरक फुरकाना ॥ ५ ॥
पीत वदन श्वासा जु सिरानी, नागरवेल शरीरा।
प्रेम नीर विन ऐसे सूकत, नख शिख विषै अधीरा ॥ ६ ॥

ब्रह्म अधार पुरुषतें प्रकृति, महततते हंकारा ।
तम रज सत्व उपज गुण तीनों, पंच तत्व विस्तारा ॥ ४१ ॥
प्रथम अकाश वायुते तेजं, जल मँझ अंड पकाया ।
ता मँझ विष्णु नाभि कँज ब्रह्मा, विधिते शंभु उपाया ॥ ४२ ॥
छाया प्रबल होत इमि सृष्टं, माया अपरम पारा ।
चारप्रकार फिरत सो प्रलयं, जग बंधाण बुहारा ॥ ४३ ॥
घटिका एक चार युग ब्रह्मा, कहत चौकड़ी एही ।
बहतर गयाँ शक्र हुय ऊमर, चवदे इन्द्र दिनेही ॥ ४४ ॥
चार हजार जात युग जिनमें, ब्रह्मा दिवस कहीजे ।
सुर शत साठ गयाँ हुय सम्वत, शत वर्ष आयु लहीजे ॥ ४५ ॥
क्रोड़ पैंतीस उपज अवतारा, आयु पद्मसुत माँई ।
अयुत सहस्र उपज आतमभू, घटिका विष्णु कहाई ॥ ४६ ॥
द्वादश लाख विष्णु हुय जावत, शंभु अर्धघटि जानो ।
पाँच हजार चले जब ईश्वर, माया रंग रँगानो ॥ ४७ ॥
नित्य नैमित्तिक लय आत्यन्तिक, छाया हद या ताँई ।
शक्ति शृंगार तहाँ नवयौवन, आप आप विलसाँई ॥ ४८ ॥
माया लाख अनेक अनेकं, ब्रह्म उन्मेष अगाधं ।
द्रक्रियक ध्यान मध्य यह रचना, नमो अगम गति आद्यं ॥ ४९ ॥
ओर न छोर अकथ पुन कथता, कह्या किणीसे जावे ।
आदि न अन्त मध्य नहिं जाकी, साक्षी सन्त बतावे ॥ ५० ॥
रूप न रेख अरंग अजोनी, चढ़िया तिके अडंकी ।
सागर लौन पूतली गति ता, बरणत कौन असंकी ॥ ५१ ॥
अपरम अतुल ब्रह्म पर परमं, इस जु गुप्त बतायो ।
नामी नहीं नाम कहाँ ठाहर, रमता राम रमायो ॥ ५२ ॥
गहरा अगम निगम तत निर्णय, पारख जनाँ सराई ।
सपक्ष सार भेद तत आतम, परमहँस दिखलाई ॥ ५३ ॥
दृष्टि पवन कहि चम नामी, यों जन शब्द प्रकासा ।
सूर उदोत परख मिट रजनी, सजनी कमल हुलासा ॥ ५४ ॥
चन्द्र उदय शीतलता परगट, तरुण उदय ज्यों मदनग ।
माया उदय रजोगुण परगट, राम उदय मिट कलमस ॥ ५५ ॥
भोजन परख कहै घट परगट, लक्ष्मी वदन दिखावे ।
रूप चित्त हेत वचननें भाषा, बुध तनु नाक लखावे ॥ ५६ ॥
कपट वदन कहै परगट, देश परख मुख भाषा ।
रचना पद्य पूर्व, भाव दिखावे शाखा ॥ ५७ ॥

दशमें द्वार चढ़्या अवधूता, जरा न झंपै कालू।
जोगी नमो अजोनी अणभंग, राम शब्द मतवालू ॥ २४ ॥
गंगा तीन मिली तट त्रिकुटी, तीर्थ सबै शिरताजू।
निर्मल न्हाय सिध्या तुख जन्मा, सरिया सब सिध काजू ॥ २५ ॥
बहुर्न्यों जगत जन्म नहिं धरणा, ऐसा करणा ज्ञानं।
अनुभव परा पाठ जन उचरत, आतम अद्भुत ज्ञानं ॥ २६ ॥
परगट शब्द सदा जन केरा, पहुँता साख सदाई।
आगे भये होयगा अबही, त्रिकुटी तख्त समाई ॥ २७ ॥
मुद्रा पंच सधे अवधूता, ज्ञान भँडार खुलाणा।
बिछुर्न्या जहाँ उलटिके आसन, सहजाँ आन मिलाणा ॥ २८ ॥
प्रगट श्रवण रसन चख नासा, गावाँ शब्द लुभाणा।
देखन रूप भये सब निर्मल, दश दरवान मिलाणा ॥ २९ ॥
किल्लादार चारों चित चोखै, पाँचों पंच हटाणा।
सहजाँ मिल्या शब्दके धोरै, उन्मनि ध्यान धराणा ॥ ३० ॥
परमानन्द महा सुख पूरण, ध्यान अखंडित धारं।
लीनमें लीन तारमें तारी, सुषमण सुक्ख अपारं ॥ ३१ ॥
निश्चल चित्त गरक गुण तीनों, त्रिगुणी मायात्यागी।
बेहद मिल्या तजी हद रचना, परम पुरुष वैरागी ॥ ३२ ॥
बेहद वास विदेही निर्भय, अपना कारज कीया।
बन्धन तोड़ भया निर्बन्धन, परम तत्त्व सुख लीया ॥ ३३ ॥
सहजाँ सुरति शब्द का मेला, सुन पर तख्त विराजै।
आसण अधर अनूप अवासा, सेजु अखंडित साजै ॥ ३४ ॥
जोत उद्योत अनेक प्रकाशा, सूर अनेक छिपाणा।
बारै कला मिली थिर सोलै, शीतल लहर समाणा ॥ ३५ ॥
सूघ भेद रह्या नहिं कोई, सुरता परख विचारी।
सुषमण सीप अटलपद मुक्ता, कण कारण गुण जारी ॥ ३६ ॥
सरवर शून्य हंस पर हंसा, ब्रह्म वृक्ष पर थिरता।
निज कण नाम चुगै नित मुक्ता, कदू काल नहिं खिरता ॥ ३७ ॥
अवर्ण कहा वर्ण में आवे, वृक्ष अनादि अगाधं।
भक्ति विचार दोय अँक चढ़णा, मुक्ति महाफल आदं ॥ ३८ ॥
मीठा कहीं तो चले न कोई, हरिया उन सम चोई।
दीठा जिके सर्व परिपूरण, सरिया कारज सोई ॥ ३९ ॥
छाया तासु रच्यो ब्रह्मंडा, सचराचर सब जीवं।
मंडप मंड चमंडी सोई, एक अखंडी सीवं ॥ ४० ॥

उन्मनि मुद्रा गुफा शिरोमणि, सुरति शब्द का मेला।
ध्यान समाधि अखंडित धारण, अष्ट जाम इकवेला ॥ ७५ ॥
गुणातीत नमो अणभंगी, पूरा छिप नहिं मांजन।
केवल भया लह्या पद आनंद, ऐसे कहिये सो जन ॥ ७६ ॥
त्यागी नाम सदा वैरागी, जिनकों वन्दन मेरी।
आशा तृष्णा अहं कल्पना, जीति लई गोचेरी ॥ ७७ ॥
ब्रह्म प्रकाश गिरा इन आशय, यही उदासा वाणी।
प्रपंच मान करै सब खंडन, पूरा गति सहनाणी ॥ ७८ ॥
उर वैराट रूप भगवानं, ता बिच सर्व समाहीं।
संभव गिरा अजोनी आनंद, राम बिना कछु नाहीं ॥ ७९ ॥
स्थावर जंगम सूक्ष्म स्थूला, सचराचर अविनासी।
जल स्थल धरणि पवन आकाशा, परगट तेज निवासी ॥ ८० ॥
ब्रह्मादि कीटपर्यन्ता, चींटी गज इकसारं।
सब भरपूर अन्तर्गतजामी, रमता राम हमारं ॥ ८१ ॥
घर घन देश कहा परदेशाँ, स्वर्ग मृत्यु पातालं।
राम इच्छा विचरत आनन्दी, जरा न झंपे कालं ॥ ८२ ॥
कुणसा भूत प्रेत छल भयता, कुण मारत कुण द्रोहा।
सब घट जीव आपसा थापे, निर्दावै गत सोहा ॥ ८३ ॥
जंत्रहु तंत्र मूठ नहिं माया, नवग्रह तिथि नहिं वारा।
नक्षत्र योग लग्नपुल वेला, कुण महुरत अनुसारा ॥ ८४ ॥
तीनों ताप जलण नहिं पावे, आधि व्याधितें न्यारा।
वन्दन नमो निकन्दन साधू, मोह्या प्रीतम प्यारा ॥ ८५ ॥
संभव भया लह्या पद पेसा, अब खुदवद सिधकारण।
मैं हीं आदि अंत मध जैसा, स्थिर आकाश अपारण ॥ ८६ ॥
प्रथम प्रागभाव परमातम, अन्योअन्य स जीवा।
प्रकट करण इच्छा भइ मेरी, पुरुष प्रकृतिकी सीवा ॥ ८७ ॥
सब विध्वंस काल गति करता, प्रगट्या जेथ मिलाणा।
तत मिल तत्व परम परमातम, एकाएक ठिकाणा ॥ ८८ ॥
सो आत्यंतिकभाव कहीजै, अक्षय ब्रह्म निकांरा।
ता मिलिवै मारग है अक्षर, सद्गुरु शब्द विचारा ॥ ८९ ॥
अव्यय धाम राम जन रमता, हम तारण हम तरणं।
पोषण:भरण सर्वके स्हायक, कारण अकरण करणं ॥ ९० ॥
अनुभव आप जु खुदवद स्वामी, इन परकार कहीजे।
साधु अगाध नमो गति समरथ, ता चरणाँ मन रहिजै ॥ ९१ ॥

सज्जन परख विप्र विच वेली, कुलवन्ती कुल लाजा ।
धर्माध्यक्ष दुभख में पूणा, परमारथ हित जाजा ॥ ५८ ॥
सूरा खाग सती जल देही, आसत सिद्धि सदाई ।
परख सभाव दिना केइ रहता, गरथा रीस न काई ॥ ५९ ॥
वनिता समय शील की पारख, परगट साख शिरोमन ।
अपनी कला दिखावत आपे, जानत सबै मनोमन ॥ ६० ॥
साद अनादि मिल्याँ का निश्चय, परचै शब्द सतोलौं ।
निर्गुणसार वज्र अणअक्षर, अपरमपार अतोलौं ॥ ६१ ॥
बीजक सिद्ध मोक्षको मारग, परगट जनाँ सदाई ।
नमस्कार ऐसा ततवेता, भूल न परत कदाई ॥ ६२ ॥
जूनो द्रव्य देख अंक पावत, पिता आथ खत साखं ।
गुरु प्रसाद साध घट निर्णय, सत्तशब्द मुख भाखं ॥ ६३ ॥
चार प्रकार प्रगट धुर बानी, ताका भेद बताऊँ ।
अर्थ माहिं सबको परिपूरण, गरथाँ पार न पाऊँ ॥ ६४ ॥
परगट सदा साध घरह्वासिल, दोय अंक सत चिद्दा ।
प्रथमहि गुरू पढ़ाया हमको, श्वास श्वास पर सिद्धा ॥ ६५ ॥
जिनका दास पास नित चरणाँ, मन वच सुरति हमारी ।
अनुभव वाच साच उर आतम, परमपुरुषसे यारी ॥ ६६ ॥
खानाजाद गुलाम गुलामी, नितप्रति एकण धारा ।
भूँडा भला रावरा चाकर, घर जाया प्रतिपारा ॥ ६७ ॥
करुणा भाव वीनती दासा, आदि अन्त इक अंगा ।
समता लियां सर्व सुखदायक, निश्चल चित मन चंगा ॥ ६८ ॥
करता राम नहीं मैं करता, सदा दीनता माँई ।
अकरणकरण उधारण समरथ, चरण शरण जन साँई ॥ ६९ ॥
इन आशय वायक ब्रह्मवाणी, दास शिरोमणि सारं ।
बोध अनेक प्रगट चष आतम, अरस परस दीदारं ॥ ७० ॥
प्रथम जगत ते भयो उदासा, माया भर्म अनेका ।
स्वप्न जंजाल तजौं कुलकर्मा, भजौं शुद्ध मन एका ॥ ७१ ॥
प्रथम एकर मन गुरुगम धारण, सत्संगति घट माँई ।
ज्ञान खड्ग पासी मोह वादृत, निर्भय खाग वजाई ॥ ७२ ॥
सदा निशंक रहे निर्दापे, बन्धन ते निरवाला ।
केवल मंत्र जपै उर आनंद, राम शब्द मतवाला ॥ ७३ ॥
अन्तःकरण वासना त्यागी, शान्ती बन मँझ रहता ।
. पत्ती क्रोध कदे नहिं जावै, सत भिक्षा सत लहता ॥ ७४ ॥

पाया तिकाँ वहाँ "लिवें" लागी, परमपद गलताना ।
पाँचों तीन मध्य नहिं डोलै, यह "पतिव्रृत" का बाना ॥ १०९ ॥
चेत 'चेतावनि" चितके माहीं, धरिया सब्र जँजाला ।
"मैनका" भर्म सकल अघ मेटण, "मनमृतक" जु गुण गाला॥११०॥
मन वृति त्याग वासना त्यागी, तन पर झूठ बँधाणा ।
"सूक्ष्ममारग" सन्तका चलना, दास सपूत मँडाणा ॥ १११ ॥
"लम्बामार्ग" विकट गति चलना, विचमें विघ्न अनेका ।
"माँया" तीन प्रकार विलूधा, डाकण भखण विसेका ॥ ११२ ॥
देखत तजै छीन सब खावै, "मान" सवल घट माँई ।
"चाणंकअंग" एक विन फोकट, भूल परे सुन जाँई ॥ ११३ ॥
कहिहाँ कहा सन्त सब साक्षी, "कामीनर" जु ठगाणा ।
तिरिया रूप वाघणी जानो, मदनाँ घाव वचाणा ॥ ११४ ॥
"सहेज(हि)सुक्ख" रामके शरणे, "साँच" वाच नहिं डरणा ।
कंचन हाथ काच करि काने, साचा पार उतरणा ॥ ११५ ॥
भ्रम जंजाल जगत उलझाणो, हाथाँ मंड पुजावे ।
"भ्रमविध्वंसनअंग" जनेश्वर, एक अखंडी ध्यावै ॥ ११६ ॥
के तन "भेख" धारि भूलाणा, भला "कुसंग" न होई ।
गंगा नीर सिन्धु मध मेला, छोत मिटे नहिं कोई ॥ ११७ ॥
देख "सुसंग" इम दरशाणा, नींव चन्दन के संगा ।
भीतर भिद्या विना सब झूठा, वाँश गंठ नहिं रंगा ॥ ११८ ॥
ऐसे रहा "असाधु" अचेतन, वायस गिरा न कीरं ।
उद्र कहा सूर सुध पावत, शठ अज्ञान अधीरं ॥ ११९ ॥
"साधु" सदा सबका सुखदायक, मन वच क्रम इकधारा ।
हंसा चुगे नाम निजमोती, निर्पख रह्व संसारा ॥ १२० ॥
"देखादेखि" करे नहिं कयह, कुल मारग को त्यागे ।
फीक्षाँ नाल जान जग उग्र जु जन जग पथे न लागे ॥ १२१ ॥
जग जन अंग एक नहिं कयह, अनक्ष पक्षि गति जैसी ।
पाला देख देख जल मोती, विनस शिर कुण रैसी ॥ १२२ ॥
"साधूंसाक्षीभूत" सदाई, गुणा अतीत असंडा ।
सागर सीप रहे विन भाराय, मुक्ता उभ्यै समंडा ॥ १२३ ॥
ता रचना वर्णन कहा गाऊं, "साधुं (कि) महिमा" भारी ।
रामहि रतन और नहिं सर भर, इन्द्र जु आदि भिखारी ॥ १२४ ॥
मध सत गहाँ विना सब खप्पा, "मध्यंअंग" जन रत्ता ।
यह है "ज्ञानविचार" सनातन, गावै सन्त अनन्ता ॥ १२५ ॥

के जन दास उदास संभवी, के सुखदह की धारा।
प्रगट बोध सबको मारग, राम शब्द ततसारा ॥ ९२ ॥
चार खानि प्रगटे जिव सबही, ताकी बानी चारों।
चार पदारथ सिध परमारथ, चत गत मुक्ति मिलारों ॥ ९३ ॥
चार अवस्था आतम उपजत, ज्ञान दृष्टि परकासी।
शुभ जु क्रिया जन सेव सदाई, एकाएक उपासी ॥ ९४ ॥
द्वितिये उपज विरह उर मेले, तृतिये त्रिभुवन मोहा।
चतुर्थ अरस परस मिल खेलूं, सुरता नैन संजोया ॥ ९५ ॥
तत्पर सुक्ख छक्या तद बोल्या, अनुभव शब्द रसालूँ।
ज्ञान प्रकाश अंग गलताना, एकसे एक विशालूँ ॥ ९६ ॥
जीव अंकुर भक्त उर अवनी, उदय भया तत्कालूँ।
दुइ दल खुले अक्षर दुइ आदू, बरप्या प्रेम विचालूँ ॥ ९७ ॥
सद्गुरु ज्ञान घटा घन बरषत, भक्ति वृक्ष गरजाणा।
तत रत पेड मूल अविनाशी, बाणी डाल बँधाणा ॥ ९८ ॥
ता मध अंग प्रगट उपशाखा, बडनामी विस्तारा।
उपमेय नहीं उपमा कैसी, कहिहौं कछु अनुसारा ॥ ९९ ॥
"नमेस्कार" "गुरुदेव" सदाई, जिव सद्गत्ति "गुरुपारख"।
"गुरुवन्दन" "गुरुधर्म" सनातन, चरण शरण भव तारक॥१००॥
"सुमिरणअंग" "सार (इक) सुमिरण", सुमरण चार प्रकारा।
"अर्फल" एक अविगत को चीन्हे, यह "उपदेश" सचारा॥१०१॥
ताहि प्रसाद "विरेह" उर उपजत, पाऊँ प्रीतम प्यारा।
अटपट बैन इवास शर घायल, दरशण दो करतारा ॥ १०२ ॥
"ज्ञानेसंजोगविरह" नव जोवन, अग्नी सिन्धु जलाया।
मच्छी उडी अकाशां माहीं, आतम "परेचा" पाया ॥ १०३ ॥
"परचेसुर" यारि तब लागी, यह साधारण कीजे।
सोज समेत ज्ञान असवारी, मिल अपना सुख लीजे ॥ १०४ ॥
अम्मर पीव परचा "पिवेपरचे", परमानन्द सँगाती।
यह है "रेस" सबै ते मीठा, पीयाँ ताप न ताती ॥ १०५ ॥
ताको "लोभ" सदाई कीजे, तत कमँडलु भर नीरं।
पीपी अधप तलब के धोरे, श्वासोच्छ्वास अधीरं ॥ १०६ ॥
हरि बिन सर्व भया "हैरोना", पढि पढि इकत बौताना।
आन उपाय करी सो भूला, वे सब जान अजाना ॥ १०७ ॥
"हैरतेअंग" बूँद बिच गागर, सागर बूँद समावे।
"जरणा" धार पार पुरुषोत्तम, भाव पदारथ पावे ॥ १०८ ॥

"भैनिवेय" को कहे न माने, जाँवहीं सन्त हमारा।
सो तो मिलिया मलमूत्रमलपति, भूला जिंह गँवारा ॥ १४३ ॥
ऊँचा नीच इसी विधि कहिये, अघ अंग नहिं मेरा।
बिन हरिभक्ति नीचसे नीचा, श्रेष्ठ भक्ति करवैया ॥ १४४ ॥
"निन्दा" नहीं साच कह साधू, आतम अर्थ विचारो।
हितकी बात सकल सुखदायक, अवगुण मिटयाँ उधारो ॥ १
गुण गुसार निंदै नहिं साधू, दार गुसार गुमावे।
"दयानिर्वैरता" आप माहीं, सब की पीर मिटावे ॥ १४६ ॥
"सुन्दर" सार करो अविनाशी, तुम बिन कौन छुडावे।
एक अधार अजोनी आनँद, सायद सन्त बतावे ॥ १४७ ॥
"उपजैनअंग" हुवै यह उपजत, माग विदेश पयाणा।
षोड शृंगार तज्यां सुख पावै, आतम तत्त्व ठिकाणा ॥ १४८ ॥
नौका नाम तिरो भवसागर, उपजन अंग सदाई।
"कस्तूर्यांमृग" ज्यों मत भूलो, भ्रमत मुआ दुखदाई ॥ १४९
जावे नहीं "निर्गुण" शठ दुर्मति, पर्वत सुधा मिलाणा।
कोटि प्रकार कहो सुख आतम, मनमुख अध बँधाणा ॥ १५०
हरि परताप जिकाँ गति ऐसी, सदा "दीनता" माँई।
मैं सो नीच नीचसे नीचा, पतित उधारण साँई ॥ १५१ ॥
यह "तनमौलाअंग" धारणा, किनकों रोय बताऊँ।
हिन्दू तुरक कहा षट्दर्शण, पखके दिशा न जाऊँ ॥ १५२ ॥
निर्पख एक निजानँद आनँद, हरि गलतान दिवाना।
"मौला" श्वास उश्वास सुमरणा, अजपा जाप समाना ॥ १५३
"कँडवीवेलि" जान जग ताँता, तृष्णा आश पसारा।
जोगी जती सिद्ध कहा तपसी, फल तरबूज विचारा ॥ १५४ ॥
उदय अंकूर आदि सम कड़वा, खिर अरु अवनि मिलाणा।
लकड़ी लगी जली जद वेली, मूल गयाँ फल खाणा ॥ १५५ ॥
"वेँलि" अनादि साध घर माहीं, "वेहद" जाय समाणा।
तीन प्रकार तजी हद रचना, अपरम परम कहाणा ॥ १५६ ॥
सुमरण मेधा विधि अस्थानं, आतम शब्द पयाणा।
"सुरतिविचारअंग" सब निर्णय, केवल सुरति समाणा ॥ १५७ ॥
"ब्रह्मसमाधि" साध पद पूरण, नव तत गले अखंडा।
"मायाब्रह्म" (भयो जद) निर्णय," छाया "वृक्ष" अमंडा ॥ १५८ ॥
अक्षर ब्रह्म क्षर सोमाया, गुरु परसाद प्रकासी।
ररंकार "निर्गुण (निजनामी), सगुण" शु ममो थकासी ॥ १५९ ॥

"सारग्राही" हंस जनेश्वर, पय पानी निरवाला ।
माया ब्रह्म करै उर निर्णय, ततदर्शी मतवाला ॥ १२६ ॥
"पिउपहिचान" लिया घट भीतर, बाहिर कौन मनावै ।
जोत उद्योत सर्वज्ञ अगोचर, पूरण ब्रह्म धियावै ॥ १२७ ॥
यह "विश्वास" पूर हरि आशा, मन वच कर्म सदाई ।
पोषण भरण सर्व प्रतिपालन, भूलै नाहिं कदाई ॥ १२८ ॥
चिन्ता मेटि धरो उर "धीरज" हरि है पार उतारण ।
"विरक्तअंग" सारकी चोटाँ, नटणी वरत विचारण ॥ १२९ ॥
गर्व निवार अगमगति अविगत, "समर्थ" करै स होई ।
तृण ते वज्र वज्र ते तृण सम, नाच नचावै सोई ॥ १३० ॥
हर्ष रु शोक मिथ्या भय संशय, "शून्यसरोवर" न्हाया ।
जन्म रु मर्ण गया किण दिशिनें, अक्षर मँझ समाया ॥ १३१ ॥
"प्रेम" प्रवाह भया गलताना, "कुशब्द" लखै न कोई ।
अजरा जरै कौन है शत्रू, मेरा मंझ स कोई ॥ १३२ ॥
"शब्द" स तीर भया मन घायल, जानै वाहन हारा ।
ताकी वाज गगन मग निकसी, अनहद शब्द अपारा ॥ १३३ ॥
"कर्म" अनेक मिथ्या जन केरा, पाप पुण्य सब जाना ।
"कौल" जाल ते भया निदावै, ब्रह्म समँद सुख माना ॥ १३४ ॥
"मच्छी" नीर लह्या चित निर्मल, अघट अमर सुख पाया ।
ऐसी प्रीति बहुरि नहिं बिछुरत, कीर न जाल बधाया ॥ १३५ ॥
सही "संजीवन" यही ज औषधि, "चितकपटी" कहा जानै ।
मनतैं मोट तनाँ पर उज्वल, विद्रुम घोर समानै ॥ १३६ ॥
परगट जान असल यह कमसल, मन वच कर्म बुहारौ ।
सत्य असत्य कहो कद एकै, कुन्दन तुरुस निकारौ ॥ १३७ ॥
"गुरुशिषअंग" मिलै जद महरम, ओतप्रोत दरसाणा ।
बूझै ब्रह्म परम करदेवै, आतम तत्त्व ठिकाणा ॥ १३८ ॥
योही "हेतप्रीत" सत जानो, दूरापन उरमाहीं ।
गुडनी डोर सुरति के धोरै, मेरा मुझ्झ मिलाहीं ॥ १३९ ॥
"सूरा" होय खाग सत सुमरण, मन दुर घात हटाणा ।
"जीवतमृतक" हुया सोपाया, अधरा अमर मिलाणा ॥ १४० ॥
"मांसअहारी" सोकह जानै, गोजर श्वान भुलाना ।
हीरो जन्म "अपारख" खोयो, कोडी हाथ विकाना ॥ १४१ ॥
"पारख" परी जिकाँ शुधि पाई, द्रव्य हमारा येही ।
अन्तर परख दीके इकधारा, हीर अमोलक लेही ॥ १४२ ॥

(ग्रन्थ)

"ज्ञानविवेक ग्रन्थ" जब आयो, "गुरुमहिमा" परताप दिखायो।
"भक्तमाल" चेतो "चेतावनि", "जमफांसगती" सन्त करावनि ॥ १ ॥
"मर्न (से) राइ" करै "जगंजन" धिन, "रणजीत" सूरा सन्त भरमन।
"अमरबोध ग्रन्थ" भय पारा, "मूलपुराण" सोझिया सारा ॥ २ ॥
"उभयज्ञान" दुइ अक्षर पाया, "आदिबोध" तत अर्थ समाया।
दत "आकाशबोध" सर्वंगी, "नाममाल" रतनाम अभंगी ॥ ३ ॥
"आतमसार" लिया तत ताई, "ब्रह्मजिज्ञास" भया घट माँई।
"षट्दर्शण" का निर्णय भया, "पदपचीसग्रन्थ" ओर थया ॥ ४ ॥
"बालबोध" जन्मत धुर गायो, "पंचमात्रा" स्वरूप दिखायो।
"सोलहकला" प्रकट घट माहीं "आत्माबेलि" सजीवन ताहीं ॥ ५ ॥
"निरालंब" हरिजन पद पूरा, "नीसाणी" पदब्रह्म निज नूरा।
निर्णय नाम ग्रन्थ अख्याया, साखी अंग सर्व दरसाया ॥ ६ ॥
कवित रेखता हरिजस जेता, कुंडलिया सवैया हरि हेता।
ज्ञानसरोवर झूले जबही, चन्द्रायणा सोरठा सबही ॥ ७ ॥
दास उदास रु संभव सुखवह, अनुभव हरिजन चतविध सिधवह।

(श्रीराम-परची विश्राम १७)

इति श्रीरामस्नेहधर्मप्रकाश सम्पूर्णम् ।

श्रीरस्तु कल्याणमस्तु ।

अथ श्री १०८ श्रीकबीर साहबके अनुभव शब्द ।

कबीर प्रणमत गुरु गोविंद कूं, अब उन पंथी सोय।
पहल भये परणाम तिहिं, नमो सु आगे होय ॥ १ ॥
कबीर सब कोउ डरपे कालसूं, ब्रह्मा विष्णु महेश।
काल डरे करतार सों, जय जय जय आदेश ॥ २ ॥

रेखता-

उतरे थान विश्राम या जीवको और विश्राम नहिं कोइ भाई।
स्वर्ग अरु मृत्यु पाताल छूटे नहीं जहां जावे तहाँ काल धाई।
एक निज स्वर्ग ऊपरे थानके आसरे नाहिं छूटे।
आसरे काल जम को नहीं थानके आसरे काल कूटे ॥
यह तप्प तीर्थ व्रत योगत्त जोग अरु जग सब देख ठाई।
विश्राम बिन पार पहुँचे नहीं वेद अरु पुराण सब देख आई।

१ स्वर्ग, एकके थान ।

"ब्रह्मपर्केता" एक अभंगी, ता पर अंग न कोई।
सबके परे प्रगट सब माहीं, रमता राम स कोई ॥ १६० ॥
भक्ति विलास प्रगट जन माहीं, अपरम अनुभव धारा।
देशकाल उपजत परसंगा, अर्थ शिरोमणि सारा ॥ १६१ ॥
वाणी चार अंग चौरासी, उपमेय अंग अपारा।
परगट साख शिरोमणि साखी, सद्गुरु शब्द उधारा ॥ १६२ ॥
शिव अवधूत नमो योगीश्वर, आसण लख चौरासी।
एता छन्दवर्ण शिव परगट, आतम एक उपासी ॥ १६३ ॥
लख मध एक भया चौरासी, सेनापति परवानू।
लख चौरासी जीव उपाया, ब्रह्मा सृष्टि विधानू ॥ १६४ ॥
पोषण भरण सबका पालक, विष्णुदेव सब नायक।
भक्त उपास दास का रक्षक, धर अवतार सहायक ॥ १६५ ॥
केवल मंत्र सबको बीजक, परगट साख बतावै।
तारण तरण परश परमानँद, अनुभव शब्द दिखावै ॥ १६६ ॥
परगट अंग जनाँ की वाणी, सब तत सार पिछान्या।
इसविधि ब्रह्म भया पारायण, महा परम सुख मान्या ॥ १६७ ॥
अक्षर भया लहा घर आदू, सूत्र रु तत्त्व जलाया।
घण सो काल खाय नहिं सकिहै, वज्र अडंक सवाया ॥ १६८ ॥
परगट शब्द कृपा गुरु कारण, यह फमज्या जन केरी।
इसविधि बीजक द्रव्य दिखाया, कहा-कहै मति मेरी ॥ १६९ ॥
अवर्ण कहा वर्ण में आवै, शब्दाँ शब्द दिखाया।
रामदास सद्गुरु के शरणै, उर उद्योत सवाया ॥ १७० ॥

दोहा।

अघ तिमिर भ्रम दृष्टिता, दूर करी गुरुदेव।
जन रामा आतम उदय, अनुभव पाया भेव ॥ २ ॥
प्रगटबोध परकासिया, वाणी अंग विचार।
देशकाल संयुक्ति सब, खंडण आन विकार ॥ ३ ॥
गुरु सन्मुख शिख आतमा, प्रीति जु जिनके होय।
रामशब्द धारण करे, भूल परे नहिं कोय ॥ ४ ॥
जन अगाध चन्दन सदा, प्रगट दिखायो मोहि।
राम साधु छोडूँ नहीं, जो कल उतथल होहि ॥ ५ ॥

इति प्रगटबोध।

1 यह ग्रंथ अवश्य विचारणीय है।

भजन के वास्ते संत जन कहत है नाम रसलीन यह नाम केरा।
नाम अरु ठाम कुल गाम नहिं ठेहिरि अगम अरु निगम गुरु गहत घेर
इन्द्रियां द्वार मन यार पहुंचे नहीं सकल परकास करि रहे न्यारा।
रूप अरु रेख वपु भेस नहिं पाइये कहै कबीर सोइ पीर प्यारा ॥ १०
एक बिन दूसरा दृष्टि आवै नहीं एक बिन दूसरा कौन दूजा।
एक बिन दूसरा सेव कहो कौन की एक बिन दूसरा कौन पूजा ॥
पांच अरु तीन का सर्व मंडाण है एक प्रकाश ब्रह्मंड कीया।
कहै कबीर अब द्वैत दीसै नहीं एक ही इष्ट गुरु देव दीया ॥ ११ ॥
अलख मर्य्याद अर्याद समर्थ धर्णी नाम निर्वाण ते गाह नाहीं।
शेष शिव विरंचि ते पार पावै नहीं उदय अरु अस्त नहिं धूप छाहीं॥
रूप नहिं रेख नहिं वरण वासा नहीं आप अलेख सब ठौर पूरा।
कहै कबीर कहुं लिप्त होवै नहीं लहै कोई सतगुरु ज्ञान पूरा ॥ १२ ॥
कथत है ज्ञान अरु ध्यान मुनि धरत है चलत विचार करि पंथ माहीं
सास उसास की गूदड़ी सीवतां सुरति की सुई तहां अनंत जाहीं ॥
रहै निरधार कोइ द्वंद में ना पड़े मच अरु पवन का करत मेला।
कहै कबीर फिर फूट चाले नहीं सहज दरियाव में सहज पेला ॥ १३
कर्म अरु भर्म संसार सब करत है पीव की परख कोइ संत जानै।
सुरति अरु निरत मन पवन कूं उलटिके गंग अरु यमुनके घाट आनै
पांच कूं नाथि के साथ सोई लिया अधर दरियाव का सुक्ख मानै।
कहै कबीर कोइ संत निर्भय रहै जन्म अरु मरण का भर्म मानै ॥ १४।
चक्र के बीच में कमल अति फूलिया तासका सुक्ख कोइ संत जानै
कुल्फ नव द्वार अरु पवन कूं रोकणा भृकुटी मध्य मन भँवर ठानै ॥
सिंधु की घोर चहुं ओर तहाँ देत है अधर दरियाव का सुक्ख मानै।
कहै कबीर यूं सुख सिंधु झूल है जन्म अरु मरण का भर्म भानै ॥ १५ ॥
गंग अरु जमुन के घाट कूं खोजले भँवर गुंजार जहाँ जुग्ग भाई।
सरस्वती नीर तहाँ देख निर्मल बहै जासका जल पियाँ पाप जाई ॥
पांच की प्यास तहाँ देख पूरी हुई तीन की ताप तहाँ लगे नाहीं।
कहै कबीर तहाँ अगम का खेल है गैब का चानणा देख माहीं ॥ १६ ॥
बोलरे बोल अब चुप्प कूं है रहा बोल मन सूवटा ब्रह्म बाणी।
पांच कूं पलट करि तीन कूं जीत ले महल चौथैतणी खबर जाणी ॥
गगन गरजै तहाँ नीर नीझर झरै पाक पीवै कोई संतपूरा।
कहै कबीर मसतान माता रहै बिना मृदंग तहां बजत तूरा ॥ १७ ॥
अगम अस्थान गुरु ज्ञान बिन ना लहै लहै कोइ संत गुरु ज्ञान पूरा।
द्वादश पलटि करि षोड़शा प्रगटे गगन गरजै तहाँ बजत तूरा ॥

नाम परताप तिहुँ लोक छाना नहीं भौसिंधु के तिरन कूं चन्या मेरा।
संत अनेक तरि पार पैले गये कहै कबीर निज नाम तेरा ॥ १ ॥
वारही वार रटि राम रस पीवणा भटकि मत भर्म में भूलि जाई।
जहाँ जावे तहाँ सूत सुलझै नहीं उलटि उलझै तहाँ जाय भाई ॥
सुलटि अवजूद में पलटि मन पवन कूं परम सुखधाम जहां प्राण लावै।
कहै कबीर यहाँ अजब विश्राम है रोमही रोम रस राम पावै ॥ २ ॥
मन वारही वार ररंकार रसना रटो सार सुखसीर निज नाम नेरा।
पाप का नास अरु ताप लागै नहीं चतुर अस्सी तणा मिटै फेरा ॥
नाम परताप तिहुँ लोक छाना नहीं शेष शिव विरंचि सब साधु गावै।
कहै कबीर गुरु दई है औषधी पीवै सो पार भवसिंधु पावै ॥ ३ ॥
देह गुण त्यागि अरु लागि हरिनामसूं जागिरे जागि अब कहा सोवै।
ज्ञानसमसेर ले मारि मन मीर कूं पांच कूं पकड़ि ज्यूं पीर होवै ॥
गगन का तखुत परि जुगति कर खेलणा रोक नवद्वार ज्यूं कमल फूलै।
कहै कबीर तहाँ काल लागै नहीं सहज दरियाव में प्राण झूलै ॥ ४ ॥
नाम ही ज्ञान अरु ध्यान पर नामही नामही भक्ति वैराग थाई।
नाम ही प्रेम निज नेम सो नाम ही नाम ही जोगकी जुगति भाई ॥
शील अरु साँच संतोष पर नाम ही नाम ही जप्प अरु तप्प कीया।
कहै कबीर यह कृत्य बाकी नहीं रोमही रोम निज नाम पीया ॥ ५ ॥
फेर रे फेर मन पवन कूं घेर रे सुरत की डोर सूं जेर भाई।
अधः अरु ऊर्ध्व के बीच में रोकणा नाम कूं छांडि नहीं अंत जाई ॥
निकट विश्राम निजधाम नेड़ा सही गुरां के ज्ञान तें होय पारा।
कहै कबीर यों नीर मुकलावणा चूहड़ी चाहका करो चारा ॥ ६ ॥
पवन के रोकणे मन्न भी बोलता मन्न के रोकणे तन्न बोलै।
तन्न के रोकणे तेज में खेलिया तेज में खेल के पाट खोलै ॥
देव कृपालु तब होय कृपालुता प्रेम प्रकासका सुफल आवै।
दास कबीर तहाँ अलख अपता रहो विना कर तांतियाँ नाद वावै ॥७॥
जोगकी जुक्ति विन मुक्ति होवै नहीं जुक्ति विन कर्मही नाहिं छीजै।
जोगकी जुक्ति विन साधु पद ना लहै जोगकी जुक्ति विन कौन धीजै ॥
सुरति मन पवन कूं फेर उलटा चलो शील अरु सांच संतोष धारो।
कहै कबीर यों राम रसना जपो काम अरु क्रोध मद लोभ मारो ॥ ८ ॥
राम कह राम कह राम कह लीजियो राम विन काम नहिं और कीजै।
सुरति मन पवन कूं फेर उलटा चलो रोम ही रोम रस राम पीजै ॥
आदि ही अंत मध्य एक ही आसरा एक विन दूसरा आन नाँई।
दास कबीर यूं कहत पुकारिके एक तूं एक तूं एक साँई ॥ ९ ॥

काम बलवान सब जीव अंधा किया पड़्या मन स्वारथी संग झूलै
कहै कबीर कोइ संत जन ऊबरे नाम निर्वाण नहि पलक भूलै ॥ २
तरक संसार से फरक फारक सदा गरक गुरु ज्ञान में सदा जोगी
अधः अरु ऊर्ध्व के बीच आसन किया बंक प्याला पिवै रस्स भोग
अधर दरियाव तहाँ जाय डोरी लगी महल बारीक में मौज पाया
कहै कबीर यूं संत निरभै भया परम सुख धाम जहां प्राण लाया ॥
देव निर्वाण तहाँ बाण लागै नही सकल कालां सिरै काल देवा।
विष्णु शिव शेष अज पार पावै नही चंद अरु सूर दोउं करत सेवा
तेज क्षिति पवन जल रहत आशा महीं निगम ह्रू कहत नहिं पार अ
कहत अग्गाध सब साध सेवै सदा दास कबीर तहाँ शीश न्यावै ॥
सच्चा साँइयाँ एक तूं अवर दूजा नही दृष्टि दीसै जिकी सर्व माया।
गुणां के कृत्य परपंच सब विनसही दीसता नही कोइ रहण पाया ॥
घट्ट अरु मठ्ठ महदादि थिर नाँ रहै रहैगा आदि सोई अंत माँई।
कहै कबीर मैं तासकी बंदगी एक भरपूर सर्वज्ञ साँई ॥ २६ ॥
पांव अरु पलक की आरती कौनसी रैण दिन आरती संत गावै।
घुरत नीसाण जहाँ गैब की झालराँ गैब की घंट का नाद आवै ॥
तहाँ नींव विन देहरा नाम निर्वाण है गगनका तख्त पर जुक्ति सार
कहै कबीर तहाँ रैणदिन आरती पातियाँ पाँच पूजा उतारी ॥ २७ ॥
साँइयां आप की सेव तो आप ही जान हो आप का भेव कहो कौन पा
आपनी आपनी बुद्धि अनुमान है वचन विलास करि लहर लावै ॥
इसो मोहि आत है देख वा उक्ति को निगमहू कहत नहिं पार पावै
कहै कबीर इथ सैन गूंगातणी गूंग होवै सोई सैन पावै ॥ २८ ॥
रजा तुम साँइयाँ करो सो होयगी आपकी रजा कहो कौन मेटै।
बूडता जीव तारै तुझे पलक में केई असंख्य जुग नाहिं भेटै ॥
उलटका पलट अरु पलटका उलट है आपका खेल कहो कौन पावै
पलक में भांज करि फेरि रचना करै कहै कबीर मैं रहा हावै ॥ २९ ॥
खेल अवधूत का महा अद्भुत है दूत परपंच का लेस नाहीं।
गुणमयी कृत्य सब कालकी दाढमें शेष शिव विरंचि अरु विष्णु ताहीं
रहै निर्धार आधार थिर नां रहै विसर संसार आधार माहीं।
कहै कबीर यह खेल निश्चय किया जन्म अरु मरण का भर्म जाहीं ॥३०
देख अवधूत का ज्ञान का घेसला कालके जाल कूं दूरि तोड़ै।
गुणमई कृत्य कूं फाटि पायमाल करि पांच पचीस कूं पलटि मोड़ै ॥
राग अरु दोषकी भींत कूं दाहि करि भरम के कोटकों फेर फोड़ै।
कहै कबीर यूं प्रेम परकास करि सुरत अरु निरत का तार जोड़ै ॥३१॥

इला अरु पिंगला सुषुम्णा सोधि करि अधः अरु ऊर्ध्व बिच ध्यान लावै।
कहै कबीर सोई संत निरभै रहै कालकी चोट फिर नाहिं खावै ॥ १८ ॥
छक्या अवधूत मस्तान माता रहै ज्ञान वैराग सूं छक्या पूरा।
सास उसास का पेम प्याला पिवै गगन गरजै तहां बजै तूरा ॥
पूठ संसार सूं राम राता रहै जतन जरणा लियां जुगति खेलै।
कहै कबीर यूं पीर सूं सर परू सहज सुखधाम में प्राण मेलै ॥ १९ ॥
संत की चाल संसार सूं भिन्न है सकल संसार में चहल बाजी।
हिंदू मुसलमान दोउं दीन सरहद्द बने वेद कतेब प्रपंच साजी ॥
हिंदू को नेम आचार पूजा घनी व्रत एकादशी रहै राजी।
बाकरा मारि मुख मांस भक्षन करै भक्ति नाहिं होत या दगाबाजी ॥
सर्व वध जीव अपराध के मूल है कठिन या चूक तुम चेत बाजी।
सर्व धर्म ऊपरे कृष्ण गीता कथी कृष्ण का कहा तू मान बाजी ॥
कहा गीता पढ़ी दृष्टि सूझी नहीं यों थकिमुवा नर मूढ़ पाजी।
मुहम्मद या करीम कृष्ण कहाँ क्या फरक बहस कर सुनो कहा बीन बाजी
मुसलमान कलमा पढ़ै तीस रोजा करै बांग निवाज धुन करत गाढ़ी।
बकरी मुरगी जीव जहै करै गाय पछाड़ि करि कूद काढ़ी ॥
जुलम एता करै बिहिश्त काहे मिलै खून अपराध की व्याधि बाढ़ी।
होय हिसाब तब जाय क्या देत है ले चले फरिश्ते पकरि दाढ़ी ॥
होय तंबीर जब कठिन कूंदी करै चाम दल कष्ट तहाँ परे गाढ़ी।
मुहम्मद महरबान दया दिलसे करो जहां रोजा तहां बिहिश्त ठाढ़ी ॥
जहाँ रब राज तहाँ बाज अनहदतणी महरपद मुहरेममें सुरति गाढ़ी।
कहै कबीर जहाँ साहिबी सो करै आप तिन चीन्ह सब कुफुर छाड़ी॥२०॥
तिलक माथे दिया हाथ में लाकड़ी भजन का भेव तो नाहिं पाया।
शील अरु सांच संतोष अंतर नहीं कनक अरु कामिनी जहर खाया ॥
गूदड़ा पहरि करि बक आसन किया मच्छली गिटन सूं हेत भारी।
कहै कबीर जब काल गढ घेर है कौन गति होयगी जीव थारी ॥ २१ ॥
पर्वतां दोय में जीव बहु उलझिया बनी के बीच में लूट लीया।
पांच पैंडायताँ प्रगट पैंडादिया तासकै बीच कोइ संत जीया ॥
भीर भगवंत अरु शरण गुरु देव की घाटियाँ लंधि करि पार हूवा।
कहै कबीर यूं खेयलै सावती बहुरि विषधार में नाहिं बूवा ॥ २२ ॥
करत परतीत सो खाय गोता सही रहै निरभै तहां चोर लागै।
अग्नि के संग ज्यूं बीच पिलघल चलै कामिनी संग यूं काम जागै ॥

पद २

माइ गोविंद रु बाप गोविंद जाति पांति गुरु देव गोविंद । टेर
गोविंद ज्ञान रु गोविंद ध्यान सदा आनंदी राजाराम ॥ १ ॥
गोविंद गावै गोविंद नाचै गोविंद भेष सदा नृत्य काछै ॥ २ ॥
गोविंद पाती गोविंद पूजा नामो भणै मेरे देव न दूजा ॥ ३ ॥

पद ३

इतना कहत तोहि कहा लागत । रामनाम ले सोवत जागत । टेर
ध्रुव प्रह्लाद इह गुण तारे । रामनाम अक्षर हृदै विचारे ॥ १ ॥
रामनाम सनकादिक राता । रामनाम निर्भयपद दाता ॥ २ ॥
भणत नामदेव भाव है ऐसा । जैसी मनसा लाभ है तैसा ॥ ३ ॥

पद ४

जब तब रामनाम निस्तारै ।
साठ घड़ी में एक घड़ी रे सोई सकल अघ जारै ॥ टेर
काशी पुरी मँझ गवरांपति अह्न निशि सदा पुकारै ।
कीट पतंग सुनत गति पावै गोविंद गुण विस्तारै ॥ १ ॥
अजामेल गनिका शुक पंछी रसना नाम उचारै ।
गज पशु व्याध तिरे हरि सुमिरत महिमा व्यास विचारै ॥ २ ॥
परम पुनीत स्वरूप हरि वासर निजजन हरि व्रत धारै ।
नामदेव कहै सोइ दास कहावै जीवतैं छिन न विसारै ॥ ३ ॥

पद ५

राम भक्ति विन गति न तिहनकी कोटि उपाव जो करही रे नर ।
जल सींचे करि जतन बबूले आंब बँबूर न फलही रे नर ॥ टेर
आपा थाप और कूं निंदे गये मान के मारे ।
फिर पीछे पछिताहुगे घरे रत्न न मिलहिं उधारे रे नर ॥ १ ॥
यह ममता अपनी जनि जानो धन जोबन सुत दारा ।
बालू के मंदिर विनस जाहिंगे झूठा करो पसारा रे नर ॥ २ ॥
जोग न भोग मोह नहिं माया कहा भयो वनमें वासा ।
चरनकमल अनुराग न उपज्यो तब लग झूठी आशा रे नर ॥ ३ ॥
मनुष्य जन्म आय नहिं चेते धंधे पचे गवारा ।
तेरे शिर काल खड़ा शर सांधे नामदेव करत पुकारा रे नर ॥ ४ ॥

पद ६

जिह्वा बोले तो रामहि बोल । नहितर वज्र कपाट न खोल ॥ टेर ॥
जो बोलिये तो कहिये राम । आन वचन से नाहीं काम ॥ १ ॥

सेलियाँ वांकियाँ वेप अवधूत की जीवता मरै सोइ ठोइ पावे ।
तीर खुरसाण का वहुत तीखा वहै लगै उर माहिं डिग नाहिं जावे ॥
राजसा माहिं गदगोल वहु ऊपज्या तामसा माहिं अंधार भाई ।
कहै कबीर निह सत्तका तापिये जीव की वृत्ति क्यूं ठीक थाई ॥ ३२ ॥
तत्त्व कूं छाँडि निह तत्त्व कूं सव कथै भ्रम्म में पड्या सव भेप धारी ।
मुकुट करि जटा शिर तब जोगी भया पहर करि मुंदरा कान फारी ॥
एक नागे भये सर्व लजा तजी एक कच्छोट कस काम जारी ।
छेद्र अब जुज वर गूघरू वाप करि पाखंड केते कहुं गर्व प्रहारी ॥
आकाश मौनि मुख उरध वाहु नखी दीह निशि रहे ठाढेज वारी ।
बंध पग खंभ से उरध मुख झूलत रहै धूम घोटत रहै कस्स कारी ॥
अन्न भोजन तजे दूध रोगन करे वजे जग माहिं में दूध धारी ।
लूण कूं त्याग करि भये अलूणिया बैठ के गुफा में लाय तारी ॥
तिलक छापा किया मूर्ति पूजा लिया शंख धुन आरती जोति जारी ।
सेव कीन्ही सही देव, चीन्हा नही आपरा मत्त तजि जड़ पुजारी ॥
ज्ञानी पंडित वडे गीता भागवत पढ़े कर्म की भूलना नाहिं टारी ।
इतना विटंवसे वस्तु न्यारी रही ज्ञान की दृष्टि से लीज्यो विचारी ॥
भरम कूं त्याग करि लागि निज परम से इसे जन कोइ निज ब्रह्मचारी ।
कहै कबीर सोइ संत जन जौहरी काटि जम फंद सब को संघारी ॥३३॥

इत्यलम् ।

अथ श्रीनामदेवजी महाराज के अनुभव पद ।

१

जौंलगि रामनाममें हित न भयो तौंलगि मेरीमेरी करतां जन्म गयो । टे०
लाग्यो पंक पंक ले धोवै निर्मल न होवै जन्म विगोवै ॥ १ ॥
भीतर मैला वाहिर चोखा पाणी पिंड पखाले धोखा ॥ २ ॥
नामदेव कहै सुरभी परहरिये भेड़ पूंछ कैसे भवजल तिरिये ॥ ३ ॥

१ श्रीमद्भगवद्गीता, पिंगलगीता, संपाकगीता, मंकिगीता, बोध्यगीता, विचख्युगीता, हारीतगीता, वृत्रगीता, पराशरगीता, हंसगीता, अनुगीता, ब्राह्मणगीता, अवधूतगीता, अष्टावक्रगीता, ईश्वरगीता, उत्तरगीता, कपिलगीता, गणेशगीता, देवीगीता, पांडवगीता, ब्रह्मगीता, भिक्षुगीता, यमगीता, व्यासगीता, शिवगीता, सूतगीता, सूर्यगीता, इत्यादि.

भक्ति न रसनान भक्ति न कथै ज्ञान
भक्ति न बनमें गुफा खुदाई ।
भक्ति न ऐसी हास भक्ति न आशा पास
भक्ति न यज्ञ सब कुल कामिनि गाई ॥ १ ॥
भक्ति न इंद्री बांधे भक्ति न जोग साधे
भक्ति न अहार घटावे यह सब कर्म कहाई ।
भक्ति न निद्रा साधे भक्ति न वैराग्य बांधे
भक्ति नहीं यह सब वेद बडाई ॥ २ ॥
भक्ति न मूंड मुंडावे भक्ति न माला दिखावे
भक्ति न चरन धुवावे यह सब मुनिजन कहाई ।
भक्ति तोलौं न जानी जोलौं न आपको आप बखानी
जोइ जोई करे सोई सोई कर्म चढाई ॥ ३ ॥
आपो गयो तब भक्ति पाई ऐसी है भक्ति भाई
राम मिले आप गुण खोयो ऋद्धिसिद्धि सब जगवाई ।
कहै रैदास छूटी आशा तब हरि ताही के पासा
आत्मा स्थिर तब सब निधि पाई ॥ ४ ॥

पद २

परचै राम रमै जो कोई पारस परसे दुबुधि न होई । टेर
जो दीसे सो सकल विणास अण दीठे नाहीं विश्वास ।
बरण रहित कहै जो राम सो भक्ता केवल निष्काम ॥ १ ॥
फल कारण फूली बनराई उपज्यो फल तब पहुप विलाई ।
ज्ञानहि कारण कर्म कमाई उपज्यो ज्ञान तब कर्म नसाई ॥ २ ॥
बटक बीज जैसा आकार पसऱ्यो तीन लोक विस्तार ।
जहाँ का उपजा तहाँ समाई सहज शून्यमें रह्यो लुकाई ॥ ३ ॥
जो मन बंदे सोई बन्द अमावस में जैसे दीसे चंद ।
जल में जैसे तूंबा तिरै परचै पिंड जीवै नहिं मरै ॥ ४ ॥
सो मन कौन जो मनकूं खाई बिन द्वारै त्रैलोक्य समाई ।
मनकी महिमा सब कोइ कहै पंडित सो जो अनुभव रहै ॥ ५ ॥
कह रैदास यह परम वैराग रामनाम किन जपहु सभाग ।
घृत कारण दधि मथै सयान जीवनमुक्त सदा निर्वान ॥ ६ ॥

पद ३

भवतो मैं हाऱ्यो रे भाई ।
थकित भयो सब हाल चालतें लोकन वेद बडाई । टेर

रामनाम मोरे हिरदै लेख। राम विना सब फोकट देख ॥ २ ॥
नामदेव भणै मेरे यको नाम। रामनाम की मैं बलि जाम ॥ ३ ॥

पद ७

हरि भज हरि भज हरि भज मूल विन हरि भजन परै मुख धूल। टेर
अनेकवार पशु है अवतर्‍यो। लख चौरासी भर्मत फिर्‍यो।
पायो नहीं कहीं विश्राम। सतगुरु शरण कह्यो नहिं राम ॥ १ ॥
राज काज सुत वित सब जाय। अविनाशी से प्रीति लगाय।
यह अनुमान भक्त व्रत धारै। जरा मरण भय संकट टारै ॥ २ ॥
गुण सागर गोविंद गुण गाय। अपनो विरद बिसर जनि जाय।
प्रणमत नामदेव संत सधीर। चरण शरण राखो हरि तीर ॥ ३ ॥

पद ८

रामनाम मेरे पूंजी धना। जा पूंजी मेरो लागो मना। टेर।
साह की पूंजी आवै जाय। कबहू आवै मूल गमाय ॥ १ ॥
यह पूंजी है अगम अपार। ऐसा कोइ न साहुकार ॥ २ ॥
जाली जलै न खाई खाय। राजा डंडे न चोर लेजाय ॥ ३ ॥
अलख निरंजन दीन दयाल। नामदेवके धन श्रीगोपाल ॥ ४ ॥

पद ९

भक्ति आप मोरे वावुला। तेरी मुक्ति न माँगूं हरि वीठुला। टेर
भक्ति न आपै तो तन आडूं। कोटि करै तो भक्ति न छाँडूं ॥ १ ॥
अनेक जन्म भ्रम तो फिर्‍यो। तेरो नाम ले ले उधर्‍यो ॥ २ ॥
नामदेव कहै तूं जीवन मोरा। तूं सायर मैं मच्छा तोरा ॥ ३ ॥

पद १०

सन्त प्रवेणी भक्ति आपिला नहिं आपिला तो प्राण त्यागिला। टेर
हमचा थाती तुम्ह धस भाला अमचा जीयला किमचा लागिला ॥ १ ॥
च्यार मुक्ति आठ सिधि आपूं भक्ति न आपूं दास नामइया ॥ २ ॥
नामदेव वीठुल सनमुख भक्ति आपिला मुक्ति त्यागिला ॥ ३ ॥

इत्यलम्।

अथ श्रीरैदासजी महाराज के अनुभव

पद १

ऐसी भक्ति न होई रे भाई।
राम नाम विन जो कछु करिये सो सब भर्म कहाई। टेर

कृष्ण करीम राम हरि राघव जब लग एक एक नहिं पेखा।
वेद कतेब पुरान क़ुरानन सहज एक नहिं देखा ॥ ४ ॥
जोइ जोइ कर पूजिये सोई सोई काचा सहज भाव सतहोई।
कह रैदास में ताहि कूं पूजूं जाके गाम न ठाम नाम नहिं कोई ॥ ५ ॥

पद ६

भाई रे भरम भक्ति सो जान जोलों नहिं साचसे पहिचान। टेर
भरम नाचण भरम गायण भरम जप तप दान।
भरम सेवा भरम पूजा भरम से पहिचान ॥ १ ॥
भरम पट कर्म सकल संहिता भरम ग्रह धन जान।
भरम करि करि कर्म कीये भरम की यह बान ॥ २ ॥
भरम इन्द्री निग्रह कीये भरम गुफामें वास।
भरम तोलों जाणिये शून्य की करे आस ॥ ३ ॥
भरम शुद्ध शरीर तोलों भरम नाम विनास।
भरम भणे रैदास तोलों जोलों चाहे ठाम ॥ ४ ॥

पद ७

भाई रे राम कहां है मोहि बतावो सत्य राम ताके निकट न आवो। टेर
राम कहत सब जगत भुलाना सो यह राम न होई।
कर्म अकर्म करुणामय केशव करता नाम स कोई ॥ १ ॥
जिहि रामहि सब जग जाने भ्रम भूलै रे भाई।
आप आपतें कोई न जाने कहै कौन से जाई ॥ २ ॥
सत तन लोभ परस जिव तन मन गुन परसन नहिं जाई।
अखिल नाम जाके ठोर न कितहूं क्यों न कहो समुझाई ॥ ३ ॥
भणे रैदास उदास ताही तें करता कोहै भाई।
केवल करता एक सही कर सत्य राम तिहि ठाई ॥ ४ ॥

पद ८

ऐसो कछु अनुभव कहते न आवे साहिब मेरो मिलै तो को बिगरावै। टेर
सब में हरि है हरि में सब है हरि आपनपो जिन जाना।
आपा साखी न दूसरि जाननहार समाना ॥ १ ॥
से रहन रहीजे बाजी का मर्म भय जाना।
सांच बाजीगर जाना मन पतियाना ॥ २ ॥
होय तो कोई न सूझै जाने जानन हारा।
विवेक गुप सहज सरूप संमारा ॥ ३ ॥

थकित भयो नाचण अरु गावण थाकी सेवा पूजा।
काम क्रोध ते देह थकित भइ कहूं कहाँ लगि दूजा ॥ १ ॥
राम जन होउं न भक्त कहाऊं चरण पखालुँ न देवा।
जोइ जोइ करूं उलटि मोहि बाँधै ताते निकट न भेवा ॥ २ ॥
पहिले ज्ञानका किया चानणा पीछे दिया बुझाई।
शून्य सहज में दोऊ त्यागे राम कहूं न खुदाई ॥ ३ ॥
हरि बस है षटकर्म सकल अरू दूरब कीन्ही सेऊं।
ज्ञान ध्यान दोउ दूरब कीन्हे दूरब छाँडे तेऊं ॥ ४ ॥
पाँचूं थकित भए हैं जहाँ तहाँ जहाँ तहाँ थिति पाई।
जा कारन मैं दौर्यो फिरतो सो अब घट में पाई ॥ ५ ॥
पाँचूं मेरी सखी सहेली तिन निधि दई दिखाई।
अब मन फूल भयो जग महियां उलट आपमें समाई ॥ ६ ॥
चलत चलत मेरो निज मन थाक्यो अब मोपे चल्यो न जाई।
साँई सहज मिले सो सन्मुख कह रैदास बताई ॥ ७ ॥

पद ४

गाइ गाइ अब क्या कहि गाई गावन हाराकों निकट बताई। टेर
जबलग है या तन की आशा तबलग करै पुकारा।
जब मन मिल्यो आश नहिं तनकी तब को गावण हारा ॥ १ ॥
जबलग नदी न समुद्र समावै तब लग बढै अहंकारा।
जब मन मिल्यो रामसागर से तब यहु मिटी पुकारा ॥ २ ॥
जबलग भक्ति मुक्ति की आशा परमतत्त्व सुण गावै।
जहाँ तहाँ आश धरत है यहु मन तहाँ तहाँ कछु न पावै ॥ ३ ॥
छांडै आश निराश परम पद तब सुख सत कर होई।
कहै रैदास जासे और कहत है परम तत्त्व अब सोई ॥ ४ ॥

पद ५

रामजन होउँ न भक्त कहाऊँ सेवा करौं न दासा।
गुनी जोग जिग कछु न जानौं तातैं रहौं उदासा। टेर
भक्त हुआ तो चढै बडाई जोग करौं जग मानै।
गुणी हुआतैं गुणि जन कहै गुणी आपकों तानै ॥ १ ॥
ना मैं ममता मोह न महिमा यह सब जाय विलाई।
दोजख भिहिस्त दोउ सम करि जानौं दुहुवातैं तरक है भाई ॥ २ ॥
मैं तैं ममता देख सकल जुग मैं तैं मूल गमाई।
जब मन ममता एक एक मन जबहि एक है भाई ॥ ३ ॥

कंठी माला धारणमंत्र ।

तुलसीकाष्ठसंभूते माले विष्णुजनप्रिये ।
त्वां धारयाम्यहं कण्ठे कुरु मां रामवल्लभम् ॥ १ ॥

यज्ञोपवीतवद्धार्यं सदा तुलसिमालिका ।
क्षणमात्रपरित्यागात् विष्णुद्रोही भवेन्नरः ॥ २ ॥

चरणामृतमंत्र ।

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
विष्णुपादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥ १ ॥
एकादशीव्रतं गीता गंगाम्बु तुलसीदलम् ।
विष्णोः पादाम्बु नामानि मरणे मुक्तिदानि च ॥ २ ॥

तीर्थे प्रसादस्वीकारानन्तरं वैष्णवो द्विजः ।
न हस्तक्षालनं कुर्यात् न तत्राचमनक्रिया ॥ ३ ॥

तुंबिकाकमण्डलुशुद्धिमंत्र ।

ॐ जलं दहति पापानि कमण्डलुगतं तु यत् ।
गंगातोयसमं नित्यं जलपात्रं च शुद्ध्यति ॥ १ ॥

कठारीशुद्धिमंत्र ।

ॐ जले चाग्निः स्थले चाग्निरग्निश्च वायुमण्डले ।
त्रिभिरग्निप्रकाशैश्च काष्ठपात्रं च शुद्ध्यति ॥ १ ॥

पद ९

नरहरि चंचल मति मोरी कैसे भक्ति करौं राम तोरी। टेर
तू मोहि देखै हौं तोहि देखूं प्रीति परस्पर होई।
तू मोहिं देखै न हौं तोहि देखूं यह बुधि सब मति खोई ॥ १ ॥
सब घट अंतर रमसि निरंतर मैं देखत ही नहिं जाना।
गुन सब तोर मोर सब अवगुन कृत उपकार न माना ॥ २ ॥
मैं तैं तोर मोर असमंजस कैसे करि निस्तारा।
कह रैदास कृष्ण करुणामय जय जय जगत अधारा ॥ ३ ॥

पद १०

प्रभुजी तुम चंदन हम पानी जाकी बास अंग अंग समानी। टेर
प्रभुजी तुम दीपक हम बाती जाकी जोति जगै दिन राती ॥ १ ॥
प्रभुजी तुम घन बन हम मोरा जैसे चितवत चंद चकोरा ॥ २ ॥
प्रभुजी तुम मोती हम धागा जैसे सोन ही मिलत सुहागा ॥ ३ ॥
प्रभुजी तुम स्वामी हम दासा ऐसी भक्ति करै रैदासा ॥ ४ ॥

इत्यलम्।

वैष्णवधर्ममंत्र।

कवित्त।

धूणी गिरनार मंत्र तारक धाम रामनाथ
विलास चित्रकूट इष्ट सीता जान है।
ऋषि वशिष्ठ वेद ऋग देव हनुमान तीर्थ
क्षेत्र है धनुष बीज अग्नि वखान है॥
रमाचारज शाखा है अनँत मुक्ति सामीप्यकं
अच्युत गोत्र वर्ण शुक्ल सुख खान है।
राघव उपासी धर्मशाला अयोध्या है पर-
दक्षिणा गोदावरी अखाड़ा निर्वान है ॥ १ ॥

यज्ञोपवीतधारणमंत्र।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥ १ ॥

---

१ सुखविलास।

॥ श्रीः ॥

संग्रह–सार ।

अथ निर्गुण-भजनमाला ।

बधावा ।

कई महात्माओं के आविर्भाव और तिरोभाव
समय वि. सं.।

नाम	ग्राम	प्रादुर्भाव	दीक्षा	
श्रीशंकर स्वामी	कालपी(दक्षिण)	८४४		८
श्रीरामानुज स्वामी	कांचीपुरी	१०७४		१
श्रीरामानंद स्वामी	काशी	१३५६		१
श्रीकबीर साहब	काशी	१४५५		१५
श्रीहरीदासजी म.	डीडवाँणा	१४७५		१५
श्रीजांभाजी	पीपासर (बीकानेर)	१५०८		१५
श्रीगुरुनानक साहब	पंजाब	१५२६		१५
श्रीजसूनाथजी	कतरियासर (बीकानेर)	१५३९		१५
श्रीसूरदासजी	वृंदावन	१५४०		१५
श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी	काशी	१५८९		१६
श्रीस्वामीजी दादूदयालजी म.	नराणा	१६०१		१६
श्रीसुन्दरदासजी म.	कोषाणा	१६५३	१६१२	१६६
श्रीसन्त दासजी म.	दांतड़ा	१६८६		१७४
श्रीचरणदासजी म.	डहरा (अलवर)	१७६०	१७४२	१८०
श्रीजैमलदासजी म.	दुलचासर (बीकानेर)		१७६०	१८३
श्रीदरियावजी म.	रैण	१७३३	१७६९	१८१
श्रीहरिरामदासजी म.	सिंहथल		१८००	१८१५
श्रीनारायणदासजी म.	सिंहथल		१८०६	१८३५
श्रीरामचरणजी म.	शाहपुरा	१७७६	१८०८	१८५३
श्रीरामदासजी म.	खैड़ापा	१७८३	१८०९	१८५५
श्रीदयालदासजी म.	खैड़ापा	१८१६		१८५५
श्रीपैरवारामजी म.	जोध. सूरसागर	१८२४		१८८५
				१८९६

१ श्रीरामस्नेहसद्धर्मोपदेष्टा मूलाचार्य। २ विरक्तशाखाप्रवर्तक श्रीपरशराम
म. सं. १८६० में जोध. सूरसागर विराजे। आपकी अनुभववाणी १५००० श्लो
संख्याकी है।

४

बधावो म्हारे नित नवलो म्हारे सतगुरांजी रो परताप। टेर।
सतगुरु आया पाहुना मैं काँई करूं मनुहार।
हिवड़ा करूं बिछावना तन मन ऊपर वार ॥ १ ॥
केसर चंदन गार घलाऊं घर आंगणो लिपवाय।
कंचन कलस बधावस्यां हिलमिल मंगल गाय ॥ २ ॥
आंगण बाही पलची हुयगई अम्बर बेल।
आज गुरुजी म्हारे पाहुना हिवड़ा में कूंपल मेल ॥ ३ ॥
सद्‌गुरु चंदन बावना सिख सतगुरुके वास।
सतगुरु हाट हीरा तणी म्हारे हिरदे भयो प्रकास ॥ ४ ॥
कहै कबीर धर्मदासनें अमृत पियो अघाय।
यो मन सदा रलियावणो म्हारे कुण आवे कुण जाय ॥ ५ ॥

५

म्हारे मन आज उमावो हो, रामसनेही आविया निज भाव बधावो हो ॥ टेर ॥
जन्म आज लेखे भयो धिन उदित अंकूरा हो,
परम भाग्य परगट भयो मिल पंकज सूरा हो ॥ १ ॥
पाँच सखी मेली भई मिल मंगल गाया हो,
उर सरोजके चौक में सुख रास मंडाया हो ॥ २ ॥
रंग राग बाजा अनँत घर बढत बधाई हो,
मन गुलाल अबीर चित प्रेमा सरसाई हो ॥ ३ ॥
कोड़ कोड़ आनँद भयो कोड़ाँ कोड़ बधाई हो,
ग्यान भक्ति वैराग मिल मेरे घर आई हो ॥ ४ ॥
भावसदन ओप्यो अजब गुरुदेव विराजे हो,
सबै मनोरथ पूरवे हरिराम निवाजे हो ॥ ५ ॥
रामदास धिन धिन घड़ी धिन मोसर म्हौ हो,
पाल पाल मिलज्यो सदा म्हांने राम सनेही हो ॥ ६ ॥

६

या दिनको मैं बलि जाऊं हो, मिले पियारे रामजन सन्मुख सिर नाऊं हो ॥ टेर ॥
करूं दंडौत परिक्रमा वन्दन बारंबारा हो,
आज पधारे सतगुरु धिन भाग हमारा हो ॥ १ ॥
चौरासी फेरा टल्या जम दंड मिटाया हो,
मर्म जाल भय भाजग्या आतम सुख पाया हो ॥ २ ॥

॥ श्रीः ॥

संग्रह–सार ।

अथ निर्गुण-भजनमाला ।

वधावा.

१

म्हांरा हरिजन आइजो म्हांरे आंगणिये थानें ले मोतीड़ा वधाऊं । टेर ।
सुरे गायरो गोवर मंगाऊं घर आंगणियो लिपाऊं ।
कंचनकलस वधाय गुरांने मोतियां चोक पुराऊं ॥ १ ॥
कदली वनरो हस्ती मँगाउं अंबाड़ी झुकाउं ।
गेहरा गदरा गुरुजी बिराजै ऊपर चँवर दुलाऊं ॥ २ ॥
जल जमुनारो नीर मँगाऊं तातो तुरत कराऊं ।
चोवा चंदन और अरगजा अपणे हाथ न्हवाऊं ॥ ३ ॥
नख छोल्या सा चावल मँगाउं काचे दूध धुआऊं ।
खीर खांड घृत अमृत भोजन अपणे हाथ जिमाऊं ॥ ४ ॥
कंठी माला कड़ा किलंगी सतगुरु अरपण लाऊं ।
दिखण दिशारी मंगाय फाँवरिया अपणे हाथ ओढाऊं ॥ ५ ॥
कहै कबीर सुणो भाई साधू आनंद मंगल गाऊं ।
भवसागर गुरु दयाल खेवटिया भवजल बहुरि न आऊं ॥ ६ ॥

२

चालो ए सइयाँ आपे गुरां ने वधावण जासां ए । टेर ।
सतगुरु स्वामी म्हारा अंतर जामी चरणाँ में शीस निवासां ए ॥ १ ॥
कुंकुम केसर री गार घलासां मोतिड़ां रो चोक पुरासां ए ॥ २ ॥
सोनेरी झारी रूपेरी थारी कंचन कलस वधासां ए ॥ ३ ॥
घर घर री सब सखियां तेड़ासां हिल मिल मंगल गासां ए ॥ ४ ॥
मीरां कहै प्रभू गिरधर नागर हरिचरणा में चित लासां ए ॥ ५ ॥

३

चालो रे मनां सतगुरुजीरै चरणां । टेर ।
या चरणाँ सूं आवागवन मिटत है पीछे क्या करणा ॥ १ ॥
देह धर्‍यां की याही है परम गति साधु संगति करणा ॥ २ ॥
चितरा चंवर करुं गुरां ऊपर मनमें ले उर धरणा ॥ ३ ॥
मीरां कहै प्रभू हरि अविनाशी छांड सकल भरमना ॥ ४ ॥

कंठ कमल में फूली गुल क्यारी अमीरस पीया है।
गुपता सा नैन गुरां म्हारा खोल्या ज्यों मन्दिर दीया है॥ १॥
पूरणचंद्र चौक बिच ऊगो हिरदै उजियाला है।
झिलमिल नूर गुरांजीरा बरस्या ज्यूं दीपक माला है॥ २॥
भँवर गुंजार नाभ घर माहीं मंगल गासां है।
प्रेमरा कलस गुरां नें बधासां बधाई बटासां है॥ ३॥
घमकै छै घूघर बाजे छै मुरली रास रच्यो छै है।
तूं चढ बैठी गगनरा गोखां में श्रवना सुन्यो छै है॥ ४॥
धिन शरणो सुखराम कहै नित फिरूं छूं फूली है।
सुखरा सागर गुरु दरियासा दुखड़ो सब भूली है॥ ५॥

१०

आवो ए गावो सइयां बणत्र बधावो म्हारे पाहुणा परम गुरु आज। टेर।
सोनेरो सूरज सइयां इण पुल ऊगो म्हारे घर बैठा गंगा आई आज॥१॥
कथा कीर्तन सइयां हरि गुण गासाँ म्हारे आंगणिये छै संतारो समाज॥२॥
लख चौरासी सइयां दुखड़ेरी पासी कोई हुवा छै बहुत बकाज॥ ३॥
इण भवसागरसे म्हारा सदगुरु तारे कोई आपणे विरद की लाज॥४॥
सुखदेव सागर में म्हारो मनड़ो झूले म्हारे सन्त सदाई सिरताज॥५॥

११

घर आज हमारे आया परम गुरु पाहुणा॥ टेर॥
कंचन कलश शीश धर कर में भर मोतियन को थाल।
जय जय शब्द होत चहुँ दिशि तें दर्शन दिया दयाल॥ १॥
केसर चन्दन तिलक चढ़ाऊं पुष्प माल पधराय।
प्रेम प्रीति सूं करूं आरती सखियाँ मंगल गाय॥ २॥
वीण मृदंग शंख सहनाई बाजा बजत अपार।
जरी पाट पर परत पांवडा आये भवन मंझार॥ ३॥
कर दंडोत शीश धर चरणां तन मन अर्पण कीन।
जन भावन सतगुरु पद परसत लाभ जनम को लीन॥ ४॥

१२

सूरज सोनारो ऊगो सखीरी धिन आजनो॥ टेर॥
पावन भवन करण पग धारे सतगुरु सबही संत।
कथा कीरतन हरि गुण गावै आनंद उदै अनंत॥ १॥
दरशन करत सबै नर नारी साचो राम सनेह।
प्रेम भाव चित चाव परस्पर दूधाँ बूठा मेह॥ २॥

विधि वैकुंठ सदन फवै अठसठ तीरथ गंगा हो,
रामदास पदकंज परस उर भक्ति अभंगा हो ॥ ३ ॥

७

लोकां थानें लाख वधाई हो म्हारा सतगुरु आया आज
लोकां थानें लाख वधाई हो ॥ टेर ॥
भलीभई म्हारे आंगण आया, जाण पुराणो नेह।
आनंद भयो मन भावनो म्हारे दूधां वूठो मेह ॥ १ ॥
भावतड़ा सतगुरु भेट्या मेट्या आल जंजाल।
प्रभुजी दीनी प्रीत सूं म्हांने भक्ति श्रीगोपाल ॥ २ ॥
कर प्रणाम परिक्रमा देसां दुख दालद भव दूर।
ऊगो सहेली आज नो म्हारे सोना हंदो सूर ॥ ३ ॥
छुत्तराम प्रभु हरिमुख निरखै नैणा नैण निहार।
बलिहारी गुरुदेवजी री मैं रही छूं लूण अवार ॥ ४ ॥

८

सख्यां ज्ञानी गुरुजी वधासां हे, ऐसो मोसर
चूक के फेरूं कव पासां हे ॥ टेर ॥
चित कर चंदन अगर कस्तूरी कुंकुम लेसां हे।
करणी री केसर घोल के घाके मस्तक देसां हे ॥ १ ॥
प्रेम फुलेल ले सनमुख जासां अमी रस पीधा हे।
गुण की गुलाल उड़ाय गुरां पर सांच को सूधा हे ॥ २ ॥
धीरज थाल धरूं ले आगे करूं मन मोती हे।
इस विध आरती संजोय गुरां की झिगमिग जोती हे ॥ ३ ॥
पाट पितांवर पांवड़ा विछावां सिरे पधरासां हे।
दिल की दुरमति दूरकर विनती गुदरासां हे ॥ ४ ॥
भोजन भाव जिमाय गुरां नें ले मन्दिर माहीं हे।
तीन लोक संपति सब वारूं तोहि उरण नाहीं हे ॥ ५ ॥
सतगुरु शरणे अभयपद पाया अमीरस पीसां हे।
काळ करम सबै मिट जासी जुगे जुग जीसां हे ॥ ६ ॥
ध्यान गवाड़ बिच सतगुरु भेट्या मेट्या मन खतरा हे।
सुरतराम कहांलों जस गावे जाणूं किया जितरा हे ॥ ७ ॥

९

सख्यो सतगुरुजी रे जासां हे, सोई आज्ञा गुरुदेवकी
म्हे तो सीस चढ़ासां हे ॥ टेर ॥

वसंत.

पद १

नर क्यों सुमिरे नहिं राम नाम, तेरी निकमी रसना कौन काम। टेर.
झगरा झगरी करत झूठ। पखा पखी परनिंदा पूठ।
सीखत भाखत सुनत ज्ञान। आतम को नहिं धरत ध्यान॥ १॥
सकल वरण में एक अंश। ऊंच नीच कुण होय वंश।
जा मुख हरि की नाहिं वान। सोई जनम कुल हीन जान॥ २॥
जो सिनखातन पाय जीव। प्राण थके मुख उचर पीव।
निशि दिन ऊमर घटत जाय। जुरा पसारो करत आय॥ ३॥
काल कसी सा कर कबाण। मारे आजक कल विहाण।
गाफल कांई सूतो नचीत। जाग अभैपद करले मीत॥ ४॥
काटत भरम करम का फास। मेटत जनम मरण की त्रास।
हरिरामा भज परम तन्त। शिव सनकादिक कहत सन्त॥ ५॥

पद २

अब राख शरणें राम मोहि। वहुवेर भरम्यो विना तोहि। टेर.
का वहु लालच करत लोभ। का अपनी कर मरत सोभ।
का मन बंधे आल जाल। जब जीव पकड़ ले जाय काल॥ १॥
का विषिया मन काम क्रोध। का करि मूवो वाद मोध।
का मन बंधे आन पास। विना भक्ति भयो फूस फास॥ २॥
मैं कव नाना करत नेह। का मन त्यागी वचन देह।
का मन माया वीच गाड। मैं केतिवेर गयो छाड छाड॥ ३॥
मैं कब आसन वैस पूर। का तन तीरथ फिरत दूर।
का मन आशा अनंत पास। का मन हुय बैठे निरास॥ ४॥
का मैं आलस करत ऊंघ। का फिर सूंघा करत सूंघ।
का मन मूरख विकल जास। का हुइ वैठे वेदव्यास॥ ५॥
का लघु का दीर्घ ता जान। का मुझ मान वडाई ठान।
का साझे अष्टांग जोग। का नाना विधि करत भोग॥ ६॥
कव मुंडित कव रखत केस। कव कुल काया पलट भेस।
कव करते सन्यास करम। कव कुल मारग लोक सरम॥ ७॥
[illegible] सिंघ स्याल। मैं कव राय रंक भूपाल।
[illegible] हुइ अचेत। मन मिरगे ज्यूं चरत खेत॥ ८॥
[illegible] धार जौन। कव बोलत कव गहत मौन।
[illegible] पाय। जब राम नाम सूं विमुख थाय॥ ९॥

शीत प्रसाद लेत चरणामृत उरमें अधिक उमंग ।
पावन पतित होत पल माहीं कर संतन को संग ॥ ३ ॥
संत समाज आज भल पायो दूर भया दुख द्वंद ।
जन भावन सतगुरु दर्शन तें पायो परमानन्द ॥ ४ ॥

१३

राजभोग ।

राग गूढ़ बिलावल ।

सतपुरुषांरे भोग लागे शब्द अनाहद घंटा वागे ॥ टेर ॥
प्रेम प्रीतिसे करी है रसोई अमृत भोजन पारस होई ॥ १ ॥
कंचन झारी सुकृत थाल जीमन वैठे श्रीराम दयाल ॥ २ ॥
पाय प्रसाद अँचवन कीनो महाप्रसाद दास कूं दीनो ॥ ३ ॥
दास एक कणका भर लीनो तातें काल भयो आधीनो ॥ ४ ॥
कहै कबीर हम भये हैं सनाथ जब सतगुरु मस्तक धरिया हाथ ॥५॥

१४

सतगुरु भोजन जीमो प्यारे, अपने जनपर कृपा कीजे जाऊं सदा बलिहारे ॥ टेर ॥

पारब्रह्म परमेश्वर स्वामी आवो कृपा धारे ।
श्री गुरुदेव दयानिधि आनंद संतनके हितकारे ॥ १ ॥
भाव भक्ति ले करूं रसोई श्रद्धा साग सवारे ।
सुरत शब्द का चौका लाऊं चरण कमल बलिहारे ॥ २ ॥
करमाँबाई खीच पवायो उठ परभात सवारे ।
शुचि संजम किरिया नहिं देखी प्रेम भक्ति के प्यारे ॥ ३ ॥
झूँठे करफर वन सूं लाये जाति अपावन नारे ।
शबरी के फल रुचिकर पाये मीठे गिणे न खारे ॥ ४ ॥
दुर्योधनका मेवा त्यागे व्यञ्जन न्यारे न्यारे ।
साग विदुर घर रुचिकर पाये पर्णकुटी पग धारे ॥ ५ ॥
भिलनी के बोर सुदामा के तन्दुल लीने वदन पसारे ।
नामा का दूध धनाकी रोटी जुग जुग जन विस्तारे ॥ ६ ॥
मैं अजान कछु सेव न जानूं सेवा अगम अपारे ।
सनक सनन्दन अर्जुन नारद ब्रह्मादि पचहारे ॥ ७ ॥
दीन छीन मतिहीन महा जड शरण पड्यो दरबारे ।
रामदास की श्रद्धा राखो लीजे भोग मुरारे ॥ ८ ॥

पद ६

रमै संत जहाँ बसंत फाग । मिले पीव जन बडे भाग । टेर.
प्रथम मुक्ता पीउ शोर गाय । रमत रमत हिरदा में जाय ।
जहाँ मुरली की टेर सुणाय । बंधी प्रीति अब प्रेम अघाय ॥ १ ॥
नाभि कमल में नाद घोर । बक डंके पर लागत ठोर ।
रोम रोम में सुख अपार । पीव पधारे नाभि मंझार ॥ २ ॥
बंकनाल पिचकार कीन । पांच पचीसों संग लीन ।
अधः ऊर्ध्व बिच मंड्यो ख्याल । पिवजु पधारे महल चाल ॥ ३ ॥
अनहद बाजा घुरे अपार । जहाँ अलख निरंजन अमर मुरार ।
मिले संत ता माहिं जाय । अनत कोट रहे फाग रमाय ॥ ४ ॥
रमत नारद सनकादि शेष । ब्रह्मा विष्णु रु आदि महेश ।
सुखदेव अरु ध्रुव प्रहलाद । सुखसागर जहाँ सुख समाद ॥ ५ ॥
जनक विदेह मिले तहाँ आय । बालमीक पांडुता माय ।
गोरख भरथरी गोपीचंद । सुखसागर मिलकर आनंद ॥ ६ ॥
नामदेव अरु रामानंद । नामा कबीर तिलोकचंद ।
पींपा धना सजन रैदास । रंका बंका सैना रब्यास ॥ ७ ॥
नानग दादू हरीदास । केवल कूबा संतदास ।
जनदरिया अरु महर रंग । किसनदास सुखराम संग ॥ ८ ॥
अनत कोटि रहे फाग रमाय । जन हरिराम मिले तहां आय ।
रामदास जहां चरण निवास । गुरुगोविंद मिल पूरी आस ॥ ९ ॥

पद ७

देखो देखो संतो नर की भूल । सींचत शाखा तजत मूल । टेर.
राम निरंजन देह समान । ताहि छोड़ पूजे पखान ।
जल पीवे पाषाण धोय । सो तो आदि अंत पाषाण होय ॥ १ ॥
आकाश शीस पाताल पाय । सो संपुट में कैसे समाय ।
राम निरंज आवै न जाय । सो दियो तुमारो कैसे खाय ॥ २ ॥
वार वार मैं कहुं पुकार । सो शब्द न माने करत रार ।
कबीर कोइ लहै न खोज । भटक मरे जैसे बनके रोझ ॥ ३ ॥

पद ८

... घर लागो रंग । मेरो चित न चलै मन भयो पंग । टेर.
... भयो उमंग । घस चोवा चंदन चरच अंग ।
... लागे ठाँय ठाँय । गुरु ब्रह्म बतायो आप माँय ॥ १ ॥

का सीखत का सुनत ज्ञान। का चौके चतुराई ठान।
का तप तीरथ व्रत्त नेम। जब पारब्रह्म सूं नाहिं प्रेम ॥ १० ॥
जन हरिरामा सकल जान। राम नाम की परी पिछान।
तन मन सौंप्या गुरुके पास। दिया अभैपद मिटगी त्रास ॥ ११ ॥

पद ३

मन राम सुमर निशि दीह तोय। जनम मरण दुख मिटै दोय। टेर.
राम नाम निज परम तंत। सुमर सदा होय पार संत।
गिरा अगम अथ भय जगाय। सोइ शब्द सुने सुरती लगाय ॥ १ ॥
ज्ञान सुनो मन कर विचार। उभै अंक रसना उचार।
सुमरै मन तन सहत संत। आदि अंत उधरे अनंत ॥ २ ॥
सुनो नाम परताप सोय। भज्यां सहत भव पार होय।
लिखे सिला सिर अंक सार। पान तरू जिम तरे वार ॥ ३ ॥
सोई नाम तुम ध्याय जीव। मिलैं सहज इन सहत पीव।
भालि मनु हरदेव आख। राम अंक ध रसन भाख ॥ ४ ॥

पद ४

ऐसी कृपा तुम करो देव। रमूं फाग सोइ ब्रह्म सेव। टेर.
बिना तोहि हम चित व्याप। महर करे हरि मिलो आप।
दरस देवो मुझ पूर्व भाग। जिम निज खेलूं वसंत फाग ॥ १ ॥
अवर फ़ाग मह करू मेल। सोई काल घर तणो खेल।
सोई फाग तेरे शरण नेह। मुझे रमावो रंग एह ॥ २ ॥
विना तोहि मो पति अभंग। किना रमूं ऋतु वसंत रंग।
अरज करै हरदेव तोहि। अंतर मेलो देवो मोहि ॥ ३ ॥

पद ५

रमत पियारी पीव संग। तन मन अरपे सबै अंग। टेर.
फाग रमण को चल मुरार। सब सखियन मिल मांग स्वार।
प्रेम प्रीत की झार गुलाल। शून्य महल में मँड्यो ख्याल ॥ १ ॥
पांच पचीसूं एक ठाँय। सुरत शब्द के मिली माँय।
रमत पियारी पीउ पास। रोम रोम में मंड्यो रास ॥ २ ॥
अलख निरंजन अमर देव। जहाँ सुरत निरत मिल करत सेव।
रमत पिया संग आदि अंत। अनत कोट जहाँ मिले संत ॥ ३ ॥
सतगुरु मोहि मिटाय पीव। उलट जीव जहाँ होत सीव।
कहत रामियो अगम अपार। सुर नर नागा लह न पार ॥ ४ ॥

अंजन मंजन तज विकार। अठसठ तीरथ सब नामलार।
रे मन मूरख कहाँ जाय। तेरे घट ही में तीरथ क्यों न न्हाय ॥ २ ॥
जहाँ जाइये जहाँ जल पाषान। पूर रहे प्रभु सब समान।
वेद स्मृति सब लिया जोय। वहाँ जाइये हरि यहाँ न होय ॥ ३ ॥
सतगुरु मैं बलिहारी तोय। मेरा सकल विकल भ्रम दिया खोय।
रामानन्द स्वामी रमत ब्रह्म। गुरु एक शब्द काटे कोटिकर्म ॥ ४ ॥
आडा पर्वत विषम घाट। सुर नर मुनि कोई लहेन घाट।
कहै कबीर मन भया अनंद। जब हरष मिले गुरु रामानंद ॥ ५ ॥

पद ९

तज तज रे भँवरा कमल पास। तेरी भँवरी रोवे अति उदास। टेर.
तैंने बहु पुष्पन को लियो है भोग। तेरे सुख न भयो तन बढ्यो है रोग।
मैं जो कहूं तोहि बार बार। मैं सब बन ढूंढ्या हार हार ॥ १ ॥
दिवस चार को सुरंग फूल। ताहि देख क्या रह्यो भूल।
जब बनस्पती में लगेगी आग। तब तुम भँवरा कहाँ जावोगे भाग ॥ २ ॥
पुष्प पुराणो भयो है सूख। तब भँवरे को लगि है भूख।
उड़ि न सके पर गये हैं लूट। तब भँवरी रोवे शिर कूट ॥ ३ ॥
दोऊ दिशि जोवे मधुप राय। तब भँवरी चाली शीस चढाय।
कहै कबीर मनका सभाव। राम भज्याँ बिन जमको दाव ॥ ४ ॥

होरी अलियो विलावल।

पद १०

दुलहा बिन फाग दुहेली।
नैन सूं नैन बैन सूं बैना प्यारे पास गहेली। टेर.
सुरत संदेशा देत रैन सुनहो श्याम सुजाना।
तज कुल काज लाज लोकन की मिल्यो मुख महमाना ॥ १ ॥
नाकोई देह न गेह संजोगा भई अगम गति न्यारी।
दिल दरावें घर दिया महोला अलख पुरुष सूं यारी ॥ २ ॥
बिन करताल डंफ बिन तूरा पग बिन पातर नाचे।
भवंड मंडल में रास रच्यो है जहाँ मेरा मन राचे ॥ ३ ॥
सदा सुमंगल हरण सकल भ्रम महानंद बिराजे।
जन हरिराम सुरत किया बासा अधर महलके छाजे ॥ ४ ॥

चित चंदन गुरु गाल अरगजो चोया गुन चुनोरी।
सूंधो सुरत लगाय रैन दिन अनहद नाद सुनोरी ॥ ४ ॥
भक्ति परा जिव पाय परम पद निश्चल होय रहोरी।
जनम मरण फेरा मिट जावै नव तत देह दहोरी ॥ ५ ॥
अनँतकोटि रम पार पहूंता गुरु गोविंदसे जोरी।
सेवगराम सतगुरु संग खेले औ सरसाज सझोरी ॥ ६ ॥

पद १४

राम रसीले से रंग रच्यो म्हारे आज वसंत को खेल। टेर.
प्रेम नीर पिचकारी दिलसे छूटत चहुं उर झेल ॥ १ ॥
अधः ऊर्ध्व विच खेल मँड्यो है सुरत शब्द को मेल ॥ २ ॥
धुनविच ध्यान ज्ञान जहाँ अनुभव जनम मरण दुख पेल ॥ ३ ॥
धालचाल रस राम रमैयो रामदास गुरु खेल ॥ ४ ॥

पद १५

नितही वसंत नित फाग मंगल होरी खेलो। टेर.
दया धर्म की केसर घोरी प्रेम प्रीति पिचकार।
भाव भक्ति से भर सतगुरु संग जनम सफल नर नार ॥ १ ॥
क्षमा अबीर चित चंदन सुमरण ध्यान धमार।
ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी उमग उमग रंग डार ॥ २ ॥
चरणोदक अरु महाप्रसाद अपणे शीस चढाय।
लोक लाज कुल काँण छाँडिदे निरभै निसाण वजाय ॥ ३ ॥
कथा कीर्तन मंगल महोत्सव कर संतन से सीर।
कबहु न काज विगरै नर तेरो सत्त सत्त कहत कबीर ॥ ४ ॥

पद १६

खेलन बहुरि न आवूं ऐसा खेलूंगा मैं खेल। टेर.
सुलट खेल बहु जनम बदीता अबके उलटा खेल ॥ १ ॥
रसना कंठ हृदय हुय हिल मिल नाभि कमल रंग रेल ॥ २ ॥
पैठ पयाल आकाश उलट चढि बंक नीझरझर झेल ॥ ३ ॥
त्रकुटी घाट न्हाय हुय निर्मल जन्म मरण दुख पेल ॥ ४ ॥
फागुन साधु संगति गुरु समरथ सेवगराम मिल्यो मेल ॥ ५ ॥

पद १७

श्याम से खेल सखी री नित आनंद मंगल होरी। टेर.
सुषमण होरी खेलण निकसी ज्ञान कुमकुमा घोरी।

सुरतारी कर पिचकारी रंगभर हरि के सनमुख डारी।
पाप भय सब ही भग्यो री ॥ १ ॥
किरपा कर मोय फगाया धगस्या रंग भर लीनी झोरी।
हरि के सन्मुख हुय कर खेलूं सुंदर भाग फल्योरी।
सबे मिल खेलोरी होरी ॥ २ ॥
बहुत जनम की भई दुहागण अबके सुहाग मिल्योरी।
कहत कबीर अमर सुख विलसे सब दुख दूर भयोरी।
सबे मिल हरि कूं रट्योरी ॥ ३ ॥

पद १८

होरी खेलो या संत नगर में मत जावे ... र.
काल कटक फिरे चहुँ फेरा आस पा
इन भय भाग लाग सतगुरु संग हरि ... । १ ॥
दानव दैत्य रहत नहिं साँचत सुरनर
जे जे इन पुर बाहिर रहग्या बंध सक
संत नगर निरभय भय नाहीं के सतगु
सेवगराम दूरा मत जायो सबही काल

पद १९

रसना भई बैरन मोरी करे मनसूं मिल
हरि सूं वियोग कियो अलबेली विषरस
हरि बिन रैन बजर सी लागत तलफत
उठी तन विरह की होरी ॥ १ ॥
इक रसना दूजी मनसा नारी दोय मिल
निशि दिन फिरे विषय रसमाती नगर
मानी नहिं बहुत कह्योरी ॥ २ ॥
कहेरी सुरता सुणरी सुमता यो तन जा
या तन की अब होय फजीती शिर पर
चोरासी में भटक रह्योरी ॥ ३ ॥
एक पुरुष ताके पांच सुंदरी यो घर जा
मनसा नारी फिरे डहैकाणी खट रस च
परस्पर शोर मच्योरी ॥ ४ ॥
लड़ने कूं आ सूरी पूरी झूठी साख भरो
नेह लग्यो है हरामी छेल सूं प्रीति पाछ... ।
ऐसी मतवारी गोरी ॥ ५ ॥

अजहूं चेत कछुहु ना बिगर्‌यो रसना राम कह्योरी।
सुषमणदास शरण सतगुरु की हरि सुमर्‌यो सो तिर्‌योरी।
मैं तो तेरे शरण पर्‌योरी ॥ ६ ॥

पद २०

करुणानिधि अरज हमारी राम सुनलीज्यो मुरारी। टेर.
जन्म मरण को पार न पायो ये दुख बहुत बुरारी।
हाथ जोड़ विनती करूं माधव संकट मेटो भारी।
राम शरणागत थारी ॥ १ ॥
ध्रुव प्रहलाद विभीषण तार्‌यो तारी गौतमनारी।
अजामीलसे अधम उधारे गनिका सी तुम तारी।
नाथ कहा ढील हमारी ॥ २ ॥
धनाभक्त वाजींद कबीरा नामदेव लियो उबारी।
अनत कोटि प्रभु तार दिया है कहा तकसीर हमारी।
राम भूलो मत म्हारी ॥ ३ ॥
रोम रोम गुन्हगार भर्‌यो हूं खूनी बहुत विकारी।
हमसे अधम पार कर करता छीतमदास विचारी।
राम रज हूं मैं तिहारी ॥ ४ ॥

पद २१

मन भावन फागन आयो जामें रसियो राम रिझायो। टेर.
या तनकी मैं मटकी बणाऊं भाव सो रंग भरायो।
सुमता की करले पिचकारी ज्ञान अबीर उड़ायो।
प्रेम को रंग बरसायो ॥ १ ॥
सुरत निरत की ताल बजत है ध्यान को चंग मढ़ायो।
मनसा की मृदंग मनवो बजावे गुरु के वचन सोई गायो।
मनुष्य तन मौसर पायो ॥ २ ॥
सुबुधि गुलाल जुगत की केशर शील बदन छिरकायो।
मृगमद घोरी संतोष कटोरी पियाजी सूं खेल मचायो।
क्षमाको चँवर दुलायो ॥ ३ ॥
भक्ति मुक्ति का फगवा बँटत है विरले हरि जन पायो।
जाके चरण की रज धर मस्तक सेवा...
धनजी को ...

अजहूं चेत कछुइ ना बिगऱ्यो रसना राम कह्योरी ।
सुषमणदास शरण सतगुरु की हरि सुमऱ्यो सो तिऱ्योरी ।
मैं तो तेरे शरण पऱ्योरी ॥ ६ ॥

पद २०

करुणानिधि अरज हमारी राम सुनलीज्यो मुरारी । टेर.
जन्म मरण को पार न पायो ये दुख बहुत बुरारी ।
हाथ जोड़ विनती करूं माधव संकट मेटो भारी ।
राम शरणागत थारी ॥ १ ॥
ध्रुव प्रह्लाद विभीषण ताऱ्यो तारी गौतमनारी ।
अजामीलसे अधम उधारे गनिका सी तुम तारी ।
नाथ कहा ढील हमारी ॥ २ ॥
धनाभक्त वाजींद कबीरा नामदेव लियो उबारी ।
अनंत कोटि प्रभु तार दिया है कहा तकसीर हमारी ।
राम भूलो मत म्हारी ॥ ३ ॥
रोम रोम गुन्हगार भऱ्यो हूं खूनी बहुत विकारी ।
हमसे अधम पार कर करता छीतमदास विचारी ।
राम रज छूं मैं तिहारी ॥ ४ ॥

पद २१

मन भावन फागन आयो जामें रसियो राम रिझायो । टेर.
या तनकी मैं मटकी बणाऊं भाव सो रंग भरायो ।
सुमता की करले पिचकारी ज्ञान अबीर उडायो ।
प्रेम को रंग बरसायो ॥ १ ॥
सुरत निरत की ताल बजत है ध्यान को चंग मढायो ।
मनसा की मृदंग मनवो बजावै गुरु के वचन सोई गायो ।
मनुष्य तन मोसर पायो ॥ २ ॥
सुबुद्धि गुलाल जुगत की केशर शील चंदन छिरकायो ।
मृगमद धोरी संतोष कटोरी पियाजी सूं खेल मचायो ।
क्षमाको चँवर दुलायो ॥ ३ ॥
भक्ति मुक्ति का फगवा बँटत है बिरले हरि जन पायो ।
जाके चरण की रज धर मस्तक सेवादास जस गायो ।
रामजी को शरण सुहायो ॥ ४ ॥

पद ३३

हम्म फकीर अनाहद राता मैं घर अकुला के जाऊंगा।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीनूं दश अवतार न ध्याऊंगा। टेर.
बैठा रहूं न फिर कर लाऊं भूखा रहूं न अघाऊंगा।
पंथड़े जाय पांव नहिं तोडूं घर बैठा ऋधि पाऊंगा॥ १॥
तीरथ जाउं न जलमें न्हाऊं जलका जीव न सताऊंगा।
अड़सठ तीरथ गुरू लखाया घटही भीतर न्हाऊंगा॥ २॥
पाती तोड़ पथर नहिं पूजूं देवी देव न ध्याऊंगा।
पात पात में है पुरुषोत्तम वाकूं नाहिं सताऊंगा॥ ३॥
जड़ी बूंटी औषधि नहिं साधूं नाड़ी वैद्य न लाऊंगा।
सतगुरु वैद्य मिल्या अविनाशी ताकूं नाड़ि दिखाऊंगा॥ ४॥
चंद्र सूर दोउं सम कर राखूं सुन में सुरति समाऊंगा।
कहे कबीर सुनो भाई साधो ब्रह्मजोति मिल जाऊंगा॥ ५॥

पद ३४

ऐसा हाल फकीरों हंदा सुणलीज्यो सब कोई वे।
स्वर्ग मृत्यु पाताल लोकता फिकर फकीरां खोई वे। टेर.
टोपी तत्व सुमरणा चिंतवन सींगी अनहद सोई वे।
नाम निरंतर चोला पहन्या सेली सुरत सुमोई वे॥ १॥
जत कोपीन आड़बंध सत का मगन मतंगा सोई वे।
सिरजनहार तिलक शिर ऊपर सुमरण कंठी पोई वे॥ २॥
धूणी ध्यान लगाय रैणदिन फिकर पावोड़ी पोई वे।
आशा तृष्णा अधिक लाकड़ी धूणी माहिं धसोई वे॥ ३॥
भिक्षा भाव सहज की चीपी झोली अकलज टोई वे।
जो मांगै ताही कों देवै ऊंच नीच नहिं कोई वे॥ ४॥
सेज्या भूमि आकाश ओढ़णा जोति चंद्रमा जोई वे।
निशि दिन पवन करत खवासी दृढ आसण पर सोई वे॥ ५॥
सदा उदास रहत जगत सूं निस्पृही निरमोही वे।
तातें तीव्र वैराग्य धारणा राग द्वेष नहिं कोई वे॥ ६॥
एका एकी रहत रैण दिन दिलकी दुर्मति खोई वे।
कहत कबीरा अलमस्त फकीरा रावरंक नहिं कोई वे॥ ७॥

पद २४

खेलन की ऋतु भारी ।
नु पाय भजन कर हरि को ओ मोसर दिन चारी ।
अब चेत अनारी । टेर.
गुलाल अबीर प्रेम कर प्रीति तणी पिचकारी ।
स उसास राम रंग भरभर सुरति सरीसी नारी ।
इन संग रचारी ॥ १ ॥
टो खेल सकल जग खेले उलटो खेल खिलारी ।
गुरु सीख धार शिर ऊपर सतसंगति चल जारी ।
म सब दूर गमारी ॥ २ ॥
प्रहलाद् विभीषण खेलें मीरां करमा नारी ।
भावन जगमें इमि खेलें सो नहि आवत हारी ।
खी सुन लीज्यो हमारी ॥ ३ ॥

पद २५

रीया रंग खेलन आयो ।
ला पिंगला सुषमण नारी ता संग खेल खिलायो ।
रत पिचकारी चलायो । टेर.
चो रंग जगत को छाडो साचो रंग लगायो ।
हिर भूल कबहु मति जायो काया नगर बसायो ।
वै निरभै पद पायो ॥ १ ॥
चूं उलट फेर घट भीतर अनहद नाद बजायो ।
स बकवाद दूर तज दीजे ग्यान गीत नित गायो ।
पिया के मन तब भायो ॥ २ ॥
नूं ताप तीन गुण त्यागो संशय शोक मसायो ।
न भावन हिव यूं नित गायो फेर जनम नहिं पायो ।
ति में जोति समायो ॥ ३ ॥

होरी सोरठ ।

पद २६

गुन पी रे मधपू हुय मतवाला प्याला प्रेम हरी रसका । टेर.
बालपणो हंस खेल गुमायो तरुण भयो तिरिया बसका ।
वृद्ध भयो कफ बायुज घेर्यो पकड्यो रह्यो नहिं जाय गुसका ॥ १ ॥
पाप पुण्य दोय भुगतण आयो कुण तेरा और तूं किसका ।
हिंगळाजदान हरी गुण गायले तन जोबन सुपना निशिका ॥ २ ॥

पद ३३

शब्द फकीर अनाहद राता मैं घर अकुला के जाऊंगा।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीनूं दश अवतार न ध्याऊंगा। टेर.
बैठा रहूं न फिर कर लाऊं भूखा रहूं न अघाऊंगा।
पंथबै जाय पांथ नहिं तोड़ूं घर बैठा ऋधि पाऊंगा ॥ १ ॥
तीरथ जाउं न जलमें न्हाऊं जलका जीव न सताऊंगा।
अड़सठ तीरथ गुरू लखाया घटही भीतर न्हाऊंगा ॥ २ ॥
पाती तोड़ पथर नहिं पूजूं देवी देव न ध्याऊंगा।
पात पात में है पुरुषोत्तम ताकूं नाहिं सताऊंगा ॥ ३ ॥
जड़ी बूँटी औषधि नहिं साधूँ नाड़ी वैद्य न लाऊंगा।
सतगुरु वैद्य मिल्या अविनाशी ताकूं नाड़ि दिखाऊंगा ॥ ४ ॥
चंद सूर दोउं सम कर राखूं सुन में सुरति समाऊंगा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो ब्रह्मजोति मिल जाऊंगा ॥ ५ ॥

पद ३४

ऐसा हाल फकीरों हंदा सुणलीज्यो सब कोई वे।
स्वर्ग मृत्यु पाताल लोकता फिकर फकीरां खोई वे। टेर.
टोपी तत्व सुमरणा चिंतवन सींगी अनहद सोई वे।
नाम निरंतर चोला पहऱ्या सेली सुरत सुमोई वे ॥ १ ॥
जत कोपींद आड़बंध सत का मगन मतंगा सोई वे।
सिरजनहार तिलक शिर ऊपर सुमरण कंठी पोई वे ॥ २ ॥
धूणी ध्यान लगाय रैणदिन फिकर पावोड़ी पोई वे।
आशा तृष्णा अधिक लाकड़ी धूणी माहिं धसोई वे ॥ ३ ॥
भिक्षा भाव सहज की चीपी झोली अकलज टोई वे।
जो मांगे ताही कों देवे ऊंच नीच नहिं कोई वे ॥ ४ ॥
सेज्या भूमि आकाश ओढ़णा जोति चंद्रमा जोई वे।
निशि दिन पवन करत खवासी दृढ आसण पर सोई वे ॥ ५ ॥
सदा उदास रहत जगत सूं निस्पृही निरमोही वे।
तातें तीव्र वैराग्य धारणा राग द्वेष नहिं कोई वे ॥ ६ ॥
एका एकी रहत रैण दिन दिलकी दुर्मति खोई वे।
कहत कबीरा अलमस्त फकीरा रावरंक नहिं कोई वे ॥ ७ ॥

राग सूहा।

पद ३५

कहोनी सखी माधोजी कब मिलै सांचो म्हारो सिरजन हार। टेर.
म्हारे आंगणे है सखी मौरी अंबलारी डाल।
जिण पर बैठी कोयली बोलै शब्द रसाल ॥ १ ॥

किस विधि काली कोयली किस विधि राता नैण ।
किस विधि बामण बूमणी क्यूं थारा मधुरा बैण ॥ २ ॥
विरह व्यथा तन साँपडी रोय रोय राता नैण ।
राम विछोड़े बामणबूमणी सुमरण मधुरा बैण ॥ ३ ॥
थारे कोयल पाँखड़ी उड़ मिल क्यों नहिं जाय ।
जाय मिल सगुणा श्याम सूं विरहनि धान न खाय ॥ ४ ॥
गल बिच डारूं गूदड़ी करलूं जोगण भेस ।
जाय मिलूं सगुणा श्याम सूं तो साँचो उपदेश ॥ ५ ॥
मो में अवगुण अति घणा तुम गुणवंता श्याम ।
कृपाकर दरशण देवो कान्हड़ के पति राम ॥ ६ ॥

पद ३६

आशा में अलूझी रामैयो कब मिले मिलियां हरिने जाण न देह ।
अंचलो झालीने हरिने राखलूं नैणा म्हारे नीर भरेह । टेर.
राम रहूको म्हारे मनवस्यो विसारूं पण विसर्यो न जाय ।
एक घड़ी जो वीसरूं हिरदे खटू के आय ॥ १ ॥
जब सोऊं जब रोय जणां जब जागूं जब एक ।
सेज ढूंढोळी पिव पायो नहीं हिवड़ा में पड़ गयो छेक ॥ २ ॥
घेर लगाई म्हारा वालमा विरहिन करत विलाप ।
कोइयक आड़ा होगया पूरब जनम रा पाप ॥ ३ ॥
बालपणेरी प्रीतड़ी बुढापे लग दीठ ।
कहि बचनो आवो हरी जरतां बुझायो अंगीठ ॥ ४ ॥

पद ३७

बालूं रे विधाता थारे लेखने हरि बिच लिख्यो रे विजोग ।
करम रेख कद पालटे कब हरि मिलन संजोग । टेर.
दब की दाधी लाकडी सिलग सिलग धूंधाय ।
भाव भली विरहजु बुरा मोपे सह्यो न जाय ॥ १ ॥
सांप लड्यो विच्छण डसो सिहज मारो मोय ।
अग्नि जलूं जलमें पडूं राम न छोडूं कोय ॥ २ ॥
गजके हित हरि धाविया प्रगट्या हित प्रहलाद ।
चीर बधार्यो द्रौपदी वाकी राखी लाज ॥ ३ ॥
बालखिल्य राख्या डूबता हरि धार्यो अवतार ।
दास कबीरो बीनवे गया समंदाँ पार ॥ ४ ॥

राग सोरठ लंगरी।

पद ३८

पिया मोरे नाम लुभानी हो।
नाम लेत तिरता सुण्या जैसे पाहन पानी हो। टेर.
सुकृत कछू ना कियो बहु काम कमानी हो।
गनिका कीर पढावतां बैकुंठ पठानी हो ॥ १ ॥
अर्धं नाम कुंजर लियो वाकी अवधि घटानी हो।
गरुड छांड हरि आयिया पशु जून छुडानी हो ॥ २ ॥
जो नाम हमारे गुरु दियो सोइ येर पछानी हो।
मीरां दासी वारणे अपनी कर जानी हो ॥ ३ ॥

पद ३९

पिया तैं प्रीति न जानी हो।
तलफ मुई तुम कारणे तुम चित्त न आनी हो। टेर.
मीनजु तलफे नीर कूं नहिं जानत पानी हो।
दया न आई देखतां मन ऐसी ठानी हो ॥ १ ॥
पकृत पतंगा आगमें कछु दीप न मानी हो।
प्रीति की रीति विचारतां भइ देह की हानी हो ॥ २ ॥
प्रीति करी मृग नाद सूं कछु नाहिं ज छानी हो।
मुखसैं वेणु वजाय के शर मार्‍यो तानी हो ॥ ३ ॥
प्रीति गयांई क्यों बने सुनो सारंगपानी हो।
दास कूं अंग लगाइये तुम हो सुख दानी हो ॥ ४ ॥

पद ४०

काहू से नेह न करिये रे।
नेह कियां निश्चै सही विन पावक जरिये रे। टेर.
जग की झूठी मिलनता मिल बंधन परिये रे।
बंध छोड़ निरबंध हो सुख सिंधु विचरिये रे ॥ १ ॥
यो जग पावक रूप है जामें पाँव न धरिये रे।
यो ही ज्ञान विचार के हरि पंथ विचरिये रे ॥ २ ॥
सुत दारा सब झूठ है येतो देखत मरिये रे।
तुलसी तन मन वारके हरि नाम उचरिये रे ॥ ३ ॥

पद ४१

रामैयो मित्र हमारो हो।
तुम बिन बीजो को नहीं जोयो जग सारो हो। टेर.

ज्यूं सूरा रणखेत में लोहा तन सहिये हो।
ब्यावर केरी पीर को बंझा किम लहिये हो॥ २॥
कुलक्षणां नर हासी करै बेदरदी विचारा हो।
परमानंद की वीनती सुन साहिब प्यारा हो॥ ३॥

पद ४५

लगै मोहि राम पियारा हो।
प्रीति तजी संसार से किया मन न्यारा हो॥ टेर.
सतगुरु शब्द सुनाइया दिया ज्ञान विचारा हो।
भरम तिमर भागे सबै घट भया उजियारा हो॥ १॥
मैं बंदा उस ब्रह्म का जाका वार न पारा हो।
ताहि भजै कोइ साधवा जिन तन मन मारा हो॥ २॥
चाख चाख सब छोडिया माया रस खारा हो।
राम अमीरस पीजिये छिन वारंवारा हो॥ ३॥
आन देव को ध्यावसी जाके मुख छारा हो।
राम निरंजन ऊपरे जन सुंदर वारा हो॥ ४॥

पद ४६

ऐसा जन रामजी को भावै हो।
कनक कामनी परिहरै नहिं आप बंधावै हो। टेर.
सब ही तैं निरवैरता काहू न दुखावै हो।
शीतल वाणी बोल के अमृत बरसावै हो॥ १॥
कैतो मुनी होय रहै कै हरि गुण गावै हो।
भरम कथा संसार की सब दूर भगावै हो॥ २॥
पाँचूं इंद्री वस करै मनही मन लावै हो।
काम क्रोध मद लोभ को खिण खोद वधावै हो॥ ३॥
चोथे पद को चीन्ह के वहां जाय समावै हो।
सुंदर ऐसे साधु के ढिग काल न आवै हो॥ ४॥

पद ४७

समझ मन मूरख गैला रे।
बाहिर धोयां क्या भयो घट भीतर मैला रे। टेर.
...न दिवानो यों फिरै जैसे छाल्यां में छैला रे।
... वड़ी कर छोलती छुरियां घाव सहैला रे॥ १॥
कहै मीठो जीमले माणीजै महिला रे।
जेता दुख ऊपजै चोरासी सहैला रे॥ २॥

आव हमारे पीतमा बलि जाउं मैं तेरे हो।
ज्यूं चातक जल बूंदकूं विरहनि यूं टेरे हो ॥ १ ॥
वाट तुमारी जोवतां केता दिन बीता हो।
तुमरे तो खातर नहीं हुय रहा नचीता हो ॥ २ ॥
राम विछोहि मैं दुखी मन करत अनोहा हो।
पाचूं वैरण हुय रही यां कियां विछोहा हो ॥ ३ ॥
दुख मेटण सुखसागरा निरधारां आधारा हो।
सहजराम की वीनती घर आवो मेरा प्यारा हो ॥ ४ ॥

पद ४२

ऐसी मोहि रैन विहाई हो।
कौन सुनै कासूं कहूं बरनी नहिं जाई हो। टेर.
पूरण ब्रह्म विचारते मोहि नींद न आई हो।
जागत जागत जागियो सूते न सुहाई हो ॥ १ ॥
कारण लिंग स्थूल की सब शंक मिटाई हो।
जाग्रत स्वप्न रु सुषुप्ति तीनों विसराई हो ॥ २ ॥
तुरिया पद अनुभव भयो ताकी सुध पाई हो।
अहंब्रह्म के कहत ही हूं यो गयो विलाई हो ॥ ३ ॥
वचन तहाँ पहुंचै नहीं यों सैन बताई हो।
सुंदर तुरियातीत में सुरती ठहराई हो ॥ ४ ॥

पद ४३

सखी म्हारी नींद नसानी हो।
पिय को पंथ निहारताँ सारी रैण विहानी हो। टेर.
सब सखियां मोहि सीखदै मन एक न मानी हो।
बिन दरशन कल ना परै मन ऐसी जानी हो ॥ १ ॥
अंग क्षीण व्याकुल भई मुख मधुरी बानी हो।
अंतर वेदन विरह की पिय पीर न जानी हो ॥ २ ॥
चातक ज्यूं घन कों रटै मछली बिन पानी हो।
जन तुरसी पिय बिन मिले सुध बुध विसरानी हो ॥ ३ ॥

पद ४४

दरद की कासे कहिये हो।
बेदरदी जाणै नहीं अपणे तन सहिये हो। टेर.
पहले पावक परजली उर अंतर दाघी हो।
धूंवा हाल दीसे नहीं विरहिन इस लागी हो ॥ १ ॥

राग सोरठ।

पद ५०

अबै म्हाने पार उतारो महाराज प्रभु थानें निज भगतांरी आन। टेर.
काम क्रोध मद लोभ मोहमें भूलो पद निरवान।
बुडो जात हूं भवसागर में तारो श्याम सुजान ॥ १ ॥
लख चोरासी भरमत भरमत मोड़ी पड़ी पिछान।
अब तो शरण आयो चरणाँरी थे मत दीज्यो जान ॥ २ ॥
मैं हूं कुटिल अधम अपराधी भजियो नहिं भगवान।
कहै नरसी तुम पतित उधारण गावै छै वेद पुरान ॥ ३ ॥

पद ५१

थे थांके कानी जोज्यो राज अवगुण म्हाँरा मति देखो। टेर.
अधम उधारण नाम तुम्हारो एतो मनमें हिल मिल पेखो ॥ १ ॥
माणसछां म्हाँने नहीं ठिकाणो तुम विन किणपर करां परेखो ॥ २ ॥
ब्रजनंदजी म्हांने थांका कहै छै जेज करो छो राज ओ कांई लेखो ॥ ३ ॥

पद ५२

कायमां कीर्ति करूंला रे तू मोटो दातार।
सबतें सिरजीला साहिबजी तू मोटो करतार। टेर.
चौदह भवन भाँजे घडै घड़त न लावे वार।
थापै उथपै तू धणी धिन धिन सिरजनहार ॥ १ ॥
धरती अंबर तैं किया पाणी पवन अपार।
चांद सूरज दीपक रच्या रैण दिवस विस्तार ॥ २ ॥
ब्रह्मा शंकर तैं किया विष्णु लियो अवतार।
सुर नर साधु सिरजिया करले जीव विचार ॥ ३ ॥
आप निरंजन हुय रह्या कायमो कोतकहार।
दादू निर्गुण गुण कहै जाऊंगा बलिहार ॥ ४ ॥

राग सोरठ मूला।

पद ५३

कोई प्रीतम राम मिलावे रे।
प्यासलगी चातक ज्यूं सजनी और न कछु सुहावे रे। टेर.
सहज सिंगार भयो पावक सम दिन दिन विरह सतावे रे।
है कोई ऐसा पर उपकारी हरिजीने आन मिलावे रे ॥ १ ॥
कोई साधु सो पर उपकारी मो उर साल मिटावे रे।
साठि बूंद ज्यों सीच सनेहा भव मांहि मरत बँचावे रे ॥ २ ॥
कहा कहूं करुणानिधि स्वामी अब कछु कहत न आवे रे।
अब तुलसी विरहनि व्याकुलता विन दरसन बिळलावे रे ॥ ३ ॥

ठकुराई दिन चारकी सुखपाल वहेला रे ।
नाम विना पहुंचे नहीं यहां को यहां ही रहेला रे ॥ ३ ॥
पांच संगाती संगमें गुरजाँ याण सहेला रे ।
कहि कबीर समझ्यां विना कांई उत्तर देला रे ॥ ४ ॥

राग सोरठ रायसा ।

पद ४८

पिया तुम देखो मेरी ओर हो ओर ।
कांई होयरहे चितचोर हो चितचोर । टेर.
ऊंचा तरवर गहरी छाया शाखा पात सदन फल लाया ।
तापर टाली सत्रन बनाया नाहिंन दूजी ठोर हो ठोर ॥ १ ॥
पूर्व जन्म की प्रीति विचारो अवगुण मेरा चित्त न धारो ।
ज्यूं वायस वल जहाज विचारो नाहिंन दूजी दोर हो दोर ॥ २ ॥
भँवरी भारत माहिं पुकारी लज्जा राखी पांडवनारी ।
मंजारी सुत अग्नि प्रजारी गज के तंदू तोर हो तोर ॥ ३ ॥
उत्तरा जरत गरभ को राखे प्रीति काज अर्जुन रथ हांके ।
झूठे घोर भीलनी के चाखे भीषम को पण जोर हो जोर ॥ ४ ॥
करमा खीच प्रीतिकर पायो बिनतेड़े विदुर घर आयो ।
विप्र सुदामो तंदुल लायो सो लीने पट छोर हो छोर ॥ ५ ॥
शरण आयां की सहाय करीजे बांह गह्यां की लाज चहीजे ।
जन पूरण को दरशन दीजे गुरु मस्तक के मोर हो मोर ॥ ६ ॥

पद ४९

पिया तुम देखो मेरी पीरहो पीर ।
तुम गुणवंता गंभीर हो गंभीर ॥ टेर.
जग जीवन जग अंतरजामी सकल शिरोमणि सबके स्वामी ।
विरद तुमारो है घननामी तुम सुखसागर की सीर हो सीर ॥ १ ॥
अपने स्वारथ में रंग राता परकी पीर न जाण हो दाता ।
समरथ स्वामि निरंजन नाथा आन बंधावो धीर हो धीर ॥ २ ॥
अजामिल कुब्जा कूं तारे बहुता अपती पतित उधारे ।
इन सबहिन के कारज सारे मोमें कहा तकसीर हो तकसीर ॥ ३ ॥
विनती बार बार कहा कीजे लाज विरद की राज चहीजे ।
जन पूरण को दरशण दीजे पार उतारो तीर हो तीर ॥ ४ ॥

पाट न खोले मुखाँ न बोले साम नहीं परभात।
अबोलणे में अवधि बीती काहे की कुशलात ॥ १ ॥
स्वप्नमें हरि दरशण दीन्हो मैं न जाण्यो हरिजात।
नैन हमारे उघरि आए मरोंगी विष खात ॥ २ ॥
रैन अंधेरी विरहिन घेरी तारा गिणत विहात।
काढ खड्ग कंठ कापलोंगी करोंगी अपघात ॥ ३ ॥
आवन आवन कहि गये मोहि मिलनकी बात।
दास मीराँ भई व्याकुल बालकज्यों विललात ॥ ४ ॥

पद ५८

जोगिया ने राखो रे बिलमाय। टेर.
ऊठो पांच सहेलियाँ लागाँ जोगिया रे पाय।
इण जोगियारे मन कांई बसी जी म्हारी नगरी छोड्याँ जाय ॥ १ ॥
तो विन जोगी झूँपड़ीरे वाला जंगल बंधेली जाय।
इण नगरी री बातड़ी कुण कहेला आय ॥ २ ॥
शरणे आयो बहु सुख पायो अब क्यूं छोड्याँ जाय।
कमर कशी परदेशने कबे मिलोगे आय ॥ ३ ॥
शरणो त्याग्यो बहु दुख पायो दियो चोरासी माँय।
कहत कबीर सुणो भाई साधो कुण आवे कुण जाय ॥ ४ ॥

पद ५९

जोगियाजी हो मत जाज्यो वचना पेल। टेर.
आवतड़ां आनंद हुवो रे जोगी जातां करगयो हेल।
थारा शब्द सुहावणा रे जोगी म्हारे अंतर वहगयो शेल ॥ १ ॥
म्हारो जिवड़ो थांमें बसे रे जोगी ज्यों दीपक में तेल।
म्हें तो मनमें जाणियो रे जोगी करसी म्हासूं खेल ॥ २ ॥
सूरत थारी जीवनम्हारी रे जोगी योही रामत खेल।
रूपदास की बीनती रे जोगी कदे मिलेगो मेल ॥ ३ ॥

राग सोरठ।

पद ६०

मेरो मन हरि हठ नाहिं तजे। टेर.
ज्यों युवती अनुभव प्रसवंती दारुण दुख उपजे।
हुय अनुकूल विसार शूल शठ पुनि खल पतिहि भजे ॥ १ ॥
इंद्रिय लोलुप गृह्ह पशूज्यूं जहाँ तहाँ शिरत्राण बजे।
तदपि अधम विचरे तेहि मारग तोउ न मूढ लजे ॥ २ ॥

पद ५४

वाहवारे मौज फकीरांदी । टेर.
कभी इक खासा मलमल मौसर कभी इक गुदड़ी लीरांदी ॥ १ ॥
कभी इक घासी टुकड़ा मौसर कभी इक चावल खीरांदी ॥ २ ॥
कभी इक आसण राजमहल में कभी इक गली अहीरांदी ॥ ३ ॥
वात जगत की कछु न सुहावै सील सुणी गुरु पीरांदी ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुणो भाई साधो चालैचाल अमीरांदी ॥ ५ ॥

पद ५५

सुलतानी सियाँ बलख बखारेंदा ।
धिन या वांदी गुरू हमारे राहबताया पियप्यारेंदा । टेर.
चेरी सुती खरी विभूती चाबुक चोट चकारेंदा ।
पातशाह सूं किया जबाबू येही हाल तुमारेंदा ॥ १ ॥
सवा टाँक तन चोला पहरे पाँच टाँक तन सारेंदा ।
अब तो बोझ उठावण लागा गूदड़ सेर अठारेंदा ॥ २ ॥
चंगीचीज निवाले लेता ताती तुरत तयारेंदा ।
अब तो टूका पावण लागा सीला सांझ सवारेंदा ॥ ३ ॥
दलबादल ले लश्कर चढ़ता पड़ती धोंह नगारेंदा ।
अब तो प्यादा चालणलागा त्याग लिया पेजारेंदा ॥ ४ ॥
इतनी तजकर लिवी फकीरी धिन आकीन विचारेंदा ।
कहै कबीर सुणो भाई साधो फकर ज्ञान अखारेंदा ॥ ५ ॥

राग सोरठ ।

पद ५६

वे दिन कब आवै है माय ।
जा कारण या देह धरी मिलवो अंग लगाय । टेर.
जे जाणूं मैं हिल मिल खेलूं तन मन सुरत समाय ।
या कामना करो परिपूरण समरथ हो रामराय ॥ १ ॥
मैं उदास माधव नित चाहूं चितवत रैण विहाय ।
सेज हमारी सिंह भई है जब जागूं जब खाय ॥ २ ॥
यह अरदास दासन की सुणियै तनकी तपत बुझाय ।
कहै कबीर मिलो सुखसागर मिलकर मंगल गाय ॥ ३ ॥

पद ५७

माई मेरी हरि नहिं पूछी बात ।
पिंड भाँहिलो प्राण पापी निकस क्यों नहिं जात । टेर.

मोहि भरोसो लाखाँवाताँ खाली जाय न खेत ॥ २ ॥
सुत अपराध करै वहुतेरा जननी तजत न हेत ॥ ३ ॥
पूरणदास पर अति निठुरता अजहूं सार न लेत ॥ ४ ॥

पद ६४

अजहु न निकसत प्राण कठोर। टेर.
अवधि वदीती अजहु नहीं आये कितहु रहे चितचोर ॥ १ ॥
चार पहर चारों जुगवीते रैण गुमाई भोर ॥ २ ॥
दरसण विना वहुत दिन वीते सुंदर प्रीतम मोर ॥ ३ ॥
कवहु नैण निरख नहिं देखे मारग चितवत तोर ॥ ४ ॥
दादू ऐसे आतुर विरहिन जैसे चंद चकोर ॥ ५ ॥

पद ६५

अब हरि भूल्यां नाहिं वने। टेर.
विपति विदारण तुमहो गिरधर सुखमें मित्र घने ॥ १ ॥
मैं आधीन कछु नहिं लायक तुम विन कोन गिने ॥ २ ॥
ज्यूं त्यूं कर मोहि पार उतारो व्रजनिधि लाज तुमें ॥ ३ ॥

पद ६६

हरि विन ये दिन जात दुखारे।
सेज श्रृंगार सकल सुख त्यागे आदिन तें भये न्यारे। टेर.
सुणरी सखी वरखा ऋतु आई वरसे सब घन प्यारे।
हमरी देह अजूताँई ऊन्हीं विरह अनेसो जारे ॥ १ ॥
कोन सुने कोन या मानें उर विच करवत सारे।
मन ही माहिं विसूरे विरहिन मूरछ नैणजल डारे ॥ २ ॥
आरतवंत चातक ज्यूं रजनी सारी रैण पुकारे।
जन तुलसी प्रभु प्रीति आनिके घन ज्यूं आन मिलारे ॥ ३ ॥

पद ६७

हरि मेरे तारण तरण जहाज। टेर.
भव भव में कोऊ चैन न पायो अब मेरी तुमही को लाज ॥ १ ॥
आन देव पूज्या वहुतेरा सर्यो न एको काज ॥ २ ॥
अब तो शरण राख जगतपति वधतावर महाराज ॥ ३ ॥

पद ६८

हमारे प्रभु अवगुन चित न धरो।
समदर्शी है नाम तुमारो चोंहो पार करो। टेर.

मैं हाऱ्यो कर जतन विविध विधि अतिशय प्रवल अजै।
तुलसीदास वस होय तबै जब प्रभु प्रेरक बरजै ॥ ३ ॥

पद ६१

मन पछितैहो अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाय नर हरि भज कर्म वचन मन ही तें। टेर.
सहस्राबाहु दशवदन आदि नृप बचे न काल वलीते।
हम हम कर धन धाम सँवारे अंत चले उठ रीते ॥ १ ॥
सुत वनितादि जान स्वारथ रत नाँ कर नेह इन्हीते।
अंतहु तोहि तजेंगे पामर तू न तजे अब हीते ॥ २ ॥
तज अनुराग जाग जड़ मूरख त्याग दुरासा जीते।
बुझहि न काम अग्नि तुलसी के विषय भोग रस पीते ॥ ३ ॥

पद ६२

हे हरि वो दिन क्यों न करै।
कर करवा कोपींद कमर पट मैं ममता निवरै। टेर.
मोह क्रोध दुख सुख संशय भ्रम कामादिक विछुरै।
ज्ञान वैराग्य संत जन संगति यो मन विपुल धरै ॥ १ ॥
विजित इंद्रियाँ विमद मत्सर तजि क्रोधाग्नि न जरै।
यथालाभ संतोष मानिके लोलुपता न करै ॥ २ ॥
तृष्णा दंभ लोभ हठ तजिके उत्पथ पग न धरै।
समता सत्व शुद्धि धीरज धरि निर्भय है विचरै ॥ ३ ॥
मित्र अमित्र आपनो दूजो मैं तैं चित न धरै।
दया विवेक शील संग लेके दृढ मन मौन करै ॥ ४ ॥
तजि संकल्प विकल्प कल्पतरु तव पद ध्यान धरै।
कर्म जाल संसृति अनेक के सो सब ही पर जरै ॥ ५ ॥
मन क्रम वचन निसारि विषयरस रामहि राम ररै।
स्वर्ग भुक्ति ब्रह्मादि लोककी अभिलाषा न करै ॥ ६ ॥
एकाकी दृढ निस्पृह आसन गुरुवच मनन करै।
चिन्मय निखिल अखंडरूप तव तासूं पल न टरै ॥ ७ ॥
तूं सर्वज्ञ सर्व कारण पर निजप्रण क्यों न धरै।
बालकृष्ण कूं दीन जानि के क्यों नहिं पार करै ॥ ८ ॥

पद ६३

अब हरि कहांगये करुणा केत। टेर.
अधमउधारण पतितौं पावन कहत पुकाऱ्या नेत ॥ १ ॥

भरतखंड उधार करण कूं आये हैं महाराज ॥ ४ ॥
सत हरिचंद कबीर नामदे काशी शंकर राज ॥ ५ ॥
लालूरामकूं शरणे राखो अपने बिड़द की लाज ॥ ६ ॥

राग कालिंगड़ो ।

पद ७३

निमिष मन ना करों न्यारो हे ।
रूड़ो सतपुरुषांरो धाम, सिंहथल लागे प्यारो हे । टेर.
सिंहथल लागे सुहावणो, धोला धोरांमाहिं ।
मानछोत शिवपुरी समसोहि, दरस्यां सब दुख जाहि ॥ १ ॥
अवधपुरी मथुरा द्वारावती, काशी गया प्रयाग ।
तीर्थगुरुसे अधिक कोटि फल, परसे ते बडभाग ॥ २ ॥
चेतन महन्त भये जहां चकवे, ज्यों भागीरथ भूप ।
हरिपुरसों आये इलऊपर, भक्ती गंगसरूप ॥ ३ ॥
दयावन्त गुणवन्ता ज्ञानी, जनकराय ज्यों जान ।
रामचन्द्र जैसे मर्यादी, सत हरिश्चन्द्र समान ॥ ४ ॥
तिहँ गादी सोहि मनमोहि, श्रीश्रीरामप्रताप ।
प्रीति सहित पद परसे कोई, हरे पाप त्रय ताप ॥ ५ ॥
रामचोकमें दिपे रवीसम, मुख शोभा जिमि चन्द ।
शुद्धमना सतपुरुष शान्तिचित, गावत गुण गोविंद ॥ ६ ॥
दया करो दीनानाथ दयालू, रामप्रताप महाराज ।
माँगूँ दोउँकर जोड़ देह मोहि, रज चरणांरी राज ॥ ७ ॥
जन्म जन्म सिंहथल गुण गाऊं, नहिं पाऊं मैं पार ।
भाखे मुक्त महर यों भजन्यो, सिंहथल को आधार ॥ ८ ॥

राग कामिनी सोरठ ।

पद ७४

मतिदेखो करणी हमारी । राज लेखो बिरद मुरारी । टेर.
कहाकियो गजराज धर्म नेमा । डूबत मुख ररर प्रेमा ।
सुनताँ ततकाल पधारे । वाके फंद काठ दुख टारे ॥ १ ॥
कहा अजामेल कियो आचारा । वाकी करणी नाहिं लिगारा ।
सुत हेत नारायण गायो । जमदूतां पास छुडायो ॥ २ ॥
कहा कुब्जा कियो तप भारी । वाकूं सूँज परापतिसारी ।
वाकी कीरति मुख मुख गावे । शुक श्रीभागवत बतावे ॥ ३ ॥

एक नदियाँ एक नाल कहावत मैलो नीर भरो।
जब मिलिगे तब एक वरण भे गंगानाम परो ॥ १ ॥
एक लोहा पूजा में राखत एक घर वधिक परो।
सो द्विविधा पारस नहि राखत कंचन करत खरो ॥ २ ॥
एक माया एक ब्रह्म कहावत सूरश्याम झगरो।
के याको निर्वाह करो प्रभु नहिं प्रण जात टरो ॥ ३ ॥

पद ६९

गोविंद गाढ़ाछोजी दिलड़ारा मीत। टेर.
प्रीति करो तो ऐसी कीज्यो ज्यूं गजगीरी भीत ॥ १ ॥
कपटी मित्रसें प्रीत न कीजे छोडचले अधवीत ॥ २ ॥
जव जम आय पँकड़ लेजावै होसी बहुत फजीत ॥ ३ ॥
कहै वखतावर हरि को भजन कर निर्भय होय नचीत ॥ ४ ॥

पद ७०

ऊमर थारी जावै छै जी दियां रे दगो। टेर.
श्याही गई सपेती आई हुय गयो श्वेत वगो ॥ १ ॥
ओ संसार ओसको पानी चाल्यो जात भगो ॥ २ ॥
मात पिता सुत कुटुम्ब कवीलो स्वारथ लार लगो ॥ ३ ॥
भूप विजयकी याही है वीनती प्रभुविना कोई ना सगो ॥ ४ ॥

पद ७१

प्रिय म्हांनै लागे छै जी श्रीसिंहथल गुरुधाम।
जहाँ रटत अहोनिशि राम। टेर.
श्रीजैमल शिष्य शिव पदसु जाहि पद विराजे संत हरिराम ॥ १ ॥
भयभ्रमहारी बलिहारी विहारी शरणागति विसराम ॥ २ ॥
धिन हरिदेव देव तक साहरा ठाहरा मोतीराम ॥ ३ ॥
श्रीरघुनाथ चेतन चरणाश्रित नरसिंहदास गुलाम ॥ ४ ॥

पद ७२

चलो चलो सखी सिंहथल धिन महाराज।
जन हरिराम है भेप उजागर जीवां तारण जहाज। टेर.
देव सृष्टि दरशण को आवे मन वांछित सब काज ॥ १ ॥
शिवसनकादिक और ब्रह्मादिक ऐसो वण्यो समाज ॥ २ ॥
च्यार मुक्ति अरु च्यार पदारथ इण मौसर है आज ॥ ३ ॥

पद ७८

जिव सतगुरु विन दुख पावे। म्हारे नैणां नींद न आवे। टेर
वे परम शून्यके वासी। अव यहां से भये उदासी।
वे अमर लोक में पहुंता। अब राम जना यहाँ जोवता ॥ १
अव वा सूरत कब पाऊं। मैं रात दिनां विललाऊं।
मैं एक घड़ी भी न रहता। वे वायक अमृत कहता ॥ २ ॥
अव धीरज कोण बंधावे। मोहि राम अमृत कुण पावे।
वे पूरण ब्रह्म अवधूता। है अर्जुन जाको पूता ॥ ३ ॥

राग सोरठ।

पद ७९

कांई सूतो नींद वटाऊड़ा। वीर वाट घणी रे। टेर.
आवेली नींद सोय मत जाइयो। सोवाने रैण घणी रे ॥ १ ॥
इन निद्रा में नफो नही है। पूछेला जाव धणी रे ॥ २ ॥
अवघट घाट विषम का मारग। खांडेकी धार अणी रे ॥ ३ ॥
मात पिता सुत नारि कवीलो। तेरो कोई नाहिं धणी रे ॥ ४
कहे घखतावर सुणो भजनंदजी। अवे जमसे आण घणी रे ॥

पद ८०

शरणे आया श्याम विहारी जी। राज ताम्यां सजेला। टेर.
अधम उधारण साहिब सांचा। जे जग आन भजेला ॥ १ ॥
आयलई मैं ओट रावरी। प्रभु गहि बांह तजेला ॥ २ ॥
ललनासखी मेरो कहा बिगरैगो। रावरो विरद लजैला ॥ ३ ॥

पद ८१

शरणे आयां री सांवरा चरग पहोला। टेर.
नेह न घट ठो यह तो पारिद ज्यूं एकरस सदा रहोला ॥ १ ॥
ओगुण दपट धरो जाअम तल हरि अंग बांह गहोला ॥ २ ॥
ललनासखी प्रभु कमल वदन एं कब मोहि वचन कहोला ॥ ३

पद ८२

जाऊं कहां तजि चरण तुम्हारे। टेर.
काको नाम पतित पावन जग किहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥
कोन देव विरदाइ विरद दिन हठि २ अधम उधारे ॥ २ ॥
खग मृग व्याध पाषाण विटप जड़ यवन कवन गुण्तारे ॥ ३ ॥

कहा गनिका पतिव्रतधारी । सो बैठ विमान सिधारी ।
तुम पतितउधारण देवा । सुरनर मुनि लहत न भेवा ॥ ४ ॥
शरणागत लेत उबारी । यह आदूरीति तुम्हारी ।
गुरु चाल दरस बलिहारी । जन पूरण तन मन वारी ॥ ५ ॥

पद ७५

करुणानिधान सुनिये । कछु करुणा का न मेरी । टेर.
प्रहलाद के हितकारी । खंभ फाड़ के देहधारी ।
नरसिंह रूप कहायो । सब संतन के मन भायो ॥ १ ॥
गजकी अरज तुम मानी । सो तो वदत वेद वानी ।
ग्राह के जो फंद काटे । अघ कोटि कोटि दाटे ॥ २ ॥
तुम केते पतित उधारे । सो तो कविजन गिनगिन हारे ।
अब मेरी वेर राघो । तुम सूता हो कि जागो ॥ ३ ॥
मैं वेर वेर प्रभु टेरूं । प्रभु वाट तुम्हारी हेरूं ।
महाराज अवधविहारी । जन रामसखे बलिहारी ॥ ४ ॥

पद ७६

बूझूं बूझूं पंडित जोसी । म्हारो राम मिलन कद होसी । टेर.
म्हारी आंख फरूके याँई । म्हांने साधु मिले कै साँई ।
म्हारा पिया परदेसां छाया । किन वेरण ने बिलमाया ॥ १ ॥
म्हारी रोय रोय अंखियाँ राती । म्हारो तन दिवलो मन बाती ।
म्हारा झुर झुर पिंजर खीना । जैसे जल बिच तलफे मीना ॥ २ ॥
उड उड रे काला कागा । म्हारे पियाने घणा दिन लागा ।
बाजींदो विरह विसूरे । मेरी आस गुसाइयां पूरे ॥ ३ ॥

पद ७७

पोथी जो खोल पांडे । साजन हमारा कित है । टेर.
मैं सुणी सजन की बतियाँ । मेरे चली कलेजे कतियाँ ।
मोहि नींद न आवे सारी रतियाँ । आली आई निगोड़ी रत है ॥ १ ॥
कोई सजन संदेशा लावे । मोहि सिठोड़ी सी बात सुणावे ।
म्हारा साजन कब घर आवे । बाही सें म्हारो चित है ॥ २ ॥
दादुर मोर कोकिला बोले । चपला चित्त चहुं दिशि डोले ।
बजने को दरशण दीजे । म्हारो बोही संदेशो मित है ॥ ३ ॥

भाग भला सतगुरु मिल्या रे पड़यो समंद्र से सीर।
हंसा होय चुग लीजिये रे नाम अमोलख हीर॥ ३॥
सब वेदन को वेद है रे सब पीरन को पीर।
सहजराम भज लीजिये रे दुख मेटण सुखसीर॥ ४॥

पद ८६

म्हारा मन माँहिला रे चलणो आज के काल।
झूठा झगड़ा छोडदे रे साहिब में चित चाल। टेर.
फरीदा घोर निमाणिया रे महलाँ माल न लाय।
खाफण सेती राखले रे और फकीरां खुलाय॥ १॥
अम्मा साँई साच है साँई सच सुहाय।
सतगुरुसेती मिलरहो रे खाफण देह कहाय॥ २॥
भणै फरीदो सांभलो रे झूठो जगको नेह।
राम भजो म्हारा भाइयाँ रे माटी मिलसी देह॥ ३॥

पद ८७

सजन सनेहिया रे छाय रह्यो परदेश।
बालपणो भोले गयो रे पंडर होगया केश। टेर.
मैं तो जाण्यो ओरही रे तैं कछु जाणी ओर।
तुम करसो ज्यों होवसी रे मेरी झूठी दोर॥ १॥
मैं जान्यो अवसर भलोरे पीव मिलेंगे आय।
तेरे भावें कछु नहीं रे तलफ २ मर जाय॥ २॥
मैं अबला अतिशय दुखीरे तुम जानो सब बात।
जब ही दृष्टिभर देखिहो रे मेरे खुद कुशलात॥ ३॥
चातक ज्यूं टेरों सदा रे देवो प्रभु जल दान।
सुंदर विरहनि कहत है रे दो दरसन दिनमान॥ ४॥

पद ८८

जारे निरमोहिया रे कहां रह्यो करवास।
पहली प्रीत लगाय के रे अब क्यूं भयो उदास। टेर.
लाड लडायो अति घणो रे हौंस न पूरी मोर।
विणजारेरी आगज्यूं रे गयो धुकंती छोर॥ १॥
घड़ी पलक जुग जात है रे क्यूं कर राखूं प्रान।
मैं तो जाण्यो संग रहै रे तैं तो तोड़ी तान॥ २॥
अब तो ऐसी कीजिये रे प्रियतम प्यारा लाल।
कहत है रे दरशन दीजो दयाल॥ ३॥

देव दनुज मुनि नाग मनुज सब माया विवस बिचारे ॥ ४ ॥
तिनके हाथ दासतुलसी प्रभु कहा अपनपौ हारे ॥ ५ ॥

राग जैजैवन्ती ।

पद ८३

आज तो आलीरी म्हारे आंगन वधावना । टेर.
आये गुरुदेव आज करन हमारे काज ।
कंचनकलश साज सन्मुख जावना ॥ १ ॥
कंचनको थार हाथ आरती संवारनाथ ।
तिलक चढाय माथ घर पधरावना ॥ २ ॥
तन मन भेट कीजे लोचनको लाभ लीजे ।
चरण पखाल पीजे भवन सींचावना ॥ ३ ॥
किये जप जोग जाग तीरथ गया प्रयाग ।
भावन हमारे भाग भये मन भावना ॥ ४ ॥

राग जैतश्री ।

पद ८४

यो तन पाहुणो रे मति कोई करो रे गुमान ।
परसूं आज क काल में रे छोड चले मिजमान । टेर.
नदियां नाव संजोग है रे बिछड्यां मेलो नाहिं ।
गया सो फेर न आवसी रे समझ देख मनमाहिं ॥ १ ॥
छत्र सिंहासन छोडके रे मर मर गये अमीर ।
तू क्यों गाफल हो रह्यो रे काचो धार शरीर ॥ २ ॥
मोत खड़ी शिर ऊपरे रे जीवन झूठी आस ।
कहा जाणूं कब आवसी रे थाट बटाऊ सास ॥ ३ ॥
झूठी जग की मोहनी झूठा तन धन धाम ।
रामचरण अब चेतके रे सुमरो सत ही राम ॥ ४ ॥

पद ८५

राम गुण गायलै रे साजा थकां शरीर ।
पीछै याद न आवसी रे पिंजर व्यापे पीर । टेर.
जोवन थकां भज लीजिये रे जेज न कीजै वीर ।
फेर बुढापो आवसी रे नैना ढरसी नीर ॥ १ ॥
अवसर बीतो जात है रे ज्यूं अंजरीको नीर ।
फेर न हंसो आवसी रे इण सरवर की तीर ॥ २ ॥

रेखता।

पद ९२

जगत सब रैनका सुपना। समझ दिल को नहीं अपना।
कठिन है मोह की धारा। बुहो सब जाय संसारा। टेर.
सजन परिवार सुत दारा। सबै उस रोज है न्यारा।
प्राण जब निकस जावेगा। कोई नहिं काम आवेगा॥ १॥
पता जिम डारसे तूटा। घड़ा ज्यों नीरदा फूटा।
ऐसी नर जान जिंदगानी। चेते क्यूं न फेर अभिमानी॥ २॥
भूलेमत देख तन गोरा। जगत में जीवना थोरा।
तजो मद लोभ चतुराई। रहो निःशंक जग मांई॥ ३॥
सदा मत जान या देहा। लगावो राम से नेहा।
कटे जम जालदा घेरा। कहे गंगादास जन तेरा॥ ४॥

पद ९३

इश्क गुरु रामदा लागा। खलक का भर्म सब भागा।
छक्या रस प्रेम पिव प्यारा। भया हूं मगन मत वारा। टेर.
प्रीति की रीति हम जाणी। तलफ है मीन बिन पानी।
भँवर का हाल है ऐसा। जिये वो कमल बिन कैसा॥ १॥
बाण गुरु ज्ञानदा मार्‍या। कलेजा छेद कर डार्‍या।
जगत का रंग सब खोया। हृदय में प्रेम से धोया॥ २॥
घूमे गजराज की नाँई। रहै मस्तान मन माँई।
गूंगो मिष्टान कछु खावै। मगन सुख कहत नहिं आवै॥ ३॥
ऐसे गुरु शरण सिष पूरो। पावै गुरु मुखी सिष सूरो।
जगत की मेट दे आसा। कहै गुलाब जन दासा॥ ४॥

पद ९४

शब्द गुरु बाण भर मार्‍या। कलेजा छेद कर डार्‍या।
सुती इक विरहनी जागी। आरत पिव मिलनकी लागी। टेर.
रोम रोम फैल गई पीरा। चलत है सास अति सीरा।

पद ८९

बिचाले आंतरो रे म्हारो हरि बिन भाजे नाहिं।
कहा जाणू कब भाजसी रे ऊमायो मनमाहिं। टेर.
आडा परबत बीच है रे नदियां नीर अनंत।
पिंजर आयां पांखड़ी रे मिलमिल आऊँ नित्त ॥ १ ॥
चरण विहूणो चालणो रे धरणि विहूणी धाट।
आडा परबत हुय रह्या रे किसविधि लंघूं धाट ॥ २ ॥
पोथी प्यारा पीवकी रे बाँचन दे नहिं नैन।
याद करूं तो आवसी रे प्रीतम दर्शन देन ॥ ३ ॥
कुंजर झूरे बन्न कूं रे चकवो पैले पार।
बखनो झूरे रामकों रे म्हारी आवागवन निवार ॥ ४ ॥

पद ९०

रामने संदेशड़ोरे वालो कोइक जन लेजाय। टेर.
चितवंती चक्रितभई ज्यूं मृग नाद सुनाय।
मैं अबला आतुर भई रे वाला दरशन दीज्यो आय ॥ १ ॥
रूप विहूणी कुलच्छणी रे नारी शरणे आय।
दीन दयाल दयानिधि देवा विरदबह्योघणराय ॥ २ ॥
अंग आभूषण साझ सुंदर ऊभी सेझ बिछाय।
वेग पधारो बालमा विरहन लो घतलाय ॥ ३ ॥
अधम उधारण पतितां पावन अशरण शरण सहाय।
सांवतराम के समरथ स्वामी धेनु बछा ज्यूं धाय ॥ ४ ॥

पद ९१

घड़ी न आवड़े रे वाला तुम दरशण बिन मोय।
तुम बिन मोरे प्राण पियारे जीवन किस विधि होय। टेर.
दिवस न भूख रैण नहिं निद्रा विरह संतावे मोय।
घायल ज्यूं घूमूँ घड़ी म्हारो दरद न जाणे कोय ॥ १ ॥
दिन गमायो खायके रैण गमाई सोय।
प्राण गमायो झूरके नैण गमाये रोय ॥ २ ॥
जो मैं ऐसी जाणती प्रीति कियां दुख होय।
नगर ढंढोरो फेरती प्रीति करो मति कोय ॥ ३ ॥
पल पल पंथ निहारती नीठ रही मग जोय।
मीरां कहै प्रभु गिरधर नागर तुम मिलियाँ सुख होय ॥ ४ ॥

आरति अत पीवकी मनमें । निमिष भर चैन ना तनमें ।
हियो भर नैंन जल आवे । दरशन कब पीव दिखलावे ॥ ४ ॥
रैन सब बीत गई सजनी । रही अब पीछली रजनी ।
रहे नहिं जात यो तन ही । अबै पिय आयाँ ही बनही ॥ ५ ॥
सेवग को स्वामि सुख दीजै । निपट ही अंत नहिं लीजै ।
झूरै नित आतमा दासी । मिलो प्रभु आप अविनासी ॥ ६ ॥

पद ९८

पिया टुक देख तू मोसूं । तेरे विन प्राण मैं सोसूं ।
ऐसा क्या हुवा वेदरदी । जरद तन होरहा हरदी । टेर.
करवत वहत है मेरे । महर कर तू न हेरे ।
हरि हर वचन नित टेरूं । तिहारो पंथ नित हेरूं ॥ १ ॥
दिवस मोहि अन्न नहिं भावे । रात्युं नींद नहिं आवे ।
तिहारो देखयो भावे । नाथ कब दरश दिखलावे ॥ २ ॥
किशोर जन विरह अति भारी । लगी है दरश की यारी ।
घड़ी कबकी पुकारूं रे । तेरे पर प्राण वारूं रे ॥ ३ ॥

पद ९९

सजन इक अर्ज है मोरी । मुझे हैं आशिकी तोरी ।
कलेजा फटत है मांहीं । तुझे कछु खबर भी नांहीं । टेर.
ऊधके रैंण दिन छाती । लिखी नहिं जात है पाती ।
वहै नित नैन में पानी । पिया मेरी पीर नहिं जानी ॥ १ ॥
डरावे रैंण अंधियारी । बिजलियां चमक है भारी ।
टहूका मोर का साले । हिये में हूक सी चाले ॥ २ ॥
परत गुरझाय के धरती । तपत तन विरह की जरती ।
पपैया पीव मति बोले । सुनत मन परत है झोले ॥ ३ ॥
कोयलियां कूक है झीनी । मानुं मोहि सेल की दीनी ।
कबीरो विरहनी गावे । मिल्यां प्रभु प्राण सुख पावे ॥ ४ ॥

राग काफी ।

पद १००

– घणी दिन थोड़ो है बटाऊड़ा थांरा बाट घणी दिन थोड़ो है । टेर.
कबसी वीच ना थांरो हाथ घनेरो थोड़ो है ॥ १ ॥

तलफ ज्यूं नीर बिन मीना। वे दरदी मरम नहिं चीना।
ब्यावर की पीर कूं वंजा। करै क्या ज्ञान कूं गंजा ॥ ४ ॥
बीती सो वैद पुनि होई। न जाणै दूसरा कोई।
दीनी सो महरमी होई। भेदी उर जानसी सोई ॥ ५ ॥
दरद की पीर अति भारी। लगै नहि दूसरी कारी।
सेवगराम विरहनी गावै। मिल्यां पिव प्राण सुख पावै ॥ ६ ॥

पद ९५

भया हूं इश्क मस्ताना। कहै सब लोग दीवाना।
दिलों का दरद को जानै। कहे से सत्य को मानै। टेर.
हम न दिन रैन रोते हैं। दमन से जान खोते हैं।
सूली की सेज सोते हैं। विरह के ये निसाने हैं ॥ १ ॥
तजी खिदमत उजीरी की। पाई लज्जित फकीरी की।
चढा किस्ती सबूरी की। फकर के ए मकाने है ॥ २ ॥
हम न हक यार है जानी। पिया हरि नाम का पानी।
आखिर होयगा फानी। अलू राम ही समाने हैं ॥ ३ ॥

पद ९६

लगन की बात न्यारी है। कटारी से करारी है। टेर.
लगी मन सूरके ऐसी। करी उन देखलो कैसी।
अनलहक यूं कही बानी। चढ़े सूली नहीं मानी ॥ १ ॥
लगी सुलतान के भाई। बलख की तजी बादशाई।
अठारे लाख तजे तुरियाँ। सोलह सहँस तजि हुरियाँ ॥ २ ॥
जनन की पीर है भारी। न जानै बांझवा नारी।
लगी सो आदि अंताई। कबीर यूं कहै भाई ॥ ३ ॥

पद ९७

विरहनि मग पीव का जोवै। नहिं सुख रैण दिन सोवै।
पड़त है विरह का झोला। खिनक मासा खिनक तोला। टेर.
भवन मुझे भाखसी होई। भयावन बाग था सोई।
शब्द पिक सेलसी बनिया। ऐसी गति आयके बनिया ॥ १ ॥
लगत है सेज मुझे सूली। पिया बिन एकली रूनी।
विरह की ताप अति भारी। न लागै दूसरी कारी ॥ २ ॥
खाना पहरना फीका। लगे नहिं स्वाद कछु नीका।
भूषण भुजंग जिम खावै। असन वा वसन नहिं भावै ॥ ३ ॥

आरति अत पीवकी मनमें । निमिष भर चेन ना तनमें ।
हियो भर नैंन जल आवे । दरशन कब पीव दिखलावे ॥ ४ ।
रैन सब बीत गई सजनी । रही अब पीछली रजनी ।
रहे नहिं जात यो तन ही । अबे पिव आयाँ ही बनही ॥ ५ ॥
सेवग को स्वामि सुख दीजे । निपट ही अंत नहिं लीजे ।
झूरे नित आतमा दासी । मिलो प्रभु आप अविनासी ॥ ६ ॥

पद ९८

पिया टुक देख तू मोसूं । तेरे बिन प्राण मैं खोसूं ।
ऐसा क्या हुवा वेदरदी । जरद तन होरहा हरदी । टेर.
करवत वहत है मेरे । महर कर तू न हेरे ।
हरि हर वचन नित टेरूं । तिहारो पंथ नित हेरूं ॥ १ ॥
दिवस मोहि अन्न नहिं भावे । रात्युं नींद नहिं आवे ।
तिहारो देखवो भावे । नाथ कब दरश दिखलावे ॥ २ ॥
किशोर जन विरह अति भारी । लगी है दरश की यारी ।
खड़ी कबकी पुकारूं रे । तेरे पर प्राण वारूं रे ॥ ३ ॥

पद ९९

सजन इक अर्ज है मोरी । मुझे हैं आशिकी तोरी ।
कलेजा कटत है माहीं । तुझे कछु खबर भी नाहीं । टेर.
ऊबके रैण दिन छाती । लिखी नहिं जात है पाती ।
बहे नित नैन में पानी । पिया मेरी पीर नहिं जानी ॥ १ ॥
डरावे रेण अंधियारी । विजलियां चमक है भारी ।
टहूका मोर का साले । हिये में हूक सी चाले ॥ २ ॥
परत मुरझाय के धरती । तपत तन विरह की जरती ।
पपैया पीव मति बोले । सुनत मन परत है झोले ॥ ३ ॥
कोयलियाँ कूक है झीनी । मानुं मोहि सेल की दीनी ।
कबीरो विरहनी गावे । मिल्यां प्रभु प्राण सुख पावे ॥ ४ ॥

राग कालेरा ।

पद १००

बाट घणी दिन थोड़ो रे बटाऊड़ा धीरा बाट घणी दिन थोड़ो
हे कमधी मीव ना चोरो हाक मजेरो पोड़ो रे ॥ १ ॥

घर दूर सूर घर हालो दोड़ सकै तो दोड़ो रे ॥ २ ॥
र पहूंताँ निरभै होसी बीच रह्यां रो फोड़ो रे ॥ ३ ॥
दुहेलो संग न कोई जग में जीवण थोड़ो रे ॥ ४ ॥
शाराम अणधड़ के शरणै मारग पायो मोड़ो रे ॥ ५ ॥

पद १०१

गुरुजी म्हारा नैणाँदे आगल रहियो रे । टेर.
संसार मोह जल भरियो सार हमारी लहियो रे ॥ १ ॥
निगुणी में गुण नहिं कोई ओगुण म्हारा सहियो रे ॥ २ ॥
संसार में कोइ न अपणो के नेह लगाऊँ कि नेहियो रे ॥ ३ ॥
रां कहै प्रभु गिरधर नागर लाज बिरद की वहियो रे ॥ ४ ॥

परज

पद १०२

ो सुख सुंदरि श्याम मिला वे, यारी एक लगी आतम सूं ।
ार भई लिरदावे । टेर.
म भाव का पहर पटोरा सुरत निरत कर नाचूं ।
नहद तार तत्तझणकारा एक अखंड धुनि राचूं ॥ १ ॥
मल कमल का सझ सिणगारा आगूं संजम राती ।
न मन जोड़ करूं दासातन रहूँ रामरंग राती ॥ २ ॥
ाग्या भाग भये जग न्यारा पीव पुरातन पाया ।
न हरिराम श्याम अरु सुंदरि अरस परस लिवलाया ॥ ३ ॥

पद १०३

ानोंगी मानोंगी गुण तेरा ऊधो मैं तो मानोंगी गुण तेरा । टेर.
ादिन ते बिछुरे मनमोहन हदै बीच घसेरा ।
न हमारे नीर न खंडे कंचन भवन बसेरा ॥ १ ॥
जेम तिम करि कोह हरि ही लावे कर उपदेश घनेरा ।
कवार जो हरि ही मिलावे प्राणजीवन धन मेरा ॥ २ ॥
ग जीवन से मरण भलेरो यातें करो निवेरा ।
रश्याम प्रभु छोड चले हैं बाँध नेह का बेरा ॥ ३ ॥

पद १०४

छिन बिन मोय को कछु न सुहावे तरफत चित अति ही अकुलावे । टेर.
री सखी हमरे प्रीतम को जाय कोई यह बात सुनावे ।
यह जोबन छीजत है छिन छिन बीत गये पर फिर नहिं आवे ॥ १ ॥

काजी मुहम्मद यूं भणे अब यहाँ नहिं रहणा ।
आया संदेशा मेरे राम का कछु नहिं कहणा ॥ ४ ॥

पद ११०

तुप सुप मन नहिं आणिये घट साधे घड़िया ।
टाल्या किसका ना टले रघुनाथजी जड़िया । टेर.
सीता सरीसी भारजा रघुपति मोटा स्वामी ।
लंकारो पति लेगयो वनमें विपति जामी ॥ १ ॥
हनूमानसा महाबली कारज किया मोटा ।
प्रारब्ध को पायवो पाया तेल लँगोटा ॥ २ ॥
हरिश्चंद्रसे राजवी तारादे रानी ।
काशी नगर के चोहटे शिर ढोया पानी ॥ ३ ॥
नल सरीसा नर नहीं दमयंतीसी रानी ।
वन वन भटकत वे फिऱ्या विन अन अरु पानी ॥ ४ ॥
पाँचू पांडव रामका वन माहिं विगूता ।
बैठण जागाँ ना मिली सुखभर नहिं सूता ॥ ५ ॥
भीड़ पड़ी महादेव में सुमऱ्या अंतरजामी ।
भीड़ को भंजन भूधरो गावे नरसीलोस्वामी ॥ ६ ॥

राग आसावरी ।

पद १११

भजन विन सिरगे ने खेत उजारा । टेर.
मिरगो एक पांच है हरिणी जामें तीन छिकारा ।
अपने अपने रसके लोभी चरत है न्यारा न्यारा ॥ १ ॥
आंबा खाय आमली खाई केसर केरी वाड़ी ।
कायानगरमें कछुइ न राख्यो ऐसो मृगो उजाड़ी ॥ २ ॥
मन मिरगेने किस विधि राखौं विड़रत नाहिं विड़ारी ।
जोगी जंगम जती सेवड़ा पंडित पच पच हारी ॥ ३ ॥
शील संतोषकी बाड़ करायलो गुरुशब्द रखवारी ।
कहे कबीर सुणो भाई साधो विरियां भली संभारी ॥ ४ ॥

पद ११२

चंचल बहुत हमारो राम कैसे करू मैं भजन तुम्हारो । टेर.
मंत्री पचीस को संगी उनसे वनी है हमारी ।
करूं मनवो उठ भागे थिर ना रहत लगारी ॥ १ ॥

पद १०७

हाथ थाम की डार डगर बिच क्यूं खरी।
चल्यो जा मूरख गंवार मेरी तुझे क्या परी। टेर.
पीव चल्या परदेस क पतियाँ दे गया।
छतियाँ वजर किंवार जंजीरी दे गया ॥ १ ॥
कूंची पिया के हाथ क ताला प्रेम का।
शील संतोष शृंगार पिया के नेम का ॥ २ ॥
काजल तिलक तंबोल क ऊपर आरसी।
सतगुरु है सुभियान लखे मेरी पारसी ॥ ३ ॥
गगन मंडल के बीच उडे दोय पंखिया।
राम मिलण के काज झुरे मेरी अंखिया ॥ ४ ॥
गावै दास कबीर मंगल के भावना।
हंस चल्यो सतदेश बहुरि नहिं आवना ॥ ५ ॥

पद १०८

खडी भवन के माहिं अकेली गोरियाँ।
जाय खडी पिव पास हाथ जुग जोरियाँ। टेर.
चले नीर दोउँ धार प्रेमकी नारियाँ।
हिरदो सजल होय भूली सुधि सारियाँ ॥ १ ॥
कह न सकी मुख बैन चैन नहिं जीव में।
जैसे चित्रकनैन रुपे जाय पीव में ॥ २ ॥
रोम रोम थरराय पाँव कर डिगमिगे।
साहिब देख उदास त्रास अति ही भगे ॥ ३ ॥
कहै कबीर विचार सार प्रभु लीजिये।
बिरहन को दुख देय गमन मत कीजिये ॥ ४ ॥

पद १०९

इण आंगणिये हे सखी हम खेलण आया।
केई खेल्या केई खेलसी केई खेल सिधाया। टेर.
मायो पांच सहेलड्यां सींयो मेरा चोला।
मैं अबला मई बिरहनी साहिब मेरा भोला ॥ १ ॥
एक निमाणी कोटड़ी जाकी नेजू है छूटी।
नैण हमारे यूं झरे जैसे गागर फूटी ॥ २ ॥
चढ तळ आण उवारिया संगी कुरलाया।
तुमतो तुमारे घर चले हम भये जी पराया ॥ ३ ॥

मनुष्य देह देवन को दुर्लभ जाचत है मुनि ज्ञानी ।
ताकूं पायके व्यर्थ गमायत करत निपट नादानी ॥ ३ ॥
प्रभुमय जग लखि नैन सफल कर राममंत्र जप बानी ।
दान पुण्यकर कर शुचि करले होय सफल जिंदगानी ॥ ४ ॥
शरणागत पालक सुखदायक दीनबंधु सुखदानी ।
प्रभु स्वतंत्र को आय बचायो अपनो सेवक जानी ॥ ५ ॥

पद ११६

मन तू ऐसो नीच संगाती । टेर.
निशिदिन रहत नीच नीचन में आठ पहर दिन राती ।
विषयकी बात लगे अति प्यारी हरि चरचा न सुहाती ॥ १ ॥
आवत जावत लग रही मनमें कुकरम रोपे छाटी ।
मृगतृष्णा जग छोड बावरे चढ़े न सुखकी घाटी ॥ २ ॥
बैठ सभा में मीठो बोले मनमें राखे भ्रांती ।
जानबूझकर नर पड़े नरक में बीतत है दिनराती ॥ ३ ॥
कहा कहीं इण मन की बाती लगे न तिलभर वाती ।
कहत कबीर सुणो भाई साधो आवागवण मिटाती ॥ ४ ॥

पद ११७

मन तोहि किसविधि कह समझाऊं । टेर.
सोनो होय तो सोगी मिलाऊं करड़ो ताव दिराऊं ।
पंच रंग नाल जुगत सूं फूंकूं पाणी ज्यों पिघलाऊं ॥ १ ॥
हस्ती होवे तो मावत बुलाऊं अंकुश दे चलवाऊं ।
सुरत निरत का पहर घूघरा साहिबु में मिलजाऊं ॥ २ ॥
लोहा होय तो पेरण मंगाऊं घणकी चोट दिराऊं ।
ले हथोड़ो साट घघाऊं जंत्री तार कढाऊं ॥ ३ ॥
ज्ञानी होय तो ज्ञान सुणाऊं पंडित वेद पढाऊं ।
कहे कबीर सुणो भाई साधो फेर जनम नहिं पाऊं ॥ ४ ॥

पद ११८

मन तू विरछन की मति लेह । टेर.
काटे जासूं वैर नहीं है सींचे जासूं नेह ॥ १ ॥
[illegible] ताप सहत है ओर न को सुख देह ॥ २ ॥
कोई वाकूं पत्थर मारे तो वाकूं ही फल देह ॥ ३ ॥
कहे कबीर सुणो भाई साधो साधू का लछ एह ॥ ४ ॥

मनवो पड़्यो कुमति के पीछे तजदियो ज्ञान ध्यान सारो।
साधु संतोंका कह्या न माने ऐसो है धूतारो ॥ २ ॥
या मनवा को लाज न आवे सालभरे केई वारो।
छूटां पीछे हात न आवे जैसे ढोर उजारो ॥ ३ ॥
चोरी में चौकस और परनिंदा खाणेमें हुसियारो।
हरिजीकी भक्ति साधुकी सेवा उनसे लेरह्यो टारो ॥ ४ ॥
शास्त्र पुराण भागवत गीता सुण सुण गयो जमारो।
कहै कबीर सुणो भाई साधो इन मनवारो काँइ पतियारो ॥ ५ ॥

पद ११३

अरे मन धूरत क्यों न अघावे। टेर.
भोगत भोगत बहुत दिन बीते शांति नहीं कबु आवे ॥ १ ॥
जिन विषयन में बहु दुख पायो जिनमें फेर उरझावे ॥ २ ॥
यथा श्वान श्वानी सूं उरझ्यो पुनि पुनि चोटाँ खावे ॥ ३ ॥
क्षण में शांति मौन गहि बैठत क्षण में फिर ललचावे ॥ ४ ॥
धनके हित मूढन के आगे सो सो नाच दिखावे ॥ ५ ॥
पूत मित ममता सूं बंध्यो नाना सांग बनावे ॥ ६ ॥
सबके देखत जमने पकर्‍यो श्रद्धा कौन छुड़ावे ॥ ७ ॥

पद ११४

मनरे क्यूं नहिं राम संभारे। टेर.
या जगमें बहु मान बढ़त है पुनि परलोक सिधारे ॥ १ ॥
कहा भयो सुख संपति पाई अरु धन धाम चोवारे ॥ २ ॥
धिक विद्या धन रूप बाहुबल बिन हरिनाम उचारे ॥ ३ ॥
हठ व्रत नेम यज्ञ तप कीना जटा लोभ नख धारे ॥ ४ ॥
जो पै रामनाम नहिं गायो लोकविडंबन सारे ॥ ५ ॥
इत उत देखत अवध विहानी रे मन निठुर निकारे ॥ ६ ॥
अबहु संभार कछु नहिं बिगर्‍यो श्रद्धा वेद पुकारे ॥ ७ ॥

पद ११५

मन तूं निपट भयो सैलानी। तैं संत सीख नहिं मानी। टेर.
तन धन जन जग संपत्ति देखिके तेरी मति बोरानी।
काम क्रोध मद लोभ मोह सब बन्यो फिरे अभिमानी ॥ १ ॥
देख विचार मौत नहिं छोडै राव रंक सब प्रानी।
कित हरिश्चंद्र दधीचि गये कहाँ रहगई प्रगट कहानी ॥ २ ॥

पद १२२

पड्यो जरा क्यूं नहीं लीजे रे। मना मुख राम रटीजे रे। टेर.
ना कोई धासे जीभड़ी ना कोई लागे दाम।
ना कोई पंथ निहारणो पंडा क्यों सुमरे नहिं राम ॥ १ ॥
काया माया पाहुणी और कन्या घर होय।
राखी काहू की ना रहै उठ चले पत खोय ॥ २ ॥
ओ मन भेरो गोड़ियो हुनर किया अनेक।
मन वांछा माया रची अंट लिख्या फल देख ॥ ३ ॥
सब दोसकरे कारणे देत पईसा खोल।
विना पईसा मुक्ति है जे कोई लेवे मोल ॥ ४ ॥
लख चोरासी भुगत कर पाई मिनखा देह।
सुखसारण भज राम ने अवसर आयो एह ॥ ५ ॥

राग बिलावल

पद १२३

जोगियाने ढूंढत जुग भयो कहुं देख्यो री माई।
कोई रे बतावे जोगी आवतो जाने लाख वधाई। टेर.
पाना छाई रे जोगी रावटी फूलां सेज बिछाई।
आयो जोगी रम गयो भिक्षा दैण न पाई ॥ १ ॥
जोगियारी झोली हीरां जड़ी मांहे माणक भरिया।
जो मांगे जाकूं देत है ऐसा दिल दरिया ॥ २ ॥
एक जोगी दूजो सिष है तीजो मस्त दिवाना।
चोथा तकिया रालके धरती असमाना ॥ ३ ॥
शेष नाग सेवा करै चंद्र पूरै चराकी।
लेखण वाके हाथ है कछू काढत बाकी ॥ ४ ॥
देखो जोगी री करामातड़ी मनसा महल बणाया।
विन थांभा विन थोभली असमान ठहराया ॥ ५ ॥
कहै कबीर मैं क्या कहूं क्या कहिके गाऊं।
अलख निरंजन राम है वाका पार न पाऊं ॥ ६ ॥

पद १२४

लागे माधवा निजनाम तिहारा।
ओ आसण ना रहे धरती गिलगई सारा। टेर
सरीसा राजवी कुंजर क्रोड़ अठारा।
लाल लंगूर नेजा फर हरे बाजे पंच नगारा ॥ १ ॥

पद ११९

मन रे अब तू जग तें छूटो।
शीस उघाड़ो गल में कंथा करमें कमंडलु फूटो। टेर.
फाटा पाँव मैल तन ऊपर उघरत नाहीं अँखियाँ।
मतवाले ज्यूं घूमत डोले एक न माने सँकियाँ ॥ १ ॥
ऐसा होय चल्या बस्ती में भिक्षा कारण डोलै।
पांच सात छोरा चोगड़दे बैंडो कहि कहि बोलै ॥ २ ॥
ऐसी विधि विचरै जग माहीं संग न कोई साथी।
धताधूत वैराग इसी विधि ज्यों मद छकियो हाथी ॥ ३ ॥
छांज्या स्वाद दिया तन आडा रामनाम लिवलाया।
तुलसीदास गुरु परतापे यूं अमरापुर पाया ॥ ४ ॥

पद १२०

भरथरी भूप भयो रे वैरागी।
विरह वियोगी वन वन डोले सुरत शब्द सूं लागी। टेर.
हस्ती घोड़ा गाम गढ़ गूड़र कनके पायक आगी।
जोगी भयो देख जग जातो नगर उजीणी त्यागी ॥ १ ॥
छत्र सिंहासन चवर ढुलंता राग रंग बहो रागी।
गोखां बैठी रंभा राणी तासूं सुरत न लागी ॥ २ ॥
सब सुख छाँड़ भज्यो इक साँई राम नाम लिव लागी।
सूरवीर सैंठा पग रोप्या जरा मरण भय भागी ॥ ३ ॥
मनसा वाचा और कर्मना गंधर्व सुत वड़भागी।
कहै कबीर जूझ मन अपने अमर भयो अणरागी ॥ ४ ॥

राग कालिंगड़ा।

पद १२१

मना यह मोसर नीको रे।
देहड़ली दिन दोय करीजे कारज जीको रे। टेर.
चोबारा चहुं ओर अटारी चाकर भूषन चीर।
रंग पतंग चार दिन चंगा अंत विरंगा वीर ॥ १ ॥
मात पिता परिवार पसारा सुत वित नारि सँजोग।
साजन संग सराय वसेरा वीर विराना लोग ॥ २ ॥
हरि गुरु संत चरण की सेवा कीजे और न काम।
मानुष तन को मोसर मेंहगो भावन भजिये राम ॥ ३ ॥

पद १२८

श्रीगोविन्द परमानन्द भक्तन हित कारी । टेर.
दीनबंधु दामोदर मधुसूदन मुरलीधर त्रिभुवनाथ विश्वंभर दनुजारि वनचारी ॥ १ ॥
जनपर जब परत भीर तुरत धरत नर शरीर क्षणभरमें हरत पीर साँवरो बिहारी ॥२॥
टेर्यो जब दीनगज धाये तब खगाधिराज धन्य धन्य गरुडध्वज भक्तनभयहारी ॥ ३ ॥
दुःशासन दुष्टराज नम करत चहत आज देखरह्यो सब समाज लाज भय बिसारी ॥ ४ ॥
करुणाकर कष्टहरन दीनोद्धरन धीरधरन अब तो हूं चरण शरण हैं प्रभुबिहारी ॥ ५ ॥
वेग आय छोनबाथ नहिं तो यह लाज जाय फिर तुम क्या करिहो आय जब ना रहे सारी ॥६॥
हेगोविन्द हेगिरधर हेयदुपति हेधीधर ऐसे कही आतुभर द्रौपदी पुकारी ॥ ७ ॥
यगपति हो सवार धाये यशोदाकुमार बधारियो पट अपार संकट अपहारी ॥ ८ ॥
धन्य धन्य ज्ञानवान भक्तों ये तुमसुजान जगमें हो प्रभु धर्मध्वजाधारी ॥ ९ ॥
जो जन हैं परम भक्त हरिहरि दिनरात जपत उनको नहिं देख सकत दामोदर दुखारी ॥१०॥

पद १२९

दीनदुखहरन देव सन्तन सुखकारी । टेर.
अजामेल गीध व्याध इनमें कहो कौन साध पशीहू पद पढात गनिकासी तारी ॥ १ ॥
ध्रुके शिर छत्रदेत प्रह्लादको उबार लेत भक्तहेतु बांधसेतु लंकासी जारी ॥ २ ॥
तंदुलसे रीझजात शाक पात तें अघात गिनत नाहिं झूठे फल खाटे और खारी ॥ ३ ॥
गजको जब ग्राह ग्रस्यो दुःशासन चीर खस्यो सभाबीच द्रौपदी कृष्णको पुकारी ॥ ४ ॥
इतने ही हरि आयगये बचन आरूढ भये सूरदास द्वार ठाढो आंधलो भिखारी ॥ ५ ॥

पद १३०

तूँ दयालु दीन हूँ तूँ दानी मैं भिखारी ।
हूँ प्रसिद्ध पातकी तूँ पापपुंजहारी । टेर.
नाथ तूँ अनाथ को अनाथ कोन मोसो ।
मो समान आरत नहीं आरत हर तोसो ॥ १ ॥
ब्रह्म तूँ हूँ जीव तूँ ठाकुर हूँ चेरो ।
तात मात गुरु सखा तूँ सब विधि हित मेरो ॥ २ ॥
तोहि मोहि नाते अनेक मानिये जो भावे ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरण शरण पावे ॥ ३ ॥

पद १३१

देव दीनको दयालु दानी दूसरो न कोई ।
जाहि दीनता सुनाय दीन देखों सोई । टेर.
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तो घनेरे ।
जोलौं तोलौं रावरे न नेक नैन हेरे ॥ १ ॥

ऊंचा मंदिर चुणावते विच कोटिक धारा।
झालर बाजे देहरा जाँरा अंत न पारा ॥ २ ॥
भीम सरीसा महाबली दल ढंभण हारा।
सहदेव सरीसा जोतिषी बाचै पुराण अठारा ॥ ३ ॥
पीर पैकंबर अवलिया जोगी जंगम धारा।
कहै कबीर सुण साभवा हमभी चालण हारा ॥ ४ ॥

पद १२५

अब तो नाथ दया करो मेरे समरथ दाता।
जीव तड़फे दरशण विना किनसों कहुँ बाता ॥ टेर.
आठ पहर नहिं वीसरों नित डगर निहारों।
हों तेरे नाम के ऊपरे मेरा तन मन वारों ॥ १ ॥
मेरा घट में तलफता जैसे घन विन मोरा।
लगत पियारा मित्र सों जैसे चंद चकोरा ॥ २ ॥
वरषा विन दादर दुखी निरधन धनकाजा।
जनकी या गति जानके बुझावो दाझा ॥ ३ ॥
करणी दिशा न देखियो पूरण अविनासी।
शरणां की प्रतिपालियो नहिं तो विरद लजासी ॥ ४ ॥
धीरप दे अपनो करो विरहा विश्वासो।
कनीराम कूं दरस दो मेटो सब साँसो ॥ ५ ॥

राग परभाती।

पद १२६

जाग पियारे अब क्या सोवे, रैण गई दिन काहे कूं खोवे टेर.
जो जाग्या सो माणक पाया, मैं मंद भागण सोय गमाया ॥ १ ॥
पियोजी चतुर मैं मूरख नारी, पियाजी की सेज कबू न सँवारी ॥ २
मैं भोली भोलापण कीनो, भरजोवन में नाम न लीनो ॥ ३ ॥
कहै कबीर मन तानक तैया। तज अभिमान मिले रामैया ॥ ४ ॥

पद १२७

हिल मिल मंगल गावो मेरी सजनी। भयो परभात बीतगई रजनी। टे
नाटक चेटक तजदे फेना। सतगुरु शब्द साँच गहलेना ॥ १ ॥
अमृत बेली मीठा फल लागा। चाखैगा कोई संत सुभागा ॥ २ ॥
उर्ध शिखर तहाँ फूली फुलवारी। मनसा मालन करे रखवारी ॥ ३ ॥
कहै कबीर गुरु रामानंदा। उनकी कृपा मोय भया अनंदा ॥ ४ ॥

पद १३५

सतगुरु कह समझाया हो ।
परम पुरुष विन और न परतूं पीव निरंजनराया हो । टेर.
सबसे ऊपर मेरा साँई तापर कोई न वताया हो ।
मनसा वाचा और कर्मना वाही से चित लाया हो ॥ १ ॥
घटधारी सें प्रीति न मेरी जो अवतार कहाया हो ।
वे हम भया वंधु आप में एके जननी जाया हो ॥ २ ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश विचारा वहाँ लग जाण न पाया हो ।
वाजी माहिं वीच ही अटके मोहलिये सब माया हो ॥ ३ ॥
जहाँ गये गोरख भरथरी तहाँ धूप नहिं छाया हो ।
जहाँ कबीर गुरु दादू पहुंते सुंदर वे दिस ध्याया हो ॥ ४ ॥

पद १३६

तुम सुणियो नाथ वीनती दयालु दीनकी । टेर.
पूरण ब्रह्म परमातम आगम ओपम सागरकी ।
भीड़ पड़ी जब द्रोपदी में पत राखी है नागर की ॥ १ ॥
भक्तवछल थांरो विरद है पत राखजो जनकी ।
तुमसे का छिपाउं नाथ वात जो मरम की ॥ २ ॥
अविगत थारी लखी न जावे रूप वरण की ।
दीन कहै मोहि राखो नाथ शरण चरण की ॥ ३ ॥

पद १३७

मैं सुण्यो नाथ नाम तेरो पतितपावन को । टेर.
व्याध गीध भालु कीस सजन से कसाई ।
गनिका कुब्जा भीलणी निज धाम को पठाई ॥ १
डूबतही गजराज अरध नाम उच्चर्‍यो ।
प्यादे ही उठ धाये काज पलकसों कर्‍यो ॥ २ ॥
अनेकही अधम उधारे नाम नरहरी ।
दीनको उधारबेकी ढील क्यों करी ॥ ३ ॥

राग जैजैवंती ।

पद १३८

दीनवंधु दीनानाथ काहेले कहाये हो । टेर.
कैसे तुम द्वारिका में द्रौपदी की टेर सुनी ।
कैसे गजपज्ञ काज नंगे पांव ध्याये हो ॥ १ ॥

त्रिभुवन तिहुं काल विदित वदत वेद चारे।
आदि अंत मध्य राम साहिबी तुम्हारे ॥ २ ॥
पाहन पशु विटप विहंग अपने करलीने।
महाराज राज दशरथ के रंक राव कीने ॥ ३ ॥
तोहि मांग मांगनो न मांगनो कहायो।
सुन स्वभाव शील सुजस जाचन जन आयो ॥ ४ ॥
तूँ गरीब को निवाज हूँ गरीब तेरो।
एक बेर कहो कृपालु तुलसीदास मेरो ॥ ५ ॥

पद १३२

मोसम कोन कुटिल खल कामी।
तुमसे कहा छिपी करुणानिधि तुम उर अंतर्यामी। टेर.
भरभर उदर विषय रस पीवत जैसे शूकर गामी ॥ १ ॥
जो तन दियो ताहि बिसरायो ऐसो लूण हरामी ॥ २ ॥
जहाँ सत संग तहाँ अति आलस विषयन संग विरामी ॥ ३ ॥
श्रीपतिचरण छोड ओरन की निशिदिन करत गुलामी ॥ ४ ॥
पापी कोन बडो है मोसम सब पतितनमें नामी ॥ ५ ॥
कीजै कृपा दास तुलसी पर सुनिये श्रीपति स्वामी ॥ ६ ॥

पद १३३

मोसम कोन अधम अज्ञानी। टेर.
हम हमके वस प्रभु नहिं हेरे भयो देह अभिमानी ॥ १ ॥
सेवत विषय भोग निशिदिनमें उलटे फास फसानी ॥ २ ॥
धन धन कर ऊमर सब बीती तृष्णा नाहिं अघानी ॥ ३ ॥
लाख सुनी मानी नहिं एकहु साधु संतकी बानी ॥ ४ ॥
आपे की कछु सुधि नहिं राखी तक तक आस बिरानी ॥ ५ ॥
निरभैराम यह पंचरंगी चादर होत पुरानी ॥ ६ ॥

रागटोडी।

पद १३४

एक राम विन अवर न मानूं मेरे सतगुरु यों फरमाया है। टेर.
पाणी की भींत पवन का थंभा दशमुख भवन बनाया है ॥ १ ॥
देवी देव चंद रवि राया सबही हरि उपजाया है ॥ २ ॥
भक्ति किवी ऑं किया चोगणा मूरख मूल ठगाया है ॥ ३ ॥
दारा दोलत संग न साथी ना संग सुंदर काया है ॥ ४ ॥
विष्णुदास प्रभु तुम्हारे मिलन को हरि चरणां चित लाया है ॥ ५ ॥

जो तोरे नैणा में नींद सतावे तकिया और बिछोणा क्यारे ॥ २ ॥
जो तोरे मनमें क्षुधा सतावे लूखा और सलूणा क्यारे ॥ ३ ॥
जो तूं आया प्रेम गलीमें सीस दिया फिर रोणा क्यारे ॥ ४ ॥
साह सेन फकीर सांईदा जादू ऊपर टूणा क्यारे ॥ ५ ॥

पद १४३

साजन हो तेरे संग चलूंगी फंट पकर इक बात कहूंगी। टेर.
जो शिर काटो तो अंग न मोडूं प्राण जाय तोह प्रीति न तोडूं ॥ १ ॥
प्रीति पुराणी नेह नवेलो विछुरन है पण मिलन दुहेलो ॥ २ ॥
काजी मुहम्मद चेरी मैं तेरी बल जल भई भस्म की ढेरी ॥

पद १४४

आव सलौंना मोहि देखन देरे पल पल मैं बलिहारी तेरे। टे
सब गुण तेरा अवगुण मेरा पीव हमारी आहन लेरे ॥ १ ॥
आव पिया अब सेज हमारी निशिदिन देखूं मैं बाट तुम्हारी
सब गुणवंता साहिब मेरा लाड गहेला जन दादू केरा ॥ २

पद १४५

राते माते नाम तुम्हारे काहेकी परवा है हमारे। टेर.
झिलमिल झिलमिल नूर तुम्हारा परगट खेलै प्राण हमारा
नूर तुम्हारा नैणा माहीं तनमन लागा छूटे नाहीं ॥ २ ॥
प्रेम मगन मतवारे माते रंग तुम्हारे दादू राते ॥ ३ ॥

राग मलार।

पद १४६

वहोनी थाला कोन विरद की लाज।
जे तुम सहो कसोटी हितकी निरणो निकसै आज। टेर.
मैं अति दुखित दीन गुरु द्विजवर अशरण शरण तुम्हारो।
तुमसें एक भक्ति को नातो थोरो घणो विचारो ॥ १ ॥
सांची कहूं सुणो दुरवासा मोरी सुरत स्वतंत्र नाहीं।
मोहि भक्तां ऐसे वस कीनो कीर पींजरा माहीं ॥ २ ॥
भक्त के हितकी खबर पड़ी जब भागो मनको भोर।
अग्रदास साचा हरिजनकी सार भज्यां कछु है ओर ॥ ३ ॥

पद १४७

मैं भक्तवत्सल विरद तेरो।
घटै सो तुम्हारी घटत है मान वचन सत मेरो। टेर.

कैसे तुम गनिकाके औगुण बिसारे नाथ।
कैसे तुम भीलनीके झूठे बेर खाये हो ॥ २ ॥
कैसे तुम भारथ में भीष्म को प्रण राख्यो।
कैसे वसुदेवजीको बंधन छुडाये हो ॥ ३ ॥
करुणा निधान कान्ह मेरी बेर बूँदे कान।
अशरण शरण श्याम सूर मन भाये हो ॥ ४ ॥

पद १३९

दीनबंधु दीनानाथ मेरी सुध लीजिये। टेर.
सोने को सोनैयो नाहीं रूपे को रूपैयो नाहीं।
कोडी पैसो पास नाहीं बिणज कासूं कीजिये ॥ १ ॥
भाई नाहीं बंधु नाहीं कुडुम्ब कबीलो नाहीं।
ऐसो कोउ मित्र नाहीं जाके पास जीजिये ॥ २ ॥
हाट औ हवेली नाहीं चोवारा औ महल नाहीं।
ऐसो कोउ मंदिर नाहीं जामें वास दीजिये ॥ ३ ॥
कहत है मलूकदास छांडदे बिड़ानी आस।
हरिको भजन कर हरिमें समीजिये ॥ ४ ॥

पद १४०

लाखां बातां तारसी भरोसो रघुबीर को। टेर.
द्रुपदसुताकी लज्जा राखी पार न पायो उन चीरको ॥ १ ॥
रंका ताऱ्या बंका ताऱ्या कुल ताऱ्यो काल्हू कीर को ॥ २ ॥
केता ताऱ्या पार नहिं पाऊं ताऱ्यो छे अधम अहीर को ॥ ३
जाझूराम कहे बालद लाये दालद हन्यो जी कबीर को ॥ ४

पद १४१

केसां हो दीनानाथने मनड़ारी बातां केसां हो रघुपति नाथने। टेर.
ज्ञान ध्यानसुं गुंज करांगा सतसंग मांग मांग लेसां हो ॥ १ ॥
दिलका दलीचा उरका ओसीसा खमाजी खमाजी करलेसां हो ॥ २
राजरो मिलाप खुशी दिल भावे हाजर हजूर हुय जासां हो ॥ ३ ॥
दीन कहै लवलीन भजन में तन मन थांपर वारवार देसां हो ॥ ४ ॥

राग सारंग।

पद १४२

समझ बूझ दिल खोज पियारे आशिक हो फिर डरणा क्यारे। टेर.
सतगुरु बांण विरह का माऱ्या घायल होय फिर सोणा क्यारे ॥ १

कासीमें करवत सारे कोइ नींद भूख तिस मारे ।
वे ग्रहण समय गऊदान करे सनमानक मनमें भावे ॥ १ ॥
कोइ करत गुफा में वासा वाके बहु जीवन की आसा ।
कोइ नग्न होय कर डोले कोइ मौन पकड़ नहिं बोले ।
कोइ बन बन फिरत उदासा वाके मनमें और ही आसा ।
आसा जो अपनी फिरे जन्म बहु धरके चौरासी में जावे ॥ २ ॥
कोइ देत बहुत तन त्रासा वनमें रहे होय निरासा ।
कोइ गले हिमालय माहीं सो स्वर्ग लोक को जाहीं ।
कोइ कंद मूल फल खावे उद्भिज का जीव संतावे ।
तनको देत सुकाय करे दुख दाय ले हाथ चढ़ावे ॥ ३ ॥
कोइ च्यार धाम फिरि आवे मुक्ति को राह नहिं पावे ।
कोइ तीरथ सेवे जाई वाकी आसा अंदर माँई ।
कोइ झंपापातहि लेवे सुतहेत देहको देवे ।
सो फलहीको पाय मरे दुखदायक जन्म गमावे ॥ ४ ॥
कोइ शकुन सरोधा माने ओरन को भरम बखाने ।
कोइ होम जाप मख लावे कोइ अनुष्ठान ठहरावे ।
कोइ आनदेव को ध्यावे वह पशुवा पशू चढावे ।
वो ले सिर बदला धरे नरक में पडे क जमपुर जावे ॥ ५ ॥
ये रामसनेही साधू जिन झेल्यो धर्म अनादू ।
जिन झूठी तज बकवादू इक रामनाम धन लादू ।
गुरु रामदास शरणाई जन पीथल बलि बलि जाई ।
गुरु कन्हीराम महाराज भक्ति की लाज शरण में आवे ॥ ६ ॥

पद १५१

देखोनी साधो नांवमें नदियाँ डूबीजाय कहा कहों समझाय । टेर.
एक अचंभा हमने देखा कूँएमें लगगई लाय ।
पाणी कचरा सबही जलगया मछी होगई स्वाय ॥ १ ॥

---

१ श्रीकबीर साहिब नामदेवजी सुन्दरदासजी आदि महात्माओंकी वाणीमें विपर्यय अंग है । परन्तु वाममार्गी (कूंडापन्थी) बेसिरपैर के ऊटपटांग मन घडंत ग्रन्थ बनाकर कबीरसाहब आदि महात्माओंकी छाप लगा देते हैं और उनका ऊल जलूल्ही अर्थ किया करते हैं । उनके अनुयायी उन्हींको पंडित ब्रह्मज्ञानी व साध मानते हैं । दूसरे चाहे षट्शास्त्रनिष्णात पूर्ण महात्माही क्यों न हो उनको स्थूल कहते हैं ।

२ ज्ञान । ३ आशा आदि । ४ समाना । ५ अन्तःकरण । ६ ज्ञानाग्नि । ७ मल- ... १९८० । ८ वृत्ति । ९ स्वाह अर्थात् वृत्तिका बदल जाना ।

जन प्रहलाद खंभसे बांध्यो असुर चहुं दिशि घेरो।
खंभ फाड़ नरसिंह हुय प्रगटे नखसें उदर विदेरो ॥ १ ॥
द्रुपदसुता को आण सभा बिच खांच्यो चीर घणेरो।
वाको चीर अनंत लग बधियो दुष्ट पच्यो बहुतेरो ॥ २ ॥
स्याल कूं छोड शरण आयो सिंघकी कहाँ रह्यो भय नेरो।
निरभै रहै ताकूं भय नाहीं सबले बास बसेरो ॥ ३ ॥
कर करुणा हरिजन यूं विनवे हरि कर ऊपर मेरो।
कहै रैदास शरण सतगुरु की जन्म जन्म को चेरो ॥ ४ ॥

पद १४८

माया रंग बादलीरे जामें हरि चंदा दीसे नाहिं। टेर.
लोभ मोह के बादल छाये गरज रह्यो अहंकार।
तृष्णा बिजली चमकन लागी भीज रह्यो संसार ॥ १ ॥
काम क्रोध की नदियां चलत हैं गहरी बहै चौधार।
पीर पैगंबर और अवलिया बहगया,ऊंडी धार ॥ २ ॥
ज्ञान पवन जब छूटण लागी बादल दिये उडाय।
कहत कबीर जब फूली कमोदिनि चंदो निकस्यो आय ॥ ३ ॥

पद १४९

लटको छोड़दे रे जोगिया असल फकीरी धार। टेर.
पत्थर पूज्याँ हरि ना मिले रे सब कोइ पूजो जाय।
पूजोनी घरकी घरटियां सब जग पीस र खाय ॥ १ ॥
मूंड मुडायाँ हरि ना मिले रे सब कोई लेवो मुंडाय।
छठे महीनें लूणे गाडरी सो कांई अमरापुर जाय ॥ २ ॥
न्हायाँ धोयाँ हरि ना मिलेरे सब कोई लेवोनी न्हाय।
जलमें न्हावे माछली सो कांई अमरापुर जाय ॥ ३ ॥
राख लगायाँ हरि ना मिलेरे सब कोई लेवोनी लगाय।
लुटे गधेड़ा राखमें सो कांई अमरापुर जाय ॥ ४ ॥
नागा हुयाँ हरि ना मिलेरे सब कोई नागाहुय जाय।
नागा फिरे पशु जिनावरा सो कांई अमरापुर जाय ॥ ५ ॥
लिया पातरा हाथमें रे घर घर अलख जगाय।
दास कबीर की वीनती हरि सुमरो लिवलाय ॥ ६ ॥

पद १५०

कोइ नाहक कष्ट करावे बिन राम मुक्ति नहिं पावे। टेर.
कोइ लटक अधोमुख झूले कोइ धूम्रपान कर फूले।
कोइ पंचा अग्नि जलावे सो राजपाट को पावे।

एक ही भरोसो उर आवत खरोसो यह उपल निषाद गीध अधम विचारे हैं।
शबरी औ शाखामृग रीछ कौन वेदपाठी जाते इनओर कृपा कोरते निहारे हैं॥
दीन हैं पियारे दीनबंधु को स्वभाव मृदु रसिक बिहारी सोही रक्षक हमारे हैं।
काहू ते न घाट पातकी हों क्यों तजेंगे मोहि वेनि अपने हैं जो पे इतने उधारे हैं॥१
व्याधहूते बिहद असाध अजामेलहू ते ग्राह ते गुन्हाह कहा तिनमें गिनावोगे।
शबरीहूँ न सिद्धहूँ न केवट कहूंको त्या न गौतम त्रिया वामें पगधर आवोगे॥
रामसों कहत पद्माकर पुकार तुम मेरे महा पापन को पार हू न पावोगे।
सीता सी सती कूं तजी झूठोइ कलंक सुन साचो मैं कलंकी ताहि कैसे अपनावोगे॥१
दाराके कुबोलन को झोंकसो गलेमें तोक हाथ हथकरी परी लोभ की बनायके।
सुत औ सुताकी ममता के मद पाके सू रही है जालिम जोर जंजीरें जकरायके॥
काम क्रोध पाहरु सो काढ़त कृपानसीस गाढ़ो कैदखानो घर घेरो दाव पायके।
हे हरि कितेहो कभी हित सूं हितेहो अब ऐसी ही चितैहो कि चितैहो चित लायके॥
काम क्रोध लोभ मोह मान मद भट नाना जिनके सरवरकी कहोंलों सेन जोरोगे।
तृष्णा है अपार कहूं पार को न पारावार कौन के निकेत सेतु करिवेको छोरोगे॥
सकलपाप ईशान को ईश हूं कृपानिधान मंत्री है कुबोध ताहि कौनविधि फोरोगे।
अघको अमोघ गढ बंका है बुलिंद मेरे लंका इत नाहिं ताहि डंका दे तोरोगे॥ ५॥
रावरो कहावों गुण गावों राम रावरोई रोटी द्वै हों पावों राम रावरी हि कानि हों।
जानत जहान मन मेरेहू गुमान बड़ो मान्यो मैं न दूसरो न मानत न मानि हों॥
पांचकी प्रतीति न भरोसो मोहि आपनोई तुम अपनाए हो तबही परि जानि हों।
गढ़ि गुढ़ि छोलिछालि कुंदकीसी भाई बातें जैसी मुख कहो तैसी जीय जब आनि हों॥६॥
वेदकूं प्रशंसा धना जाट राख्यो कामा छीट रंगवेको नामा सो प्रणामी के उधारे है।
आपही हजूर सेना राख्यो है हजामतको जूती तंग तोबराकूं रविदास जिन आये है॥
कपराकी खातर कबीरा पे कृपा करी कारीगर जान अति भवसागर तारे है।
एते जन तारे तब कौन पे अहसान कियो विना भक्ति तारो तो तारिबो तिहारो है॥ ७॥
तारे प्रह्लाद जन तात हु की घात सही तारे तुम ध्रुव सो तो बारो तन गारो है।
तार्‍यो तुम मोरध्वज पुत्र पर धार्‍यो हरि तार्‍यो हरिश्चंद्र सोतो नेकहु न हारो है॥
विरद निरंजन कहे भक्त विभीषण तारे सोतो पर धार्‍यो तर लंक गेर पारो है।
जिनही जिन भक्ति करी तिनही कूं तारे तुम विना भक्ति तारि प्रभु तारिबो तिहारो है॥ ८॥
कर्म छुटेला वरणआश्रम छुटेला मनु धरम छुटेला जाति पांति तें उठेला है।
[illegible] छुटेला और मजीन को छुटेला घरा ध्यान बान कान पान मान ते कठेला है॥
[illegible] दिन के छुटेला नित नाह की छुटेला [illegible] को छुटेला है।
[illegible] राम द्विज को कुटेला भीलनी पे तू छुटेला है॥ ९॥
[illegible] एसी एसी पनी अधम [illegible] रीत तू।
[illegible] भूरि [illegible] को आगी तू॥

कीड़ी चाली सासरे नंव मण काजल सार।
हस्ती वाके गोदमें ऊंठलियो ललकार॥ २॥
जल जाई थल ऊपनी जल में कियो न पाप।
एक अचंभो देखियो बेटी जायो बाप॥ ३॥
घड़ो न डूबै बेड़ियो हस्ती मल मल न्हाय।
कोट कांगरे पाणी आयो पक्षी प्यासा जाय॥ ४॥
सासू कवारी बहू हमल में नणंदल फेरा खाय।
देखण चाली पुत्र जन्मियो पाड़ोसण हालोगाय॥ ५॥
अंडांथा जब बोलता बच्चा बोले नाहिं।
पंडित होय सो अर्थ करै अज्ञानी गम नाहिं॥ ६॥
बेटी पूछे बापने अणजायो वर लाव।
अणजायो वर नां मिले तोरे मोरे ब्याव॥ ७॥
कहत कबीर सुणो भाइ साधो साची कहुं समझाय।
या पद को कोइ अर्थ विचारे तो सहज मोक्ष मिल जाय॥ ८॥

इति।

अथ विनय-वैराग्योपदेशमंजरी।

जय जगवंदन नंद के नन्दन पांडव स्यंदन हांकनहारे।
चर्चित चंदन कए निकंदन ग्राह गयंदन ग्राह विदारे॥
इंद्र फनिंद्र कविंद्र मुनींद्र क छन्द गुणीगन वृन्द उचारे।
आनंदकंद गोविंद मुकुंद करो दुख द्वंद निकंद हमारे॥ १॥

कवित्त।

जनम गमायो राम नामको न गायो कछु कीनो ना उपाय भवसिंधु के तरन को।
शरण में जैहो कौन वदन दिखैहों हाय औगुण भरे हो गुण एको ना शरन को॥
रसिक विहारी है न आपको भरोसो रंच को सहाय शोकनद पार के करन को।
परो मजधार बीच हों तो निराधार अब एक ही अधार रघुराय के चरन को॥ १॥

---

१ सुषुप्तवृत्ति। २ आत्माका संग। ३ नवतत्त्व। ४ दग्ध होजाना। ५ निजमन
६ एकता। ७ मिथ्या अहंकार। ८ सूक्ष्म शरीर। ९ अन्तःकरण जलाशय में प्रेमजल
१० स्थूल वैराट। ११ माया। १२ जीव। १३ मन। १४ नेत्र। १५ शुन्य
वेदान्ती। १६ शुद्ध सत्वगुणी माया। १७ अविद्या जीवकी स्त्री। १८ वासना
१९ बहिर्मुखवृत्ति। २० अज्ञान। २१ वैखरी वाणी। २२ जिज्ञासु। २३ पूर्ण
२४ माया। २५ ब्रह्म।

कोटि २ ब्रह्मांड जो करता कोटि २ दैत्योंका काल।
थोलांरो साचो निरबंधण गोलांरो गोलो गोपाल॥
ईश्वर द्यां अचंभो आवै घट सूरापण निपट घणो।
ठावो सकल सकलरो ठाकुर तूं चाकर चाकरां तणो॥
वास मझ झूठ नहिं दाखै केशव अर्ज सुणो दे कान।
तिलोचंद घर रह्यो टहलवो छीपे तणी छजाई छान॥१॥

कवित्त।

रूठे क्यों न राजा तातें धरे नहीं काजा एक तूमे महाराजा और कौन को सराहिये।
रूठे क्यों न भाई तातें कछू ना बसाई एक तू ही है सहाई और कौन पास जाइये॥
रूठे क्यों न मित्र शत्रु तरत आठों याम एक रावरे चरण केरे नेह को निवाहिये।
संसारी ही रूठ एक तूही है अनूठा सब घूमेंगे अगूंठा एक तू न रूठ्या चाहिये॥१॥

दोहा।

जितने तारे गगन में, तितने वैरी होय।
कृपा होय श्रीराम की, वाल न बाँको होय॥१॥
कहा करै वैरी प्रवल, जो सहाय रघुवीर।
दश हजार गज बल घट्यो, घट्यो न दश गज चीर॥२॥
सांई टेढी अखियां, वैरी खलक जहान।
टुकेक झोला महरदा, लक्खों करे सलाम॥३॥
लग्न मुहूरत योग वल, तुलसी गनतन काहि।
राम भये जेहि दाहिने, सबे दाहिने ताहि॥४॥
गंगा जमुना सरस्वती, सात समुद्र भरपूर।
तुलसी चातक के मते, विन स्वाती सब धूर॥५॥
सीतापति रघुनाथजी, तुम लग मेरी दौड़।
जैसे काग जहाज को, अंत न वाकूं ठौड़॥६॥
काहू के धन धाम है, काहू के परिवार।
तुलसी मोसम दीनके, सीताराम अधार॥७॥
नहिं विद्या नहिं बाहुबल, नहिं खरचनको दाम।
तुलसी मोसम पतित की, तुम पत राखो राम॥८॥
सब देखे परखे लिखे, बहुत कहे क्या होय।
तुलसी सीताराम विन, अपनो नाहीं कोय॥९॥
माधव मा भव होहु मम, माधव मम होहु आन।
माधव मेरे उर बसो, सदा सकल सुखखान॥१०॥
वारन को तारन अहो, वार न लागी तोहि।
वार न कीजे हे प्रभो, वारन भटकन मोहि॥११॥

काम क्रोध लोभ मोह विवस मलीन दीन दुःखित दरिद्री इमि रागिन को दंगी तू।
रसिकविहारी भली भांति पहिचानों राम हौं वो तोहि जानूं हूं सदातें नीच संगी तू ॥ १० ॥
कूबरा कसाई जाट कीर डूम नाई कोळी छीपा रु चमारन की भक्ति मन भाई है।
गूजर गवारन कूं संगले विहार कियो ताकी तो पुरानन में कथा व्यास गाई है ॥
गनिका और भीलनी को तारी सो प्रसिद्धवात दासी को खवासी खासी ऐसी चतुराई है।
नीचको निवाजबे की तुमही को परी बान मेरी जात ऊंच प्रभु काहे को बनाई है ॥ ११ ॥
गोकुल में जन्म लीनो जल जमुनाको पीनो सुबल सुमीत कीनो जाको जग जाप है।
भनत मुरारी जाकी जननी जशोदा जैसी उद्धव निहार नंद जैसो तेहि बाप है ॥
काम बामते अनूप तजी मजचंद सुखी रीझ्यो संग कूबरी कुरूप सो अमाप है।
नेह.नीर नयको न पंचतीर भय को न वयको न पूतना के पय को प्रताप है ॥ १२ ॥

दोहा।

पंगुल गूंगो रोग युत धनिक क्षुधातुर जीव।
भय युत बालक प्रिय अचख सुनत अनाथ सदीव ॥ १ ॥

छप्पय।

पंगु कुब्जा संपाति गुंग जमलार्जुन गावत्त।
रोगी माधवदास धनिक तिरलोचन ध्यावत्त ॥
क्षुधित सुदामा विप्र भीत युत मजकी भामिनि।
बालक ध्रुव प्रह्लाद अबल द्रुपदादिक कामिनि ॥
हि अंधसूरलों हम सुने हाथ विके तिनके हरी।
जग के निवास सब गुननयुत सरूपदास विनती करी ॥ १ ॥

कवित्त।

ज्ञान औ विराग दोउँ पायन बिनाहूं पंगु भक्ति रचना ते हीन गूंगहू निहारोगे।
त्रिधा ताप रोगी कर्म वानिज धनिकहूं में भूखो दरशको केउ जन्म को विचारोगे ॥
काल भीति बालबुद्धि आत्मा है अबला औ अंध तत्त्व अंजन के बिनाहु नेक धारोगे।
एक अंग के अनाथ ताके बिके सुने हाथ आदि अंत में अनाथ नाथ क्यों बिसारोगे ॥ १३ ॥
मनसे महीपति के मुंशी मसंग मोह मदन मजूरिरखी मदत मतवारी है।
क्रोध कोतवाल लोभ नाजर की मिसलत ज्ञान मुदई की जिन मिसल बिगारी है ॥
अहंकार अहल्मद करत ना रपोट भली तृष्णा चपरासी की दस्तक नित जारी है।
दीन की दरख्वास्त मही डिगरी न होवै केशव अरजी हमारी आगे मरजी तुम्हारी है ॥ १४ ॥

गीत।

अद्भुत नाथ न लोपे आज्ञा इन्द्र ब्रह्मा शंकर ले आप।
भावयणो छोड़ारो भूखो पांदारो पांदो मा बाप ॥

कबीर तेरा जोर न जुलम है, मेरा होय अकाज।
विड्द तुम्हारो लाजसी, शरण पड्यां की लाज ॥ २७ ॥
कबीर भयके जे सांई मिले, सब सुख अपणा रोय।
पाहण ऊपर शीश धर, कहूंज कहणा होय ॥ २८ ॥
कबीर सांई मेरा सुनहगे, बूझेंगे कुशलात।
उन सांई से कहुंगा, मेरे मनकी बात ॥ २९ ॥
कबीर मो मरने को नेम है, मरूं तो हरिके द्वार।
कबहू तो हरि पूछि हैं, कौन मर्‌यो दरबार ॥ ३० ॥
जा मरनें सों जग डरे, मेरे है आनंद।
कब मरिहों कब भेटिहों, पूरण परमानंद ॥ ३१ ॥
सांई तोसों वीनती, भावे भूल मभूल।
करीजिका शिर ऊपरे, करसी जिका कबूल ॥ ३२ ॥
डाल हने फल कूं भखे, पातन कूं फाड़ेह।
ये अवगुण पंछी करे, तोउ तरवर नहिं ताड़ेह ॥ ३३ ॥
बडे दीनको दुख सुनत, देत दया उर आन।
हरि हाथी सूं कबहुती, कहु रहीम पहिचान ॥ ३४ ॥
मूंड़ चढाये हू रहे, पर्‌यो पीठ कच भार।
रह्यो गरे पर राखिये, तोऊ हिये पर हार ॥ ३५ ॥
हरे चरै तापहि बरै, फरै पसारहि हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत जग, परमारथ रघुनाथ ॥ ३६ ॥
राम अवलंब अनन्य गति, राम विना वेहाल।
वाकीलार हरि फिरत है, ज्यों जननी संग बाल ॥ ३७ ॥
लार फिरै रक्षा करै, गिरत पकरले बाँह।
जनि दुख पावै दास मम, यों जानै मन माँह ॥ ३८ ॥
दो पेंड हरि सन्मुख चले, हरि आवत पेंड पचास।
ज्यों जननी लघु बालकी, दोरि के आवत पास ॥ ३९ ॥

टीका–जैसे माता ऊपरी पर काम करें है नीचे घर में बालक खेले है, जहां ताऊ बालक अपने ख्याल में मग्न है वहां ताऊ माता भी चुपचाप होरही है। जब बालक कों भूख लगी तब रोवण लाग्यो तब माता भी दिलासा देने लगी। जब बालक सीढी के नजदीक आयो तब माता को चिंता उपजी सो देखन लगी, जब बालक एक दोय सीढी पर चढ्यो तब तो माता के धोखो भयो। अब जो गिरेगो तो हाथ पांव टूट ‍। तब तो माता ऊपर सूं बहुत सीढी उतर के बालक कूं कंठ लगाय लेत हैं।

१ तुम भाती डग आठभर, हम आवें डग साठ।
तुम ने करडे काठ के, हम लोहे की लाठ ॥ १ ॥

क्या मुख ले बिनती करूं, लाज आवत है मोहि।
तुम देखत अवगुण करौं, कैसे भाऊँ तोहि ॥ १२ ॥
मैं अपराधी जन्मका, नख शिख भर्या विकार।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो संभार ॥ १३ ॥
मुझ अवगुण है तुझ्झ गुण तुझ्झ गुण अवगुण मुझ्झ।
जो मैं विसरूं तुझ्झ को, तुम न विसारो मुझ्झ ॥ १४ ॥
मोमें गुण कुछ है नहीं, तुम गुण भरेहो जहाज।
गुण अवगुण न विचारिये, बाँह गहां की लाज ॥ १५ ॥
अवगुण किये तो बहु किये, करत न मानी हार।
भावे बंदा बखसिये, भावे गरदन मार ॥ १६ ॥

सोरठा।

कबलौं गिणूं कृपाल, मो अवगुण गुण रावरे।
देखहु करन दयाल, गनिकाको सो घूंघटो ॥ १ ॥

दोहा।

हरियो देख हरामको, रोस न कीजे राम।
अब तो तेरो हुय रह्यो, और न मेरे काम ॥ १७ ॥
बिड़द तुम्हारो रामजी, लेबहिये महाराज।
हरिये गुण अवगुण किया, तोही तुम कूं लाज ॥ १८ ॥
हरिये अवगुण बहु किया, करत न कोई छेह।
जो तूं अवगुण याद कर, होय न छूटण केह ॥ १९ ॥
हरिये दोषण बहु किया, शंक न मानी काय।
भावे तो मुझ बगसिये, भावे कुंद मराय ॥ २० ॥
काहू के शिर को धणी, कूड़ा करत कलाप।
हरिये के शिर तू धणी, तुंही माय रु बाप ॥ २१ ॥
जन हरिये की बीनती, साँई करिये कान।
बंदे कूं मुश्किल घणी, साँई तुझ आसान ॥ २२ ॥
हरिये का दिल तुझ्झ सूं, तेरा मुझ सेतीह।
ज्यों सोनो अरु सोहगी मिलिया अगोतीह ॥ २३ ॥
हमसा तेरे बहुत है, तुमसा मेरे नाहिं।
हरियो तुझको छांडिके, और न किसपे जाहिं ॥ २४ ॥
पाप किया से मुझ किया, हरिया फेर न सार।
भावे तो मुझ मेटकर, भावे दोज़ख डार ॥ २५ ॥
कलम हमारी रामजी, होय तुम्हारे हाथ।
जनहरिये कूं तारिये, सदा तुम्हारे साथ ॥ २६ ॥

हराम के काम तो पोत करे साहब्ब के नाम भटकता है।
साईं दीन कहे आधक मती पकड़ के काल पटकता है ॥ ३ ॥

सवैया।

गर्भ चढे पुनि सूप चढे पलना पे चढे चढे गोद घना के।
हाथी चढे फिर अश्व चढे सुखपाल चढे चढे जीमें घना के ॥
धेरी औ मित के चितचढे कवि ब्रह्म मने दिन वीते पना के।
ईश कृपालुको जान्यो नहीं अब कांधे चढे चले चार जनाके ॥ ४ ॥
पेट में पोढ़के पोढे मही जननी संग पोढ़ के वाल कहाये।
त्योंहि त्रिया संग पोढ़न लागे तो सारी निशा हंस खेल गमाये ॥
क्षीरसमुद्र के पोढ़ न हारेको ध्यान कियो न कभी चित लाये।
पोढ़त पोढ़त पोढ़ रहे तो चितापर पोढ़न के दिन आये ॥ ५ ॥
देह अचेतन प्रेतदरी रज रेत भरी मल खेत की क्यारी।
व्याधि की पोट अराधिकी ओट उपाधिकी जोट समाधिसे न्यारी ॥
रे जिय देह करे सुख हान इते पर तो तोहि लागत प्यारी।
देह तो तोहि तजेगी निदान पें तूहि तजे किन देहकी यारी ॥ ६ ॥
विक्रम भोज दधीचि भखे बलि करण कुबेर जिसा थिर नाई।
भीषम द्रोण भखे दुर्योधन पंचहु तत्व समुद्र सुखाई ॥
वेद कतेव पुकार कहे नर जीमगई अवतार सदाई।
खायगई सगरे जगकूं इक मोत निगोडी को मोत न आई ॥ ७ ॥
जलमें उपज्यो जलमाहिं रह्यो जल पोखत है जल छूवत नाहीं।
तापक जो रवि सोपत है नित कंज ज्यूं ताहि देख्यां विकसाहीं ॥
तैसे यो जीव विषयसंग फूलत ता विन जीव अती मुरझाही।
हरि सूं उपज्यो हरि पोखत है हरिमाहिं रह्यो हरि कूं विसराही ॥ ८ ॥
पशुअ भले उनते जग में नहि कर्म करी दुख बीज को बोवे।
कियो भुगते पशु देह धरी सुख दुःख के पाप के कर्म कूं धोवे ॥
आचार मलीन चरे अपनो उनके संगते कोऊ भ्रष्ट न होवे।
उनतें यो नीच भयो नर माणक गांठ के सींग रु पूंछ को खोवे ॥ ९ ॥
जननी क्यों बोझ मरी इनकी जाने ऐसे पशू को पेट में राखो।
कलंक जणी अपणे कुलको अधबीच नहीं क्यों गर्भ तें नाखो ॥
जन्मत ही मरि क्यों न गयो जाने जीव के रामको नाम न भाखो।
मरेतें भलो निज मूरख को जीवत करेगो यो सरव को साखो ॥ १० ॥
आछो सो काछ कछ्यो तननें मननें नहीं आछो सो नाच यो नाच्यो।
राम गुलाम कहावत है पै गुलाम भयो जगको दाम जाच्यो ॥

दृष्टांत-तैसे माता की नांई नारायण है, सो भी सब के ऊपर अपनो स्वस्वरूप में बर्ते है। और जीव जो है सो नारायण को अंश है तातें बालककी नांई अज्ञ है, सो नीचे संसार में स्त्री पुत्रादि विषय ख्याल में जबताऊ आसक्त होय रह्यो है तब-ताऊ नारायण हू याकी उपेक्षा कररह्यो है, जब जीव के बालककी नांई विषय सूं वैराग्य भयो अरु नारायण की चाह भई तब विरह करिकें रोवणे लाग्यो तब माता की नांई नारायण हू गुरु शास्त्रद्वारा जीव कूं समझावणे लाग्यो जब जीव बालक की नांई भगवत् प्राप्तिका साधनरूप सीढी के नजीक आयो तब माता की नांई नारायणहू जीवपर कृपादृष्टी सूं देखने लाग्यो जब जीव बालककी नांई एक दोय साधनरूप सीढीपर चढ्यो तब माता कीसी नांई हरि दौरिके अंग लगावे है।

निज स्वाधीन स्वल्पमूल्य के, मन रुचि जाणन हार।
ऐसे सेवक हरि दिये तें, भज्यो न ताहि गंवार ॥ ४० ॥

टीका-स्वल्पमूल्य=सेर नाजके १४ चाकर हैं, सेर नाज कूंभी सब ही बांटि खावे है, झगर नहिं मरे है। काम ऐसो करे है हजार रुपिया का चाकर सूं भी नहीं होय। धर्म अर्थ काम मोक्ष जो मन चावे सोई अर्थ कूं साधी देत हैं तातें देखरे गंवार जीव! परम दयालु नारायण ने ऐसा सेवक दिया तो भी उन सेवकोंसेई सेवा नारायण की नहीं कराई, तू तो करेई काय की।

पकरि रह्यो प्राणां कूं, अरु प्रेरत इंद्रियग्राम।
सहायक सब व्यवहार में, भजत न लूण हराम ॥ ४१ ॥

टीका-देहरूप फूटा पिंजरा में चंचल प्राणरूप पक्षी कूं पकड़ राखो है तातें प्राण ठहर रह्यो है। नहीं तो कबकोई कोइ द्वार होके निकस जातो। फेर श्वासारूप करके बाहर जावे है तोभी शिकारी बाज की नांई ज्यांको खेंच्यो फेर उलटि के ठिकानेपर आय बैठे हैं नहीं तो नारायण विना पवन कूं पीछो फेरने वालो कौन है? ऐसे सब इंद्रिय समुदाय कूं आप आपके व्यवहार में नारायण प्रेरे हैं।

झूलणा।

देह आज पड़ो चाहे काल पड़ो दिन च्यार पड़ोजी झड़ाक झड़ेगी।
पांच पचीस पचास पड़ो दस तीस पड़ोजी खड़ाक खड़ेगी॥
ऐस पड़ो भावे पोर पड़ो परार पड़ोजी दड़ाक दड़ेगी।
दीन कहे कहा देहको सोच है सो वरप रहे तोही देह पड़ेगी ॥ १ ॥
फिट फिट्ट कहै दुनि घट्ट तेरा इस घट्ट का घाट घड़ायगाजी।
खट पट्ट ते खेद वधाय रहा झटपट्ट सिताव झड़ायगाजी॥
केई कूड़ कपट्ट निपट्ट करे अवधूत अपट्ट अड़ायगाजी।
साँइ दीन दपट्ट झपट्ट कहे जी जन्म जंजीर झड़ायगाजी ॥ २ ॥
जिव पेट के सूलतो भूलगया यहाँ पेट के काज भटकता है।
यहो कूड़ कपट्ट झपट्ट रहा लालच लपट्ट लटकता है॥

ऐसे ही करत सब जन्म व्यतीत भयो राम को न नाम लेत यम सूं न भीते हैं ।
माणक जुवारी मूल गाँठ कूं गमाय जैसे आये बांध मूठी फिर जात हाथ रीते हैं ॥
राम को न लेत नाम काम को भयो गुलाम दाम दाम पीछे लागि पाप बहु कीते
औरन को देत दुःख आपको चहत सुख रामसूं विमुख होय फिरत नचीते हैं ॥
सुखन के काज बहु दुख को सजत साज विषय विष लेह माहिं घोरि घोरि पीते हैं
राम को विसारि नरजन्म में धूरि डारि आये बांध मूठी फिर जात हाथ रीते हैं ॥

फिरत है फूले २ माया के भर्म भूले बैठे सब हारि अरु माने जगजीते हैं ।
ज्वानी के जोर माहिं मानकी मरोर माहिं कोई कूं गिने नाहिं विषय चित्त दीते हैं
मोह मद माते अति विषय हू के रंग राते विषय के यत्न माहिं दिन सब बीते हैं ।
जनम को हारि सब काजकूं बिगारिकरि आये बांध मूठी फेर जात हाथ रीते हैं ॥ ९

पाय प्रभुताई कछु कीजिये भलाई यहाँ नाहीं थिरताई बैन मानिये कविन के ।
यश अपयश रहिजात बीच पहुमी के मुल्क खजाना येनी साथ गये किन के ॥
और महिपालन की गिनती गिनावे कोन रावण से ह्वैगये त्रिलोकी वश जिनके ।
चोपदार चाकर चमूपति चंवरदार मंदिर मतंग ये तमाशे चार दिन के ॥ १० ॥

हय हाथी हेम हीर हुरम हिरननैनी हींसत हाँकरत फिरत घर घेरे है ।
बंधु सुत सुता सुत सुत सुतहू के सुत सज्जन सगेन से कहत मेरे मेरे हैं ॥
चोहटा न चाकर चहुंधा चहैं चोकीदार चोबारा न चहल चुहल चेरी चेरे हैं ।
तिनको सो तू है वे हैं तेरे तोलूं तेरो तन तन गये तिनको तो तूं न वे न तेरे हैं ॥ ११

माया के समूह भाँति बंधिके शिथिल भयो मान कह्यो मेरो ओलो छाड्यो घट घेरो है ।
काल है करेरो आनि दहेगो दरेरो सो तो पर्‍यो ही रहेगो सब परको बखेरो है ॥
कुटुम्ब घनेरो बहु बेर लग हेरो सो पंखिन को रेरो जैसे दरखत बसेरो है ।
चलत सबेरो दरकूच भांति केरो तेरो मेरो मेरो कहै यामें कोन साज तेरो है ॥ १२

एरे मन मेरे तेरे कौन हाल ह्वैगे अर गेरे अज्ञान बीह गोविंद नाहिं गाये हैं ।
ऊठि के सवेरे सांझ दोरन की करी एक ढेरे बहु जोरि देरे धन में लुभाये हैं ॥
साधू कहैं टेर टेर तोहू न समझे शठ पूर्व भलेरे पुण्य मोयर यह पाये हैं ।
रे रे अज्ञान जीव पीव क्यूं न हृदय रखे घेरे घंघेरे काल केते नर खाये हैं ॥ १३ ॥

कौरव दल पांडव समर सुत जादू जैसे जात हू न जाने ज्यूं तरैया परभात की ।
बलि वेणु अंबरीष मानधाता प्रहलाद कहिये कहांलों कथा रावण अजात की ॥
येहू न बचन पाये काल कौतुकी के हाथ भांति भांति सेना रथी घने सुथ घात की ।
प्यार प्यार दिन को बचत सब चांड करो अंत सुरिवैहे जैसे पूतरी बरात की ॥ १४ ॥

कहाँ कहो मोह मोह लोही धे परी है देव मोहन से मोही महामाया में भिजावे ।
दैवके सुगंध महा मधु से मधुप मानवाला घन मानी महामद यो छिटकावे ॥
हलव के रलन से रमद के लैकिलैकि ललन की धोरती खिलोनावी खिजावे ।
[illegible] दे महा मत्त व्याल वशी कवन्द ऐसे बांके ऐसे वशी ऐसे सुजावे भिजावे ॥ १५ ॥

कूड़ कपट्ट विकार भर्यो मन नेक नहीं हरि सूं भयो साच्यो।
कैसे के राम रीझे अब माणक यो मन रामके रंग न राच्यो॥ ११॥
आछो सो नर्त करो मन नर्तक जैसे तैं आछो यो काछ कछ्यो है।
आदर नेम करी हरि को नित चिंतन ध्यान यो नर्त अछ्यो है॥
प्रेमकरी हरि को रस पीवहु पीवत दूध ज्यूं वालवछ्यो है।
माणक सूर ज्यों आगे ही दौरत नेक न धारत पांव पछ्यो है॥ १२॥

कवित्त।

भैया जगवासी तू उदासी है के जगतसों एक छ महीना उपदेश मेरो मानु रे।
और संकल्प विकल्प के विकार तजि बैठि के एकंत मन एक ठोर आनु रे॥
तेरो घट सरिता में तूही है कमल ताको तूही मधुकर है सुवास पहिचानु रे।
प्राप्ति न ह्वै है कछु एसो तू विचारतु है सही ह्वै है प्राप्ति सरूप यों ही जानु रे॥ १॥
करिले रे सुकृत सुमरिले रे नरहरि भरिहरि ओदर दरनि मोहजाल की।
रसरास तेरे हाथ चिंतामनि हेरे यातें ओट गहिले रे प्रह्लाद प्रतिपाल की॥
करत कहा है कहा करिवे को आयो कहि कोहै तूं कहा है कैसी गति काल की।
गई सो तो गई अब रही सो तो राख मूढ एक एक लव जात लाख लाख लाल की॥ २॥
श्वासके भरोसे गढ मास में निवास कियो आशा मन माहिं राखि मानत सरीरा की।
बडे २ सूरवीर छोड गये देख मूढ रही ना निसानी तहां साह अरु वजीरा की॥
भजरे निरंजन दुखभंजन कुल आलम को नित्य रोज खबर लेत पाइन में कीरा की।
कहै कवि प्यारामल सुमरणकी यही पल एक एक घडी जात लाख लाख हीरा की॥ ३॥
काहू घर पुत्र जायो काहू के वियोग आयो कहूं राग रंग कहुं रोवारोव करी है।
जहां भानु ऊगत उच्छाह गान गीत देखे सांझसमें ताही स्थान हाय हाय परी है॥
ऐसी जगरीति देख को न भयभीत होत हा हा नर मूढ तेरी मति कौन हरी है।
मानुषजन्म पाय सोवत विहायो जाय खोवत किरोरन की एक एक घरी है॥ ४॥
चौरासी समुद्र घूर मिल्यो है मनुष्यतन कहीं भूरि भागतें किनारे आनथीयो है।
ऐसी या अनूप देह नाक कान नेन बेन ऐन करतार जू करार कर कीयो है॥
ताही को तू पाय करत डाचा ढोल पशू ज्यूं भरत पेट विषय पान पीयो है।
गोविंद नरदेह पाय प्रभू को न जान्यो ताय धूरि वाके मन में धिकार वाको जीयो है॥ ५॥
नंदकी नौनिधि धरी वीसल की बीस टरी रावन की सबै जरी खाख में समावोगे।
हेम हीर चीर हाथी काहू के न भये साथी वाट के बटाऊ जेम ठाठ छिटकावोगे॥
वहां सूं न लाये हाथ यहां सूं न चाले साथ यहां ही की जोर जोर यहां ही लौं खावोगे।
कहत है छजू पवार सुनोरे मायाके यार बँधी मूठी आये हो पसार हाथ जावोगे॥ ६॥
इत उत फिरत है हरत भरत कछु करत अनर्थ बहु जात दिन बीते है।
रात्रि पड़े घरमांही आयके भोजन करि नारी कंठ लाय करि सोवत नचीते हैं॥

सांभर की खालन को बांधत सिपाई लोक गैंडे की खाल ढाल ओ राजा मन भावेगी।
कहै दयाराम एक राम के भजन बिन मानुस की खाल कछु काम नहिं आवेगी ॥ २४ ॥
खालही की खोलमें अखिल ख्याल खेलिखेलि गाफिल ह्वै भूल्यो दोस दुख की सुचाली तें।
लाख लाख मांहि अभिलाष नये खोटे भइ अलख लख्यो न लखी लाखन की लाली तें॥
पुलकि पुलकि देव प्रभुतें न पाली प्रीति दे दे करताली न रिझायो बन माली तें।
झूठी झलमल की झलक ही में भूल्यो झलमल की पखाल खल खाली खाल पाली तें॥ २५॥
जासूं तू कहत यह संपदा हमारी सोतो साधने अडारी ऐसें जैसे नाक सिन की।
जासूं तू कहत हम पुन्य जोग पाई सोतो नरक की साई है बड़ाई डेढ़ दिन की॥
घेरा माहिं पर्‌यो तू विचारे सुख आंखिनको माखिन के चूटत मिठाई जैसे भिन की।
एते पर होहि न उदासी जगवासी जीव जगमें असाता है न साता एक छिन की॥ २६॥
रेतकी सी गढ़ी किधों मढ़ी है मसान कीसी अंदर अंधेरी जैसी कंदरा है सैल की।
ऊपरकी चमक दमक पट भूषन की धोके लागी भली जैसी कली है कनेल की॥
औगुन की औंडी महा भौंडी मोहकी कणोंडी मायाकी मसूरती है मूरती है मैल की।
ऐसी देह याही के सनेह याकी संगति सों ह्वै रही हमारी गति कोल्हूकेसे बैल की॥ २७॥
केतीवार सिंह स्वान सांभर सियार सांप सिंधुर सारंग सुसा सूरि ऊदरे पर्‌यो।
केतीवार चील चमगादर चकोर चीरा चक्रवाक चातक चंडूल तन भू धर्‌यो॥
केतीवार मच्छ कच्छ मींडक गिडोरा मीन शंख सीपि कोडी ह्वै जलूका जलमें तिर्‌यो।
कोऊ कहै जारे जिनावर तब माने बुरो यों न जाने मूढ मैं अनेकबार ह्वै मर्‌यो॥ २८॥
मूष चूस कहत हमारो तहखानो यह चिरियां कहत खसखानो मैं बनायो है।
मकरी कहत यह हमारो मगसखानो भमर कहत काठ महल मैं उपायो है॥
माछर पखारी कांठे छांडिदे हमारो धाम नोर रु विलाव छिपकलहू अपनायो है।
ऐसे झगरे को घर तजिके गये हैं संत करता निमित्त नित्य अति सुख पायो है॥ २९॥
जिनके है परायोघर कुटी सो न धाम जामें मूसे रु बिलाई साँप न्योला जो रहत है।
भाजन तो मृत्तिका के फूटे खाली धान नाहीं टूटीसी खटेली खाटमल जो लहत है॥
करकस कठोर नार कानी कालो कलहगारी करकस वचन बोलै अवगुण की महंत है।
हाहारे कर्मनकी विटंबना कही न जाय ऐसो गृह पाय मूढ लागो न चहत है॥ ३०॥
चंचला चलाचल ज्यों घनमें विलोकियतु जलमें कलोल भूरि भासत भगतु है।
पानी मृग प्यास को विलास ठग चातुरी को रैनन में जोति जैसे जुगनू जगतु है॥
नगर गंधर्व को पिनाक ज्यों पुरंदर को ऐसे धनवाद मन प्रीति को पगातु है।
झूठो है रे झूठो जग राम की दुहाई काहू साँचे को बनायो तातें साँचो सो लगतु है॥ ३१॥
दिया है प्रभूने जामें खुसी करो ग्वाल कवि खावो पीवो लेवो देवो यही रहजाना है।
बादशाह आदि ले अमीर उमराव सब कूच करगये जाका लगा ना ठिकाना है॥
हिंदो मिलो मिलो नरेंद्र की वा राहचलो जिंदगी जरासी जामें दिल बहलाना है।
... परवाना तब बने ना बहाना यहां नेकी कर जाना फिर आना है न जाना है॥ ३२॥

ऊंची ऊंची चित्रसारी रंग के झरोखे भारी ताके मध्य सभा सोहै खान सुलतान की ।
चोपदार छरी लिये बोलत अगारी खरे सेन्या जो चढत है हजारन के खान की ॥
एते ही में औचक अचानक ही मोत आई होदा ही में फेलगई जानु लगी बान की ।
गढ़ कोट तोडिबे की मिसलत भूल गये मिसलत होन लगी चलन मसान की ॥ १६ ॥
जीती दशूं दिशा देश देश के नरेश जीते औज औज लाखों माल भंडार भरे रहे ।
कंचनके आसन सुवासन सब कंचनके पलंग अवास सोतो भलग ढरे रहे ॥
हाथी हथसालनमें घोडे घुडसालनमें कुलके कुटुम्ब लोक देखत खरे रहे ।
तजी देह अंबर दिगम्बर चल्यो निदान आसन बिभूतिके सिंघासन धरे रहे ॥ १७ ॥
रूनी तरुनी झूनी वही दुख झूनी मांझ देखत अभूली पंथ पीलन खरी रही ।
पाटन बिछूनी हूनी मंदिर पिछूनी तज दूनी सोभ चित्रसारी सूनीसी परी रही ॥
कहत कल्याण बात सारी ही अलूनी भई कूनी मढ चित्तनमें चूनी जरी रही ।
जूनी तज काया हंस सूनी तो नहीं र भयो मूनी अवधूतनकीसी धूनी धरी रही ॥ १८ ॥
नितही कमातो ध्यातो खातो मन मोद मांझ तातो सो न खातो रातो पद्यो ना हटाऊसो ।
जेतो आतो घरमें सुहातो एतो कोऊ नाहिं ऐसे घुररातो मानो श्वान है कटाऊसो ॥
माया मद मोह मातो कोढी हू न लातो दान पीछे पछितातो जब भयो है लटाऊसो ।
राम सूं न रातो रे परातो अब काल आयो देखो रे रटाऊ चल्यो जात है बटाऊसो ॥ १९ ॥
धरेही रहेंगे धरा धूरि मांझ गाडे धन भरेही रहेंगे भंडार बहु बानी के ।
जरेही रहेंगे गजराज हू जंजीरन से खरेही रहेंगे मानों अश्वपंथ पानी के ॥
काल आय गहे जब करेंगो सहाय कौन कृष्ण रहेंगे जंग जोधा मरदानी के ।
थके सुखवानी माया होयगी बिरानी जब छांड रजधानी बासी होयगो मसानी के ॥ २० ॥
रामको लियो न नाम दियो न कणूको दान कूर नहिं खायो भाप राच रह्यो कूर में ।
कोडी कोडी जोड बैसे कहायो करोरी तामें छात माखी जेम छायो मायाहूके पूर में ॥
बाई को न भाई को न पिता हू को हूवो नाहिं मलिन स्वरूप रह्यो देखियो न नूर में ।
सांकडी घणाणी घाटी कालकी झपाटी लागी हालियो भर्जाकी हाटी खाटी रही धूर में ॥ २१ ॥
रहा है न कोई यहां रहो है न कोई यह जाने सब कोई पै न माने मोह पगिगे ।
हाथी और घोडे जोडे छोडे सब ठौर ठौर भौनन में मांडे भूरि भांडे ते बिसरिगे ॥
कहै छबिनाथ एक राम के भजन बिनु ऐसे ही बिचारे जन्म कोटिन निसरिगे ।
जंगवाले जोरवाले जाहिर जरबवाले जोसवाले जालिम चिताकी आग जरिगे ॥ २२ ॥
कहीसी सराय काय पंथी जीव बस्यो आय रत्न त्रय निधि जामें मोक्ष जाको घर है ।
मिथ्या निधि कारी जहाँ मोह अंधकारी भारी कामादिक तस्कर समूहन को थर है ॥
सोवै जो अचेत सोई खोवै निज संपदाको तहां गुरु पाहरू पुकारे दया कर है ।
गाफिल न हूजे भ्रात ऐसी है अंधेरी रात जागरे बटोही यहां चोरन को डर है ॥ २३ ॥
हाथी के दांतन के खिलोना बने भांति भांति बाघन की खाल शिव संकर मन भावेगी ।
मृगनकी खालनको ओढत हैं जोगी जती बकरे की खाल आछापानी भर लावेगी ॥

घटमें घट गोतलियो घटिके घट औघट घाट अछूतन को।
सांईदीन कहै मजबूत गुरू अदभूत मतो अवधूतन को ॥ ३ ॥
मैड्रिहि मंदिर छांड दीजे वन माहिं न झूंपड़ा बांध टटीदा।
रूखी हु सूखी हु खाय रह्यो काला मुंह करो जिय चट्ट मिठीदा॥
रूप सिंगार तो उनहु को लोड़िये जो कोउ आशक होत लटीदा।
फकीर की राह कठिन्न अल्लू पगधरतहि निकसत दूध छटीदा॥ ४॥
निशिवासर वस्तु विचार सदा मुख सांच सदा करुणा धनहै।
अघनिग्रह संग्रह धर्म कथा न परिग्रह साधुन को गन है॥
कहि केशव भीतर जोति जगे अरु बाहर भोगनको तन है।
मन हाथ सदा जिनके तिनके वनही घर है घरही वन है॥ ५॥

कुंडलिया।

खटकेवाली वस्तु को दीन्ही जिसने डार।
भावे रह्यो उजार में भावे बीच बजार॥
भावे बीच बजार पर्यो रह मुखा न बोले।
अथवा बात अनेक करे निशि वासर डोले।
कहै गिरिधर कविराय चीज जो प्यारी पटके।
सुत दारा धन धाम गये सब तिनके खटके॥ १ ॥
विरकत सोई जाण बसे बस्ती से न्यारा।
अहनिशि आठों याम रामजी लागे प्यारा॥
छाजन भोजन नीर जिको पर इच्छा आवे।
चेराचेरी तजे पक्ष के दिसा न जावे॥
आठ पहर चोसठ घड़ी एकाएकी रामजी।
जनरामा विरकत सोई चोथेपद विश्रामजी॥ २ ॥
विरकत कहिये भरतरी कै गोपीचंद मीर।
ढाको बलख उजीण तजि तीनूं भया फकीर॥
तीनूं भया फकीर अलख सूं पलक लगाई।
गिरि डूंगर वनवास समयसर बस्ती आई॥
अणचाहिक अवधूत जन चखी शब्द की सीर।
विरकत कहिये भरतरी कै गोपीचंद मीर॥ ३ ॥

दोहा।

जोड़ी तज जोड़ी तजी फिर जोड़ी का त्याग।
रच्चय जोड़ी रामसूं ते कहिये वैराग॥ १ ॥
तुलसी जाके दो नहीं घर घरनी धन हीन।
ताको वन वसिवो भलो कर करवा कोपीन॥ २ ॥

मुक्ताफल कल्हार कमल तहाँ कुंदनपे मणिनसों जरी पाल चहूं और सांकरी ।
विहरत सुर मुनि वेद धुनि उचरत सुखसुं समेटि रास विधि तहाँ हांकरी ॥
वासी उही पुरको उदासी भयो काशीराम तोउ वह विछुरत एसी आशा हू नांकरी ।
पर्‍यो कोऊ काल तातें आन तक्यों तुच्छ ताल छब्यो क मराल तो चुगेगो कहा कांकरी ॥३३॥
एकता कूं लिये भावे बैठ तू अटन कर ज्ञान घन हूवें तू तो साहन को साह है ।
आशा और तृष्णा और चिंता को बिसारडार आतम स्वरूप तू तो सदाई अचाह है ॥
मन बानी जीत्यो जब सकल जगत जीत्यो द्वंदभाव गयो तातें भयो बे प्रवाह है ।
जैसो घर तैसो बन सदाई आनंद घन योंही वाह वाह फेर योंभी वाह वाह है ॥ ३४ ॥
कबहु क ऐंट बैठे चूंतरा अटालचके कबहु क पायन हू पैनी भ्रुन झुनिया ।
संपति में सुक्ख होय बिपति में दुःख होय संपति रिझाय औ बिपति घिर धुनिया ॥
संपति में बिपति औ बिपति में संपति है संपति बिपति दोनूं एक देख गुनिया ।
संपति में कॉंय कॉंय बिपति में भॉंय भॉंय कॉंय कॉंय भॉंय भॉंय देखी सब दुनिया ॥३५॥
जॉंचवे न कहूं जावे राजक रिजक दावे पावे के न पावे दिल नावे दिलगीरी पें ।
धीरी मन धारे यादगीरी करतार हीरी पीरी हू न चहै तहाँ कहा लोभ मीरी पें ॥
खालिक खलक माहिं और कछु देखे नाहिं पर्‍यो रहे सीनो भीनो लग्यो सुरसीरी पें ।
करी आदि अंत कीरी भली बंछवेकी मीरी कोटिक अमीरी वारडारूं या फकीरी पें ॥ ३६ ॥
गुहा हू का रहना कहना नहिं काहू पेती साहब से प्रीति अरु काकी परवाह है ।
चित्तकी सुराही लिये प्रेम हू का प्याला पिये खलककी खुसालीका सदा चित चाह है ॥
ज्ञान हू की गूदरी में पेभद फकीरी फबै निपट निरंजन कहै नाम निर्वाह है ।
चिंता चितचोरी लोभ लालच तगीरी तजी दफै दिलगीरी तो फकीरी वाहवाह है ॥३७॥

सवैया ।

धूत कहो अवधूत कहो रजपूत कहो जुलहा कहो कोऊ ।
काहु की बेटी से बेटो न व्याहवो काहु की पांति बिगार न सोऊ ।
तुलसी सरनाम गुलाम है राम को जाको रुचे सो कहो कछु ओऊ ।
मांगिके खैबो मसीत को सोइबो लेबे को एक न देबे को दोऊ ॥ १ ॥
खेतनहीं रु तिजारत नां करनी नहिं काहु की व्याह सगाई ।
ग्रंथ बनावनो ना कछु बाग त्यूं मंदिर की नहिं नींव खुदाई ॥
दासस्वरूप न सोच या लोकको ना परलोक को सोच सगाई ।
आज मरै तोही खूब है बांधव काल्ह मरै तोइ खूब है भाई ॥ २ ॥

झूलणा ।

हरिनाम रटै गुरु ज्ञान थटै लपटै न जटै करतूतन को ।
भटकै न थटै भटकै न कटै खटकै न जटै जमदूतन को ॥

पाल कहे रे सायरा लागे आज बुरोह।
मैं हंसता हंस ने कह्यो वो जातो रह्यो परोह ॥ ७ ॥

सोरठा।

मनमेलू गयो मार हितरूपी हथियार से।
सक्यो न आप सँभार निरवल थयो निरंजना ॥ १ ॥
शिष हुतो क शरीर पिंजर हुतो क माणिया।
धरे न यो मन धीर नाम निरंजन के विना ॥ २ ॥
चेला थारी चिन्त कह्यो किणीने दाखवुं।
मिले न दूजो मित नव खंड फिरूं नारायणा ॥ ३ ॥
चेला इतरी चूक मरतां तें मूवो नहीं।
हिवड़े हाले हूक नींद न आवे नारायणा ॥ ४ ॥
सांभल ज्यो सेणाह वेणा वीसरसाँ नहीं।
नित झुरसी नैणाह मेमत सावण मेह ज्यूं ॥ ५ ॥
धारे चरणा धाम बलवंतरो मन यों बसे।
सेवगरो सतराम भनदाता छेहलो भये ॥ ६ ॥
मोती हुतो अमोल वीछडतां कहिया वचन।
बलवंत थारा बोल सारा निशिदिन खटकसी ॥ ७ ॥
अंडा भनह तणाह माले विन ही मेलिया।
पंखी पोष विनाह जीवै किणविध जेठवा ॥ ८ ॥
ताला सजड़ जड़ेह कूंची ले काने फरी।
ऊघड़सी आयेह जड़िया रहसी जेठवा ॥ ९ ॥
प्यारी ना कोइ पूत बंधव ना कोई बेनड़ी।
बोळा मुवा जमदूत नाम छुड़ासी नानिया ॥ १० ॥
मात तात ने मीत सगा सजन नाती सरब।
जम छेजासी जीत नाम छुड़ासी नानिया ॥ ११ ॥
धन मायरू कोठार पटा गाँव घर परगना।
यां सूं नाहिं उधार नाम छुड़ासी नानिया ॥ १२ ॥
बख्तर ढाल बन्दूक पाखरिया कमधज पड़ग्या।
करसी फूक्का फूक नाम छुड़ासी नानिया ॥ १३ ॥
तोप तमंचा तीर हाथी अश्व हजार गूं।
चले न पालक भीर नाम छुड़ासी नानिया ॥ १४ ॥
डाकर दुर्गा हथिम पडक न ग्वलमा मापरी।
जैवरो टमरो आम नाम छुड़ासी नानिया ॥ १५ ॥

दमड़ी चमड़ी बीच में हरिया बिवरो होय।
दमड़ी सूं दावा किसा चमड़ी मां कर जोय ॥ ३ ॥

कुंडलिया।

खंडी दंडी हाथ में खंडी सी कोपीन।
खंडी दिस देखै नहीं काया दंडी कीन।
काया दंडी कीन दीन याचक नहिं बोलै।
भोग योग संयुक्त उक्त यह मन में तोलै॥
उर धर गुरु को ज्ञान मोह ममता सब छंडी।
सो वैरागी राम कहै हरिराम अखंडी ॥ १ ॥
तीनटूक कोपीन के अरु भाजी बिन लोंन।
तुलसी रघुवर उर बसै इंद्र बापुरो कौन ॥ १ ॥
कबीर सात गांठ कोपीनके मन में रहै निशंक।
राम अमल मातो रहै गिनै इंद्र को रंक ॥ २ ॥
कर अरु जीभ लंगोटड़ी यह तीनों वसरक्ख।
निरभय होय निशंक रम वैरी मारो लक्ख ॥ ३ ॥

कवित्त।

कोऊ राजहंस उडिआयो हो समुद्रहूते, बीतगये वासर समुद्र फिर जावणो।
ताही मग बीच एक भर्यो हो सुभगसर, रैन विसराम लेय भोर उड़जावणो॥
कहै करजोर ताल बैठे रहो कोउ काल, राज बैठे डेरो पाल लगत सुहावणो।
चरण कहत सर काहेको विलाप करै, रोकयो नाँ रहै गोरे विदेशी हंस पावणो ॥ १ ॥

दोहा।

मत हो समँद उतावलो, लांबी छोल न लेह।
आपेही उड़जायसां, पांख संवारण देह ॥ १ ॥
हंसा सरवर मत तजो, जो जल खारा होय।
डाबर डाबर डोलतां, भला न कहसी कोय ॥ २ ॥
सरवर हंस मनायले, नेड़ा थका बहोड़।
जा बैठां रलियावणा, तासूं तान न तोड़ ॥ ३ ॥
रहताने बरजूं नहीं, जाता न लाऊं बहोड़।
सरवरमें मोती घणा, वो हंसा लाख करोड़ ॥ ४ ॥
और घणा ही आवसी, चिड़ी कमेड़ी काग।
हंसा फेर न आवसी, सुण समदर मँद भाग ॥ ५ ॥
जा जल तूं पाछो जा, तुझ मुझ रह्या न रंग।
कड़वा बोल्या बोलड़ा, फेर न मिलसी अंग ॥ -

सज्जन रोवे कौन को हंसे सु कौन विचार।
गये सो आवन के नहीं रहे सो जावन हार ॥ १२ ॥
नदी किनारे देखिये सज्जन सब संसार।
के उतरे के उतरिके गुठड़ी बाँधि तयार ॥ १३ ॥
पान झड़ंता देखिके हंसी जु कोंपलियाँह।
मो बीती तो बीतसी धीरी बापड़ियाँह ॥ १४ ॥
केइ फूले केइ फूलिंगे सुंदर नये नयेह।
केते बाग जहान में लगि लगि सूक गयेह ॥ १५ ॥
धन जोवन का मत करो गुमाना जानो तरुवर पाका पाना।
लागी बायु अंत झड़ पड़ना तो ते पर पता क्या करना ॥ १ ॥
बहुत गई थोरी रही नारायण अब चेत।
काल चिरैया चुग रही निशिदिन आयू खेत ॥ १६ ॥
काल करंतो आजकर आज करंतो अब्ब।
अवसर बीतो जात है फेर करेगो कब्ब ॥ १७ ॥
रात गमाई सोयकरि दिवस गमायो खाय।
हीरा जन्म अमोल था कवडी बदले जाय ॥ १८ ॥
धन जोवन यों जाहिंगे जिन विधि उड़त कपूर।
नारायण गोपालभज क्यों चाटे जगधूर ॥ १९ ॥
हाथ जोरि हाजर रहे जिनके सन्मुखकाल।
नारायण ऐसे नृपति परे कालके गाल ॥ २० ॥
जिनके सहज हि पग धरत रज सम होत पषान।
नारायण तिन को कहूँ रह्यो न नाम निसान ॥ २१ ॥
रे मन क्यूं भटकत फिरै भज श्रीनंदकुमार।
नारायण अब भी समझ भयो न कछु विगार ॥ २२ ॥
ऊठ फरीदा जागरे झाडू देह मसीत।
तूं सोवे रब जागता किसविधि बने परीत ॥ २३ ॥
ऊठ फरीदा जागरे जागन की कर चौंप।
यह दम हीरा लाल है गिन गिन रब कों सौंप ॥ २४ ॥
कहताहों कह जातहों कहा बजाऊँ ढोल।
श्वास श्वास में जात है तीन लोक को मोल ॥ २५ ॥
आयू नेजक देह घट जातकूप भव माहिं।
शेष सँभाले सो धारिहै सुधरे बिगरे नाहिं ॥ २६ ॥

का=मरुस्थल में भ्रमतो बटाऊ प्यास मरे है ताने उजाड़ में कूप मिल गयो । नेज बाहिर रही है यह भी-गई तो कलस नेज प्राण सबही गया।

लेसी तन धन लूट हग देखत दोफारदा ।
ताँता जासी तूट मोह तणा जब मोतिया ॥ १६ ॥
करसी कूका कूक हाथो हाथ हकावसी ।
फलसे बाहिर फूँक कोई न चलसी कानिया ॥ १७ ॥
लीन्ही करणी लार पाप पुण्य हरि जाप री ।
ओ तन देवो उतार मृतक कहै सब मीरिया ॥ १८ ॥
तागो लेसी तोड़ बंधन कोइ बाँधे नहीं ।
चांपर चल्यो चढोड़ मरहट हक में मीरिया ॥ १९ ॥
घड़िया घट जेताह जाता सह दीसे जगत ।
जन धन तन जेताह सब ही अंत सिधावसी ॥ २० ॥

दोहा ।

कहँ जाये कहँ ऊपजे कहां लडाये लाड़ ।
क्याजानूं किस खाडमें पड़े रहेंगे हाड़ ॥ १ ॥
अर्व खर्व लों द्रव्य है उदय अस्त लों राज ।
जो तुलसी निज मरन है तो आवहि किहिकाज ॥ २ ॥
लाड़ु तूं परलोकरो कर साधन ततकाल ।
हालंता नह लागसी ताली इतरी ताल ॥ ३ ॥
छहसो सहस्र इकीस दम जावत है दिन रात ।
एतो तोटो तास घर काहेकी कुशलात ॥ ४ ॥
जाणांहै रहणा नहीं चलणा बिश्वा वीस ।
रज्जब तनक सुहाग को कोन गुथावै शीस ॥ ५ ॥
आंख झपंती ना लहै अस मुख माहिं गिरास
लख लख लानत नानगा दमदा करे विश्वास ॥ ६ ॥
छींकत डेरी पग दियो पीछे दीनो रोय ।
असगुन तो पहिले भयो कुशल कहांते होय ॥ ७ ॥
सुन प्रानी सदगुरु कहै देह खेह की खानि ।
धरै सहज दुख दोष को करै मोख की हानि ॥ ८ ॥
जसवंत शीशी काचकी जैसी नरकी देह ।
जतन करंता जायसी हरिभज लाहा लेह ॥ ९ ॥
जसवंत वास सरायका क्या सोवत भरि नैन ।
श्वास नकारे कूचके बाजत है दिन रैन ॥ १० ॥
दश दुवारका पींजरा तामें पंछी पौन ।
रहन अचंभा है जसा जात अचंभा कौन ॥ ११ ॥

सोरठा ।

बहुताई बाल्हेह बालंताँ बोली नहीं ।
नाणै सूँकी नेह कारण ता कूकी करण ॥ १ ॥

गीत ।

वावरज्यो खाज्यो विलसज्यो हिम्मतहै तो दीज्यो हा
दियाँ विना जातो नहिं दीठो सोनो रूपो साथ ॥ १ ॥
साजाँ पगाँ आपरी संपत मरदाँ खाज्यो मीठी ।
जोड़णहारे लार जावताँ दौलत किणी न दीठी ॥ २ ॥
खावो खुलावो भलपण खाटो जिणघर संपत जेती ।
भेलण काज इतो नहिं मिलियो रावण के मुख पकरत
ओपो कहै दियाँ ऊवरसी गाडी जिकाँ गमाणी ।
बीस क्रोड़ बीसलदे वाली पड़ गइ ऊंडे पाणी ॥ ४ ॥

(प्रेम)

परा भक्ति अरु ज्ञान में तनक नहीं कछुभेद ।
नारायण मुख्य प्रेम है कहै शास्त्र अरु वेद ॥ ४३ ॥
परा भक्ति याको कहै जित तित श्याम दिखात ।
नारायण सो ज्ञान है पूरण ब्रह्म लखात ॥ ४४ ॥
प्रेम बराबर योग नहिं प्रेम बराबर ध्यान ।
प्रेम भक्ति बिन साधियो सबही थोथा ज्ञान ॥ ४५ ॥
जेहि घट प्रीति न प्रेमरस पुनि रसना नहिं राम ।
नर आया संसार में उपज खप्या बेकाम ॥ ४६ ॥
जिन्हें प्रेम प्याला पिये घूमत जिनके नैन ।
नारायण या रूप मद छके रहै दिन रैन ॥ ४७ ॥
रूप छके घूमत रहै तनको तनक न ज्ञान ।
नारायण दृग जल भरे यही प्रेम पहिचान ॥ ४८ ॥
फुटो नैन फाटो हियो जरो सु तन केहि काम ।
द्रवै द्रवै पुलकै नहीं तुलसी सुमिरत राम ॥ ४९ ॥
प्रेम छिपाया ना छिपे जा घट प्रगट होय ।
जो कै मुख बोलै नहीं नैन देत है रोय ॥ ५० ॥
रहिमन अँसुवा नयन ढरि जिय दुख प्रगट करेय ।
जाहि निकारो गेह तें कस न भेद कहि देय ॥ ५१ ॥
लागी लागी क्या करे लागी नाँही एक ।
लागी सोई जानिये करे कलेजे छेक ॥ ५२ ॥

बहुत गई थोड़ी रही अजहूं चेते नाहिं।
रे जड़ फिर कित पावही यो औसर जग माहिं ॥ २७ ॥
काम को किंकर हुइ रह्यो वाम को भयो गुलाम।
दाम दाम से बंधियो पामर भज्यो न राम ॥ २८ ॥
द्वै बातन को भूल मति जो चाहै कल्यान।
नारायण एक मोत कूं दूजे श्रीभगवान ॥ २९ ॥
नारायण द्वै बात को दीजै सदा विसार।
करी बुराई और ने आप कियो उपकार ॥ ३० ॥
कबिरा कहै कमाल कूं दो बातां लिख लेह।
कर साहिबकी बंदगी भूखे कूं कछु देह ॥ ३१ ॥
देह धरेको यह फल देह देह कछु देह।
आगे हाट न वाणियां लेना होय स लेह ॥ ३२ ॥
खाय खुलाय लुटायदे करले अपना काम।
चलती विरियाँ रे नराँ संग न चलै छदाम ॥ ३३ ॥
गांठी होय सो हाथ कर हाथ होय सो देह।
देह खेह हो जायगी फिर कोन कहेगो देह ॥ ३४ ॥
धन दीये धन नाँघटै नदियाँ घटै न नीर।
अपनी आंखे देखलो यों कहै दास कबीर ॥ ३५ ॥
तुलसी पंछिन के पियां सरवर घटै न नीर।
धर्म किये धन ना घटै जोसहाय रघुबीर ॥ ३६ ॥
कुंजर मुख ते गिर पड्यो घट्यो न ताहि अहार।
लाखों कीड़ी ले चली पोखन को परिवार ॥ ३७ ॥
लेवे कूं हरिनाम है देवेकूं अनदान।
तरने कूं आधीनता डूबन कूं अभिमान ॥ ३८ ॥
माया मेरे रामकी धरणीधर की देह।
पूंजी विराने साह की करसें जशकर लेह ॥ ३९ ॥
पानी बाढ़ो नाव में घरमें बाढ़ो दाम।
दोनों हाथ उलेचिये यही सयानो काम ॥ ४० ॥
आया सोतो खूटग्या खरच्या सोई साथ।
जशवँत धर पोढावियां माल बिड़ाणे हाथ ॥ ४१ ॥
सबै सुनत प्रिय लगत हैं दान मान जुधवात।
स्वरूपदास कहिवो सुगम करिवो कठिन दिखात ॥ ४२ ॥

छप्पय।

पारब्रह्म पतसाह ज्ञान कहियै सहजादो
सांख्यजोग अरु भक्ति यहे उमराव अनादो।
और क्रिया सब रैत जोग जिग जपतप जेते
तीरथ भटन ध्यान दान यम नेमसु केते
ज्यों ब्याह समय अपने सुतहि सहजादो कर गाइयो
कहि सुन्दर सहजादो यहै पातसाह उरलाइयो ॥ १ ॥

दोहा।

रमा शंख विष धनु सुरा वैद्य धेनु हय हेय।
मणि रंभा गज कल्पतरु सुधा सोम आदेय ॥ १ ॥

कवित्त।

लक्षमी है सुबुद्धि अनुभूत कौस्तुभ मणि वैराग्य कल्पवृक्ष शंख सु वचन है।
ऐरावत उद्यम प्रतीति रंभा उदै विष कामधेनु निर्जरा सुधा प्रमोद घन है॥
ध्यान चाप प्रेम रीति मदिरा विवेक वैद्य शुद्धभाव चन्द्रमा तुरंग रूप मन है।
चौदह रतन ए प्रगट होहि तहां जहां ज्ञान के उद्योत घट सिंधु को मथन है ॥ १ ॥
भेख में न ज्ञान नहीं ज्ञान गुरु वत्तन में मंत्र जंत्र तंत्र में न ज्ञान की कहानी है।
ग्रन्थ में न ज्ञान नहीं ज्ञान कवि चातुरी में बातन में ज्ञान नाहीं ज्ञान कहा बानी है॥
तातें भेख गुरुता कवित्त ग्रन्थ मंत्र बात इतने अतीत ज्ञान चेतन निशानी है।
ज्ञानही में ज्ञान नहीं ज्ञान और ठौर कहूं जाके घट ज्ञान सोइ ज्ञान को निदानी है॥ २ ॥

दोहा।

आपन कहु सब स्वर्ग में, औरन नर्क निवास।
सब मत की गति सुनि भयो, दास स्वरूप उदास ॥ १ ॥
इष्ट धर्मके भजन को, पर्यो जु झगरो आय।
ताते मैं डर्यो खरो, पर्यो ब्रह्मकुंडमें जाय ॥ २ ॥
पढने की हद समझ है, समझन की हद ज्ञान।
ज्ञान हद हरिनाम है, यह सिद्धान्त उर आन ॥ ३ ॥

कवित्त।

जैसे काहू दासीने जुगल पुत्रजने जिन एक दियो बाम्हन के एक घर राख्यो है।
बाम्हन कहायो तिन मद्य मांस त्याग कियो दासहू कहायो तिन मद्य मांस चाख्यो है॥
तैसे एक वेदनीकर्म के जुगल पुत्र एक पाप एक पुण्य नाम जिन भाख्यो है।
माहिं दौर धूप दोऊं कर्म बंधरूप यावे ज्ञानवंतनि न कोउ अभिलाख्यो है ॥ १ ॥
में नदी को प्रवाह एक ताही में अनेक भांति नीर की ढरनि है।
को जोर तहाँ धार की मरोर होत कांकर की खानी तहाँ झाग की भरनि है॥

सुरत लगी था ध्यान में सुनत और की बात ।
नारायण उत्तर दियो मृदुल मनोहर गात ॥ ५३ ॥
पलक निगम मधि ध्यान धर वरुणी जटा बनाय ।
नैन दिगंबर होरहे रूप विभूति लगाय ॥ ५४ ॥
तन बंदूक मन जामकी दियो रिजक जिय साज ।
प्रेम पलीता दगतहि निकसी आह अवाज ॥ ५५ ॥
जरे जरे सो जर बुझे बुझर जरेऊ नाहिं ।
महमद वाझे प्रेम के बुझ बुझके सिलगाहिं ॥ ५६ ॥
धन दे नीके राख तन तन दे राखिय लाज ।
लाज प्राण तज दीजिये एक प्रेम के काज ॥ ५७ ॥
दारा और सिकंदर द्वि फूल पना महमद ।
बहराम व मजनू कियो प्रेम सु हदोहद ॥ ५८ ॥
जोगी जंगम सेवड़ा सन्यासी दरवेस ।
बिना प्रेम पहुंचे नही दुर्लभ सतगुरु देस ॥ ५९ ॥
मन पक्षी तबलगि उडे विषय वासना माहिं ।
प्रेम बाजकी झपट में जबलगि आवे नाहिं ॥ ६० ॥
खिनक चढे खिन ऊतरे सोतो प्रेम न होय ।
अघट प्रेम जा पट्ट बसे प्रेम कहावे सोय ॥ ६१ ॥
उपजे इश्क जु अंगतें रहत अंग के बीच ।
हाड मांस गलयो करे इश्क न जानत नीच ॥ ६२ ॥
हाड गोड रग मांस सो तो विरहा ले चल्यो ।
महमद रह्यो जु सांस बाही को सांसो पर्‌यो ॥ १ ॥
महमद अपने चोर कुं सब कोउ कहै हनेउ ।
जो मनहरन जु मो मिले तो वार फेर जिय देउ ॥ ६३ ॥
दीन्हो होय सो पाइहै कहते वेद पुरान ।
मन दे पाई वेदना पाइहै भेरा दान ॥ ६४ ॥
नेह नगर में पग धरे फेर विचारे लाज ।
नारायन नेही नहीं पातनको महाराज ॥ ६५ ॥
नारायन पार्थ कठिन जहां नेहको धाम ।
विकल व मूर्छा सतकियो यह मगमें विश्राम ॥ ६६ ॥
नारायन हरि लगन में यह पांचों न सुहात ।
विषय भोग निद्रा हसी जगत प्रीति बहुबात ॥ ६७ ॥

इति ।

छप्पय।

पारब्रह्म पतसाह ज्ञान कहिये सहजादो
सांख्यजोग अरु भक्ति पंच उमराव अनादो।
और क्रिया सब रंग जोग जिग जपतप जेते
तीरथ अटन स्नान दान यम नेमसु केते
ज्यों ब्याह समय अपने सुतहि सहजादो कर गाइयो
कहि सुन्दर सवजादो घटै पातसाह उरलाइयो ॥ १ ॥

दोहा।

रमा शंख विष धनु सुरा वैद्य धेनु हय हेय।
मणि रंभा गज कल्पतरु सुधा सोम आदेय ॥ १ ॥

कवित्त।

लक्ष्मी है सुबुद्धि अनुभूत कौस्तुभ मणि वैराग्य कल्पवृक्ष शंख सु वचन है।
ऐरावत उद्यम प्रतीति रंभा उदै विष कामधेनु निर्जरा सुधा प्रमोद धन है॥
ध्यान चाप प्रेम रीति मदिरा विवेक वैद्य शुद्धभाव चन्द्रमा तुरंग रूप मन है।
चौदह रतन ए प्रगट होहि तहां जहां ज्ञान के उद्योत घट सिंधु को मथन है ॥ १ ॥
भेख में न ज्ञान नहीं ज्ञान गुरु वत्तन में मंत्र जंत्र तंत्र में न ज्ञान की कहानी है।
ग्रन्थ में न ज्ञान नहीं ज्ञान कवि चातुरी में वातन में ज्ञान नाहीं ज्ञान कहा बानी है
तातें भेख गुरुता कवित्त ग्रन्थ मंत्र बात इनते अतीत ज्ञान चेतन निशानी है।
ज्ञानही में ज्ञान नहीं ज्ञान और ठौर कहूं जाके घट ज्ञान सोई ज्ञान को निदानी है

दोहा।

आपन कह सब स्वर्ग में, औरन नर्क निवास।
सब मत की गति सुनि भयो, दास स्वरूप उदास ॥
इष्ट धर्मके भजन को, पर्‍यो जु झगरो आय।
ताते मैं डर्‍यो खरो, पर्‍यो ब्रह्मकुंडमें जाय ॥ २ ॥
पढने की हद समझ है, समझन की हद ज्ञान।
ज्ञान हद हरिनाम है, यह सिद्धान्त उर आन ॥

कवित्त।

जैसे काहू दाईने जुगल पुत्रजने जिन एक दियो बाम्हन के एक [illegible]
बाम्हन कहायो तिन मद्य मांस त्याग कियो दासहू कहायो तिन [illegible]
तैसे एक वेदनीकर्म के जुगल पुत्र एक पाप एक पुण्य नाम [illegible]
दुहूं माहिं दौर धूप दोऊं कर्म बंधरूप याते ज्ञानवंतनि न को[illegible]
जैसे महिमंडल में नदी को प्रवाह एक ताही में अनेक भांति [illegible]
पाथर को ओर [illegible] बानी

पौन की झकोर तहां चंचल तरंग उठै भूमिकी निचान तहाँ भौंर की परनि है ।
तैसे एक आतमा अनंत रस पुदगल दुहू के संजोग में विभावकी भरनि है ॥ २ ॥

दोहा ।

पलित वृद्धके शीशपर सोतो पलित न पेख ।
गई जवानी भजन विन चानी परी विशेख ॥ १ ॥

छप्पय ।

मिनख जन्म अवतार वरप चालीसां मीठो ।
कड़वो लगे पचास साठमें कोध हि दीठो ॥
सत्तर सगो न कोय असी में आस न काई ।
नाहिं निवे में होय हँसे सब लोग लुगाई ॥
डगडग हाले नाड़ की सादज पड़गयो खोखरो ।
सुत नारी परिवार कहै ओ मरे तो सुधरे डोकरो ॥ १ ॥
चरण प्रवल चूरता चरण अँगणे न चहै ।
पाँण हाथी पेलता पोत छूटती न पहै ॥
नेणां नग निरखता नारी ओलखै न नेणा ।
श्रवण नाद सुणता साद ओलखे न सेणा ॥
बोलती जीभ यडवड वयण लड़ धड़ करती लडूरा ।
जोवन गमाय जग निरखता जका कीध गोली जरा ॥ २ ॥
नयन श्रवण नासिका रूप रच गंध सुमुक्किय ।
रसन न रस आचरहि चरण मग चलत सुचुक्किय ॥
दंत दलित कच पलित त्वचा संचलित सलन ते ।
असन वसन वल गलित मलिन तन सकल मलन ते ॥
किय सखा सकल सुरपुर सदन लकरिपकरि विहरति यिमति ।
यह दशा भई भायन तदपि तजत न जिय जीवन सुरति ॥ ३ ॥

सवैया ।

लकरी पकरी सु खरी कर में पग पंथ परे न भरे डगरी ।
न घरी भर वैठि भज्यो सु हरी कथ कूर करी जगरी सगरी ॥
नगरी तनरी सु पुरानि परी भगरी अव लूटतु हैं ठगरी ।
अधरी विरधापन बात बुरी सु अरी सम होत सबै सुतरी ॥१॥

माया ।

दोहा ।

माया तो ठगनी भई ठगत फिरी सब देश ।
जा ठगनें ठगनी ठगी ता ठग को आदेश ॥ १ ॥

कबीर माया पापिनी झुल झुल लागे पाय।
हिरदा भीतर बैठकर काढ़ कलेजो खाय॥ २॥
कबीर माथा ऊपर सींगड़ा लांबा नव नव हाथ।
पाछे मारे लात सूं आगे दांतां खात॥ ३॥
कबीर माया मोहिनी मांगी मिले न हाथ।
मना उतारी ऊठकर भागी डोले साथ॥ ४॥
कबीर मोटी माया सब तजे झीणी तजी न जाय।
सिध साधक जोगी जती झीणी सबकूं खाय॥ ५॥
माया नाना भांति की दरिया जगमें जान।
काहू सुत पित अस्तरी काहू अनुभव मान॥ ६॥

पद।

माया जग ठगनी हम जानी, तिगुणी पाश लियां कर डोले बोले मधुरी बानी॥ टेर।
जोगी के जोगन हुय बैठी राजाके घर रानी, पंडा के मूरति हुय बैठी तीरथ जायक पानी॥१॥
केशव के कमला हुय बैठी ब्रह्माके ब्रह्मानी, ईश्वर के गौरी हुय बैठी इन्दर के इन्द्रानी॥२॥
भक्तों के भक्तन हुय बैठी तुर्कों के तुर्कानी, लखचौरासी झुल झुलखायेतोइदहिकिननपिछानी॥३
काहू के हीरा हुय बैठी काहू के कौडीकानी, दासकबीरसाहबआनन्दाजिनकेहाथबिकानी॥४

पद।

धोबनियाँ हम जानी घर घुघरु रही बजाय। टेर.
मारकण्डेय के लारे लागी दुर्वासा के रंग में पागी
नैना सैन चलाय पलक में कियो पारासर ख्वार॥ १॥
सुर तैतीसां लारे लागी शृंगी ऋषि के वन में पागी
भींडी ऋषि झण्डे के नीचे दियो पलक में डार॥ २॥
अजामील काल्ह क्या कीना पकड़ मछन्दर भोगल दीना
उद्दालक तिरिया के कारण गयो ब्रह्म दरबार॥ ३॥
नवूं नाथ पलकां में राखी सिद्ध चौरासी झुल झुल भाखी
कच्छ देश सलिता के बिचमें दियो गोरख शिर मार॥ ४॥
गौतमऋषि की नारि अहिल्या दिया श्राप धोबण घर घाल्या
शशि को कलंक इन्द्र सहस्र भग अंजनि पुत्र कुमार॥ ५॥
मोहिनि रूप धर्यो भगवाना शंकर होद भरे हम जाना
ग्रह को नाच नचाय गवरजा लियो भस्मासुर मार॥ ६॥
खर को रूप धर्यो मृग नैनी ताणा तोड्या सो हम जानी
उड़ती आभ गरज दामिनि जाती उड़ागइ छार॥ ७॥
काशी में कीरति सुण आई दास कबीर कथा सुनाई
गुरु रामानन्द वदन के ऊपर डारूँ धोबनिया वार॥ ८॥

श्लोक ।

सततधृतिरप्युच्चैः शान्तोऽप्ययातमहोदयो-
प्यधिगतनयोप्यन्तः स्वच्छोप्युदीरितधीरपि ।
त्यजति सहजं धैर्यं स्त्रीभिः प्रसारितमानसः
स्वयमपि यतो मायासंगात् पुमानिति विश्रुतः ॥ १ ॥

दोहा ।

तनक न रहै विरक्तता लगे दृगन की थाप ।
कहुं गीता माला कहूं कहुं बटवा कहुं आप ॥ १ ॥
पण्डित पूजा पाक दिल यह दिमाग मति साय ।
लगे जरव अंखियान की तो सबे गये उड़िजाय ॥ २ ॥
और ठोर जो दवत है निकसे मौसर पाय ।
जो नर नारी से दवे दवत दवत दवजाय ॥ ३ ॥
कबीर दोय घाटी दोरी खरी कही न लंघी जाय ।
जो कोउ लंघन की करे सोउ अलूझे आय ॥ ४ ॥
कबीर एक कनक अरु कामिनी विष फल दोऊं पाय ।
देखेही सों विष चढ़े खाया सूं मरजाय ॥ ५ ॥
छोटी मोटी कामिनी सबही विष की बेल ।
वैरी मारे दाव सूं या मारे हंस खेल ॥ ६ ॥
कामिनि खोड़ो कील सुत पोरायत परिवार ।
रामचरण गृह भाकसी मोहका जड़्या किवार ॥ ७ ॥
कबीर नारी कहूँक नाहरी करै निजर की चोट ।
कोइक हरिजन ऊबरै पारब्रह्म की ओट ॥ ८ ॥
कबीर नारी नहिं या नाहरी वाघण बडी वलाय ।
जीवत सोखे कालजो मुवां नरक लेजाय ॥ ९ ॥
कबीर जहाँ जलाई सुंदरी तू मति जाहि कबीर ।
भस्मीहुइ अंग लागसी सो नासवै शरीर ॥ १० ॥
कबीर राता कपड़ा पहर कर गादा वंध्या केश ।
हाथां मँहदी लायकर वाघण खाया देश ॥ ११ ॥
नारि निसरड़ी कूकरी क्या राती क्या काली ।
हिकुकाव चक्यां दोनूं बुरी क्या परकी क्या पाली ॥ १२ ॥
घरका गिणे न वारला हंस हंस देवै गाली ।
रामचरण धीजो मती या नारी चिरताली ॥ १३ ॥
विषय बिगोई टीकली क्या बिन टीके होय ।
नुकता माहिं निसरड़ी शरम विगाड़े दोय ॥ १४ ॥

विष सो गुण ढिग अग्नि सो चितवन बाण समान।
हित ठग सो मन सो मिलन सुख चुड़ैल पकयान ॥ १५ ॥

सवैया।

राम से पूत को दे बनवास कुमत्ति ले केकइ कंथ को रोई।
जमदग्नी कि त्रिया के कहे सहस्रार्जुन ने तपस्या जो बिगोई ॥
शूर्पनखा सिय की सुध दे दशकन्ध की साहिबी लंकते खोई।
रांड तणे पुरुषार्थ ते जु कहो किन को घर मांड न होइ ॥ १ ॥
मुई चुड़ैल उतार को लेइके छोड़त है फिर नाम न लेवे।
जीवति या नित लेय उतार को छाँड़त नाहिं महा दुख देवे ॥
जीवति सार हरै मन देहको मुए पीछे याहि नर्क पठेवे।
माणक जे बुधवान नहीं ऐसी जानिके याही के चरण को सेवे ॥ २ ॥

टीका=चुड़ैल दो प्रकार की है एक मरिके चुड़ैल भई। एक जीवती चुड़ैल बनी है तब बड़ी कोन होयगी ? तहाँ कहे हैं डाकिनी। नाहिं क्यूं कि डाकिनी है सो और कूं लागि के दुःख देवे है घरका पुरुष पर तो दया करे है फेर बल लिया वा पीछे तो छोड़ि देवे है। अरु यातो घरका ही पुरुष कूं लागिके महा दुःख देवे है बल लिया सू भी छोड़ती नाहीं। तातें वाथे या भिन्न ही है। तातें मरी चुड़ैल से जीवती में अधिकता दिखावे है कि मरी चुडेल है सो अपनो बल लेकर पुरुष को छोड़ देति है, अरु या जीवती है, सो नित्त मूंह माँग्यो अन्न वस्त्र आभूषणादि बल कुं लेवे है तोभी पुरुष को छोड़ती है नाँही अरु या लोकका पर लोकका जो महादुःख ताकुं देवे है।

सोई कहे है कि पुरुष जीवते तो या देह को सार बीर्य बलादिक, मनको सार जो धैर्य, विवेक, वैराग्य, ध्यान, स्मरणादि ताकूं पुरुष के चित्त में धसिके खेंचिलेतहैं, अरु चिन्ता शोकादि महादुःख को देत है, फेर मरे के पीछे स्त्री के अर्थ किये जो अनर्थ ता अनर्थ करिके पुरुष को नरकादिक के विषे पठाइ के नरक यातनादि महादुःख को देत है। तातें जो बुद्धिमान् पुरुष है सो याको ऐसी महा अनर्थ को कारण जानि के या स्त्रीका चरण को न सेवे। किन्तु ध्यान स्मरण चरणसेवा नारायण की ही करे।

कुंडलिया।

पगां कड़ी सजड़ी जड़ी तिमण्यो कंठ बंधाय।
नाक कान घाली कड़ी दांताँ मेख लगाय।
दांता मेख लगाय लंक कस बेणी बांधी।
बाजू पुणचा हाथ जड़्या सोना कै चांदी।
॥ बंधन बांधिके घरमें रखी लुकाय।
ह दाबी ना दबे नारी बड़ी बलाय ॥ १ ॥

श्लोक।

सततधृतिरप्युच्चैः शान्तोऽप्ययातमहोदयो-
प्यधिगतनयोप्यन्तः सच्छोप्युदीरितधीरपि।
त्यजति सहजं धैर्यं स्त्रीभिः प्रसारितमानसः
स्वयमपि यतो मायासंगात् पुमानिति विश्रुतः ॥ १ ॥

दोहा।

तनक न रहै विरक्तता लगै दृगन की थाप।
कहुं गीता माला कहूं कहुं चदवा कहुं आप ॥ १ ॥
पण्डित पूजा पाक दिल यह दिमाग मति लाय।
लगै जरव अंखियान की तो सबै गबैं उड़जाय ॥ २ ॥
और ढोर जो दबत है निकसै मौसर पाय।
जो नर नारी से दबै दबत दबत दबजाय ॥ ३ ॥
कबीर दोय घाटी दोरी खरी कही न लंघी जाय।
जो कोउ लंघन की करै सोउ अलूझै आय ॥ ४ ॥
कबीर एक कनक अरु कामिनी विष फल दोऊं पाय।
देखेही सौं विष चढ़ै खाया सूं मरजाय ॥ ५ ॥
छोटी मोटी कामिनी सबही विष की बेल।
वैरी मारै दाव सूं या मारै हंस खेल ॥ ६ ॥
कामिनि खोड़ो कील सुत पोरायत परिवार।
रामचरण गृह भाकसी मोहका जड़्या किवार ॥ ७ ॥
कबीर नारी कहूँक नाहरी करै निजर की चोट।
कोइक हरिजन ऊबरै पारब्रह्म की ओट ॥ ८ ॥
कबीर नारी नहिं या नाहरी वाघण वडी बलाय।
जीवत सोखै कालजो मुवां नरक लेजाय ॥ ९ ॥
कबीर जहाँ जलाई सुंदरी तू मति जाहि कबीर।
भस्मीहुइ अंग लागसी सो नासवै शरीर ॥ १० ॥
कबीर राता कपड़ा पहर कर गाढ़ा बंध्या केश।
हाथां मँहदी लायकर वाघण खाया देश ॥ ११ ॥
नारि निसरड़ी कूकरी क्या राती क्या काली।
हिड़काय चढ्यां दोनूं बुरी क्या परकी क्या पाली ॥ १२ ॥
घरका गिणै न वारला हंस हंस देवै गाली।
रामचरण धीजो मती या नारी चिरताली ॥ १३ ॥
विषय विगोई टीकली क्या विन टीके होय।
नुकता माहिं निसरड़ी शरम विगाड़ै दोय ॥ १४ ॥

दृष्ट्वा माद्यति मोदतेऽभिरमते मन्येति विद्वानपि
प्रत्यक्षाशुचिपुत्रिकां स्त्रियमहो मोहस्य दुश्चेष्टितम् ॥ २ ॥
याऽसौ जगदासुरामरमुखं यद्वालकोद्बन्धनैः
दृष्ट्वा नर्तयति क्षणेन सकलं हावाश्रितैर्लीलया।
सम्प्रेताः कुरवश्च रावणमुखा दैत्याश्च यस्याः कृते
तां नारीं निरयस्य को नु वृणुयात्रामां सुखेप्सुः कदा ॥ ३ ॥
आवर्तः संशयानामविनयभवनं पत्तनं साहसानाम्
दोषाणां सन्निधानं कपटशतमयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम्।
स्वर्गद्वारस्य विघ्नो नरकपुरमुखं सर्वमायाकरण्डम्
स्त्रीयन्त्रं केन सृष्टं विषममृतमयं प्राणिनामेकपाशः ॥ ४ ॥
मायाकरण्डी नरकस्य हण्डी तपोविखण्डी सुकृतस्य भण्डी।
नृणां विखण्डी चिरसेविता चेद् वृथा गतं तस्य नरस्य जीवनम् ॥ ५।
दर्शनाद्धरते चित्तं स्पर्शनाद्धरते बलम्।
सम्भोगाद्धरते वीर्यं नारी प्रत्यक्षराक्षसी ॥ ६ ॥
योषानलोदधिभवं मनुजस्तथायस्कान्ताङ्गना च पुरुषस्त्वय ईरितं वै।
संसर्गतो द्रवति चाशु विकृष्यतेऽतः संगं त्यजेदनिशमेव बुधोऽङ्गनानाम
गौडी माध्वी तथा पैष्टी विज्ञेया त्रिविधा सुरा।
चतुर्थी स्त्रीसुरा ज्ञेया ययेदं मोहितं जगत् ॥ ८ ॥
स्त्रियो हि मूलं निधनस्य पुंसः स्त्रियो हि मूलं व्यसनस्य पुंसः।
स्त्रियो हि मूलं नरकस्य पुंसः स्त्रियो हि मूलं कलहस्य पुंसः ॥ ९ ॥
मलमूत्रवपाकृमिसम्पुटके नखरोमकफास्रचये खलु यः।
रमतेऽस्थिशिरापिशितैर्विचिते स कथं न कृमिः प्रमदावपुषि ॥ १० ॥
अमेध्यपूर्णे कृमिराशिसंकुले स्वभावगन्धेऽप्यशुचौ च सद्रवे।
कलेवरे मूत्रपुरीषभाजने रमन्ति मूढा विरमन्ति पंडिताः ॥ ११ ॥
चर्मखण्डं द्विधाभिन्नमपानोद्गारधूपितम्।
ये रमन्ति नरास्तत्र कृमितुल्याः कथं न ते ॥ १२ ॥
अधस्ताच्छिद्रितं चर्म दुर्गन्धिपरिपूरितम्।
मूत्रक्लिन्नस्य तस्यार्थे मा राजन् ब्राह्मणान् वधीः ॥ १३ ॥
काकमांसं शुनोच्छिष्टं स्वल्पं तदपि दुर्लभम्।
किं तेन भक्षितेनापि क्षुधा नैव निवर्तते ॥ १४ ॥

टीका—जैसे कागला को तो मांस फेर कुत्ता का मुख को ऐंठो सो भी थोड़ो पेट भरे नहीं सो भी कुत्ता का मुखमें ताते दुर्लभ। अरे एसा मांस खाये ते कहा प्रयोजन सिद्ध होयगो क्यों के जाते अल्प क्षुधा भी निवृत्त नहीं होत है।

छप्पय ।

कामण चढ़ी शिकार काम घोड़े चढ़ि घरमें ।
कुच दोय लागा भ्यान कोरड़ो बेनी करमें ।
आभूषण धरि तुपक नैन भाला अगवानी ।
मिष्ट वचन समशेर ढाल घूंघट की जानी ।
विचल्या नर कूं देखि पछाड़े अपना बलसूं ।
पटके चरणां हेठ सार सोखे केर छलसूं ।
सूरा सो टल नीसरे कायर कूं ले मार ।
जगन्नाथ साची कहै चढ़ी शिकारण नार ॥ १ ॥

कवित्त ।

सज्जन सुजान कहूँ सुनो सबै साची बात ।
नारी और नाली एकस्यानी बनी वाली है ॥
देखत की सयानी पर मौत की निशानी फेर ।
करै धूरधानी जमजातना की जाली है ॥
आवत की आछी फेर फूटत की पाछी परे ।
रवीराम माहीं तम ऊपर उजाली है ॥
एक नाली लगे गिरि गाढ़े से गिरत जात ।
कौन गति होत जाकूं लागत छनाली है ॥ १ ॥
ढेडरा से डरै सींगी मच्छ को मरोड़ डारे ।
कानन के बीच आय कुंजर को पकरे ॥
सायर तिरत डूब जात है कठोती नीर ।
सौंदरी की संके छांय सर्प को जकरे ॥
फूलन से मरै भार गिरि कूं उपार लेय ।
बड़े बड़े कुंजर पछारिवे की धकरे ॥
तोरिबे को अम्बर के तारों की हिमत रखे ।
त्रिया को विश्वास ज्ञानी नेमी जन नकरे ॥ २ ॥

श्लोक ।

बाला मामियमिच्छतीन्दुवदना सानन्दमुद्वीक्षते
नीलेन्दीवरलोचना पृथुकुचोत्पीडं परीरंभते ।
का त्वामिच्छति का च पश्यति पशो मांसास्थिभिर्निर्मिता
नारी वेद न किंचिदत्र स पुनः पश्यत्यमूर्तः पुमान् ॥ १ ॥
कान्तेत्युत्पललोचने नु विपुलश्रोणीभरेत्युन्नमत्
पीनोत्तुङ्गपयोधरेति सुमुखांभोजेति सुभ्रूरिति ।

अथ चौरासी बोल।

दोहा।

नकारो नीरस बचन, नटतहिं उपजै दुःख।
यों चौरासी जाणिगा, नटै तो बरते सुक्ख ॥ १ ॥
मनुष्य जन्म कों पाइके, टाले इतना दोष।
जगन्नाथ नर नारिको, सुधरे लोक प्रलोक ॥ २ ॥

छन्द एक पय।

राम सुमरतां थकिजे नहीं ॥ १ ॥ गुरु सेवामें सँकिजे नहीं ॥ २ ॥
करणी कर गरबाजे नहीं ॥ ३ ॥ नितको नियम घटाजे नहीं ॥ ४ ॥
दानदेत अलसाजे नहीं ॥ ५ ॥ सन्त देख टलजाजे नहीं ॥ ६ ॥
लछ विन शीश नमाजे नहीं ॥ ७ ॥ साची बात उडाजे नहीं ॥ ८ ॥
नीची संगति कीजे नहीं ॥ ९ ॥ साची परिहर दीजे नहीं ॥ १० ॥
नृपसे वाद बधाजे नहीं ॥ ११ ॥ ओछी अकल उपाजे नहीं ॥ १२ ॥
दया पालतां लजिजे नहीं ॥ १३ ॥ भाग भरोसो तजिजे नहीं ॥ १४ ॥
आप बडाई कीजे नहीं ॥ १५ ॥ दान उदक फिर लीजे नहीं ॥ १६ ॥
दान देत पछिताजे नहीं ॥ १७ ॥ गुरु को ज्ञान लजाजे नहीं ॥ १८ ॥
आन आसरो लीजे नहीं ॥ १९ ॥ न्याव अदल विन कीजे नहीं ॥ २० ॥
परमार्थ से मुड़जे नहीं ॥ २१ ॥ ऊझड़ मारग खड़जे नहीं ॥ २२ ॥
मन को मान्यो कीजे नहीं ॥ २३ ॥ दगो किसीको दीजे नहीं ॥ २४ ॥
दिन आथ्या से सोजे नहीं ॥ २५ ॥ शोक भणंतै रोजे नहीं ॥ २६ ॥
रणमें पूठ बताजे नहीं ॥ २७ ॥ हाथां कुरब घटाजे नहीं ॥ २८ ॥
अणछाण्यो जल पीजे नहीं ॥ २९ ॥ कुबदा किसीको लीजे नहीं ॥ ३० ॥
झूठी कविता करजे नहीं ॥ ३१ ॥ साची कहताँ डरजे नहीं ॥ ३२ ॥
झूठी निन्दा कीजे नहीं ॥ ३३ ॥ पर नारी चित दीजे नहीं ॥ ३४ ॥
घर तजि विषय कमाजे नहीं ॥ ३५ ॥ जहर जाणताँ खाजे नहीं ॥ ३६ ॥
काछ विकल मग लीजे नहीं ॥ ३७ ॥ कपटी मित्रजु कीजे नहीं ॥ ३८ ॥
सरुपति में ऋण रखजे नहीं ॥ ३९ ॥ धन योबन में छकजे नहीं ॥ ४० ॥
राज पुकारू जाजे नहीं ॥ ४१ ॥ बुरी पराई कीजे नहीं ॥ ४२ ॥
चोरी जारी कीजे नहीं ॥ ४३ ॥ पूठ धणी कों दीजे नहीं ॥ ४४ ॥
सूने मन्दिर जाजे नहीं ॥ ४५ ॥ जगमें बुरो कहाजे नहीं ॥ ४६ ॥
ओछी बस्ती वसजे नहीं ॥ ४७ ॥ तात्पर्य विन हसजे नहीं ॥ ४८ ॥
चुगल पाडोसी कीजे नहीं ॥ ४९ ॥ धाम पराये लीजे नहीं ॥ ५० ॥
भरस्या भटका खाजे नहीं ॥ ५१ ॥ अलगा उतर जाजे नहीं ॥ ५२ ॥

तैसे परस्त्री परधनादिक विषय है सो भी काकमांस के नाँइ अति निषिद्ध है सो भी कुत्ता सरीसा पुरुष को उच्छिष्ट है शुद्ध नाहीं। औ धनादिक की प्राप्ति स्वल्प कहिये थोडी है मनोर्थ पूर्ण करे इतनी नहीं सो थोडो भी पावणो महा मुश्किल है तातें विवेकी है सो कष्ट सहै परन्तु ऐसा विषय की इच्छा न करे।

कबीर नारी भांडा नर्क का बुरा भला के बीच।
उत्तम ते अलगा रहै नेड़ा रहैस नीच ॥ १ ॥
यह अस्थिन को पींजरो मांस लपेट्यो जाहि।
ऊपर चादर चामकी भीतर भिष्टा आहि ॥ २ ॥
रज्जब तिनकी कौन गति जो नित नारीसंग।
जाकी लघु लावण लगे अंधे होत भुजंग ॥ ३ ॥

व्यभिचारनिषिद्ध।

सन्तु विलोकन-भाषण-विलास-परिहास-केलिपरिरंभाः।
स्मरणमपि कामिनीनामलमिह मनसो विकाराय ॥ १ ॥
अदर्शने दर्शनमात्रकामा दृष्ट्वा परिष्वंगरसैकलोलाः।
आलिंगितायां पुनरायताक्ष्यामाशास्महे विग्रहयोरभेदम् ॥ २ ॥

छप्पय।

अप्रतीति अपजश झूठ छलछिद्र मोह भंड।
द्रोह छोह चख मान रहस्य रस दोष भोग खंड ॥
स्वाद थान अरु शोक नाश मद्रा दुख रासी।
पराधीन औ चित कलंक दुर्जन हरखासी ॥
विरह वियोग सन्ताप तन अभरोसो अन्तःकरण।
जनरामा पर त्रिया स्पर्श इता दोष शिरपर मरण ॥ १ ॥

कवित्त।

जिहि पुरुष को परप्रमदासे प्रेम लग्यो अरु पुरुष से नेह लग्यो जिहि नारीको।
नरक निवास त्रासदायक तेहिंको होत जगत में जश न रहत जारीहारी को ॥
धिक अवतार ताको होत धरणीतलपे जिनहीं लजायो कुल तात महतारी को।
सो प्रवीण नहीं पुनि नहीं रथ सागरसो मुझे में चतुरपनो पर्यो विभचारी को ॥ १ ॥

लंकेश्वरो जनकजाहरणेन याती
तारापहारकतयाप्यथ कीचकाख्यः।
पाञ्चालिकामृह्यतो निधनं जगाम
तस्मात्स्वप्नेऽपि परदाररतिं न कांक्षेत् ॥ १ ॥

नथा कुछ तो खुदा था कुछ न होता तो खुदा होता,
डुबोया मुझको होने ने न होता मैं तो क्या होता,
हुई मुद्दत कि गालिब मरगया पर याद आता है,
वह हर एक बात पर कहना कि यों होता तो क्या होता॥ १॥ (गालिब)

खुदा पूछेगा महशर में यह तकसीर किसकी है।
कहूँगा बरमला में तकदीर में यह तहरीर किसकी है॥ १॥
न कुछ हम हंसके सीखे हैं न कुछ हम रोके सीखे हैं।
जो कुछ थोड़ासा सीखे हैं किसीके होके सीखे हैं॥ १॥ (अजीज)

नजीर।

दुनिया अजब बाजार है कुछ जिन्स यहां की साथ ले।
नेकी का बदला नेक है बद से बदी की बात ले॥
आराम दे आराम ले आफात दे आफात ले।
मेवा दिये मेवा मिले फल फूल दे फल पात ले॥
कलजुग नहीं कर जुग है यहां दिनको दे और रात ले।
क्या खूब सौदा नक्द है इस हाथ दे उस हाथ ले॥ १॥
कांटा किसी के मत लगा गो मिस्ले गुल फूला है तू।
वो तेरे हक में तीर है किस बात में भूला है तू॥
मत आग में डे और कूं फिर घास का पूला है तू।
सुन रखय यह नुक्ता बे खबर किस बात पर भूला है तू॥ कलजुग॥ २॥
चाहे सो लेले इस घड़ी सब जिन्स यहां तैयार है।
आराम में आराम है आजार में आजार है॥
दुनियां न जाने इस को मियाँ दरिया की यह मँझधार है।
औरों का बेड़ा पार कर तेरा भी बेड़ा पार है॥ कलजुग॥ ३॥
तोंधा तरारंत अकरो फन्द सबका बसेरा है यहां।
जो जो दिखाया और कूं वो आप भी देखा है यहां॥
नेकी बदी जो कुछ करे सबका परेखा है यहां।
जो जो पड़ा तुलता है तिल तिल तिल का लेखा है यहां॥ कलजुग॥ ४॥
जो और [illegible] पत्थी रखे उसका भी वस्ता है पुरा।
[illegible] भुरी उसका भी टूटे है भुरा॥
[illegible] छुरी उसके भी लगता है छुरा।
[illegible] बुरी उसका भी होता है बुरा॥ कलजुग॥ ५॥

[illegible]

भांग तम्बाकू खाजे नहीं ॥ ५३ ॥ उपर खेती वाजे नहीं ॥ ५४ ॥
वेश्या के घर आजे नहीं ॥ ५५ ॥ कुलकों दोष लगाजे नहीं ॥ ५६ ॥
पर धन काको हरिजे नहीं ॥ ५७ ॥ नीची संगति करिजे नहीं ॥ ५८ ॥
सूतो सिंह जगाजे नहीं ॥ ५९ ॥ चूंडेलण बतलाजे नहीं ॥ ६० ॥
हरिकी भक्ति विसरजे नहीं ॥ ६१ ॥ विकर्म कवहू करजे नहीं ॥ ६२ ॥
वाद विवादू हैं जे नहीं ॥ ६३ ॥ हलकी वाणी कहजे नहीं ॥ ६४ ॥
झूठी हामल भरजे नहीं ॥ ६५ ॥ वचन काढ़के फिरजे नहीं ॥ ६६ ॥
रॉड भाँड से अड़जे नहीं ॥ ६७ ॥ गतराड़े से लड़जे नहीं ॥ ६८ ॥
नदी पहाला तिरजे नहीं ॥ ६९ ॥ डूंगर सेती गिरजे नहीं ॥ ७० ॥
सुणी बात फैलाजे नहीं ॥ ७१ ॥ अनजान्या फल खाजे नहीं ॥ ७२ ॥
सुलझ्यां को उलझाजे नहीं ॥ ७३ ॥ निर्धन कों डरपाजे नहीं ॥ ७४ ॥
अपयश कांना सुणजे नहीं ॥ ७५ ॥ चच्चो मम्मो भणजे नहीं ॥ ७६ ॥
जामन किसका हुइजे नहीं ॥ ७७ ॥ अरि से गाफिल रहिजे नहीं ॥७८॥
झूठो दोषण दीजे नहीं ॥ ७९ ॥ निर्बल शरणो लीजे नहीं ॥ ८० ॥
मूर्ख को बतलाजे नहीं ॥ ८१ ॥ धन विन अर्थ गमाजे नहीं ॥ ८२ ॥
लेवाँ देवाँ लजिजे नही ॥ ८३ ॥ भल माणस को तजिजे नहीं ॥ ८४ ॥

दोहा ।

यह चौरासी शुभ अशुभ, कही ठामकी ठाम ।
जगन्नाथ करिये सबै, जबलग गृह विश्राम ॥ ३ ॥
इन चलगत चाले सुघर, भला कहे सब लोय ।
निश्चय या या लोकमें, पला न पकड़े कोय ॥ ४ ॥
यह चौरासी चित धरै, यह चौरासी याद ।
अपनी अपने हाथ है, मन माने सो साथ ॥ ५ ॥
बार बार नरतनु नहीं, कहे शास्त्र अरु सन्त ।
ताते सुकृत कीजिये, कै भजिये भगवन्त ॥ ६ ॥
जैन यवन शिव धर्म कहै, करणी सुधरे काम ।
दया धर्म इकतार से, जगन्नाथ कह राम ॥ ७ ॥

॥ इति श्रीचौरासी बोल ॥

हरदम कृष्ण कहे श्रीकृष्ण कहे तू जबाँ मेरी,
यही मतबल खातर करताहूँ खुशामद मैं तेरी,
दही और दूध शक्कर रोज खिलाताहूँ तुझे,
तो भी हररोज हरनाम न सुनाती मुझे,
खोई जिंदगानी सारी सोई गुनाह माफ तेरा,
दया मत भूले प्रभुनाम आखिर वक्त मेरा ॥ १ ॥ (दया)

गर है तू लक्खी बनजारा और खेप भी तेरी भारी है।
अय गाफिल तुझसे भी चढ़ता एक और बड़ा बोपारी है॥
क्या शक्कर मिश्री कंद गिरी क्या साँभर मीठा खारी है।
क्या दाख मुनक्का सोंठ मिरच क्या केसर लौंग सुपारी है॥ सब॥२॥
तू बधिया लादे बैल भरे जो पूरब पच्छिम जावेगा।
या सूद बढ़ाकर लावेगा या घाटा टाटा पावेगा॥
कटमार अजल का रस्ते में जब भाला मार गिरावेगा।
धन दौलत नाती पोते क्या इक कुनबा पास न आवेगा॥ सब॥ ३॥
हर मंजिल में अब साथ तेरे यह जितना डेरा डांडा है।
जर दाम दिरमका भांडा है बन्दूक सिपर और खांडा है॥
जब नायक तनका निकल गया जो मुल्कों मुल्कों हांडा है।
फिर टांडा है न भांडा है न हलवा है न मांडा है॥ सब॥ ४॥
जब चलते चलते रस्ते में यह गोन तेरी ढल जावेगी।
एक बधिया तेरी मट्टी पर फिर चरने घास न पावेगी॥
यह खेप जो तूने लादी है सब हिस्सों में बट जावेगी।
धी पूत जँवाई बेटा क्या बनजारन पास न आवेगी॥ सब॥ ५॥
क्यों नाहक बोझ उठाता है इन गोनों भारी भारी के।
जब काल लुटेरा आन पड़ा फिर दूने हैं बोपारी के॥
क्या साज जड़ाऊ जर जेवर क्या गोटे थान किनारी के।
क्या घोड़े जीन सुनहरी के क्या हाथी लाल अम्बारी के॥ सब॥ ६॥
जो खेप भरे तू जाता है यह खेप मियां मत जान अपनी।
अब कोई घड़ी पल सायत में यह खेप बदन की है खपनी॥
क्या थाल कटोरे चांदी के क्या पीतल के ढकना ढकनी।
क्या बरतन सोने रूपे के क्या मट्टी की हंडिया चपनी॥ सब॥ ७॥
मगरूर न हो तलवारों पर मत भूल भरोसे ढालों के।
सब पतातोड़ के भागेंगे मुंह देख अजल के भालों के॥
क्या डिब्बे हीरे मोती के क्या ढेर खजाने मालों के।
क्या बुगचे तास मुशॅज्जर के क्या तख्ते साल दुसालों के॥ सब॥ ८॥
कुछ काम न आवेंगे तेरे यह लाल अमुर्रद सीमो जॅर।
सब पूंजी बाट में बिखरेगी जब आन बनेगी जी ऊपर॥
क्या मसनद तकिये मुल्क मकां क्या चौकी कुर्सी तखत छतर।
क्या माल खजाने मुल्क मकां क्या दौलत हशमत फौजें लश्कर॥ सब॥ ९

---

१ छोटा बैल। २ परवार। ३ ढाल। ४ सेनपाल। ५ पसा। ६ चांदी। ७ सोना। ८ बिछौना। ९ घबराहट=दबदबा।

जो और कूं फल देवेगा वो भी सदा फल पावेगा।
गेहूं से गेहूं जौं से जौं चाँवल से चाँवल पावेगा॥
जो आज देवेगा यहां वैसाही वो फल पावेगा।
कल देवेगा कल पावेगा कलपायगा कलपावेगा॥ कलजुग॥ ६॥
तू और की तारीफ कर तुझको सनांख्वानी मिले।
कर मुश्किल आसां और की तुझ को भी आसानी मिले॥
तू और को मेहमान रख तुझको भी महमानी मिले।
रोटी खिला रोटी मिले पानी पिला पानी मिले॥ कलजुग॥ ७॥
करले जो करना है अब यह दम तो कोई आंन है।
एहसान में एहसान है नुकसान में नुकसान है॥
तुहमत में यहां तुहमत मिले तूफान में तूफान है।
शैतान कूं शैतान है रहमान कूं रहमान है॥ कलजुग॥ ८॥
यहां ज़हर दे तो ज़हरले शक्कर में शक्कर देखले।
नेकों को नेकी का मजा मूंजी को टक्कर देखले॥
मोती दिये मोती मिले पत्थर में पत्थर पेखले।
गर तुझको यह बांवर नहीं तो तूभी करके देखले॥ कलजुग॥ ९॥
जो हारमें दे और को सो यह भी हारा जायगा।
खोवे सहारा और का उसका सहारा जायगा॥
यहां आज जिसके हाथ से कोई मर विचारा जायगा।
गाफिल न हो इस बात पर कल वो भी मारा जायगा॥ कलजुग॥ १०॥
गफलत कि यह जागे नहीं यहां साँहिबे ईदराक रहु।
दिल शाद रख दिल शाद रहु गमनाक रख गमनाक रहु॥
हर हाल में तू भी नजीर अब हर कदम की खाक रहु।
यह वो मकां है अब मियां यहां पाक रहु बेबाक रहु॥ कलजुग॥ ११॥

बनजारानामा।

टुक हिर्स हवा को छोड़ मियां मत देश विदेश फिरे मारा।
कज्जाक अजल का लूटे है दिन रात बजाकर नक्कारा॥
क्या भैंसा बधिया बैल सुतर क्या गोने पल्ला सर भारा।
क्या गेहूं चावल मोठ मटर क्या आग धुआँ और अंगारा॥
सब ठाठ पड़ा रहजावेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥ १॥

१ तारीफ करना। २ घरी। ३ नेकी। ४ दुष्ट। ५ परमेश्वर। ६ यकीन। ७ मजबूत। ८ दरयाफ्त। ९ खुश। १० तकलीफ। ११ बेखौफ। १२ चाह। १३ बटपाड़। १४ मौत। १५ ऊंठ।

रम्माल नजूमी आमिल है और फाजिल मुल्ला स्याना है।
कोइ आमिल कामिल दाना है कोइ मस्त सिड़ी दीवाना है॥
तावीज फतीला फाल फिरूँ और जादू मंतर लाना है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब हीलां मक्र बहाना है॥ गुल॥ ५॥
कोइ लूटे कूचे गलियों में तैयार किसी का घेरा है।
कोइ बाग कुआँ बनवाता है और घेर किसी ने घेरा है॥
नित फजिये झगड़े रहते हैं यह मेरा है यह तेरा है।
जब देखा खूब तो आखिर को न मेरा है न तेरा है॥ गुल॥ ६॥
कोइ टोपी टोप बनाता है कोइ बाँध फिरे अमामा है।
कोइ साफ बरहना फिरता है न पगड़ी है न पजामा है॥
कमखाब गंजी और गाढ़े का नित कजिया और हंगामा है।
जब देखा खूब तो आखिर को न पगड़ी है न जामा है॥ गुल॥ ७॥
कोइ बाल बढ़ाये फिरता है कोइ सर को घोट मुंडाता है।
कोइ कपड़े रंगे पहिनें है कोइ नंग मुनंगा आता है॥
कोइ पूजा कथा बखानें है कोइ छापा तिलक लगाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब छोड़ अकेला जाता है॥ गुल॥ ८॥
कोइ रोता है कोइ हँसता है कोइ नाचे है कोइ गाता है।
कोइ छीनें झपटें ले भागे कोइ घूँस का डर दिखलाता है॥
कोइ माल इकट्ठा करता है कोइ कुंजी कुल्फ लगाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब झगड़ा रहा जाता है॥ गुल॥ ९॥
कोइ बेचे भंग शराब अफियून कहीं दूध दही की फेरी है।
कोइ पल्ला सर पर लाता है कोइ लादे बैल मुकेरी है॥
कोइ झगड़े अपनी जागाह पर यह मेरी है यह तेरी है।
जब देखा खूब तो आखिर कौन तेरी है न मेरी है॥ गुल॥ १०॥
कहिं बल्ली टेकी थूनी है कहिं घास कड़ब की पूली है।
कहिं चलनी छाज पिटारी है कहिं चूल्हा चक्की चूल्ही है॥
तरकारी बैंगन साग हरा गुड़गांडा गाजर मूली है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब चिकरी देखत भूली है॥ गुल॥ ११॥
कहिं थान अटेरन टाट गजी कहिं दमरख चमरख तफला है।
कहिं रोक रुपैये का खुरदा कहिं कौड़ी पैसा धेला है॥
कहिं छटना छाज पिटारी है कहिं बिकता खाट खटोला है।
जब देखा खूब तो आखिर को न पीढ़ी खाट खटोला है॥ गुल॥ १२॥

---

१ रमली। २ जोतसी। ३ मंत्रतंत्रवादी। ४ पूरा। ५ बत्ती। ६ मुहूर्त। ७ मंत्र फूंकना। ८ बहाना। ९ धोका। १० साफ। ११ दोवटी। १२ लड़ाई।

यह धूम धड़ाका साथ लिये क्यों फिरता है जंगल जंगल।
इक भुनगा पास न आवेगा मोकूफ हुआ जब अन्न व जल॥
घर बार अटारी चौबारे क्या खासा-तनसुख और मल मल।
क्या चिलमन तकिये रेशम के क्या लाल पलंग क्या रंगमहल॥ सब १०॥
क्यों पुख्त मकां बनवाता है है खंभ तेरे तनका पोला।
तू उंची गढ़ी उठाता है यहां घोर गढ़े ने मुंह खोला॥
क्या रेखनी खंद करंद बड़ा क्या कोट कंगूरा अनमोला।
क्या बुर्ज रेहकला तोप किला क्या शीशा दारू और गोला॥ सब॥११॥
जब काल फिराकर चाबुक को यह बैल बदन का हांकेगा।
कोइ नाज समेटेगा तेरा कोई गौन सिये और टांकेगा॥
हो ढेर अकेला जंगल में तू खाक लहद[1] की फांकेगा।
उस जंगल में जब आइ नजीर एक भुनगा आन न झांकेगा॥ सब॥ १२॥

धोकेकी टट्टी।

यह पैठ अजब है दुनिया की और क्या क्या जिन्स इकट्ठी है।
यहां माल किसी का मीठा है और चीज किसी की खट्टी है॥
कुछ पकता है कुछ भुनता है पकवान मिठाई पट्टी है।
जब देखा खूब तो आखिर को न चूल्हा भाड़ न भट्टी है॥
गुल शोर बबूला आग हवा और कीचड़ पानी मट्टी है।
हम देख चुके इस दुनिया को सब धोखे कीसी टट्टी है॥ १॥
कोइ ताज खरीदे हंस हंस कर कोइ रख्त[2] खड़ा बनवाता है।
कोइ कपड़े रंगे पहिने है कोइ गुदड़ी ओढ़े जाता है॥
कोइ भाई बाप चचा नाना कोइ नाती पूत कहाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को न रिश्ता है न नाता है॥ गुल॥ २॥
कोइ सेठ महाजन लक्खपती बज्जाज कोई पन्सारी है।
यहां बोझ किसी का हल्का है और खेप किसी की भारी है॥
क्या जाने कौन खरीदें है और किसने जिन्स उतारी है।
जब देखा खूब तो आखिर को दल्लाल न को बोपारी है॥ गुल॥ ३॥
कोइ फूल के बैठे मसनद पर कोइ रोवे अपनी दौलत खो।
कोइ बोले अपना मुझसे लो और मेरा है सो मुझको दो॥
कोइ लड़ता है कोइ मरता है कोइ झगड़े हक और नाहक को।
जब देखा खूब तो-आखिर को कुछ लेना एक न देना दो॥ गुल॥ ४॥

---

[1] कबर। [2] पक्ष।

इस पाँव घसिट कर चलने से मत रस्ते को हैरान करो।
और पोपले मुंह से रोटी को मत मल मल कर हलकान करो॥
अब आप हुए तुम पानी से मत पानी का नुकसान करो।
कुछ लाभ नहीं इस जीनेमें अब मरने से पहिचान करो॥ तन॥ ६॥
गर अच्छी करनी नेक अमल तुम दुनिया से ले जाओगे।
तो घर भी अच्छा पाओगे और सुख से बैठे खाओगे॥
और ऐसी दौलत छोड़ के तुम जो खाली हाथों जाओगे।
कुछ बात नहीं बनआने की घबराओगे पछिताओगे॥ तन॥ ७॥
घर बार रुपैये पैसे में मत दिल को तुम खुर्सन्द करो।
या घोर बनाओ जंगल में या जमुना पर आनंद करो॥
मौत जो आन लताड़ेगी आखिर मकर करो या फन्द करो।
बस बहुत तमाशा देख चुके अब आँखें अपनी बंध करो॥ तन॥ ८॥
बोपार तो यहां का बहुत किया अब वहां का भी कुछ सौदा लो।
जो खेप उधर को चढ़ती हो उस खेप को यहां से लदवालो॥
उस राह में जो कुछ खाते हो उस खाने को भी मंगवालो।
सब साथी पहुँचे मंजिल पर अब तुमभी अपना रस्ता लो॥ तन॥ ९॥
दो चार घड़ी या दो दिन में अब तन से जान निकलनी है।
यह हड्डी पसली जितनी है या गलनी है या जलनी है॥
है रात जो बाकी थोड़ी सी कोइ दम को वह भी ढलनी है।
उठ बांधो कमर सबेरे से तुम को भी मंजिल चलनी है॥ तन॥ १०॥
यह दौलत काम न आवेगी मत इसको तुम जंजीर करो।
यह खाक बदन की पारा है मन मार इसे अक्सीर करो॥
जो पार उतारे दरिया से उन बातों को गुरु पीर करो।
अब नाव किनारे आ पहुँची अब चढ़ने की तदबीर करो॥ तन॥ ११॥
कुछ देर नहीं अब चलने में या आज चलो या काल चलो।
जो कपड़े लत्ते लेने हैं सो जल्दी बांध सँभल निकलो॥
अब शाम नहीं अब सुबह हुई ज्यूं मोम पिघलकर ढल निकलो।
क्यों नाहक धूप चढ़ाते हो बस ठंडे ठंडे चल निकलो॥ तन॥ १२॥
यह ऊंट गिरतेगा यारो सन्दूक जनाज़ा औंधी है।
अब हम भी हो असवार चले फिर घोड़ा है न हस्ती है॥
किस नींद पड़े तुम सोते हो यह बोझ तुम्हारा भारी है।
कुछ देर नहीं अब आह नज़ीर तैय्यार खड़ी असवारी है॥ तन॥ १३॥

१ ज़ंजीर। २ धुआं। ३ प्रेमिका। ४ चोटी। ५ रथी।

कोइ शिकरा बाज उड़ाता है कोइ हाथ में रक्खे तुतली है।
शहबाज कोई ले बैठा है और दौड़ किसीने दुतली है॥
है तार किसी के हाथों में और नाचत फिरती पुतली है।
जब देखा खूब तो आखिर को न रेशम सूत न सुतली है॥ गुल॥ १३॥
अब किसका रंग बुरा कहिये और किसका रूप भला कहिये।
इक दम की पेंठ लगी है यह अम्बोह मजा चरचा कहिये॥
यह सैर तमाशा देख नजीर अब जा कहिये बेजा कहिये।
कुछ बात नहीं बनआने की चुपचाप भला है क्या कहिये॥ गुल॥ १४॥

बुड्ढा।

बटमार अजल का आ पहुँचा टुक इसको देख डरो बाबा।
अब अश्क बहाओ आँखों से और आहें सर्द भरो बाबा॥
दिल हाथ उठाकर जीनेसे बेबस मन मार मरो बाबा।
जब बाप की खातिर रोतेथे अब अपनी खातिर रो बाबा॥
तन सूखा कुबड़ी पीठ हुई घोड़े पर जीन धरो बाबा।
अब मौत नकारा आ बागा चलने का फिकर करो बाबा॥ १॥
अब जीने को तुम रुखसत दो और मरने को महमान करो।
खैरात करो अहसान करो या पुण्य करो या दान करो॥
या पूरी लड्डू बँटवाओ या खासा हलवा नान करो।
कुछ लुत्फ नहीं अब जीनेमें अब चलने का सामान करो॥ तन॥ २॥
दिल काटो अपने जीनेसे अब और गले को मत काटो।
अब चार फर्ना की टुक चक्खो और खून किसीका मत चाटो।
धुन छोड़ो हिस्से बखरे की तुम भाजी अपनी मत बाँटो॥
नॉकंद बछेरे कूद चुके अब और दुलत्ती मत छाँटो॥ तन॥ ३॥
यह अस्प बहुत कूदा उछला अब कोड़ा मारो जेरकरो।
जब माल इकट्ठा करते थे अब तनका अपने ढेर करो॥
गढ़ टूटा लश्कर भाग चुका अब म्यान में तुम शमसेर करो।
तुम साफ लड़ाई हारचुके अब भागन में मत देर करो॥ तन॥ ४॥
सर कांपा चांदी बाल हुए मुंह पीला पलकें पलट गईं।
कद टेढ़ी कान हुए बहरे अब आँखें भी चुंधियाय गईं॥
सुख नींद गई और भूख घटी दिल सुस्त हुआ आवाज नहीं।
जो होनी थी सो हो गुजरी अब चलने में कुछ देर नहीं॥ तन॥ ५॥

---

१ हाट। २ भीड़भाड़। ३ आंसू। ४ ठंडी। ५ रोटी। ६ मरना। ७ जिस-परसवारहो। ८ घोड़ा।

यह लौकिक मस्त कहाँ लों वरणूं है माया के दंगल में।
कौन करे तिनकी गिनती सब जकड़े हैं दृढ़ संगल में ॥
छिन में रुष्ट तुष्ट इक छिन में स्थिति सदा अमंगल में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब भुले अविद्या जंगल में ॥ ९ ॥

॥ श्रीहरिः ॥

विविधपुष्पगुच्छः।

श्लोक।

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिंधुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥ १ ॥

प्रह्लादनारदपराशरपुंडरीकव्यासांबरीषशुकशौनकभीष्मकाद्याः।
रुक्मांगदार्जुनवसिष्ठविभीषणाद्या धतानहं परमभागवतान्नमामि ॥ २ ॥
यावन्निरंजनमजं पुरुषं जरंतं संचिंतयामि सकले जगति स्फुरंतम्।
तावद्बलात्स्फुरति हंत हृदंतरे मे गोपस्य कोपि शिशुरंजनपुंजमंजुः ॥ ३ ॥

ध्यानाभ्यासवशीकृतेन मनसा यन्निर्गुणं निष्क्रियं
ज्योतिः किंचन योगिनो यदि परं पश्यंति पश्यंतु ते।
अस्माकं तु तदेव लोचनचमत्काराय भूयाच्चिरं
कालिंदीपुलिनेषु यत्किमपि तन्नीलं महो-(तेजः) धावति॥४॥

अद्वैतवीथीपथिकैरुपास्याः स्वानंदसिंहासनलब्धदीक्षाः।
शठेन केनापि वयं हठेन दासीकृता गोपवधूविटेन ॥ ५ ॥

शास्त्रं भूरि निजस्वरूपमतये साराधनार्थं वपुः
सध्यानाय मनश्च शुद्धिमनघां लब्धं च तीर्थादिकम्।
तत्राप्युपदेष्टुमुत्तमगुरून् दत्त्वानुगृह्णाति नः
संसारे तदपि भ्रमेमाद्य स किं कुर्वीत सर्वेश्वरः ॥ ६ ॥

रे कंदर्प करं कदर्थयसि किं कोदंडटंकारिते
रे रे कोकिल कोमलैः कलरवैः किं त्वं वृथा जल्पसि।
मन्ये स्निग्धविदग्धमुग्धमधुरैर्लोलैः कटाक्षैरलं
चेतश्चुंबितचंद्रचूडचरणध्यानामृतं वर्तते ॥ ७ ॥

चिंता मम जीवने यदि हरिर्विश्वंभरो गीयते
नो चेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्यं कथं निःसरेत्।
...[illegible] मुहुर्मुहुर्यदुपते लक्ष्मीपते केवलं
त्वत्पादांबुजसेवनेन सततं कालो मया नीयते ॥ ८ ॥

खुदमस्ती ।

कोइ हाल मस्त कोइ माल मस्त कोइ तूती मैना सूवे में ।
कोइ खान मस्त पहिरान मस्त कोइ राग रागिणी धूवे में ॥
कोइ अमल मस्त कोइ रमल मस्त कोइ शतरंज चौपड़ जूवे में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब पड़े अविद्या कूवे में ॥ १ ॥
कोइ अकल मस्त कोइ शकल मस्त कोइ चंचलताई हाँसी में ।
कोइ वेद मस्त कत्तेब मस्त कोइ मक्के में कोइ कासी में ॥
कोइ ग्राम मस्त कोइ धाम मस्त कोइ सेवक में कोइ दासी में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब पड़े अविद्या फासी में ॥ २ ॥
कोइ पाठ मस्त कोइ ठाठ मस्त कोइ भैरव में कोइ काली में ।
कोइ ग्रन्थ मस्त कोइ पन्थ मस्त कोइ श्वेत पीत रंग लाली में ॥
कोइ काम मस्त कोइ खाम मस्त कोइ पूरण में कोइ खाली में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब बँधे अविद्या जाली में ॥ ३ ॥
कोइ हाट मस्त कोइ घाट मस्त कोइ बन परवत औज़ारा में ।
कोइ जाति मस्त कोइ पाँति मस्त कोइ तात मात सुत दारा में ॥
कोइ कर्म मस्त कोइ धर्म मस्त कोइ मस्जिद ठाकुरद्वारा में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब बहे अविद्या धारा में ॥ ४ ॥
कोइ राज मस्त गज बाज मस्त कोइ छप्पर में कोइ फूले में ।
कोइ जुद्ध मस्त कोइ क्रुद्ध मस्त कोइ खड्ग कुठार वसूले में ॥
कोइ प्रेम मस्त कोइ नेम मस्त कोइ छींके में कोइ झूले में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब जले अविद्या चूल्हे में ॥ ५ ॥
कोइ शाक मस्त कोइ साक मस्त कोइ खासे में कोइ मलमल में ।
कोइ जोग मस्त कोइ भोग मस्त कोइ स्थिति में कोइ चंचल में ॥
कोइ रिद्धि मस्त कोइ सिद्धि मस्त कोइ लेन देन की गलगल में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब फँसे अविद्या दलदल में ॥ ६ ॥
कोइ ऊर्ध्व मस्त कोइ अधः मस्त कोइ बाहिर में कोइ अन्तर में ।
कोइ देश मस्त विदेश मस्त कोइ औषधि में कोइ मंतर में ॥
कोइ आप मस्त कोइ ताप मस्त कोइ नाटक चेटक तंतर में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब फँसे अविद्या जंतर में ॥ ७ ॥
कोइ सुप्त मस्त कोइ तुप्त मस्त कोइ दीरघ में कोइ छोटे में ।
कोइ गुफा मस्त कोइ सुफा मस्त कोइ तूंबे में कोइ लोटे में ॥
कोइ ज्ञान मस्त कोइ ध्यान मस्त कोइ असली में कोइ खोटे में ।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब रहे अविद्या ...

वसतु गह्वरकाननकोटरे तपतु चोग्रतपोभ्द्रशतैरपि।
पठतु शास्त्रकदंबमहर्निशं नहि विचारमृते सुखमेधते ॥ २० ॥
तपन्तु तापैर्निपतन्तु पर्वतादटन्तु तीर्थानि पठन्तु चागमान्।
यजन्तु यागैर्विवदन्तु वादैर्हरिं विना नैव मृतिं तरन्ति ॥ २१ ॥
धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे भार्या गृहद्वारि जनः श्मशाने।
देहश्चितायां परलोकमार्गे कर्मानुगो गच्छति जीव एकः ॥ २२ ॥
त्यक्त्वांशुकं जीर्णमथापरं नरो गृह्णाति नव्यं च यथोरगस्त्वचम्।
शष्पं जलौका च यथा तथा ह्यसौ देही शरीरं किमिहात्र शोचसि ॥२३॥
यच्चिंतितं तदिह दूरतरं प्रयाति यच्चेतसा न गणितं तदिहाभ्युपैति।
प्रातर्भवामि वसुधाधिपचक्रवर्ती सोऽहं व्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी॥
न शास्त्रतुल्यं नयनं न सत्यसमं तपस्तोषसमं न लाभम्।
विरागतुल्यं न सुखं च रागसमं न दुःखं कवयो वदन्ति ॥ २५ ॥
मृत्युर्नृत्यति मूर्ध्नि शश्वदुरगी घोरा जरारूपिणी
त्वामेषा ग्रसते परिग्रहमयैर्गृध्रैर्जगद्भक्ष्यते।
धूत्वा बोधजलैरबोधबहुलं तल्लोभजन्यं रजः
संतोषामृतसागरांभसि मनाङ्मग्नः सुखं जीवति ॥ २६ ॥
न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥ २७ ॥
न जनको जननी नच सोदरोऽवति बलं न कुलं द्रविणं तथा।
स्वकृतधर्ममृतेऽहममुत्र वै सततमेव तमेव ततश्चरेत् ॥ २८ ॥
हंसस्तथेंदुश्च नभोऽवनिर्जलं वह्निश्च वायुश्च दिनं निशा यमः।
पश्यंति यद्यत्कुरुते जनो हि ते जानाति मूढस्तु न कोप्यवेक्ष्यते ॥ २९ ॥
संपूर्णं जगदेव नन्दनवनं सर्वेऽपि कल्पद्रुमा
गांगं वारि समस्तवारिनिवहाः पुण्या समस्ता क्रिया।
वाचः प्राकृतसंस्कृताः श्रुतिशिरो वाराणसी मेदिनी
सर्वावस्थितिरस्य वस्तुविषया दृष्टे परब्रह्मणि ॥ ३० ॥
कथा इमास्ते कथिता महीयसां विताय लोकेषु यशः परेयुषाम्।
विज्ञानवैराग्यविवक्षया विभो वचो विभूतिर्नच पारमार्थ्यम् ॥ ३१ ॥
ज्ञात्वापगं कृमिकुजन्तुमहं कृतान्तं वैश्वानरानलमथामयदूतवाधम्।
चिन्तार्कतापमथ काममुखासिपत्रं दृष्ट्वापि देहनरकं न विरज्यतेऽन्धः ॥३२
मेदांत्रक्षतजाकुलं कृमिगणैर्व्याप्तं शिरासन्ततं
लिप्तं मांसचयैश्चितास्थिनिवहं चर्मावृतं सर्वतः॥
दौर्गन्ध्येन परिप्लुतं नवमुखाकीर्णेन रोगालयं
सज्जन्ते मलिनं कलेवरमिदं ये वेश्यते रासभाः ॥ ३३ ॥

नाहं विप्रो नच नरपतिर्नापि वैश्यो न शूद्रो
नो वा वर्णी न च गृहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा ।
किन्तु प्रोद्यन्निखिलपरमानंदपूर्णामृताब्धे-
र्लक्ष्मीभर्तुः पदकमलयोर्दासदासानुदासः ॥ ९ ॥
आनीता नटवन्मया तव पुरः श्रीकृष्ण या भूमिका
व्योमाकाशखखाम्बराब्धिवसवस्त्वत्प्रीतयेऽद्यावधि ।
प्रीतस्त्वं यदि चेन्निरीक्ष्य भगवन्मत्प्रार्थितं देहि मे
नो चेद्ब्रूहि कदापि मानय तनूस्त्वेतादृशीर्भूमिकाः ॥ १० ॥
अहल्या पाषाणः प्रकृतिपशुरासीत् कपिचमू-
र्गुहोऽभूच्चांडालस्त्रयमपि गमितास्ते निजपदम् ।
अहं चित्तेनाश्मा पशुरपि तवार्चादिकरणात्
क्रियाभिश्चांडालो रघुवर न मामुद्धरसि किम् ॥ ११ ॥

यद्यात्रया व्यापकता हता ते भिदैकता वाक्परता च नुत्या ।
ध्यानेन बुद्धेः परता परेश जात्याऽजता क्षंतुमिहार्हसि त्वम् ॥ १२ ॥
आत्मा नदी भारतपुण्यतीर्था सत्यावहा शीलतटा दयोर्मिः ।
तत्राभिषेकं कुरु पांडुपुत्र न वारिणा शुद्ध्यति चान्तरात्मा ॥ १३ ॥
भूमौ जले नभसि देवनरासुरेषु भूतेषु देवि सकलेषु चराचरेषु ।
पश्यंति शुद्धमनसा खलु रामरूपं रामस्य ते क्षितितले समुपासकाश्च॥१४

ये पापं शमयंति संगतिभृतां ये दानशृंगारिणो
येषां चित्तमतीव निर्मलतरं येषां न मानव्रतम् ।
ये सर्वान्सुखयंति हि प्रतिदिनं ते साधवो दुर्लभा
गंगावद्धजगंडवद् गगनवद् गांगेयवज्ज्ञेयवत् ॥ १५ ॥
अनंतशास्त्रं बहुला च विद्या अल्पश्च कालो बहुविघ्नता च ।
यत्सारभूतं तदुपासनीयं हंसो यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात् ॥ १६ ॥
अर्च्ये विष्णौ शिलाधीर्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवे जातिबुद्धि-
र्विष्णोर्वा वैष्णवानां कलिमलमथने पादतीर्थेऽम्बुबुद्धिः ।
सिद्धे तन्नाम्नि मंत्रे कलिकलुषहरे शब्दसामान्यबुद्धिः
श्रीशे सर्वेश्वरेशे तदितरसमधीर्यस्य वा नारकी सः ॥ १७ ॥
नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत्स आत्महा ॥१८॥
जातोऽहं जनको ममैष जननी क्षेत्रं कलत्रं कुलं
पुत्रो मित्रमरातयो वसु बलं विद्याः सुहृद्बांधवाः ॥
चित्तस्पंदितकल्पनामनुभवन्विद्वानविद्यामयीं
निद्रामेत्य विघूर्णितो बहुविधान् स्वप्नानिमान्पश्यति ॥ १९

जिह्वा रसाय नयनं सुविलोकनाय श्रोत्रं तथा कलरवश्रवणाय चर्म।
स्पर्शाय कर्षति सुगंधकृते नु नासा प्रत्यर्थिनोऽध्वगमिव प्रलुनंत्यविघ्नम्
कुरंगमातंगपतंगभृंगमीना हताः पंचभिरेव पंच।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पंचभिरेव पंच॥ ४६॥

वपुः कुब्जीभूतं गतिरपि तथा यष्टिशरणा
विशीर्णा दंतालिः श्रवणविकलं श्रोत्रयुगलम्।
शिरः शुक्लं चक्षुस्तिमिरपटलैरावृतमहो
मनो मे निर्लज्जं तदपि विषयेभ्यः स्पृहयति॥ ४७॥

पत्रं यथा चलदलस्य च वैद्युताभा
केत्वंशुकं च ललनाक्षिशिखानलस्य।
शाखामृगश्च कमठस्य शिरस्तथैव
चित्तं समेति तरलं स्थिरतां न जातु॥ ४८॥

अज्ञानन्माहात्म्यं पततु शलभो दीपदहने
स मीनोऽप्यज्ञानाद्बडिशयुतमश्नातु पिशितम्।
विजानन्तोप्येते वयमिह विपज्जालजटिलान्
न मुञ्चामः कामानहह गहनो मोहमहिमा॥ ४९॥

कृशः काणः खञ्जः श्रवणरहितः पुच्छविकलो
व्रणी पूयक्लिन्नः कृमिकुलशतैरावृततनुः।
क्षुधाक्षामो जीर्णः पिठरककपालार्पितगलः
शुनीमन्वेति श्वा हतमपि निहन्त्येव मदनः॥ ५०॥

गात्रं संकुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दंतावलि-
र्दृष्टिर्नश्यति वर्धते बधिरता वक्त्रं च लालायते।
वाक्यं नाद्रियते च बांधवजनो भार्या न शुश्रूषते
हा कष्टं पुरुषस्य जीर्णवयसः पुत्रोऽप्यमित्रायते॥ ५१॥

संगात्पृथुत्वमगमज्जलधिश्च धार्तराष्ट्रो हतश्च तपसः स्खलितो मुनीन्द्रः।
लंकाधिपस्य शकुनेश्च तथांगनायास्तस्मात्त्यजेदविरतं हि बुधः कुसंगम्॥
निःसंगता मुक्तिपदं यतीनां संगादशेषाः प्रभवंति दोषाः।
आरूढयोगोऽपि निपात्यतेऽधः संगेन योगी किमुताल्पसिद्धिः॥ ५३॥

स्वार्थं धनानि धनिकात् प्रतिगृह्णतो य-
दास्यं भजेन्मलिनतां किमिदं विचित्रम्।
गृह्णन् परार्थमपि वारिनिधेः पयोऽपि
मेघोऽयमेति सकलोऽपि च कालिमानम्॥ ५४॥

समारंभा भग्नाः कति कति न वारांस्तव पशो
पिपासोस्तुच्छेऽस्मिन् द्रविणमृगतृष्णार्णवजले।

निःस्वोप्येकशतं शती दशशतं सोपीह लक्षेशतां
लक्षेशः क्षितिराजतां क्षितिपतिश्चक्रेशतां वाञ्छति ।
चक्रेशः सुरराजतां सुरपतिर्ब्रह्मास्पदं वाञ्छति
ब्रह्मा विष्णुपदं हरिः शिवपदं तृष्णावधिं को गतः ॥ ३४ ॥

गर्जसि मेघ न यच्छसि तोयं चातकपक्षी व्याकुलितोऽहम् ।
दैवादिह यदि दक्षिणवातः क त्वं काहं क च जलपातः ॥ ३५ ॥

सर्वोद्वेगकरं मृगादनममुं संत्यज्य हा धिक् त्वया
लोकस्यानपकारिणं गिरिनदीतीराटवीनिर्वृतम् ।
अश्नन्तं तृणमेणशावमदयं व्याध घ्नतामुं वृथा
देवो दुर्बलघातकोऽयमिति सा गाथा यथार्थीकृता ॥ ३६ ॥

कान्तं वक्ति कपोतिकाऽऽकुलतया नाथान्तकालोऽधुना
व्याधोऽधो धृतचापसज्जितशरः श्येनः परिभ्राम्यति ।
इत्थं सत्यहिना स दष्ट इषुणा श्येनोपि तेनाहत-
स्तूर्णं तौ तु यमालयं प्रति गतौ दैवी विचित्रा गतिः ॥ ३७ ॥

क्लमो न वाचां शिरसो न शूलं न चित्ततापो न तनोर्विमर्दः ।
न चापि हिंसादिरनर्थयोगः श्लाघ्या परं क्रोधजयेहमेका ॥ ३८ ॥

क्रुद्धे स्मेरमुखोऽवधीरणमथाविष्टे प्रसादक्रमोऽ-
प्याक्रोशे कुशलोक्तिरात्मदुरितोच्छेदोत्सवस्ताडने ।
धिग्जंतोरजितात्मनोऽस्य महती दैवादुपेता विपत्
दुर्वारेति दयारसार्द्रमनसः क्रोधस्य कुत्रोदयः ॥ ३९ ॥

ददतु ददतु गालीर्गालिमन्तो भवंतः
अहमपि तदभावे गालिदानेऽसमर्थः ।
जगति विदितमेतद्दीयते दीयमानं
नहि शशकविषाणं कोऽपि कस्मै ददाति ॥ ४० ॥

रे चित्तकाक फलपुष्पविकीर्णमात्माऽऽरामं विमर्शमथ विश्वगालयं च
शांत्यावहं निकटगं शठ संविहाय संसारभोगशमले बद किं रतोऽसि॥४१॥

एतस्मात्किमिन्द्रजालमपरं यद्गर्भवासस्थितं
रेतश्चेतति हस्तमस्तकपदप्रोद्भूतनानांकुरम् ।
पर्यायेण शिशुत्वयौवनजरावेषैरनेकैर्वृतं
पश्यत्यत्ति शृणोति जिघ्रति तथा गच्छत्यथागच्छति ॥४२॥

शृङ्गे श्रुतिर्न सिकतासु यथा च तैलं वृक्षो न खे करतले न च रोम जातु ।
वह्नौ न शैत्यमुडुपेपि यथोष्णता वै मुक्तिर्न रागिणि तथैव बुधा वदंति४३

भिक्षाशनं तदपि नीरसमेकवारं शय्या च भूः परिजनो निजदेहमात्रम् ।
वस्त्रं च जीर्णशतखंडमलाढ्यकंथा हाहा तथापि विषया न परित्यजंति४४

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः ।
इत्थं विचिंतयति कोषगते द्विरेफे
हा हन्त हन्त नलिनीं गज उज्जहार ॥ ६५ ॥
शेषोऽशेषधराधरश्च गिरिशः सर्वांतकश्चात्मभू-
र्लोकोद्भूतिकरश्च कोपपरिपुस्त्रैलोक्यसंपालकः ।
येऽन्ये काकभुशुंडलोमशमुखा योग्याः स नो कुर्वते
गर्वं स्वल्पधनः क्षमागुरुयशो मर्त्यः करोतीत्यहो ॥ ६६ ॥
मूर्खत्वं सुलभं भजस्व कुमते मूर्खस्य चाष्टौ गुणा
निश्चिंतो बहुभोजकोऽतिमुखरो रात्रिंदिवं स्वप्नभाक् ।
कार्याकार्यविचारणांधबधिरो मानापमाने समः
प्रायेणामयवर्जितो दृढवपुर्मूर्खः सुखं जीवति ॥ ६७ ॥
न संध्यां संधत्ते नियमितनिमाजं न कुरुते
न वा मौंजीबन्धं कलयति न वा सुन्नतविधिम् ।
न रोजां जानीते व्रतमपि हरेर्नैव कुरुते
न काशी मक्का वा शिव शिव न हिन्दुर्न यवनः ॥ ६८ ॥
मूर्खस्य पंच चिह्नानि गर्वो दुर्वचनी तथा ।
हठी चाप्रियवादी च परोक्तं नैव मन्यते ॥ ६९ ॥
मूर्खस्य [illegible] डीका च [illegible] ।
[illegible] होंडी होंडी च [illegible] ॥ ७० ॥
[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ७१ ॥
[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ७२ ॥
[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ७३ ॥
[illegible]
[illegible] ।

तथापि प्रत्याशा विरमति न ते मूढ शतधा
विदीर्णं यच्चेतो नियतमशनिग्रावघटितम् ॥ ५५ ॥
फलं स्वेच्छालभ्यं प्रतिवनमखेदं क्षितिरुहां
पयः स्थाने स्थाने शिशिरमधुरं पुण्यसरिताम् ।
मृदुस्पर्शा शय्या सुललितलतापल्लवमयी
सहंते संतापं तदिह धनिनां द्वारि कृपणाः ॥ ५६ ॥
प्रथमतः पठनं कठिनं कृतं पुनरहो परदेशनिषेवणम् ।
वदति दीनमयं वचनं सदा कठिनता विधिना विदुषां कृता ॥५७॥
अर्द्धं दानववैरिणा गिरिजयाप्यर्धं शिवस्याहृतं
देवेत्थं जगतीतले स्मरहराभावे समुन्मीलति ।
गंगा सागरमंबरं शशिकला नागाधिपः क्ष्मातलं
सर्वज्ञत्वमधीश्वरत्वमगमत् त्वां मां च भिक्षाटनम् ॥ ५८ ॥
जातः शूली कदनविषयात् भैक्ष्ययोगात्कपाली
वस्त्राभावाद्गगनवसनः स्नेहरौक्ष्याज्जटावान् ।
युष्मत्सेवापरिचयवशादीश्वरत्वं मयाप्त-
मद्यापि त्वं मम नरपते ह्यर्धचंद्रं न दासि ॥ ५९ ॥
तावत्सर्वगुणालयः पटुमतिः साधुः सतां वल्लभः
शूरः सच्चरितः कलंकरहितो मानी कृतज्ञः कविः ।
यावन्निष्ठुरवज्रपातसदृशं देहीति नो भाषते
तस्मात्वाक्यमिदं मम शृणु सखे मा ब्रूहि दीनं वचः ॥ ६० ॥
रेरे चातक सावधानमनसा मित्र क्षणं श्रूयता-
मंभोदा बहवो वसंति गगने सर्वेऽपि नैतादृशाः ।
केचिद्वृष्टिभिरार्द्रयंति वसुधां गर्जंति केचिद्वृथा
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः ॥ ६१ ॥
हस्तौ दानविवर्जितौ श्रुतिपुटौ सारस्वतद्रोहिणौ
नेत्रे साधुविलोकनेन रहिते पादौ न तीर्थं गतौ ।
अन्यायार्जितवित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो
रेरे जंबुक मुंच मुंच सहसा नीचस्य निंद्यं वपुः ॥ ६२ ॥
लोभाद्द्वयो निपतिता गहने स कूपे दुर्योधनश्च यमलोऽन्तकवेश्म यातः ।
सद्यो वियंति सुगुणा गुणिनां यशश्च तस्मात्त्यजेन्नरकदं हि बुधस्तु लोभम्
संत्येते मम दंतिनो मदजलप्रम्लानगंडस्थला
वातव्यायतपातिनश्च तुरगा भूयोपि लप्स्ये परान् ।
एतल्लब्धमिदं लभे पुनरिदं लब्धाधिकं ध्यायतां
चिन्ताजर्जरचेतसां बत नृणां का नाम शांतेः कथा ॥ ६४ ॥

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभा
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंक
इत्थं विचिंतयति कोषगते द्विरेफे
हा हन्त हन्त नलिनीं गज उ
शेषोऽशेषधराधरश्च गिरिशः स
लोकोद्भूतिकरश्च कोणपरिपु
येऽन्ये काकभुशुंडलोमशमुखा
गर्व स्वल्पधनः क्षणायुरधमो
मूर्खत्वं सुलभं भजस्व कुमते मू
निश्चितो बहुभोजकोऽतिमु
कार्याकार्यविचारणांधबधिरो
प्रायेणामयवर्जितो दृढवपुः
न संध्यां संधत्ते नियमितनिम
न वा मौञ्जीबन्धं कलयति
न रोजां जानीते व्रतमपि हरे
न काशी मक्का वा शिव
मूर्खस्य पंच चिह्नानि गर्वो दु
हठी चाप्रियवादी च परोक्तं
मूर्खस्य चाष्टचिह्नानि टीका
प्रतिष्ठा लम्बधोत्राणि हांजी
सिंहो व्याकरणस्य कर्तुरहर
मीमांसाकृतमुन्ममाथ स
छंदोज्ञाननिधिं जघान मकर
ह्यज्ञानावृतचेतसामतिर
वह्निस्तस्य जलायते जलनि
मेरुः स्वल्पशिलायते मृग
व्यालो माल्यगुणायते विष
यस्यांगेऽखिललोकवल्लभ
प्राणाघातान्निवृत्तिः परधन
काले शक्त्या प्रदानं युव
तृष्णास्रोतोविभंगो गुरुषु
सामान्यः सर्वशास्त्रेष्वन

आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे
साधोः संगमुपासते च सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः ॥ ७४ ॥
सर्वौषधीनाममृता प्रधाना सर्वेषु सौख्येष्वशनं प्रधानम् ।
सर्वेन्द्रियाणां नयनं प्रधानं सर्वेषु गात्रेषु शिरः प्रधानम् ॥ ७५ ॥
किं वाससैवं न विचारणीयं वासः प्रधानं खलु योग्यतायाः ।
पीताम्बरं वीक्ष्य ददौ तनूजां दिगंबरं वीक्ष्य विषं समुद्रः ॥ ७६ ॥
नाभिषेको न संस्कारः सिंहस्य क्रियते मृगैः ।
विक्रमार्जितराज्यस्य स्वयमेव मृगेन्द्रता ॥ ७७ ॥
धन्या द्विजमयी नौका विपरीता भवार्णवे ।
तरंत्यधोगताः सर्वे उपरिस्थाः पतंत्यधः ॥ ७८ ॥
चितं जीर्णैः पर्णैर्गृहमपि तथैश्वर्यविकलं
विशीर्णं चैलं चाशनमपि कदन्नं गतरसम् ।
कुरूपाङ्गा योषित् कटुवचनसंभाषणपरा
तथाप्यज्ञो लोकः क्षणमपि न हन्तोपरमते ॥ ७९ ॥
नैवात्र काव्यगुण एव तु चिन्तनीयो
ग्राह्यः परं गुणवता खलु सार एव ।
सिन्दूरचित्ररहिता भुवि रूपशून्या
पारं न किं नयति नौरिह गन्तुकामान् ॥ ८० ॥
सान्द्रानन्दपुरंदरादिदिविषद्वृन्दैरमन्दादरा-
दानम्रैर्मुकुटेन्द्रनीलमणिभिः सन्दर्शितेन्दीवरम् ।
स्वच्छन्दं मकरन्दसुन्दरगलन्मन्दाकिनीमेदुरं
श्रीगोविन्दपदारविन्दमशुभस्कन्दाय वन्दामहे ॥ ८१ ॥
मङ्गलं लेखकानां च पाठकानां च मङ्गलम् ।
मङ्गलं सर्वलोकानां भूयो भूयोऽस्तु मङ्गलम् ॥ ८२ ॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत् ॥ ८३ ॥

श्रीरामस्नेह धर्मप्रकाश ग्रंथका शुद्धिपत्र।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	९	क्रिया	क्रियाजु	१३१	३	बिन्दु	बिन्दू
३	१२	आपने	अपने	१३३	१२	हिन्दु	हिन्दू
१०	१२	अवनीपति	अवनीपती	१३८	२०	दशम	दशमे
१३	१०	यौ	ऐसे	१३८	२८	दशम	दशमो
१५	१७	नहि	न	१३९	४	बसी	तब बसी
१५	२०	तनमनधन	तन धन	१३९	१३	की देखै	देखै
१६	२९	साधुहम	साधु	१४२	१५	भज	भजयौ
१९	१२	मुरधर	मरुधर	१४२	२५	मूई	मुई
१९	१९	नब	तब	१४३	६	आप	आपा
२०	२२	मुरधर	मरुधर	१४४	५	हे	होए
२१	११	बरपायो	बरपावो	१४४	८	बाहिरो	बाहिरी
२३	२५	सारंगी	सारंगो	१४४	२०	रम	रमा
२४	१	अधू	अधू	१५५	चोकडा	अर्थात् लोहेकी काँटेदार लगाम	
२९	हेडिंग	परचीसार	परिचय				
३१	२०	मुरधरा	मरुधरा	१५६	साहि अर्थात् पकड़ना		
३३	१८	मुरधर	मरुधर	१५८	४	जल थान	जलकरथान
३३	२८	सब	सद	१५८	१३	तुमारि	तुम्हारि
३३	१२	निरधारी	निर्धारांके	१६१	२१	रामदास	रामादास
३५	१६	उतम	उत्तम	१६८	१	भाम	भौम
३६	६	सकेविस्तार	नक विस्तार	१६८	४	धिरकार	धिक्कार
४१-४३	हेडिंग	परचीसार	परिचय	१७०	१६	पिल्यया	मिलाया
६३-६९	हेडिंग	परचै	चेतावनी	१७१	२६	त्रिवेणी	त्रिवेणी
६३	४	माहत	महावत	१७२	३	नहि अंधन	नाहीं अंध-
६३	२५	कोय	लोय	१७८	९	राणे	राण
६७	११	डोली	अंगार	१८१	८	निर्मल	विमल
६८	१०	पसवा	पनुवा	१८२	१०	सेव	सेवा
६९	९	रोयज	रोवै	१८२	१६	मह	मेह
७१	११	सिमिर	तिमिर	१८४	२	मुगी	मुनिही
७		बाबरा	बावरा	१९१	२८-२९	दारुन	दारुण
		महलाग	आभाग	१९२	२०	दारुण	दारुन
		अंदंगानी	अिंदगानी	१९२	१०	आव	आय

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१९१	२१	शरण	शासन
१९७	२३	मुरधर	मरुधर
२०५	३	जिग	जग
२०६	३	परजा	प्रजा
२२०	९	बली	बली
२२६	९	सो	सोइ
२२७	९	सनकादू	सनकादि
२२७	१२	थिति	थति
२२७	२८	जुरा	जरा
२३१	१२	जीते	जिते
२३२	७	अनुगारे	अगारे
२३५	५	सास	स्वास
२५४	७	मुरधर	मरुधर
२६७	१६	सरंग	सारंग
२६८	२१	मेट	भेट
२७३	१	धा	धाँ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७७	१२	यपि	यपि जग
२७८	२८	बीज	बीज
२९३	८	जर	जन
३११	२१	गाधन	साधना
३१५	१४	साह	मे
३१९	२६	डाधिगी	डाकिगी
३२३	१८	निरभै	निर्भय
३४१	२०	नही	नहिं
३४५	३०	मुरधर	मरुधर
३५२	३१	मुरधर	मरुधर
३५५	१६	मुरधर	मरुधर
३८८	१६	पंखी	पक्षी
अकारादि पताकि-			
अनेक नोट	१	भेखा	भेख
,,	१२	पल्लाना	नागौर, पल्लाना

१६१ पृष्ठकी विज्ञप्ति का नोट:—

श्रीखंडापे में तथा खंडापे के अन्यस्थलों में भी श्रीसिंहथलमहन्तमहाराज के विराजते हुए जो वाणी पाठ होता है वह श्रीसिंहथल पाठक्रमानुसार ही होता है केवल श्रीपूरणदासजी महाराज श्रीअर्जुनदासजी महाराज तथा अपने २ ठिकाणों की वाणी का पाठ विशेष होता है।

श्रीरामस्नेह धर्मप्रकाश ग्रंथका शुद्धिपत्र।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	९	क्रिया	क्रियाशु
३	१२	आपने	अपने
१०	१२	अवनीपति	अवनीपती
१३	१०	यो	ऐसे
१५	१७	नहि	न
१५	२०	तनमनधन	तन धन
१६	२९	साधुहम	साधु
१९	१२	मुरधर	मरुधर
१९	१९	नव	तव
२०	२२	मुरधर	मरुधर
२१	३१	बरषायो	बरषावो
२३	२५	सारंगी	सारंगो
२४	१	अधू	अधू
२९	हेडिंग	परचीसार	परिचय
३१	२०	मुरधरा	मरुधरा
३३	१८	मुरधर	मरुधर
३३	२८	सब	सद
३३	३२	निरधारा	निर्धाराके
३५	१६	उतम	उत्तम
३६	६	सकेविस्तार	सक विस्तार
४१–४३	हेडिंग	परचीसार	परिचय
६३–६९	हेडिंग	परचै	चेतावनी
६३	४	नाहन	न्हावन
६३	२५	कोथ	लोय
६७	३२	ढोली	संसार
६८	१०	पसका	पशुवा
६९	९	रोमज	रोम
७१	१३	तिमिर	त्रिविर
७४	१४	बाबरा	बावरा
७७	१	अहवाग्र	अभाग्य
८७	३३	जिदंगानी	जिदगानी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३१	३	विन्दु	बिन्दू
१३३	१२	हिन्दु	हिन्दू
१३८	२०	दशम	दशमे
१३८	२८	दशम	दशमो
१३९	४	कसी	तब कसी
१३९	१३	की देखै	देखै
१४२	१५	अज	अजयों
१४२	२५	मुहे	मुह
१४३	६	आप	आपा
१४४	५	है	होए
१४४	८	बाहिरो	बाहिरी
१४४	२०	रय	रया
१५५	चौकडा अर्थात् लोहेकी कांटेदार लगाम		
१५६	साहि अर्थात् पकडना		
१५८	४	जल स्नान	अलकस्नान
१५८	१३	तुमारि	तुम्हारि
१६१	२२	रामदास	रामादास
१६८	१	भाय	भोय
१६८	४	धिरकार	धिक्कार
१७०	१६	पिलया	मिलया
१७१	२६	जिवेणी	त्रिवेणी
१७२	३	नहि अंधन	नाहीं अंध-
१७८	९	राणे	राण
१८१	८	निर्मल	विमल
१८२	१०	सेव	सेवा
१८२	१६	मह	गेह
१८४	२	मुणो	मुनिहो
१९१	१८–२१	दारण	दारुण
१९२	२७	दारण	
१९२	३०	जाव	

रामें कोटड़िये बनवाई हैं उनके नाम निम्न लिखित है। नरोत्तमदासजी साधु (फालू) एक कोटड़ी। खेतारामजी गवैया साधु (खेड़ापा) दो कोटड़ी। इनकी कोटड़ी के आगे की चौकीपर एक जलकी कुण्डी लाखारामजीने बनवाई है। रामधनजीकी धर्मपत्नी बाई लिछमाँ (बीकानेर) एक कोटड़ी। रेखचन्दजी (बीकानेर) एक कोटड़ी। रामगोपालजीकी धर्मपत्नी बाई पीराँ (बीकानेर) एक कोटड़ी। रामचन्दजी (बीकानेर) एक कोटड़ी। सूरजमलजी की धर्मपत्नी बाई वाजलाँ (बीकानेर) दो कोटड़ी। सेठ जगरूपदासजी रामधनदासजी (सिंहथल) एक कोटड़ी। सेठ जगन्नाथजी करणीदानजी (नागोर) एक कोटड़ी। मघराजकी धर्मपत्नी बाई पाँडा (बीकानेर) एक कोटड़ी।

केंटालियाः-(मारवाड़) (थाँ.)

खजवानाः-(मारवाड़) (खा. शा.) (३)

खारालः-(गुजरात) (खा. झाकलकी शा.)

खवासपुराः-पो. गोठन (मारवाड़) (थाँ.)

खारियाः-भाद्रावतोंका (मारवाड़) (थाँ. नीबाजकी शा.)

खाँगटाः-पो. उमेद (मारवाड़) भाखरीपर (थाँ. बड़लू मनीरामजीम.की शा.) भाखरीपरके शाखाका यहीं पर एक स्थान मलमें और है उसका वर्तमानस्थान बीकानगर है।

खीचन्दः-पो. फलोधीहकूमत (मारवाड़) (खा. पोकरणकी शा.)

खीवसरः-(मारवाड़) (खा.)

खेजड़लाः-पो. पीपाड़ सिटी (मारवाड़) (थाँ. वर्तमानस्थान है। इसका आदिस्थान पीपाड़में है)

खेड़ापाः-पो. बड़लू (मारवाड़) पूर्वपादआ १०८श्री आचार्यधाम।

खैरवाः-(मारवाड़) (खा. खेड़ापाकी शा.)

गच्छीपुराः-पो. आसोप (मारवाड़) (खा. शा.)

गवालूः-पो. खजवाना (मारवाड़) (खा. देशनोक उदयरामजीकी शा.) (३)

गरोताः-पो. चम्बल (माळवा) (थाँ. होरावदकी शा.)

गाजूः-(मारवाड़) (थाँ. तीतरीकी शा.) यह रामद्वारा सिंहथलमहन्तांमहाराजके भेट किया हुवा है।

गारासणीः-पो. भासोपः (मारवाड़) (थाँ.)

गिरीः-(मारवाड़) (थाँ. नीबाजकी शा.)

गीगासरः-पो. देशनोक (बिकानेर) (थाँ. वर्तमानस्थान वेलासर) (४)

गुसाँईसरछोटाः-पो. नापासर (बीकानेर) (खा. वर्तमानस्थान कोशाणा) (३)

गुसाँईसरबड़ाः-(बीकानेर) (थाँ. कालूकी शा.) (४)

गूँदलीः-पो. किशनगढ़ (राजपुताना) (खा. शा.)

गौतमपुराः-(मालवा) घालपर (थाँ. रतलामकी शा.) इनका एकस्थान शहरमें है।

गंगारड़ाः-(मारवाड़) (खा. गुसाँईसरकी प्रशा.) (३)

गंगाशहरः-(बीकानेर) नईलाइन महेश्वरियोंका मुहल्ला (थाँ. तीतरीकी शा.)

,, (थाँ. आचीणेकी प्रशा.)

घतरखेड़ाः-पो. सेवनी बनापुरा (होशंगाबाद) (थाँ.)

घारूः-पो. फलोधीहकूमत (मारवाड़) ठि. सेठ हीरचन्द कस्तूरचन्द बरडियेकी दुकान (खा. बासोडीकी शा.) (३)

चाखाँः-(मारवाड़) (थाँ. जोधपुर महामन्दरकी शा.)

चाँचोड़ियाः-(मारवाड़) (यहांपर दो थाँ भायजीके रामद्वारे है)

चिड़ाणीः-पो. पीपाड़सिटी (मारवाड़) (थाँ. खेजड़लेकी शा.)

चौतखशावाः-पो. बालोतरा (मारवाड़) (थाँ. बालारामजीकी शा.) इनका स्थान जोधपुरनगरमें भी है।

॥ श्रीः ॥

सिंहथल खैड़ापा रामस्नेही थाँभायत व खालशाही रामद्वारोंके

ठिकाना पताः—

अहमदाबादः—(गुजरात) पंचमुखी हनुमानके पास (थाँ. बडलू म. की प्रशा.)

अटियाः—पो. पीपाड़ रोड (मारवाड़) (थाँ. वर्तमानस्थान बोयल पो. पीपाड़ सिटी)

अंगथौरः—(गुजरात) (थाँ. ईडरकी प्रशा.)

आराहीः—पो. किशनगढ (राजपूताना) (खा. गूँदलीकी शा.)

आचीणाः—(मारवाड़) (थाँ. वर्तमानस्थान भीनासर बीकानेर)

आसोपः—(मारवाड) (खा. शा.)

आहड़ाः—पो. बालोतरा (मारवाड़) (थाँ. बूड़ीवाड़ा)

आतरसूबाः—(गुजरात) (थाँ. ईडरकी प्रशा.)

इंगणोदः—पो. दोदर (मालवा) (थाँ. रतलामकी शा.)

ईडरः—(गुजरात) केशरबागके सामने (थाँ.)

उदयपुरः—(मेवाड़) कुम्हारोंका बास (थाँ. मोतीचौक जोधपुरकी शा.)

ऊदसरः—पो. नोखा (बीकानेर) (थाँ.) श्रीनारायणदासजी महाराज भेख और अवस्थामें सबशिष्योंसे बड़े होनेके कारण मुख्य थे, गुरुदेवजी की आज्ञानुसार अपने जीवनपर्यन्त आपने अपने गुरुधाम सिंहथलको नहीं छोड़ा। और न अन्यत्र कोई स्थान बनाया। आपके ४७ शिष्य हुए आपके परमधाम पधारनेपर ऊदसर के मुख्य होने पर भी किसी एक को चादर नहीं उढाई गई अतएव सारेही थाँभायतमहन्तकहलाए। इनमें ८ मुख्य हुए। जिनमें ६ के ठिकाने मौजूद है। साँवतरामजी विजयरामजी सिंहथलहीमें रहे। यहांपर साँवतराजीका एक स्थान है और विजयरामजीकी बनाई हुई विजोलाई नामक तलाई है। (N)

ओसियाँः—(मारवाड़) (थाँ. पाँचो... आदिस्थान)

करणूः—पो. खींवसर (मारवाड़) (खा. ... सोड़ीकी शा. चाखूका आदिस्थान) (...

कापरड़ाः—(मारवाड़) (थाँ. बोयल)

कालूः—पो. लूणकरणसर (बीकानेर) (... वर्तमानस्थान श्रीडूँगरगढ़) (N)

कालाऊनाः—पो. बिलाड़ा (मारवाड़) (थाँ...

किस्मीदेसरः—पो. भीनासर (बीकानेर ... कूएके पास (थाँ. आचीणेकी शा.)

कीतळसरः—पो. चाँदारूँण (मारवाड़ ... (खा. शा.)

कुचेराः—(मारवाड) (थाँ. नींबाज)

कूड़ोः—(मारवाड़) (थाँ.)

केकड़ः—(मारवाड़) मालानी (थाँ. बानी... रावासरकी शा.)

कोटवनः—(बृजमण्डल) (थाँ. बीतरीकी प्रशा.)

कोसाणाः—पो. पीपाड़ (मारवाड़) ठि. सेठ पीरमल केसरीमल काँकरियाकी दुकान (खा. गुसाँईसरका वर्तमानस्थान। (३) यहाँ एक और भी खा. शा. स्थान है। (8)

कोलायतः—श्रीकोलायतजी पो. गजनेर (बीकानेर) श्रीरामस्नेही आश्रम इसमें कुल रु. २४७९५।=) खर्च हुये जिनमें भी सिंहथल समुदायकी तरफसे रु. १२२६) और भी खैड़ापा समुदायकी तरफसे रु. ४४७) सहायतार्थ प्राप्त हुए, बाकी रु. २३,११०।=)। साधचोकसरामजीने अपने निजके कमाकर इस रामस्नेही आश्रमको बनवाया। जिसमें श्रीरामेश्वरदासजी महाराजकी साळ तो पहिले से ही बनी हुई थी और भी हालमें जिन्होंने उपका-

झाकलः–पो. साचोर (मारवाड़) (खा. शा.)
झोटावदः–पो. रीची छलीरिच्छा (मालवा) (थाँ.)
टीमकाकलाः–पो. खपरिया तहसील सीवनी बनापुर जिला होशंगाबाद (गोंडवाणा) (खा. खु.)
डाँगासः–पो. मेड़तासिटी (मारवाड़) (खा. शा.) (S)
डाँगियासः–पो. बीसलपुर (मारवाड़) (थाँ.)
डाभड़ियाः–पो. छलीरिच्छा (थाँ. रतलाम की शा.)
डीघाडीः–(मारवाड़) (खा. बीसलपुरकी शा.)
डीसाकेम्पः–(गुजरात) (खा. शा.)
डूँगरगढः–श्रीडूंगरगढः–(बीकानेर) कालू के बासमें (थाँ. कालूका वर्तमान स्थान) (N)
,, बिगेके बासमें उमारामजीका रामद्वारा (थाँ. कालूकी शा.) (N)
,, गंगारामजीका रामद्वारा (थाँ. कालूकी शा.) (N)
डूमघः–(गुजरात) (थाँ. ईडरकी प्रशा.)
डोवाः–(गुजरात) (खा. लाकणूकी प्रशा.)
ढावाः–पो. मेड़तारोड (मारवाड़) (थाँ. बड़ल् मनीरामजी म० की प्रशा.)
तलवाड़ाः–(मारवाड़) (थाँ. समुदड़ीकी शा.)
तांतेरीः–पो. नागोर (मारवाड़) ठि. रामदयालजी बालमुकुन्दजी सारडाकी दुकान (थाँ.)
तताणीः–(मारवाड़) (खा. शा.)
दईकाः–पो. बीदासर (बीकानेर) (खा. बीकानेर दुरगरामजीकी शा.)
दासोड़ीः–(बीकानेर) (खा. वर्तमान भण्डा आदिस्थान) (S)
दांघोटः–(बलमण्डल) थाँ. बीबरीकी प्रशा.)
दुधोड़ः–(मेवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)
देकावड़ाः–पो. पीपाड़रोड (मारवाड़ (थाँ.)
देवरियाः–(मारवाड़) थाँ. बड़लू मनीरामजी म० की प्रशा.)

१ ढीकरी थाँभायत ठिकानेमें से छठी थोथेका मेंदरामजि बड़लू-भायतवाले एक "छत्तरी" नामक खाता मिलते है।

देवलीः–पो. चंडावल (मारवाड़) (थाँ. सूरसागरकी शा.)
देशणोकः–(बीकानेर) नए कूएके पास दानरामजीका रामद्वारा (खा. शा.)
,, सीयावतोंके बासमें उदयरामजीका रामद्वारा (खा. शा.) (S)
,, महतुबाईका रामद्वारा (खा. उदयरामजीकी शा.) (S)
,, बायोलाईतलाईपर परमहंसजीम.की गुफा (थाँ. आचीणेकी शा.)
,, दूगड़ोंके बासमें उक्त परमहंसजी महाराजका स्थान एक और है।
देहलीः–नीलका कटला रामप्रसादजीका रामद्वारा (थाँ. वीवरीकी शा.)
,, सब्जीमंडीकेपास केवलरामजीका रामद्वारा (रामप्रसादजीकी शा.)
धमासियाः–पो. पीपाड़सिटी (मारवाड़) (खा. पीपाड़भगतरामजी म० की शा.)
धूँधाड़ा मजलः–(मारवाड़) (थाँ. पाँचोडीकी शा.)
नसीराबादः–(राजपुताना) (थाँ.)
नापासरः–(बीकानेर) राजपुतोंके बासमें जालारामजीकी झोंपड़ी (खा. शा.) (S)
नागोरः–(मारवाड़) बखतसागरतालावपर अमरादासजीकी बगीची (खा. शा.)
नींबोलः–(मारवाड़) (खा. पीपाड़ सेंजरामजी म० शा.)
नींबेड़ाः–(मारवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)
नींबाजः–(मारवाड़) (थाँ.)
पड़ानाः–(बीकानेर) (थाँ.) (N)
पछानाः–पो. मावली (मेवाड़) (खा. सीमारकी शा.)
पाठीः–(मारवाड़) केरलाररवाजा (थाँ.) मकानपर इनका एक औरभी स्थान है।
,, (थाँभायत नींबाजकी मकानपर एकस्थान है)
पाबड़ीः–(मारवाड़) (खा. बीजनगरकी शा)

१ नींबाज थाँभायत ठिकानेकी छठी थोथिका बहशीश किया हुआ है।

छापरः-पो. तालछापर (बीकानेर) (खा. लाडणूकी शा.)

जयपुरः-पुराणीबस्ती दशशालावावडीके पास (खा. खुद)

जालोरः-(मारवाड) वागेश्वरमहादेवके पास (खा. वालोतराकी शा.)

जैसलसरः-(बीकानेर) (थाँ. तीतरीकी शा.)

जैतारणः-(मारवाड) त्रिपोलियामें (थाँ.)

जैतपुरः-पो. अर्जुनसर (बीकानेर) (थाँ.) (N)

जोधपुरः-(मारवाड) सूरसागर खरबूजावावड़ीपर परमहंसजी महाराजका रामद्वारा (थाँ.) पासहीमें इनहीका भंडारनामक एक स्थान और है।

" महरोंकावासमें बुधारामजी म० का रामद्वारा (थाँ.)

" नागोरीदरवाजा मालियोंका वासमें तीजाँबाईका रामद्वारा (थाँ.) बुधा. की शा.) कागेकी बारी बाहिर इनका एक स्थान और है।

" मोतीचौक (थाँ. गुरुरामजीम.का रामद्वारा बोयलका वर्तमानस्थान) कागेकी बारी बाहिर इनहीका एक स्थान और है।

" घाटीमें भूरारामजीका रामद्वारा (थाँ. मोतीचौक की शा.)

" नागोरीमालियोंके वासमें विष्णुदासजीका रामद्वारा (थाँ.)

" गोलमें बाघजीभाटकी हवेलीके पास दामोदरदासजीम. का मोंहिलारामद्वारा (खा.शा.) इसके सामनेवाला भंडारनामकस्थानभी आपका है।

---

१ सूरसागर ठिकानेके नए परमहंस गद्दी बैठते हैं, तब उनके लिए सिंहथल खेड़ापा दोनों महन्तोंमहाराजाओंके सामने रूईदार गद्दी बिछाई जाती है गद्दीकी रीति रसम कर फिर अपनी परंपराके अनुसार बाघंबर या मृगचर्म अथवा टाटके आसनपर विराजमान होते हैं।

जोधपुरः-रामग्रहल्ला नागोरीदरवाजे [illegible] (खा. मोंहिले रामद्वारेका है) [illegible] का एकस्थान रामग्रहल्लेके साम[illegible]

" बागरमें भावनादासजीम.का र[illegible] रा मोंहिलेरामद्वारे की शा.)। च[illegible] न आपके और है जिनमें दोस[illegible] इस रामद्वारेके पास हीमें है ए[illegible] सागरकी नहरपर और एक क[illegible] बारी बाहिर है। मोंहिले रामद्वारेके [illegible] शालगरामजीका स्थान आपकी [illegible]

" खालशाहीरामद्वारा जूनीमालीमे[illegible] (खा.खुद)महरोंके वासके पासही [illegible] रमें खुद खालशाही स्थान एक और [illegible]

" जूनीमालीमेलामें गवैया खेतारा[illegible] का रामद्वारा (खा. शा.)।

" मेहरोंका वास हरिदासजीका र[illegible] द्वारा (खा. शा.)।

" रामगढ़ी (थाँ. मोतीचोककी शा[illegible] रामगढ़ीके नीचे "नोहरा" नाम[illegible] स्थान इनहीका है।

" बागरमें पुरखारामजी व रामलाल[illegible] का रामद्वारा रामगढ़ीकी शा.।

" कागड़ी परमहंसजीका रामद्वार[illegible] (खा. शा.)

" फतैसागरकी नहर पर शुकिराम[illegible] जीका रामद्वारा (खा. शा.)

" बारियोंके वासमें त्यागीरामजीका रामद्वारा (थाँ. नींबाजकी शा.)

" उदयमंदिरमें भूरारामजीका रामद्वार[illegible] (थाँ. खेजडलेकी शा.)

" सोजतियेदरवाजे बाहिर चतुरदासजीका रामद्वारा (खा. सीयाटका वर्तमानस्थान है)।

" किलेके नीचे भादूरामजीका रामद्वारा (खा. सीयाटकी शा.)

" किलेकी घाटीमें विनतिरामजीका रामद्वारा (थाँ. डाँगियासकी शा.)

" चाँदपोलदरवाजे मालढियोंकी घाटीमें केवलरामजीका रामद्वारा (थाँ. सूरसागरकी शा.)

साकड़ः–पो. सानोर (मारवाड़) (खा शा.)
सोमवड़ः–पो. रीची म्हलीरिच्छा (मारवाड़) (थाँ.)
डीमकाकड़ाः–पो. छनरिया तहसील सोवनी बनापुर जिला होशंगाबाद (गोंडवाणा) (खा. शु.)
डाँगासः–पो. मेड़तासिटी (मारवाड़) (खा. शा.) (8)
डाँगियावासः–पो. बीसलपुर (मारवाड़) (थाँ.)
डाभड़ियाः–पो. म्हलीरिच्छा (थाँ. रतलाम की शा.)
डीयाडीः–(मारवाड़) (खा. बीसलपुरकी शा.)
डीसाकैम्पः–(गुजरात) (खा. शा.)
डूँगरगढ़ः–श्रीडूँगरगढ़ः–(बीकानेर) कालू-के बासमें (थाँ. कालूका वर्तमान-स्थान) (N)
,, जिगेके बासमें उमारामजीका रामद्वारा (थाँ. कालूकी शा.) (N)
,, गंगारामजीका रामद्वारा (थाँ. खा-खकी शा.) (N)
डूमथः–(गुजरात) (थाँ. ईडरकी प्रशा.)
डोवाः–(गुजरात) (खा. छाकणूकी प्रशा.)
ढावाः–पो. मेड़तारोड़ (मारवाड़) (थाँ. बड़ल्लू मनीरामजी म० की प्रशा.)
तलवाड़ाः–(मारवाड़) (थाँ. समुदड़ीकी शा.)
तीतरीः[1]–पो. नागोर (मारवाड़) ठि. रामदया-लजी बालमुकुन्दजी सारड़ाकी दुकान (थाँ.)
दताणीः–(मारवाड़) (खा. शा.)
दड़ीबाः–पो. बीदासर (बीकानेर) (खा. बीकानेर दुरगदासजीकी शा.)
दासोडीः–(बीकानेर) (खा. वर्तमान भेल-का आदिस्थान) (8)
दीघोटः–(व्रजमण्डल) थाँ. तीतरीकी प्रशा.)
दुधोड़ः–(मेवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)
देवातड़ाः–पो. पीपाड़रोड़ (मारवाड़ (थाँ.)
देवरियाः–(मारवाड़) थाँ. बड़ल्लू मनीरामजी म० की प्रशा.)

देवलीः–पो. चंडावल (मारवाड़) (थाँ. सुखसागरकी शा.)
देशणोकः–(बीकानेर) नए कूएके पास दानरामजीका रामद्वारा (खा. शा.)
,, पीपावतोंके बासमें उदयरामजीका रामद्वारा (खा. शा.) (8)
,, मदनूबाईका रामद्वारा (खा. उदयरामजीकी शा.) (8)
,, बागोलाईतलाईपर परमहंसजीम.की गुफा (थाँ. आसीगेकी शा.)
,, दूगड़ोंके बासमें उक्त परमहंसजी महाराजका स्थान एक और है।
देहलीः–नीलका कटला रामप्रसादजीका रामद्वारा (थाँ. तीतरीकी शा.)
,, सब्जीमंडीकेपास केवलरामजीका रामद्वारा (रामप्रसादजीकी शा.)
धमासियाः–पो. पीपाड़सिटी (मारवाड़) (खा. पीपाड़सुगनरामजी म० की शा.)
धूँराड़ा मजलः–(मारवाड़) (थाँ. पाँचोडीकी शा.)
नसीराबादः–(राजपुताना) (थाँ.)
नापासरः–(बीकानेर) राजपुतोंके बासमें जालारामजीकी झोंपड़ी (खा. शा.) (8)
नागोरः–(मारवाड़) बखतसागरतालावपर जमनादासजीकी बगीची (खा. शा.)
नींबोलः–(मारवाड़) (खा. पीपाड़ तेजरा-मजी म० शा.)
नींबेड़ाः–(मारवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)
नींबाजः[1]–(मारवाड़) (थाँ.)
पलानाः–(बीकानेर) (थाँ.) (N)
पलानाः–पो. मावली (मेवाड़) (खा. सीयाटकी शा.)
पालीः–(मारवाड़) केरलादरवाजा (थाँ.) यहाँपर इनका एक औरभी स्थान है।
,, (थाँभायत नींबाजकाभी यहाँपर एकस्थान है)
पाळड़ीः–(मारवाड़) (खा. बीसलपुरकी शा.)

---

१ तीतरी थाँभायत ठिकानेमें सेः छड़ी ,पाँकिया चँवरआदि मयलवाजमाके एक "सतपथ" नामक शाखा निकली है।

१ नींबाज थाँभायत ... थाँ. ... किया बखशीस ...

पालडी:–मेड़तियाँरी (मारवाड़) (थाँ. खवासपुरेकी शा.)

पालडी:–जोधाँरी पो. खजवाना (मारवाड़) (थाँ. बडलू मनीरामजी म० की प्रशा.)

पादरू:–(मेवाड़) (खा. बालोतरेकी शा.)

पाँचोडी:–पो. खींवसर (मारवाड़) ठि. रामधनजी फूसमलजी मित्रीकी दुकान (थाँ.)

पिसांगण:–(अजमेर राजपुताना) (थाँ. नींबाजकी शा.)

पीपाड़सिटी:–(मारवाड़) राठोलाई तलाईपर भुगतरामजीम० का रामद्वारा (खा शा.)

" राठोलाई तलाईकेपास भक्तिरामजीम. का नयारामद्वारा (खा. शा. इनका आदि स्थान कोशाणाकी बाडियाँमें है)

" राठोलाईतलाईके पासही बाईयोंका रामद्वारा (खा. शा.)

" इसके पासका रामद्वारा (खा. शा)

पुनाहना:–(वृजमण्डल) (थाँ. तीतरीकी प्रशा.)

पुष्कर:–(राजपुताना) (थाँ. बडलू मनीरामजीम. की प्रशा.)

पूठोली:–पो. चन्देरी (मेवाड़) (खा. बालोतरेकी शा.

पूजलू:–(मारवाड़) (खा. पीपाड़ तेजरामजी म० प्रशा.)

पोकरण:–(मारवाड़) यकोंकी पिरोल (खा. शा.)

पंचेवा:–पो. पीपलोदा (मालवा) (थाँ. रतलामकी शा.)

प्रतापनगर–(चक १ यू) पो. केसरीसिंहपुर (बीकानेर) (खा. खुद.) (S)

प्रान्तीज:–(गुजरात) मोकमें भुक्तरामजी म० की बाड़ी (थाँ. ईडरकी प्रशा.) इनका एक रामद्वारा कुम्हारवाड़ामें भी है।

फलोधी:–मेड़तारोड़ (मारवाड़) (थाँ. कूडीकी शा.)

फलोधी:–दडूलत (मारवाड़) (खा. जोधपुर भावनादासजी म. का स्थान है)।

फागलिया:–(मारवाड़) (खा. लाकलकीप्रशा.)

फुलेरा:–(जयपुर) स्टेशनके पास रामद्वारा (खा. मैंदसरकी शा.) (S)

बडलू:–(मारवाड़) यहाँपर दो थाँभायतों के दो स्थान हैं।

" तलाईकी पालपर एकस्थान (खा. खुद है)

बडोदा:–(अमरावती) शुकेश्वरकेपास (थाँ. कूडीकी प्रशा.)

बलौंदा:–पो. जैतारण (मारवाड़) (थाँ. जैतारणकी शा.)

बड़सारा:–पो. वरणा (गुजरात) (खा. जोधपुर मोहिलेरामद्वारेकी शा.)

बड़ोदा:–पो. नॉमडीचौक (गुजरात) कुम्हारवाड़ा (थाँ. ईडरकी शा.) यहाँपर चार स्थान इनके और हैं।

बरसीसर:–पो. पलाना (बीकानेर) (थाँ. ऊदसरकी शा.) (N)

बानाराबास:–पो. आसोप (मारवाड़) (थाँ.)

बारणी:–(मारवाड़) (थाँ. बोयलकी शा.)

बाजोली:–पो. पिसांगण (मारवाड़) (खा. मैंदसरकी शा.) (S)

बावडी:–पो. गांधानी (मारवाड़) (खा. खुद.)

बालोतरा:–(मारवाड़) नयावास (खा. शा.)

बाले:–(मारवाड़) (थाँ. बोयलकी शा.)

बामटसर:–पो. धरपुरा (बीकानेर) (थाँ कालूका आदिस्थान है) (N)

बासणी:–गाडेलाँरी पो. नागोर (मारवाड़) (थाँ. तीतरीकी शा.)

बासणी:–ताकाँरी (मारवाड़) (थाँ. बडलू मनीरामजी म० प्रशा.)

बाघासर:–(मारवाड़) (थाँ. तीतरीकीप्रशा.

बारोंदा:–(मारवाड़) (थाँ. बडलू मनीरामजीम० की शा.) यहाँपर थाँ. खवासपुरे का भी एकस्थान है।

बालीसर:–(मारवाड़) (थाँ.) यहाँपर थाँभायत डोंगियासकी शाखाके दो स्थान और हैं।

बीदासर:–(बीकानेर) चोतीने कूपकेपास (खा. लाडणूकी शा.)

बीठ्यर:–भरतदासजीका गुडा (थां. [illegible])

बीपड़पुरः–(मारवाड़) (शा.)

बीसनगरः–(गुजरात) [illegible] श्री रामजी महाराजका रामद्वारा (थां. [illegible] रामजी म० की शा.)

" [illegible] रामद्वारा (थां. जोधपुर [illegible] की शा.)

बीकानेरः–[illegible] रामद्वारा (शा. गुरु) [illegible] सामने [illegible] आया एक [illegible] है। [illegible] [illegible] एक [illegible] है। [illegible] रामद्वा[illegible] [illegible] है। (२)

" [illegible] रामद्वारा (थां.)

" " [illegible]रामजीका रामद्वारा (शा. [illegible] शा.)

" " [illegible]रामदासजीका रामद्वारा (शा. देशनोक प. हरन-दासजी म० का है)।

" आचार्योंकी घाटीके नीचे चरण-दासजीका रामद्वारा (शा. दुरगदा-सजी का है)

" [illegible]पास ईश्वरदासजीका रामद्वारा (थां. [illegible]सरका है) (३)

" नएकुएकेपास साधुसभा नामका रामद्वारा (खालशाही गुसाँईसरके आशारामजी का बनाया हुवा है सिं-हथल खेड़ापा भेखमें पाठशाला खो-लनेके लिए कोई खास स्थान न होने के कारण आशारामजीने आप-का बनाया हुआ उक्त "साधुसभा" नामका स्थान वास्ते पाठशालाके मुकर्रिर कर नकद रुपये ८८०) तथा अपनी कुलपुस्तकें वचन वासन करके आदि एक [illegible] [illegible] देकर एक "[illegible]" की [illegible] [illegible] प्रथम नींव डाली।

बीकानेरः–[illegible] [illegible] [illegible]का रामद्वारा (शा. [illegible]की प्रशा.)

" [illegible] [illegible] [illegible]जीका रामद्वारा थां. [illegible]की प्रशा.

" [illegible] कुएके पास [illegible]रामजीका रामद्वारा (शा. शा.) (४)

बीठूंजोड़ः–पो. [illegible] (मारवाड़) (थां. [illegible]की. शा.)

बीसापुरः–(गुजरात) (थां. [illegible] शा.)

बूंदीः–(हाडौती) [illegible] दरवाजा [illegible]रामजीका रामद्वारा (शा. शा.) (३)

बूडीवाड़ाः–पो. [illegible] (मारवाड़) (शा.)

बेलासरः–पो. [illegible] (बीकानेर) (थां. [illegible] वर्तमान स्थान) (७)

बोड़ावड़ः–(मारवाड़) (थां.)

बोयलः–पो. पीपाड़सिटी (मारवाड़) (थां. जोधपुर मोतीचौकका आदिस्थान) और (थां. आदिदासका वर्तमानस्थानभी यहींपर है)

ब्यावरः–(राजपुताना) चांगदरवाजा (भारती भवन) (थां. नींबाजका वर्तमान स्थान)

भाड्रेजः–वायडमेर (मारवाड़ मालानी) (शा. शा.)

भादावतियाः–(मारवाड़) (थां. नींबाज)

भाणेराः–पो. देआवरा (बीकानेर) (शा. शा.) (५)

भालूः–पो. तिवरी (मारवाड़) (थां. जोध-पुर सूरसागरकी शा.)

भावगढ़ः–(मालवा) (थां. झोटावदकी शा.)

भावीः–(मारवाड़) (थां. बोयलकी प्रशा.)

भिलोड़ाः–पो. ईडर (गुजरात) (थां. ईड-रकी शा.)

भीनासरः–(बीकानेर) हनुमानजी के मन्दिरके पास छच्छीरामजीका रामद्वारा (थां. आचीणेका वर्तमानस्थान)

---

१ बीसनगर श्रीरामजी महाराजके लिये श्रीसिंहथल श्रीखेड़ापा दोनो महन्तों महारा-जाओंकी तरफसे गही बखसी हुई है।

१ भारती भवन अर्थात् सरस्वती (वाणी) भवन न कि दशनामी भवन।

पालडीः-मेड़तियाँरी (मारवाड़) (थाँ. उ-बासपुरेकी शा.)

पालडीः-जोधाँरी पो. खजवाना (मारवाड़) (थाँ. बड़लू मनीरामजी म० की प्रशा.)

पादरूः-(मेवाड़) (खा. बालोतरेकी शा.)

पाँचोडीः-पो. खींवसर (मारवाड़) ठि. रामधनजी फूसमलजी मिश्रीकी दुकान (थाँ.)

पिसांगणः-(अजमेर राजपुताना) (थाँ. नींबाजकी शा.)

पीपाड़सिटीः-(मारवाड़) राठोलाई तलाईपर मुगतरामजीम० का रामद्वारा (खा शा.)

,, राठोलाई तलाईकेपास भक्तिरामजीम. का नयारामद्वारा (खा. शा. इनका आदि स्थान कोशाणाकी बाडियाँमें है)

,, राठोलाईतलाईके पासही बाईयोंका रामद्वारा (खा. शा.)

,, इसके पासका रामद्वारा (खा. शा)

पुनाहनाः-(व्रजमण्डल) (थाँ. तीतरीकी प्रशा.)

पुष्करः-(राजपुताना) (थाँ. बड़लू मनीरामजीम. की प्रशा.)

पूठोलीः-पो. चन्देरी (मेवाड़) (खा. बालोतरेकी शा.

पूजलूः-(मारवाड़) (खा. पीपाड़ उेजरामजी म० प्रशा.)

पोकरणः-(मारवाड़) बकोंकी पिरोल (खा. शा.)

पंचेवाः-पो. पीपलोदा (मालवा) (थाँ. रतलामकी शा.)

प्रतापनगर-(चक १ यू) पो. केसरीसिंहपुर (बीकानेर) (खा. सुद.) (S)

प्रान्तीजः-(गुजरात) बोकमें मुक्तरामजी म० की वाड़ी (थाँ. ईडरकी प्रशा.) इनका एक रामद्वारा कुम्हारवाड़ामें भी है।

फलोधीः-मेड़तारोड़ (मारवाड़) (थाँ. कुड़ीकी शा.)

फलोधीः-हनूमत (मारवाड़) (खा. जोधपुर भावनादासजी म. का स्थान है)।

फागलियाः-(मारवाड़) (खा. झाकलकीप्रशा.)

फुलेराः-(जयपुर) स्टेशनके पास रामद्वारा (खा. सैंदसरकी शा.) (S)

बड़लूः-(मारवाड़) यहाँपर दो थाँभायतों के दो स्थान है।

,, तलाईकी पालपर एकस्थान (खा. खुद है)

बठौड़ाः-(अमरावती) बुद्धेश्वरकेपास (थाँ. कुड़ीकी प्रशा.)

बलौंदाः-पो. जैतारण (मारवाड़) (थाँ. जैतारणकी शा.)

बड़साराः-पो. बरणा (गुजरात) (खा. जोधपुर मोहिलेरामद्वारेकी शा.)

बड़ौदाः-पो. नौमड़ीचौक (गुजरात) कुम्हारवाड़ा (थाँ. ईडरकी शा.) यहाँपर चार स्थान इनके और है।

बरसीसरः-पो. पलाना (बीकानेर) (थाँ. कूड़सरकी शा.) (N)

बानारावासः-पो. आसोप (मारवाड़) (थाँ.)

बारणीः-(मारवाड़) (थाँ. बोयलकी शा.)

बाजोलीः-पो. पिसांगण (मारवाड़) (खा. सैंदसरकी शा.) (S)

बावड़ीः-पो. गांगानी (मारवाड़) (खा. खुद.)

बालोतराः-(मारवाड़) नयावास (खा. शा.)

बालेः-(मारवाड़) (थाँ. बोयलकी शा.)

बामटसरः-पो. सरपुरा (बीकानेर) (थाँ कालूका आदिस्थान है) (N)

बासणीः-गाडेल्याँरी पो. नागोर (मारवाड़) (थाँ. तीतरीकी शा.)

बासणीः-ताड़ांरी (मारवाड़) (थाँ. बड़लू मनीरामजी म० प्रशा.)

बाघरासरः-(मारवाड़) (थाँ. तीतरीकीप्रशा.

बाँरांदाः-(मारवाड़) (थाँ. बड़लू मनीरामजीम० की शा.) यहाँपर थाँ. खवासपुरे का भी एकस्थान है।

बाटीसरः-(मारवाड़) (थाँ.) यहाँपर थाँभायत डोंगियासकी शाखाके दो स्थान और है।

बीदासरः-(बीकानेर) चोतीने कूपकेपास (खा. लाडणूकी शा.)

साथीणः–पो. पीपाड़सिटी (मारवाड़) (थाँ. वड्ल. मनीरामजी म० शा.)
„ बाईयोंका रामद्वारा (खा. गुसाँई-सरकीशा.) (s)
सिणलीः–(मारवाड़) (थाँ. समुदड़ीकी शा.)
सिणियालाः–(मारवाड़ मालानी) (थाँ. कालूकी शा.) (N)
सिरोहीः–(राजपुताना) रत्नवावके सामने (खा. शा.)
सिंहथलः–पो. नापासर (बीकानेर) पूज्यपाद श्री १०८श्रीपाटआचार्योंका रामधाम।
सियाणाः–(बीकानेर) (खा. लाडणूका आदिस्थान)
सियाटः–(मारवाड़) (खा. जोधपुर सोजतिये दरवाजेवाले रामद्वारेका आदिस्थान)
सुजानगढः–(बीकानेर) (खा. लाडणूकी शा.)

सूरतगढः–(बीकानेर) नहरमंडीमें (काळूकी शा.) (N)
सूरतः–(गुजरात) जदाखाडी (थाँ. रकी प्रशा.)
„ ल्हादरवाजा मोटीसेरी (खा. धपुर मॉहिले रामद्वारेकी प्रशा.
„ कोलवाड़ मंछरपुरा जमुरानजी रामद्वारा (खा. जोधपुर माँहि रामद्वारेकी प्रशा.)
सूडसरः–(बीकानेर) (थाँ.) (s)
सोजतः–(मारवाड़) कुम्हारोंका बास (ख पीपाड़ उदोतरामजी म० की शा.)
सौंखेड़ाः–(मालवा) (थाँ. रतलामकी शा.
संसारदेसरः–(बीकानेर) (खा. शा.) (s
हसनपुरः–(यू. पी.) (थाँ. बीतरीकी प्रशा.
हनुमानगढः–(बीकानेर) (खा. शा.) (s)
हुरड़ाः–(मेवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)

नोटः—सिंहथल खेड़ापा भेखा में मेला महोत्सव आदिके लिए परम्परा से "थलवटमण्डल" और "मारवाड़मण्डल" दो मण्डल माने गये हैं, थलवटमण्डल में मेला करनेवाले निम्नलिखित ठिकाणों को पत्रिका दिया करते हैं, और मारवाड़ मण्डल में मेला करनेवाले थलवट मण्डल के ठिकानोंको छोड़कर शेषको पत्रिका दिया करते हैं । यह साधारण मेले कहलाते हैं और जिनमें दोनों मण्डलों को पत्रिका दी जाती है वे असाधारण मेले अथवा महामहोत्सव कहलाते हैं। इनके सिवाय जो सिंहथल खेड़ापा के दोनों महन्त महाराज को न पधराकर अपने ही ठिकाने के महन्त को पाँचपचीस साधुओं के साथ बुलाकर चहर पिछोड़ी देते हैं वह जिसनाम से पुकारा जाता है वह अनिश्चित है । श्रीसिंहथल चैत्रके मेलेपर अथवा श्रीखेड़ापा होलीफूलडोलपर जो मेला करना चाहे उसको मण्डलोंमें पत्रिका देनेकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं रखीगई है । थलवट मण्डलके ठिकानों के नामः—ऊदासर, करणू, काळू, किस्सीदेसर, कौकायत, गीगासर, गुसाईंसर छोटा, गुसाईंसर बड़ा, गंगाशहर (सबठिकाने) चाखू, छापर, जैसलसर, डूंगरगढ़ (सबठिकाने) बीतरी, दड़ीबा, दासोड़ी, देशनोक (सबठिकाने), नापासर, पलाना, पाँचोड़ी, प्रतापनगर (डिविजन श्रीगंगानगर बीकानेर), बरसीसर, बामटसर बागरासर, बीदासर (सबठिकाने), बीकानेर (सबठिकाने), बेलासर, माणेरा, भीनासर (सबठिकाने), मेहू, मैंदसर (सबठिकाने), रतनगढ़ (सबठिकाने), राजलदेसर (सबठिकाने), रासीसर, रायसर, लाडणूँ, लालमदेसर, शीलवा, सरदारशहर, साईंसा, सियाणा, सुजानगढ़, सूरतगढ़, सूडसर, संसारदेसर, हनुमानगढ़।

आपका,

रामनारायण।

भीनासरः-सारडोंके बाघमें लाखारामजीका रामद्वारा (खा. दासोड़ी) (8)

भेलू:-(बीकानेर) पो. फलोधीइकूलत(मारवाड़)ठि.सेठ चोथमल सूरजमल बरडियेकी हवेली (खा. दासोड़ीकी शा.) दासोड़ी स्थानाधीश कन्हीरामजी म. यहाँपर निवास करते है। (8)

भैंसवाडाः-(मारवाड) (थाँ. नींबाजकी शा.)

मकलाँः-पो. झारड़ा स्टेशन महंदपुर (मालवा) (थाँ.)

मथाणियाः-(मारवाड़) (खा.)

मथुराः-वृन्दावनदरवाजा मुहल्लाकागदियोंका (यू. पी.) (था. वीतरीकी प्रशा.)

मरोलीः-(व्रजमंडल) (थाँ. वीतरीकी प्रशा.)

मादलियाः-(मारवाड़) (खा. पीपाड़ तेजरामजी म० शा.)

माळासः-(मारवाड़) (खा. पीपाड़तेजरामजी म० प्र. शा.)

मूँधियाड़ः-(मारवाड़) (खा. शा.)

मूँडवाः-(मारवाड़) लाखोळाव तलावकी पाल पर (खा. गुरु) (8)

" बागके पास मलूकदासजीका रामद्वारा (थाँ. वीतरीकी प्रशा.)

मेंदसरः-पो. सूरपुरा (बीकानेर) (खा. शा.) (8)

" यह स्थान (थाँ. वीतरीकी शाखाका है।

मंडलाँः-(मेवाड़) (थाँ. जोधपुर सूरसागरकी शा.)

रतनगढ़ः-पो. (बीकानेर) शीतलाके मढ़के पास (थाँ. वीतरीकी प्रशा.)

" गढ़की सफीलके पास रूपरामजीका रामद्वारा (खा. देशणोक पीरारामजी म. की शा.) (8)

" पीसरापिरोळके पास (खा. रतकूडी शा.)

रैतलामः-(मालवा) पुरोहितजीकावास (थाँ.)

---

१ रतलाम थाँभायत दिखानेको माकिया घडी और मध्य परसी बनी हुई है।

रतकूड़ियाः-(मारवाड़) (खा. गुसाँईसरकी शा.) (8)

रणीगामः-(मारवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)

राजलदेसरः-(बीकानेर) सेवगोंके मुहल्लेमें (थाँ वीतरीकी शा.)

" इनके पासही (थाँ. वीतरीकी दो शाखाएँ और है)।

" यहाँपर मूँधारामजीका एक स्थान है (देश. खा. पीरा. शा.) (8)

रायपुरः-(मारवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)

रासीसरः-पो. देशणोक (बीकानेर) (खा. शा.) (8)

रायमलावाः-(मारवाड़) (थाँ.)

रामसरः-(बीकानेर) (खा. शा. (यहाँपर हिमतरामजीकी झोंपडी थाँ. मकलाँकेशाखाकी है)

राँधेजः-(गुजरात) (थाँ. ईडरकी प्र. शा.)

रूदणूः-(मारवाड़) कुम्हारोंका बास (खा. सीयानेका वर्तमान स्थान) यहाँपर राममुहला नामका स्थान भी इन्हीका है।

लालमदेसरः-(बीकानेर) (थाँ.) (8)

शिवकरः-पो. बायडमेर (मारवाड़) (खा. सियाटकी शा.)

शिवगंज छावनीः-(दक्षिण) (खा. सियाटकी शा.)

शीळवाः-(मारवाड़) (थाँ. बोयलकी शा.)।

सरदारशहरः-(बीकानेर) (थाँ. वीतरीकी शा.)

समँदसरः-(बीकानेर) (थाँ.)

समदड़ीः-(मारवाड़) (थाँ.)

सवाड़ः-(मारवाड़) (थाँ. नींबाजकी शा.)

सवाळियाः-(मारवाड़) (खा. पीरारामजी म० की शा.) (8)

सरवडीः-पो. नामली (मालवा) (लामकी शा.)

साचोरः-(मारवाड़) (खा. शा.)

साम्मसरः-(मारवाड़) था. शा.)

सारूँडाः-(बीकानेर) (खा. शा.)